1. अभिषेक पाठ

मैं परम पूज्य जिनेन्द्र प्रभु को, भाव से वन्दन करूँ।
मन वचन काय, त्रियोग पूर्वक, शीश चरणों में धरूँ ||1||
सर्वज्ञ केवलज्ञानधारी की, सुछवि उर में धरूँ।
निर्ग्रंथ पावन वीतराग महान, की जय उच्चरूँ ||2||
उज्जवल दिगम्बरवेश दर्शन, कर हृदय आनन्द भरूँ।
अति विनय पूर्वक नमन करके, सफल यह नरभव करूँ ||3||
मैं शुद्ध जल के कलश प्रभु के, पूज्य मस्तक पर करूँ।
जल धार देकर हर्ष से अभिषेक, प्रभु जी का करूँ ||4||
मैं न्हवन प्रभु का भाव से, कर सकल भवपातक हरूँ।
प्रभु चरणकमल पखारकर, सम्यक्त्व की सम्पत्ति वरूँ ||5||

2. जिनेन्द्र अभिषेक स्तुति

मैंने प्रभुजी के चरण पखारे।
जनम, जनम से संचित पातक, तत्क्षण ही निरवारे ||1||
प्रासुक जल के कलश, श्री जिन प्रतिमा ऊपर ढारे।
वीतराग अरिहंतदेव के गूंजे, जय जयकारे ||2||
चरणाम्बुज स्पर्श करत ही, छाये हर्ष अपारे।
पावन तन, मन नयन भये, सब दूर भये अंधियारे ||3||

3. कर लो जिनवर की पूजन

कर लो जिनवर की पूजन, आई पावन घड़ी।
आई पावन घड़ी मनभावन घड़ी ||1||

दुर्लभ यह मानव तन पाकर, कर लो जिन गुणगान।
गुण अनन्त सिद्धों का सुमिरण, करके बनो महान।।कर लो||2||
ज्ञानावरण, दर्शनावरणी, मोहनीय अंतराय।
आयु नाम अरु गोत्र वेदनीय, आठों कर्म नशाय।।कर लो||3||
धन्य धन्य सिद्धों की महिमा, नाश किया संसार।
निजस्वभावसे शिवपदपाया, अनुपम अगम अपार।।कर लो||4||
जड़ से भिन्न सदा तुम चेतन, करो भेद विज्ञान।
सम्यक्दर्शन अंगीकृत कर, निज को लो पहचान।।कर लो||5||
रत्नत्रय की तरणी चढ़कर, चलो मोक्ष के द्वार।
शुद्धातम का ध्यान लगाओ, हो जाओ भवपार।। कर लो||6||

4. पूजा पीठिका

ॐ जय जय जय नमोऽस्तु नमोऽस्तु नमोऽस्तु
अरिहंतो को नमस्कार है, सिद्धों को सादर वंदन।
आचार्यों को नमस्कार है, उपाध्याय को है वंदन ||1||
और लोक के सर्वसाधुओं को, है विनय सहित वन्दन।
पंच परम परमेष्ठी प्रभु को, बार-बार मेरा वंदन ||2||
ॐ ह्रीं श्री अनादि मूलमंत्रेभ्यो नमः पुष्पांजलि क्षिपामि।
मंगल चार, चार हैं उत्तम, चार शरण में जाऊँ मैं।
मन वच काय त्रियोग पूर्वक, शुद्ध भावना भाऊँ मैं ||1||
श्री अरिहंत देव मंगल हैं, श्री सिद्ध प्रभु हैं मंगल।
श्री साधु मुनि मंगल हैं, है केवलि कथित धर्म मंगल ||2||
श्री अरिहंत लोक में उत्तम, सिद्ध लोक में हैं उत्तम।
साधु लोक में उत्तम हैं, है केवलि कथित धर्म उत्तम ||3||

श्री अरिहंत शरण में जाऊँ, सिद्ध शरण में मैं जाऊँ।
साधु शरण में जाऊँ केवलि कथित धर्मशरणा जाऊँ ||4||
ॐ ह्रीं श्री नमो अर्हते स्वाहा पुष्पांजलिं क्षिपामि।

5. मंगल विधान

णमोकार का मन्त्र है शाश्वत, इसकी महिमा अपरम्पार।
पाप ताप संताप क्लेश हर्ता, भव भय नाशक सुखकार ||1||
सर्व अमंगल का हर्ता है, सर्वश्रेष्ठ है मन्त्र पवित्र।
पाप पुण्य आश्रव का नाशक, संवरमय निर्जरा विचित्र ||2||
बन्ध विनाशक मोक्ष प्रकाशक, वीतरागपददाता मित्र।
श्री पंच परम परमेष्ठी प्रभु के, झलक रहे हैं इसमें चित्र ||3||
इसके उच्चारण से होता, विषय कषायों का परिहार।
इसके उच्चारण से होता, अंतर मन निर्मल अविकार ||4||
इसके ध्यान मात्र से होता, अंतर द्वंदों का प्रतिकार।
इसके ध्यान मात्र से होता, बाह्यान्तर आनन्द अपार ||5||
णमोकार है मन्त्र श्रेष्ठतम, सर्व पाप नाशनहारी।
सर्व मंगलों में पहला मंगल, पढ़ते ही सुखकारी ||6||
यह पवित्र अपवित्र दशा, सुस्थित दुस्थित में हितकारी।
निमिष मात्र में जपते ही, होते विलीन पातक भारी ||7||
सर्व विघ्न बाधा नाशक है, सर्व संकटों का हर्ता।
अजर अमर अविकल, अविकारी, अविनाशी सुख का कर्ता ||8||
कर्माष्टक का चक्र मिटाता, मोक्ष लक्ष्मी का दाता।
धर्मचक्र से सिद्धचक्र पाता, जो ओम् नमः ध्याता ||9||

ओम् शब्द में गर्भित पाँचों, परमेष्ठी निजगुणधारी।
जो भी ध्याते बन जाते, परमात्मा पूर्ण ज्ञानधारी ||10||
जय जय जयति पंच परमेष्ठी, जय जय णमोकार जिन मंत्र।
भव बन्धन से छुटकारे का, यही एक है मन्त्र स्वतंत्र ||11||
इसकी अनुपम महिमा का, शब्दों से कैसे हो वर्णन।
जो अनुभव करते हैं वे ही, पा लेते हैं मुक्ति गगन ||12||
पुष्पांजलिं क्षिपेत्

6. अर्घ्यावली

जल गंधाक्षत पुष्प सुचरु ले, दीप धूप फल धरूँ।
जिन गृह में जिनराज पंच कल्याणक पाँचों नमन करूँ ||1||
ॐ ह्रीं श्री तीर्थंकर पंचकल्याणकेभ्यो अर्घ्यं नि. स्वाहा।
जल गंधाक्षत पुष्प सुचरु ले, दीप धूप फल धरूँ।
जिनगृह में पाँचों परमेष्ठी के, चरणों में नमन करूँ ||2||
ॐ ह्रीं श्री अरहंतादि पंचपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं नि. स्वाहा।
जल गंधाक्षत पुष्प सुचरु ले, दीप धूप फल अर्घ्य धरूँ।
जिनगृह में जिन प्रतिमा सम्मुख, सहस्त्रनाम को नमन करूँ ||3||
ॐ ह्रीं श्री भगवन् जिनस्य अष्टाधिक सहस्रनामेभ्यो अर्घ्यं नि. ।

7. स्वस्ति मंगल

मंगलमय भगवान वीर प्रभु, मंगलमय गौतम गणधर।
मंगलमय श्री कुन्द कुन्द मुनि, मंगल जैन धर्म सुखकर ||1||
मंगलमय श्री ऋषभदेव प्रभु, मंगलमय श्री अजित जिनेश।
मंगलमय श्री संभव जिनवर, मंगल अभिनंदन परमेश ||2||

मंगलमय श्री सुमति जिनोत्तम मंगल पद्मप्रभ सर्वेश।
मंगलमय श्री सुपार्श्व जिन, स्वामी, मंगल चन्द्रप्रभु चन्द्रेश ||3||
मंगलमय श्री पुष्पदंत प्रभु, मंगल शीतलनाथ सुरेश।
मंगलमय श्री श्रेयांसनाथ जिन मंगल वासुपूज्य पूज्येश ||4||
मंगलमय श्री विमलनाथ विभु, मंगल अनन्तनाथ महेश।
मंगलमय श्री धर्मनाथ प्रभु, मंगल शांतिनाथ चक्रेश ||5||
मंगलमय श्री कुन्थुनाथ जिन, मंगल श्री अरनाथ गुणेश।
मंगलमय श्री मल्लिनाथ प्रभु, मंगल मुनिसुव्रत सत्येश ||6||
मंगलमय नमिनाथ जिनेश्वर, मंगल नेमिनाथ योगेश।
मंगलमय श्री पार्श्वनाथ प्रभु, मंगल वर्धमान तीर्थेश ||7||
मंगलमय अरिहंत महाप्रभु, मंगल सर्व सिद्ध लोकेश।
मंगलमय आचार्य श्री जय, मंगल उपाध्याय ज्ञानेश ||8||
मंगलमय श्री सर्वसाधुगण, मंगल जिनवाणी उपदेश।
मंगलमय सीमन्धर आदिक, विद्यमान जिन बीस परमेश ||9||
मंगलमय त्रैलोक्य जिनालय, मंगल जिन प्रतिमा भव्येश।
मंगलमय त्रिकाल चौबीसी, मंगल समवशरण सविशेष ||10||
मंगल पंचमेरु जिन मंदिर, मंगल नन्दीश्वर द्वीपेश।
मंगल सोलहकारण दशलक्षण, रत्नत्रय व्रत भव्येश ||11||
मंगल सहस्त्रकूट चैत्यालय, मंगल मानस्तंभ हमेश।
मंगलमय केवलि श्रुति केवलि, मंगल ऋद्धिधारी विद्येश ||12||
मंगलमय पाँचों कल्याणक, मंगल जिन शासन उद्देश।
मंगलमय निर्वाण भूमि, मंगलमय अतिशय क्षेत्र विशेष ||13||
सर्व सिद्धि मंगल के दाता, हरो अमंगल हे विश्वेश।
जब तक सिद्ध स्वपद ना पाऊँ तब तक पूजूँ हे ब्रह्मेश ||14||

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्

8. श्री नित्य नियम पूजन

जय जय देवशास्त्र गुरु तीनों, मंगलदाता प्रभु वन्दन।
पंच परम परमेष्ठी प्रभु के चरणों में मैं करूँ नमन ||1||
विद्यमान तीर्थंकर बीस विदेह क्षेत्र के करूँ नमन।
तीन लोक के कृत्रिम अकृत्रिम, जिनचैत्यालय को वंदन ||2||
परमोत्कृष्ट अनंत गुण सहित, सर्व सिद्ध प्रभु को वंदन।
वृषभादिक श्री वीर जिनेश्वर, तीर्थंकर सब करूँ नमन ||3||
निज भावों की अष्ट द्रव्य ले, सविनय नाथ करूँ पूजन।
श्रद्धा पूर्वक भक्तिभाव से, करता हूँ जिन पद अर्चन ||4||
ॐ ह्रीं श्री सर्वजिनचरणाग्रेषु पुष्पांजलिं क्षिपामि।
अनन्तानुबंधी कषाय का, नाश करूँ दो यह आशीष।
मोहरूप मिथ्यात्व नष्ट कर दूँ, मैं समकित जल से ईश।।
देवशास्त्र गुरु पाँचों परमेष्ठी, प्रभु विद्यमान जिन बीस।
कृत्रिम अकृत्रिम जिनगृहवन्दूँ, सर्वसिद्ध जिनवर चौबीस ||1||
ॐ ह्रीं श्री सर्वजिनचरणाग्रेषु जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि.।
अप्रत्याख्यानावरणी कषाय का, नाश करूँ तत्काल।
अविरतिहर अणुव्रत लूँ,समकित चंदन से चमके निजभाल।।देव||2||
ॐ ह्रीं श्री सर्वजिनचरणाग्रेषु संसार ताप विनाशनाय चंदनं नि.।
मैं कषाय प्रत्याख्यानावरणी हर, करूँ प्रमाद अभाव।
पंच महाव्रत ले समकित अक्षत से पाऊँ शुद्ध स्वभाव ।।देव.||3||
ॐ ह्रीं श्री सर्वजिनचरणाग्रेषु अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि.।
प्रभु कषाय संज्वलन नाश कर, पाऊँ मैं निज में विश्राम।
समकित पुष्प खिले अन्तर में, मैं अरहंत बनूँ निष्काम।।देव.||4||
ॐ ह्रीं श्री सर्वजिनचरणाग्रेषु कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।

पाप पुण्य शुभ अशुभ आश्रव का, निरोध कर लूँ संवर।
समकित चरु से कर्म निर्जराकर, मैं बंध हरूँ सत्वर ।।देव.||5||
ॐ ह्रीं श्री सर्वजिनचरणाग्रेषु क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।
राग द्वेष सबका अभाव कर, नो कषाय का करूँ विनाश।
सम्यक् ज्ञान दीप से स्वामी, पाऊँ केवलज्ञान प्रकाश ।।देव.||6||
ॐ ह्रीं श्री सर्वजिनचरणाग्रेषु मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।
ज्ञानावरणादिक आठों कर्मों का नाश करूँ भगवन्त।
समकित धूप सुवासित हो, उर, भवसागर का कर दूँ अन्त।।देव.||7||
ॐ ह्रीं श्री सर्वजिनचरणाग्रेषु अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।
गुणस्थान चौदहवाँ पाकर, योग अभाव करूँ स्वामी।
समकित का फल महामोक्ष, पद पाऊँ हे अन्तर्यामी।।देव.||8||
ॐ ह्रीं श्री सर्वजिनचरणाग्रेषु मोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।
बन्ध हेतु मिथ्यात्व असंयम, और प्रमाद कषाय त्रियोग।
समकित का अर्घ्य सजा, अन्तर में पाऊँ पद अनर्घ अवियोग।।
देवशास्त्र गुरु पाँचों परमेष्ठी, प्रभु विद्यमान जिन बीस।
कृत्रिम अकृत्रिम जिनगृह वन्दूँ, सर्व सिद्ध जिनवर चौबीस ||9||
ॐ ह्रीं श्री सर्वजिनचरणाग्रेषु अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

जिनवर पद पूजन करूँ, नित्य नियम से नाथ।
शुद्धात्म से प्रीत कर, मैं भी बनूँ सनाथ ||1||
तीन लोक के सारे प्राणी, है कषाय आताप से तप्त।
इन्द्रिय विषय रोग से मूर्छित, भवसागर दुख से संतप्त ||2||
इष्ट वियोग अनिष्ट योग से, खेद खिन्न जग के प्राणी।
उनको है सम्यक्त्व परम हितकारी, औषधि सुखदानी ||3||

सर्व दुखों की परमौषधि, पीते ही होता रोग विनष्ट।
भवनाशक जिन धर्म शरण पाते ही, मिट जाता भवकष्ट ||4||
है मिथ्यात्व असंयम और कषाय, पाप की क्रिया विचित्र।
पाप क्रियाओं से निवृत्त हो, तो होता सम्यक् चारित्र ||5||
घाति कर्म बन्धन करने वाली, शुभ अशुभ क्रिया सब पाप।
महापाप मिथ्यात्व सदा ही देता है भव भव संताप ||6||
इसके नष्ट हुए बिन होता, दूर असंयम कभी नहीं।
इसके सम दुखकारी जग में, और पाप है कहीं नहीं ||7||
मुनिव्रत धारण कर ग्रैवेयक में, अहमिन्द्र हुआ बहुबार।
सम्यकदर्शन बिन भटका, प्रभु, पाए जग में दुःख अपार ||8||
क्रोधादिक कषाय अनुरंजित हो, भवसागर में डूबा।
साता के चक्कर में पड़कर, नहीं असाता से ऊबा ||9||
पाप पुण्य दुखमयी जानकर, यदि मैं शुद्ध दृष्टि होता।
नष्ट विभाव भाव कर लेता, यदि मैं द्रव्य दृष्टि होता ||10||
मिथ्यातम के गए बिना प्रभु, नहीं असंयम जाता है।
जप तप व्रत पूजन अर्चन से, जिय सम्यक्त्व न पाता है ||11||
इसीलिए मैं शरण आपकी, आया हूँ जिन देव महान।
सम्यक दर्शन मुझे प्राप्त हो, पाऊँ स्वपर भेद विज्ञान ||12||
नित्य नियम पूजन करके, प्रभु निज स्वरूप का ज्ञान करूँ।
पर्यायों से दृष्टि हटा, द्रव्य दृष्टि निज ध्यान धरूँ ||13||
ॐ ह्रीं श्री सर्वजिनचरणाग्रेषु पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

नित्य नियम पूजन करूँ, जिनवर पद उर धार।
आत्म ज्ञान की शक्ति, से हो जाऊँ भवपार।।

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री सर्वजिनेन्द्रेभ्यो नमः।

9. श्री देवशास्त्र गुरु जिन पूजन

वीतराग अरिहंत देव के, पावन चरणों में वन्दन।
द्वादशांग श्रुत श्री जिनवाणी, जग कल्याणी का अर्चन ||1||
द्रव्य भाव संयममय मुनिवर, श्री गुरु को मैं करूँ नमन।
देवशास्त्र गुरु के चरणों की, बारम्बार करूँ पूजन ||2||
ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरु समूह अत्र अवतर अवतर संवौषट्,
ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरु समूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः,
ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरु समूह अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्
आवरण ज्ञान पर मेरे है, हूँ जन्म मरण से सदा दुखी।
जब तक मिथ्यात्व हृदय में है, यह चेतन होगा नहीं सुखी।।
ज्ञानावरणी के नाश हेतु, चरणों में जल करता अर्पण।
देवशास्त्र गुरु के चरणों की, बारम्बार करूँ पूजन ||1||
ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यो जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि./
दर्शन पर जब तक छाया है, संसार ताप तब तक ही है
जब तक तत्वों का ज्ञान नहीं, मिथ्यात्व पाप तब तक ही है।
सम्यक् श्रद्धा के चन्दन से मिट जायेगा दर्शनावरण।।देव.||2||
ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यो संसारताप विनाशनाय चंदनं नि./
निज स्वभाव चैतन्य प्राप्ति हित, जागे उर में अन्तरबल।
अव्याबाधित सुख का घाता, वेदनीय है कर्म प्रबल।।
अक्षत चरण चढ़ाकर प्रभुवर वेदनीय का करूँ दमन।।देव.||3||
ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यो अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं नि./
मोहनीय के कारण यह चेतन, अनादि से भटक रहा।
निज स्वभाव तज पर द्रव्यों की, ममता में ही अटक रहा।।
भेद ज्ञान की खड्ग उठाकर, मोहनीय का करूँ हनन।।देव.||4||
ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यो कामबाण विनाशनाय पुष्पं नि./

आयु कर्म के बंध उदय से, सदा उलझता आया हूँ।
चारों गतियों में डोला हूँ, निज को जान न पाया हूँ।।
अजर अमर अविनाशी पद हेतु, आयुकर्म का करूँ शमन।।देव.||5||
ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यो क्षुधा रोग विनाशनाय नैवेद्यं नि./
नाम कर्म के कारण मैंने, जैसा भी शरीर पाया।
उस शरीर को अपना समझा, निज चेतन को बिसराया।।
ज्ञानदीप के चिर प्रकाश से, नामकर्म का करूँ दमन।।देव.||6||
ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यो मोहनीय कर्म विनाशनाय दीपं नि./
उच्च नीच कुल मिला बहुत पर, निजकुल जान नहीं पाया।
शुद्ध बुद्ध चैतन्य निरंजन, सिद्ध स्वरूप न उर भाया।।
गोत्र कर्म का धूम्र उड़ाऊँ, निज परिणति में करूँ नमन।देव.||7||
ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यो अष्टकर्म विनाशनाय धूपं नि./
दान लाभ भोगोपभोग बल, मिलने में जो बाधक है।
अन्तराय के सर्वनाश का, आत्मज्ञान ही साधक है।।
दर्शन ज्ञान अनन्त वीर्य सुख पाऊँ, निज आराधक बन।देव.||8||
ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यो मोक्षफल प्राप्तये फलं नि./
कर्मोदय में मोह रोष से, करता है शुभ अशुभ विभाव।
पर में इष्ट अनिष्ट कल्पना, राग द्वेष विकारी भाव।।
भाव कर्म करता जाता है, जीव भूल निज आत्मस्वभाव।
द्रव्य कर्म बंधते हैं तत्क्षण, शाश्वत सुख का करे अभाव।।
चार घातिया चउ अघातिया, अष्ट कर्म का करूँ हनन।
देवशास्त्र गुरु के चरणों का, बारम्बार करूँ पूजन ||9||
ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यो अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि./

जयमाला

हे जगबन्धु जिनेश्वर तुमको, अब तक कभी नहीं ध्याया।
श्री जिनवाणी बहुत सुनी पर, कभी नहीं श्रद्धा लाया ||1||
परम वीतरागी सन्तों का भी, उपदेश न मन भाया।
नरक तिर्यच देव नर गति में, भ्रमण किया बहु दुख पाया ||2||
पाप पुण्य में लीन हुआ निज, शुद्ध भाव को बिसराया।
इसीलिये प्रभुवर अनादि से, भव अटवी में भरमाया ||3||
आज तुम्हारे दर्शन कर प्रभु, मैंने निज दर्शन पाया।
परम शुद्ध चैतन्य ज्ञानघन का, बहुमान ह्रदय आया ||4||
दो आशीष मुझे हे जिनवर, जिनवाणी गुरुदेव महान।
मोह महातम शीघ्र नष्ट हो जाये, करूँ आत्म कल्याण ||5||
स्वपर विवेक जगे अन्तर में, दो सम्यक् श्रद्धा का दान।
क्षायक हो उपशम हो हे प्रभु, क्षयोपशम सद्दर्शन ज्ञान ||6||
सात तत्त्व पर श्रद्धा करके, देव शास्त्र गुरु को मानूँ।
निज–पर भेद जानकर, केवल निज में ही प्रतीति ठानूँ ||7||
पर द्रव्यों से मैं ममत्व तज, आत्म द्रव्य को पहचानूँ।
आत्म द्रव्य को इस शरीर से, पृथक भिन्न निर्मल जानूँ ||8||
समकित रवि की किरणें मेरे, उर अन्तर में करें प्रकाश।
सम्यक्ज्ञान प्राप्तकर स्वामी, परभावों का करूँ विनाश ||9||
सम्यक्चारित को धारण कर, निज स्वरूप का करूँ विकास।
रत्नत्रय के अवलम्बन से, मिले मुक्ति निर्वाण निवास ||10||
जय जय जय अरहन्त देव जय, जिनवाणी जग कल्याणी।
जय निर्ग्रन्थ महान सुगुरु, जयजय शाश्वत शिवसुखदानी ||11||
ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्र गुरुभ्यो अनर्घ्यपद प्राप्तये पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

देवशास्त्र गुरु के वचन, भाव सहित उरधार।
मन वच तन जो पूजते, वे होते भव वार।।
इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलि क्षिपेत
जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्र गुरुभ्यो नमः

10. श्री विदेह क्षेत्र स्थित विद्यमान बीस तीर्थंकर पूजन

सीमंधर, युगमंधर, बाहु, सुबाहु, संजातक स्वयंप्रभ देव।
ऋषभानन, अनन्तवीर्य, सूरप्रभ, विशाल कीर्ति सुदेव ||1||
श्रीवज्रधर, चन्द्रानन प्रभु, भद्रबाहु, भुजंगम ईश
जयति ईश्वर, जयति नेमि प्रभु, वीरसेन महाभद्र महीश ||2||
पूज्य देवयश अजितवीर्य जिन, बीस जिनेश्वर परम महान।
विचरण करते हैं विदेह में. शाश्वत् तीर्थंकर भगवान ||3||
नहीं शक्ति जाने की स्वामी, यहीं वन्दना करूँ प्रभो।
स्तुति पूजन अर्चन करके, शुद्ध भाव उर धरूँ प्रभो ||4||
ॐ ह्रीं श्री विदेह क्षेत्रस्थित विद्यमान बीस तीर्थंकर जिन समूह अत्र अवतर अवतर संवौषट्। ॐ ह्रीं श्री विदेह क्षेत्रस्थित विद्यमान बीस तीर्थंकर जिन समूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। ॐ ह्रीं श्री विदेहक्षेत्र स्थित विद्यमान बीस तीर्थंकर जिन समूह अत्र मम् सन्निहितोभव भव वषट्।
निर्मल सरिता का प्रासुक जल, लेकर चरणों में आऊँ।
जन्म जरादिक क्षय करने को, श्री जिनवर के गुण गाऊँ।
सीमंधर, युगमंधर आदिक, अजितवीर्य को नित ध्याऊँ।
विद्यमान बीसों तीर्थंकर की, पूजन कर हर्षाऊँ ||1||
ॐ ह्रीं श्री विद्यमान बीस तीर्थंकरेभ्यो जन्मजरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

शीतल चंदन दाह निकन्दन, लेकर चरणों में आऊँ।
भव सन्ताप ताप हरने को, श्री जिनवर के गुण गाऊँ।।सीमं.।।2।।
ॐ ह्रीं श्री विद्यमान बीस तीर्थंकरेभ्यो संसारताप विनाशनाय चंदनं नि. स्वाहा।
स्वच्छ अखण्डित उज्जवल तंदुल, लेकर चरणों में आऊँ।
अनुपम अक्षय पद पाने को, श्री जिनवर के गुण गाऊँ।।सीमं।।3।।
ॐ ह्रीं श्री विद्यमान बीस तीर्थंकरेभ्यो अक्षय पद प्राप्ताय अक्षतं नि.।
शुद्ध शील के पुष्प मनोहर, लेकर चरणों में आऊँ।
काम शत्रु का दर्प नशाने, श्री जिनवर के गुण गाऊँ।।सीमं.।।4।।
ॐ ह्रीं श्री विद्यमान बीस तीर्थंकरेभ्यो कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।
परम शुद्ध नैवेद्य भाव उर, लेकर चरणों में आऊँ।
क्षुधा रोग का मूल मिटाने, श्री जिनवर के गुण गाऊँ।।सीमं.।।5।।
ॐ ह्रीं श्री विद्यमान बीस तीर्थंकरेभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।
जगमग अंतर दीप प्रज्वलित, लेकर चरणों में आऊँ।
मोह तिमिर अज्ञान हटाने, श्री जिनवर के गुण गाऊँ।।सीमं.।।6।।
ॐ ह्रीं श्री विद्यमान बीस तीर्थंकरेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।
कर्म प्रकृतियों का ईंधन, अब लेकर चरणों में आऊँ।
ध्यान अग्नि में इसे जलाने, श्री जिनवर के गुण गाऊँ।।सीमं.।।7।।
ॐ ह्रीं श्री विद्यमान बीस तीर्थंकरेभ्यो अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।
निर्मल सरस विशुद्ध भाव फल, लेकर चरणों में आऊँ।
परम मोक्षफल शिवसुख पाने, श्रीजिनवर के गुणगाऊँ।।सीमं.।।8।।
ॐ ह्रीं श्री विद्यमान बीस तीर्थंकरेभ्यो मोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।

अर्ध्य पुंज वैराग्य भाव का, लेकर चरणों में आऊँ।
निज अनर्घ पदवी पाने को, श्री जिनवर के गुण गाऊँ।।सीमं.।।9।।
ॐ ह्रीं श्री विद्यमान बीस तीर्थंकराय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

जयमाला

मध्यलोक में असंख्यात सागर, अरु असंख्यात है द्वीप।
जम्बूद्वीप धातकी खण्ड अरु, पुष्करार्ध यह ढाई द्वीप।।1।।
ढाई द्वीप में पंचमेरु हैं, तीनों लोकों में अति विख्यात।
मेरु सुदर्शन, विजय, अचल, मंदिर विद्युन्माली विख्यात।।2।।
एक एक में हैं बत्तीस विदेह, क्षेत्र अतिशय सुन्दर।
एक शतक अरु साठ क्षेत्र हैं, चौथा काल जहाँ सुखकर।।3।।
पाँच भरत अरु पंच ऐरावत, कर्म भूमियाँ दस गिनकर।
एक साथ हो सकते हैं तीर्थंकर, एक शतक सत्तर।।4।।
किन्तु न्यूनतम बीस तीर्थंकर ही विदेह में होते हैं।
सदा शाश्वत विद्यमान, सर्वज्ञ जिनेश्वर होते हैं।।5।।
एक मेरु के चार विदेहों में, रहते तीर्थंकर चार।
बीस विदेहों में तीर्थकर, बीस सदा ही मंगलकार।।6।।
कोटि पूर्व की आयु पूर्ण कर, होते पूर्ण सिद्ध भगवान।
तभी दूसरे इसी नाम के, होते हैं अरहंत महान।।7।।
श्री जिनदेव महा मंगलमय, वीतराग सर्वज्ञ प्रधान।
भक्ति भाव से पूजन करके, मैं चाहूँ अपना कल्याण।।8।।
विहरमान श्री बीस जिनेश्वर, भाव सहित गुणगान करूँ।
जो विदेह में विद्यमान हैं, उनका जय जय गान करूँ।।9।।
सीमन्धर को वन्दन करके, मैं अनादि मिथ्यात्व हरूँ।
जुगमन्धर की पूजन करके, समकित अंगीकार करूँ।।10।।

श्री बाहु को सुमिरण करके, अविरत हर व्रत ग्रहण करूँ।
श्री सुबाहु पद अर्चन करके, तेरह विधि चारित्र धरूँ ||11||
प्रभु **संजातक** के चरण पूजकर, पंच प्रमाद अभाव करूँ।
देव **स्वयंप्रभ** को प्रणाम कर, दुखमय सर्व विभाव हरूँ ||12||
ऋषभानन की स्तुति करके, योग कषाय निवृत्ति करूँ।
पूज्य **अनन्तवीर्य** पद बन्दू, पथ निर्ग्रन्थ प्रवृत्ति करूँ ||13||
देव **सूरप्रभु** चरणाम्बुज, दर्शन कर पाँचों बन्ध हरूँ।
परम **विशालकीर्ति** की जय हो, निज को पूर्ण अबंध करूँ ||14||
श्री वज्रधर सर्वदोष हर, सब संकल्प विकल्प हरूँ।
चन्द्रानन के चरण चित्त धर, निर्विकल्पता प्राप्त करूँ ||15||
भद्रबाहु को नमस्कार कर, पाप पुण्य सब नाश करूँ।
श्री भुजंगम पद मस्तक धरकर, निज चिद्रूप प्रकाश करूँ ||16||
ईश्वर प्रभु की महिमा गाऊँ, आत्म द्रव्य का भान करूँ।
श्री नेमि प्रभु के चरणों में, चिदानन्द का ध्यान धरूँ ||17||
वीरसेन के पद कमलों में, उर चंचलता दूर करूँ।
महाभद्र की भव्य सुछवि लख, कर्मघातिया चूर करूँ ||18||
श्री देवयश सुयश गान कर, शुद्ध भावना हृदय धरूँ।
[1]**अजितवीर्य** का ध्यान लगाकर, गुण अनन्त निज प्रगट करूँ ||19||
बीस जिनेश्वर समवशरण लख, मोहमयी संसार हरूँ।
निज स्वभाव साधन के द्वारा, शीघ्र भवार्णव पार करूँ ||20||
स्वगुण अनन्त चतुष्टय धारी, वीतराग को नमन करूँ।
सकल सिद्ध मंगल के दाता, पूर्ण अर्घ्य के सुमन धरूँ ||21||
ॐ ह्रीं श्री विद्यमान बीस तीर्थंकरेभ्यो पूर्णार्घ्यं नि.।

1. विदेह क्षेत्र स्थित विद्यमान बीस तीर्थंकरों का नाम है।

जो विदेह के बीस जिनेश्वर की, महिमा उर में धरते।
भाव सहित प्रभु पूजन करते, मोक्ष लक्ष्मी को वरते।।
इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत
जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं विदेह क्षेत्रस्थ विद्यमान विंशति तीर्थंकरेभ्यो नमः

11. श्री सिद्ध पूजन

हे सिद्ध तुम्हारे वन्दन से, उर में निर्मलता आती है।
भव भव के पातक कटते हैं, पुण्यावलि शीश झुकाती है ||1||
तुम गुण चिन्तन से सहज देव, होता स्वभाव का भान मुझे।
है सिद्ध समान स्वपद मेरा, हो जाता निर्मल ज्ञान मुझे ||2||
इसीलिए नाथ पूजन करता, कब तुम समान मैं बन जाऊँ।
जिस पथ पर चल तुम सिद्ध हुए, मैं भी चल सिद्ध स्वपद पाऊँ ||3||
ज्ञानावरणादिक अष्टकर्म को, नष्ट करूँ ऐसा बल दो।
निज अष्ट स्वगुण प्रगटें उरमें, सम्यक् पूजन का यह फल हो ||4||
ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्ध परमेष्ठिन् अत्र अवतर अवतर संवौषट्,
ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्ध परमेष्ठिन् अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, स्थापनम्
ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्ध परमेष्ठिन् अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।
कर्म मलिन हूँ जन्म जरा, मृत्यु को कैसे कर पाऊँ क्षय।
निर्मल आत्म ज्ञान जल दो प्रभु, जन्म मृत्यु पर पाऊँ जय।।
अजर, अमर, अविकल्प अविकारी, अविनाशी अनंत गुणधाम।
नित्य निरंजन भवदुख भंजन, ज्ञानस्वाभी सिद्ध प्रणाम ||1||
ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्ध परमेष्ठिने जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि.।
शीतल चंदन ताप मिटाता, किन्तु नहीं मिटाता भव संताप।
निज स्वभाव का चंदन हो प्रभु, मिटे राग का सबसंताप।।अजर||2||
ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्ध परमेष्ठिने संसार ताप विनाशनाय चंदनं नि.।

उलझा हूँ संसार चक्र में, कैसे हो उद्धार।
अक्षय तन्दुल रत्नत्रय दो, हो जाऊँ भव सागर पार।।अजर॥3॥
ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्ध परमेष्ठिने अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि.।
कामव्यथा से मैं घायल हूँ, कैसे करूँ काम मद नाश।
विमलदृष्टि दो ज्ञानपुष्प दो, कामभाव हो पूर्ण विनाश।।अजर॥4॥
ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्ध परमेष्ठिने कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।
क्षुधारोग के कारण मेरा, तृप्त नहीं हो पाया मन।
शुद्ध भाव नैवेद्य मुझे दो, सफल करूँ प्रभु यह जीवन।।अजर॥5॥
ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्ध परमेष्ठिने क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।
मोहरूप मिथ्यात्व महातम, अन्तर में छाया घनघोर।
ज्ञानदीप प्रज्जवलित करो,प्रभु प्रकटे समकित रवि का भोर।।अजर॥6॥
ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्ध परमेष्ठिने मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।
कर्म शत्रु निज सुख के घाता, इनको कैसे नष्ट करूँ।
शुद्ध धूप को ध्यान अग्नि में, इन्हें जला भवकष्ट हरूँ।।अजर॥7॥
ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्ध परमेष्ठिने अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।
निज चैतन्य स्वरूप न जाना, कैसे निज में आऊँगा।
भेद ज्ञान फल दो हे स्वामी, महा मोक्षफल पाऊँगा।।अजर॥8॥
ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणंसिद्ध परमेष्ठिने महामोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।
अष्ट द्रव्य का अर्घ चढ़ाऊँ, अष्टकर्म का हो संहार।
निज अनर्घ पद पाऊँ भगवन्, सादि अनंत परम सुखकार।।
अजर, अमर अविकल अविकारी, अविनाशी अनंत गुणधाम।
नित्य निरंजन भवदुख भंजन, ज्ञानस्वामी सिद्ध प्रणाम॥9॥
ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्ध परमेष्ठिने अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

जयमाला

मुक्तिकन्त भगवन्त सिद्ध को, मन वच काया सहित प्रणाम।
अर्ध चन्द्र सम सिद्ध शिला पर, आप विराजे आठों याम॥1॥
ज्ञानावरण दर्शनावरणी, मोहनीय अन्तराय मिटा।
चार घातिया नष्ट हुए तो, फिर अरहन्त रूप प्रगटा॥2॥
वेदनीय अरु **आयु नाम** अरु **गोत्र,** कर्म का नाश किया।
चऊ अघातिया नाश किये तो, स्वयं स्वरूप प्रकाश किया॥3॥
अष्टकर्म पर विजय प्राप्त कर, अष्ट स्वगुण तुमने पाये।
जन्म मृत्यु का नाश किया निज, सिद्ध स्वरूप स्वगुण प्रगटाये॥4॥
निज स्वभाव में लीन विमल, चैतन्य स्वरूप अरूपी हो।
पूर्ण ज्ञान हो पूर्ण सुखी हो, पूर्ण बली चिद्रूपी हो॥5॥
वीतराग हो सर्व हितैषी, राग द्वेष का नाम नहीं।
चिदानन्द चैतन्य स्वभावी, कृतकृत्य कुछ काम नहीं॥6॥
स्वयं सिद्ध हो स्वयं बुद्ध हो, स्वयं श्रेष्ठ समकित आगार।
गुण अनन्त दर्शन के स्वामी, तुम अनन्त गुण के भंडार॥7॥
तुम अनन्त बल के हो धारी, ज्ञान अनन्तानन्त अपार।
बाधा रहित सूक्ष्म हो भगवन्, **अगुरुलघु** अवगाह उदार॥8॥
सिद्ध स्वगुण के वर्णन तक की, मुझ में प्रभुवर शक्ति नहीं।
चलूँ तुम्हारे पथ पर स्वामी, ऐसी भी तो शक्ति नहीं॥9॥
देव तुम्हारी पूजन करके, हृदय कमल मुस्काया है।
भक्ति भाव उर में जागा है, मेरा मन हर्षाया है॥10॥
तुम गुण का चिन्तवन करे जो, स्वयं सिद्ध बन जाता है।
हो निजात्म में लीन दुखों से, छुटकारा पा जाता है॥11॥

अविनश्वर अविकारी सुखमय, सिद्ध स्वरूप विमल मेरा।
मुझमें है मुझसे ही प्रगटेगा, स्वरूप अविकल मेरा ||12||
ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्ध परमेष्ठिने पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।
शुद्ध स्वभावी आत्मा निश्चय सिद्ध स्वरूप।
गुण अनन्तयुत ज्ञानमय है त्रिकाल शिवभूप।।
इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत
जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री अनन्तानन्त सिद्ध परमेष्ठिभ्यो नमः

12. श्री सीमंधर स्वामी पूजन

जय जयति जय श्रेयांस नृप, सुत सत्यदेवी नन्दनम्।
चऊ घाति कर्म विनष्ट कर्त्ता, ज्ञान सूर्य निरन्जनम्।।
जय जय विदेहीनाथ जय, जय धन्य प्रभु सीमन्धरम्।
सर्वज्ञ केवलज्ञानधारी, जयति जिन तीर्थंकरम्।।
ॐ ह्रीं श्री सीमन्धर तीर्थंकर अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्री सीमन्धर तीर्थंकर अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री सीमन्धर तीर्थंकर अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।
यह जन्म मरण का रोग, हे प्रभु नाश करूँ।
दो सम रस निर्मल नीर, आत्म प्रकाश करूँ।।
शाश्वत जिनवर भगवन्त, सीमन्धर स्वामी।
सर्वज्ञ देव अरहंत, प्रभु अन्तरयामी ||1||
ॐ ह्रीं सीमन्धर तीर्थंकराय जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि.।
चन्दन हरता तन ताप, तुम भव संताप हरो।
निज समशीतल हे नाथ, मुझको आप करो।।शाश्वत||2||
ॐ ह्रीं श्री सीमन्धर तीर्थंकराय संसार ताप विनाशनाय चंदनं नि.।

इस भव समुद्र से नाथ, मुझको पार करो।
अक्षय पद दे जिनराज, अब उद्धार करो।।शाश्वत||3||
ॐ ह्रीं श्री सीमन्धर तीर्थंकराय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि.।
कन्दर्प दर्प हो चूर, शील स्वभाव जगे।
भवसागर के उस पार, मेरी नाव लगे ।।शाश्वत||4||
ॐ ह्रीं श्री सीमन्धर तीर्थंकराय कामबाण विध्वंनाय पुष्पं नि.।
यह क्षुधा ज्वाल विकराल, हे प्रभु शांत करूँ।
चरु चरण चढ़ाऊँ देव मिथ्या भ्रांति हरूँ।।शाश्वत||5||
ॐ ह्रीं श्री सीमन्धर तीर्थंकराय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।
मद मोह कुटिल विष रूप, छाया अंधियारा।
दो सम्यक ज्ञान प्रकाश, फैले उजियारा।।शाश्वत||6||
ॐ ह्रीं श्री सीमन्धर तीर्थंकराय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।
कर्मों की शक्ति विनष्ट, अब प्रभुवर कर दो।
मैं धूप चढ़ाऊँ नाथ, भव बाधा हर दो।।शाश्वत||7||
ॐ ह्रीं श्री सीमन्धर तीर्थंकराय अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।
फल चरण चढ़ाऊँ नाथ, फल निर्वाण मिले।
अन्तर में केवलज्ञान, सूर्य महान खिले।।शाश्वत||8||
ॐ ह्रीं श्री सीमन्धर तीर्थंकराय मोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।
जब तक अनर्घ्य पद प्राप्त, हो न मुझे सत्वर।
मैं अर्घ चढ़ाऊँ नित्य, चरणों प्रभुवर।।
शाश्वत जिनवर भगवन्त, सीमन्धर स्वामी।
सर्वज्ञ देव अरहंत, प्रभु अन्तरयामी ||9||
ॐ ह्रीं श्री सीमन्धर तीर्थंकराय अनर्घ्य पद प्राप्ताये अर्घ्यं नि.।

श्री पंच कल्याणक अर्घ्यावलि

जम्बूद्वीप सुमेरु सुदर्शन, पूर्व दिशा में क्षेत्र विदेह।
देश **पुष्कलावती** राजधानी, है पुण्डरीकिणी गेह।।
रानी **सत्यवती** माता के उर में, स्वर्ग त्याग आये।
सोलह स्वप्न लखे माता ने, रत्न सुरों ने वर्षाये ||1||

ॐ ह्रीं श्री गर्भमंगल मण्डित श्री सीमंधर तीर्थंकराय अर्घ्यं नि.।

नृप **श्रेयांसराय** के गृह में, तुमने स्वामी जन्म लिया।
इन्द्रसुरों ने जन्म महोत्सव कर निज जीवन धन्य किया।।
गिरि सुमेरु पर पांडुक वन में रत्नशिला सुविराजित कर।
क्षीरोदधि से नव्हन किया प्रभु दशों दिशा अनुरंजितकर ||2||

ॐ ह्रीं श्री जन्ममंगल मण्डित श्री सीमंधर तीर्थंकराय अर्घ्यं नि.।

एक दिवस नभ में देखे, बादल क्षणभर में हुए विलीन।
बस अनित्य संसार जान, वैराग्य भाव हुए सुलीन।।
लौकान्तिक देवर्षि सुरों ने, आकर जय जयकार किया।
अतुलित वैभव त्याग आपने, वन में जा तप धार लिया ||3||

ॐ ह्रीं श्री तपमंगल मण्डित श्री सीमंधर तीर्थंकराय अर्घ्यं नि.।

आत्म ध्यानमय शुक्ल ध्यान धर कर्मघातिया नाश किया।
त्रेसठ कर्म प्रकृतियाँ नाशी केवलज्ञान प्रकाश लिया।।
समवशरण में गंधकुटी में अन्तरीक्ष प्रभु रहे विराज।
मोक्षमार्ग सन्देश दे रहे भव्य प्राणियों को जिनराज ||4||

ॐ ह्रीं श्री केवलज्ञान मण्डित श्री सीमंधर तीर्थंकराय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

शाश्वत विद्यमान तीर्थंकर, सीमन्धर प्रभु दया निधान।
दे उपदेश भव्य जीवों को, करते सदा आप कल्याण ||1||

कोटि पूर्व की आयु पाँच सौ, धनुष स्वर्ण सम **काया** है।
सकल ज्ञेय ज्ञाता होकर भी, निज स्वरूप ही भाया है ||2||
देव तुम्हारे दर्शन पाकर, जागा है उर में उल्लास।
चरण कमल में नाथ शरण दो, सुनो प्रभो मेरा इतिहास ||3||
मैं अनादि से था निगोद में, प्रति पल जन्म मरण पाया।
अग्नि, भूमि जल, वायु, वनस्पति, कायिक थावर तन पाया ||4||
दो इन्द्रिय त्रस हुआ भाग्य से, पार न कष्टों का पाया।
जन्म तीन इन्द्रिय भी धारा, दुख का अन्त नहीं आया ||5||
चौ इन्द्रियधारी बनकर मैं, विकलत्रय में भरमाया।
पंचेन्द्रिय पशु सैनी और असैनी, हो बहु दुख पाया ||6||
बड़े भाग्य से प्रबल पुण्य से, फिर मानव पर्याय मिली।
मोह महामद के कारण ही नहीं, ज्ञान की कली खिली ||7||
अशुभ पाप आश्रव के द्वारा, नर्क आयु का बन्ध गहा।
नारकीय बन नरकों में रह, ऊष्ण शीत दुख द्वन्द सहा ||8||
शुभ पुण्याश्रव के कारण मैं, स्वर्ग लोक तक हो आया।
ग्रैवेयक तक गया किन्तु, शाश्वत सुख चैन नहीं पाया ||9||
देख दूसरों के वैभव को, आर्त्त रौद्र परिणाम किया।
देव आयु क्षय होने पर, एकेन्द्रिय तक में जन्म लिया ||10||
इस प्रकार धर धर अनन्त भव, चारों गतियों में भटका।
तीव्र मोह मिथ्यात्व पाप के कारण, इस जग में अटका ||11||
महापुण्य के शुभ संयोग से, फिर यह नर तन पाया है।
देव आपके चरणों को पाकर, यह मन हर्षाया है ||12||
जनम जनम तक भक्ति तुम्हारी, रहे हृदय में हे जिनदेव।
वीतराग सम्यक् पथ पर चल, पाऊँ सिद्ध स्वपद स्वयमेव ||13||

भरत क्षेत्र से कुन्द कुन्द मुनि ने, विदेहक्षेत्र को किया प्रयाण।
प्रभो तुम्हारे समवशरण में, दर्शन कर हो गये महान ||14||
आठ दिवस चरणों में रहकर, ओंकार ध्वनि सुनी प्रधान।
भरत क्षेत्र में लौटे मुनिवर, सुनकर वीतराग विज्ञान ||15||
करुणा जागी जीवों के प्रति, रचा शास्त्र श्री प्रवचनसार।
समयसार पंचास्तिकाय श्रुत, **नियमसार** अष्ट पाहुड़ सुखकार ||16||
रचे देव **चौरासी** [1]**पाहुड़ प्रभुवाणी** का ले आधार।
निश्चयनय भूतार्थ बताया, अभूतार्थ सारा व्यवहार ||17||
पाप पुण्य दोनों बंधन हैं, जग में भ्रमण कराते हैं।
रागमात्र को हेय जान ज्ञानी, निज ध्यान लगाते हैं ||18||
निज का ध्यान लगाया जिसने, उसको प्रगटा केवलज्ञान।
परम समाधि महासुखकारी, निश्चय पाता पद निर्वाण ||19||
इस प्रकार इस भरत क्षेत्र के, जीवों पर अनन्त उपकार।
हे सीमंधर नाथ आपका, करो देव मेरा उद्धार ||20||
समकित ज्योति जगे अन्तर में, हो जाऊँ मैं आप समान।
पूर्ण करो मेरी अभिलाषा हे, प्रभु सीमंधर भगवान ||21||

ॐ ह्रीं श्री सीमन्धर तीर्थंकराय पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

सीमन्धर प्रभु के चरण भाव सहित उरधार।
मन वच तन जो पूजते वे होते भवपार।।

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री सीमन्धर तीर्थंकराय नमः।

1. ग्रन्थ

13. श्री कृत्रिम अकृत्रिम जिन चैत्यालय पूजन

तीन लोक के कृत्रिम अकृत्रिम, जिन चैत्यालय को वन्दन।
उर्ध्व मध्य पाताल लोक के, जिन भवनों को करूँ नमन।।
हैं **अकृत्रिम आठ कोटि अरु, छप्पन लाख** परम पावन।
संतानवे सहस्त्र चार सौ, इक्यासी गृह मनभावन।।
कृत्रिम अकृत्रिम जो असंख्य, चैत्यालय हैं उनको वन्दन।
विनय भाव से भक्ति पूर्वक, नित्य करूँ मैं प्रभु पूजन।।

ॐ ह्रीं श्री तीन लोक संबंधी कृत्रिम अकृत्रिम जिन चैत्यालयस्थ जिन बिम्ब समूह अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्री तीन लोक संबंधी कृत्रिम अकृत्रिम जिन चैत्यालयस्थ जिन बिम्ब समूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री तीन लोक संबंधी कृत्रिम अकृत्रिम जिन चैत्यालयस्थ जिन बिम्ब समूह अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।

सम्यक् जल की निर्मल उज्जवलता से, जन्म जरा हर लूँ।
मूल धर्म का सम्यक्दर्शन, हे प्रभु हृदयंगम कर लूँ।।
तीन लोक के कृत्रिम अकृत्रिम, चैत्यालय वंदन कर लूँ।
ज्ञानसूर्य की परम ज्योति पा, भवसागर के दुख हर लूँ ||1||

ॐ ह्रीं श्री तीन लोक संबंधी कृत्रिम अकृत्रिम जिन चैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो संसारताप विनाशनाय चंदनं नि. स्वाहा।

सम्यक् चन्दन पावन शीतलता, से भव भय को हर लूँ।
वस्तु स्वभाव धर्म है सम्यक्ज्ञान, आत्मा में भर लूँ।।तीन||2||

ॐ ह्रीं श्री तीन लोक संबंधी कृत्रिम अकृत्रिम जिन चैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो संसारताप विनाशनाय चंदनं नि. स्वाहा।

सम्यक्चारित्र की अखंडता, से अक्षय पद आदर लूँ।
साम्यभाव चारित्र धर्म पा, वीतरागता को वर लूँ।।तीन||3||
ॐ ह्रीं श्री तीन लोक संबंधी कृत्रिम अकृत्रिम जिनचैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि.।

शील स्वभावी पुष्प प्राप्त कर, काम शत्रु को क्षय कर लूँ।
अणुव्रत शिक्षाव्रत गुणव्रत धर, पंच महाव्रत आचरलूँ।।तीन||4||
ॐ ह्रीं श्री तीन लोक संबंधी कृत्रिम अकृत्रिम जिन चैत्यालस्थ जिनबिम्बेभ्यो कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।

संतोषामृत के चरु लेकर, क्षुधा व्याधि को जय कर लूँ।
सत्य शौच तप त्याग क्षमा से, भावशुभाशुभ सब हरलूँ।।तीन||5||
ॐ ह्रीं श्री तीन लोक संबंधी कृत्रिम अकृत्रिम जिन चैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।

ज्ञान दीप के चिर प्रकाश से, मोह ममत्व तिमिर हर लूँ।
रत्नत्रय का साधन लेकर, यह संसार पार कर लूँ।।तीन||6||
ॐ ह्रीं श्री तीन लोक संबंधी कृत्रिम अकृत्रिम जिन चैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

ध्यान अग्नि में कर्मधूप धर, अष्टकर्म अघ को हर लूँ।
धर्म श्रेष्ठ मंगल को पा, शिवमय सिद्धत्व प्राप्त कर लूँ।।तीन ||7||
ॐ ह्रीं श्री तीन लोक संबंधी कृत्रिम अकृत्रिम जिन चैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि. स्वाहा।

भेद ज्ञान विज्ञान ज्ञान से, केवलज्ञान प्राप्त कर लूँ।
परमभाव सम्पदासहज, शिवमहामोक्षफल को वर लूँ।।तीन ||8||
ॐ ह्रीं श्री तीन लोक संबंधी कृत्रिम अकृत्रिम जिन चैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो मोक्षफल प्राप्तये फलं नि. स्वाहा।

द्वादश विधितप अर्घ सजोकर, जिनवर पद अनर्घ्य पालूँ।
मिथ्या अविरति पंच प्रमाद, कषाय योग बन्ध हर लूँ।।
तीन लोक के कृत्रिम अकृत्रिम, चैत्यालय वंदन कर लूँ।
ज्ञानसूर्य की परम ज्योति पा, भवसागर के दुख हर हूँ||9||
ॐ ह्रीं श्री तीन लोक संबंधी कृत्रिम अकृत्रिम जिन चैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

जयमाला

इस अनन्त आकाश बीच में, तीन लोक है पुरुषाकार।
तीनों [1]वातवलय से वेष्टित, सिंधु बीच ज्यों बिन्दु प्रसार ||1||
उर्ध्व सात है, **अधो सात** में, मध्य एक राजू विस्तार।
चौदह राजु उतंग लोक है, त्रस नाड़ी त्रस का आधार ||2||
तीन लोक में भवन अकृत्रिम, **आठ कोटि अरु छप्पन लाख**।
संतानवे सहस्त्र चारसौ इक्यासी, जिन आगम साख ||3||
उर्ध्व लोक में **कल्पवासियों** के, जिनगृह **चौरासी लक्ष**।
संतानवे सहस्त्र तेईस, जिनालय हैं शाश्वत प्रत्यक्ष ||4||
अधो लोक में भवनवासी के, लाख बहत्तर, करोड़ सात।
मध्यलोक के चार शतक, अट्ठावन चैत्यालय विख्यात ||5||
जम्बू धातकी पुष्करार्ध में, पंचमेरु के जिनगृह विख्यात।
जम्बूवृक्ष शाल्मलि तरु अरु, विजयार्ध के अति विख्यात ||6||
वक्षारों गजदंतों इष्वाकारों के, पावन जिनगेह।
सर्व कुलाचल मानुषोत्तर, पर्वत के बन्दूँ धर नेह ||7||

1. तीन वातवलय (1) घनोदीघ वातवलय (वाष्प का घना वातावरण), (2) घनवात वलय (घनी हवा का वातावरण), (3) पतली हवा का वातावरण ये वातवलय तीन लोक को घेरे है। एक के बाद एक इस क्रमशः इनकी मोटाई।

नन्दीश्वर कुण्डलवर द्वीप, रुचकवर के जिन चैत्यालय।
ज्योतिष व्यंतर स्वर्गलोक, अरु भवनवासी के असंख्यात जिनआलय ||8||
एक एक में एक शतक अरु, आठ आठ जिन मूर्ति प्रधान।
अष्ट प्रातिहार्यों वसु मंगल, द्रव्यों से अति शोभावान ||9||
कुल प्रतिमा नौ सौ पच्चीस, करोड़ तिरेपन लाख महान।
सत्ताइस सहस्त्र अरु नौ सौ, अड़तालीस अकृत्रिम जान ||10||
उन्नत धनुष पाँच सौ पद्मासन हैं रत्नमयी प्रतिमा।
वीतराग अर्हन्त मूर्ति की है पावन अचिन्त्य महिमा ||11||
असंख्यात संख्यात जिन भवन, तीन लोक में शोभित हैं।
इन्द्रादिक सुर नर विद्याधर मुनि, वंदन कर मोहित हैं ||12||
देव रचित या मनुज रचित है, भव्य जनों द्वारा वंदित।
कृत्रिम अकृत्रिम चैत्यालय की, पूजन कर मैं हूँ हर्षित ||13||
ढाईद्वीप में भूत भविष्यत, वर्तमान के तीर्थंकर।
पंचवर्ण के मुझे शक्ति दें, मैं निज पद पाऊँ जिनवर ||14||
निजगुण संपत्ति मुझे प्राप्त हो, परम समाधिमरण हो नाथ।
सकल कर्म क्षय हो प्रभु मेरे, बोधिलाभ हो हे जिननाथ ||15||

ॐ ह्रीं श्री तीन लोक संबंधी कृत्रिम अकृत्रिम जिन चैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो पूर्णार्घ्यं स्वाहा।

कृत्रिम अकृत्रिम जिन भवन, भाव सहित उरधार।
मन वच तन जो पूजते वे होते भवसार।।

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री समस्त कृत्रिम अकृत्रिम चैत्यालयेभ्यो नमः।

14. श्री समस्त सिद्धक्षेत्र पूजन

मध्यलोक में ढाई द्वीप के, सिद्धक्षेत्रों को वन्दन।
जम्बूद्वीप सुभरत क्षेत्र के, तीर्थक्षेत्रों को वन्दन।।
श्री कैलाश आदि निर्वाण, भूमियों को मैं करूँ नमन।
श्रद्धा भक्ति विनयपूर्वक हर्षित, हो करता हूँ पूजन।।
शुद्ध भावना यही हृदय में, मैं भी सिद्ध बनूँ भगवन।
रत्नत्रय पथ पर चलकर मैं, नाशूँ चहुँगति का क्रन्दन।।

ॐ ह्रीं श्री समस्त सिद्धक्षेत्र अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्री समस्त सिद्धक्षेत्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री समस्त सिद्धक्षेत्र अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।

ज्ञान स्वभावी निर्मल जल का, सागर उर में लहराता।
फिर भी भवसार भंवरों में, जन्म मरण के दुख पाता।।
श्री सिद्धक्षेत्रों का दर्शन, पूजन वन्दन सुखकारी।
जो स्वभाव का आश्रय लेता, उसको है भव दुखहारी ||1||

ॐ ह्रीं श्री समस्त सिद्धक्षेत्रेभ्यो जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि.।

ज्ञान स्वभावी शीतलतामय, चंदन निज में भरा अपार।
फिर भी भव दावानल में जलजल, दुख पाया बारम्बार।।श्री||2||

ॐ ह्रीं श्री समस्त सिद्धक्षेत्रेभ्यो संसार ताप विनाशनाय चंदनं नि.।

ज्ञान स्वभावी उज्जवल अक्षत, पुंज हृदय में भरे अटूट।
फिर भी अविनाशी अखंड होकर भी, पा न सका निजकूट।।श्री||3||

ॐ ह्रीं श्री समस्त सिद्धक्षेत्रेभ्यो अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि.।

ज्ञान स्वभावी दिव्य सुगंधित, पुष्पों का निज में उपवन।
फिर भी भव माया में पड़, निष्काम न बनपाया भगवन्।।श्री||4||

ॐ ह्रीं श्री समस्त सिद्धक्षेत्रेभ्यो कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।

ज्ञान स्वभावी सरस मनोरम, तृप्ति नैवेद्य स्वयम्।
फिर भी क्षुधारोग से व्याकुल तृष्णा, हुई न तिल भर कम।।श्री||6||
ॐ ह्रीं श्री समस्त सिद्ध क्षेत्रेभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।
ज्ञान स्वभावी स्वपर प्रकाशी, केवल रवि निज में अनुपम।
फिर भी अघमय अंधियारे में भटका, मिटा न मिथ्यातम।।श्री||6||
ॐ ह्रीं श्री समस्त सिद्धक्षेत्रेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.
ज्ञान स्वभावी सहजानंदी विमल धूप से हूँ परिपूर्ण।
फिर भी प्रभो नहीं कर पाया, अब तक अष्टकर्म अरिचूर्ण।।श्री||7||
ॐ ह्रीं श्री समस्त सिद्धक्षेत्रेभ्यो अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।
ज्ञान स्वभावी शिवफलधारी, अविकारी हूँ सिद्ध स्वरूप।
फिर भी भव अटवी में अटका, होकर मैं त्रिभुवन का भूप।।श्री||8||
ॐ ह्रीं श्री समस्त सिद्धक्षेत्रेभ्यो मोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।
ज्ञान स्वभावी चिदानन्द चैतन्य, अनन्त गुणों से भरपूर।
फिर भी पद अनर्घ ना पाया, रहकर निज परिणति से दूर।।
श्री सिद्धक्षेत्रों का दर्शन, पूजन वन्दन सुखकारी।
जो स्वभाव का आश्रय लेता, उसको है भव दुखहारी ||9||
ॐ ह्रीं श्री समस्त सिद्धक्षेत्रेभ्यो अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

जयमाला

तीर्थंकर ऋषि आदि, मुनि गए जहाँ निर्वाण।
उन क्षेत्रों को वंद्यकर, करूँ आत्म कल्याण ||1||
जम्बूद्वीप धातकी खण्ड अरु, पुष्करार्ध में क्षेत्र विदेह।
पंचभरत अरु पंच ऐरावत, तीर्थक्षेत्र वन्दूँ धर नेह ||2||

तीन लोक के सकल तीर्थ, निर्वाण क्षेत्र सविनय वन्दूँ।
सिद्ध अनन्तानंत विराजित, सिद्धशिला नित प्रति वन्दूँ ||3||
अष्टापद कैलाश शिखर पर, ऋषभदेव के पद वन्दूँ।
बालि महाबालि मुनि नागकुमार, आदि मुनिवर वन्दूँ ||4||
श्री सम्मेदशिखर पर्वत पर, बीस तीर्थंकर वन्दूँ।
अजितनाथ संभव, अभिनन्दन, सुमति, पद्म प्रभ को वन्दूँ ||5||
श्री सुपार्श्व चन्द्रप्रभ स्वामी, पुष्पदंत, शीतल वन्दूँ।
प्रभु श्रेयांस, विमल, अनंत जिन, धर्म, शांति, कुन्थु वन्दूँ ||6||
श्री अर, मल्लि, मुनिसुव्रत, नमिजिन, पार्श्वनाथ, प्रभुको वन्दूँ।
मुनि अनंत निर्वाण गये जो, उनके चरणाम्बुज वन्दूँ ||7||
चम्पापुर में वासुपूज्य, तीर्थंकर को सादर वन्दूँ।
श्री मंदारगिरि से मुक्त हुए, मुनियों के पद वन्दूँ ||8||
श्री गिरनार नेमि प्रभु शंबु, प्रद्युम्न अनिरुद्ध आदि वन्दूँ।
कोटि बहत्तर सात शतक मुनि, मुक्त हुए उनको वन्दूँ ||9||
पावापुर में महावीर अंतिम, तीर्थंकर को वन्दूँ।
क्षेत्र गुणावा गौतमस्वामी के, पद कमलों को वन्दूँ ||10||
तुन्गीगिरी श्री रामचन्द्र, हनुमान गवय, गवाक्ष वन्दूँ।
महानील, सुग्रीव नील मुनि, निन्यानवे कोटि वन्दूँ ||11||
शत्रुन्जय पर आठ कोड़ि, मुनियों के चरणाम्बुज वन्दूँ।
भीम युधिष्ठिर अर्जुन पांडव, और द्रविड राजा वन्दूँ ||12||
श्री **गजपंथ शैल** पर मैं, बलभद्र अष्ट के पद वन्दूँ।
आठ कोटि मुनि मुक्ति गए हैं, भाव सहित उनको वन्दूँ||13||

सोनागिरि पर नंग अनंग कुमार, आदि मुनि को वन्दूँ।
साढ़े पाँच कोटि ऋषियों की, यह निर्वाण भूमि वन्दूँ ||14||
रेवातट पर रावण के सुत, आदि मुनीश्वर को वन्दूँ।
साढ़े पाँच कोटि मुनियों को, सादर सविनय अभिनन्दूँ ||15||
पावागढ़ पर साढ़े पाँच कोटि, मुनियों के पद वन्दूँ।
रामचन्द्र सुत लव, मदनांकुश, लाड़देव के नृप वन्दूँ ||16||
तारंगागिरि साढ़े तीन कोटि, मुनियों को मैं वन्दूँ।
श्री वरदत्तराय मुनिसागरदत्त, आदि पद अभिनन्दूँ ||17||
श्री सिद्धवरकूट सनत, मघवा चक्री दोनों वन्दूँ।
कामदेव दस आदि ऋषीश्वर, साढ़े तीन कोटि वन्दूँ ||18||
मुक्तिगिरि से साढ़े तीन कोटि मुनि मोक्ष गए वन्दूँ।
पावागिरि पर सुवर्णभद्र आदिक, चारों मुनि को वन्दूँ ||19||
कोटि शिला से एक कोटि मुनि, सिद्ध हुए उनको वन्दूँ।
देश कलिंग यशोधर नृप के, पाँच शतक सुत मुनि वन्दूँ ||20||
श्री चूलगिरि इन्द्रजीत, कुम्भकरण ऋषिवर वन्दूँ।
कुन्थलगिरि पर श्री देशभूषण, कुलभूषण मुनि वन्दूँ ||21||
रेशंदीगिरि वरदत्तादि पंच, ऋषियों को मैं वन्दूँ।
द्रोणागिरि पर गुरुदत्तादिक मुनियों, को सविनय वन्दूँ ||22||
पंच पहाड़ी राजगृही से, मुक्त हुए मुनिवर वन्दूँ।
[1]चरमकेवली जम्बूस्वामी, मथुरा मुक्ति भूमि वन्दूँ ||23||
पटना से श्री सेठ सुदर्शन, मुक्त हुए उनको वन्दूँ।
कुण्डलपुर से मोक्ष गए, श्रीधर स्वामी के पद वन्दूँ ||24||

1. अन्तिम केवलज्ञानी

पोदनपुर से सिद्ध हुए, श्री बाहुबली स्वामी वन्दूँ।
भरत आदि चक्रेश्वर मुनियों, की निर्वाण धरा वन्दूँ ||25||
श्रवण, द्रोण, वैभार, बलाहक, विंध्य, सह्य, पर्वत वन्दूँ।
प्रवर, कुण्डली, विपुलाचल, हिमवान क्षेत्रों को वन्दूँ ||26||
तीर्थंकर के सभी गणधरों की, निर्वाण भूमि वन्दूँ।
वृषभसेन आदिक गौतम, चौदह सौ उन्सठ ऋषि वन्दूँ ||27||
कामदेव बलभद्र चक्रि जो, मुक्त हुए उनको वन्दूँ।
जल थल नभ से सिद्ध हुए, उपसर्ग केवली सब वन्दूँ ||28||
ज्ञात और अज्ञात सभी, निर्वाण भूमियों को वन्दूँ।
भूत भविष्यत वर्तमान की, सिद्ध भूमियों को वन्दूँ ||29||
मन वच काय त्रियोग पूर्वक, सर्व सिद्ध भगवन वन्दूँ।
सिद्ध स्वपद की प्राप्ति हेतु, पाँचों परमेष्ठि पद वन्दूँ ||30||
सिद्ध क्षेत्रों के दर्शन कर, निज स्वरूप दर्शन कर लूँ।
शुद्ध चेतना सिंधु नीर पी, मोक्ष लक्ष्मी को वर लूँ ||31||
सब तीर्थों की यात्रा करके, आत्मतीर्थ की ओर चलूँ।
अजर अमर अविकल अविनाशी, सिद्धस्वपद की ओर ढलूँ ||32||
भाव शुभाशुभ का अभावकर शुद्ध आत्म का ध्यान करूँ।
रागद्वेष का सर्वनाश कर मंगलमय निर्वाण वरूँ ||33||
ॐ ह्रीं श्री समस्त सिद्धक्षेत्रेभ्यो अनर्घपद प्राप्तये पूर्णार्घ्यं नि.।

श्री निर्वाण क्षेत्र का पूजन वंदन जो जन करते हैं।
समकित का पावन वैभव पा मुक्ति वधू को वरते हैं।।

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री समस्त सिद्धक्षेत्रेभ्यो नमः

श्री जिनवाणी वन्दना

माता तो जिनवाणी और नहीं कोई।।
भवसागर पार करे साँची माँ सोई ||1||
ज्ञान का प्रकाश करे मिथ्याभ्रम खोई।
जीव और पुद्‌गल भिन्न भिन्न दोई ||2||
भेद ज्ञान की महान ज्योति देत जोई।
स्याद्‌वाद नय प्रमाण द्वादशांग होई ||3||
भव्यों की प्रतिपालक मोक्ष सुख संजोई।
समकित को बीज देत अंतर में बोई ||4||

श्री अनादि निधन पर्व पूजाऐं

जैन आगम में नैमित्तिक पर्व पूजनों का विशेष महत्व है। ये पाँचों पर्व अष्टन्हिका, सोलहकारण, पुष्पांजली, दशलक्षण एवं रत्नत्रय अनादि निधन पर्व हैं तथा वर्ष में तीन तीन बार आते हैं। अष्टान्हिका पर्व में आठ दिनों तक इन्द्रादिक सपरिवार आठवें नंदीश्वर द्वीप में जाकर अकृत्रिम जिन चैत्यालयों में स्थित जिनेन्द्र देव की अहर्निश अति उल्लासपूर्वक पूजन भक्ति करते हैं। अन्य चार पर्व माघ, चैत्र एवं भाद्र माह में आते हैं। इसमें से भाद्र पक्ष में पड़ने वाले इन पर्वों को विशेष उल्लासपूर्वक मनाने की परम्परा है, ये धर्म आराधना के पर्व हैं और प्रत्येक मुमुक्षु को स्वपर कल्याणार्थ की भावना से वर्ष में पड़ने वाले तीनों बार के पर्वों को अति उल्लासपूर्वक मनाया जाना श्रेष्यस्कर है।

15. श्री नन्दीश्वर द्वीप (अष्टान्हिका पर्व) पूजन

अष्टम द्वीप श्री नन्दीश्वर आगम में वर्णित पावन।
चार दिशा में तेरह–तेरह जिन चैत्यालय हैं बावन ||1||
एक–एक में बिम्ब एक सौ आठ रत्नमय हैं अति भव्य।
प्रातिहार्य हैं अष्ट मनोहर आठ–आठ हैं **मंगल द्रव्य** ||2||
पाँच सहस्त्र अरु छः सौ सोलह प्रतिमाओं को करुँ प्रणाम।
धनुष पाँच सौ पद्मासन अरिहन्त देव मुद्रा अभिराम ||3||
अष्टान्हिका पर्व में इन्द्रादिक सुर जा करते पूजन।
भाव सहित जिन प्रतिमा दर्शन से होता सम्यक्‌दर्शन ||4||

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वर द्वीपे द्वि पंचाश जिनालयस्थ अरिहंत जिन प्रतिमा समूह अत्र अवतर अवतर संवौषट्। ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वर द्वीपे द्विपंचाश जिनालयस्थ अरिहंत जिन प्रतिमा समूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वर द्वीपे द्वि पंचाश जिनालयस्थ अरिहंत जिन प्रतिमासमूह अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरण।

समकित जल की पावन धारा, निज उर अन्तर में लाऊँ।
मिथ्याभ्रम की धूल हटाऊँ, निज स्वरूप को चमकाऊँ।।
नन्दीश्वर के बावन जिन, चैत्यालय वन्दूँ हर्षाऊँ।
अष्टम द्वीप मनोरम जिन प्रतिमायें, पूजूँ सुख पाऊँ||1||

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वर द्वीपे पूर्व पश्चिमोत्तर दक्षिण दिशा स्थित द्विपंचाश जिनालयस्थ अरहंत जिन प्रतिमाभ्यो जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

क्षमा भाव का शुचिमय चन्दन, उर अन्तर में भर लाऊँ।
क्रोध कषाय नष्ट करके मैं शांति सिंधु, प्रभु बन जाऊँ।।नंदी||2||

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वर द्वीपे द्विपंचाश जिनालयस्थ अरहंत जिन प्रतिमाभ्यो संसारताप विनाशनाय चंदनं नि. स्वाहा।

मार्दव भाव परम उपकारी, भाव पूर्ण अक्षत लाऊँ।
मान कषाय नष्ट करके मैं, शुद्धातम के गुण गाऊँ।।नंदी||3||
ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वर द्वीपे द्विपंचाश जिनालयस्थ अरहंत जिन प्रतिमाभ्यो अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि. स्वाहा।

शुद्ध आर्जव भाव पुष्प से, सजा हृदय को, मैं आऊँ।
सर्वनाश माया कषाय का करूँ, सरलता को पाऊँ।।नंदी||4||
ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वर द्वीपे द्विपंचाश जिनालयस्थ अरहंत जिन प्रतिमाभ्यो कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

सत्य शौच मय भाव भक्ति नैवेद्य, हृदय में भर लाऊँ।
लोभ कषाय नाश करने को, संतोषामृत पी जाऊँ।।नंदी||5||
ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वर द्वीपे द्विपंचाश जिनालयस्थ अरहंत जिन प्रतिमाभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।

द्रव्य भाव संयम तप ज्योति, जगा आतम में रम जाऊँ।
मैं अनादि अज्ञान नाश कर, सम्यक्ज्ञान रत्न पाऊँ।।नंदी.||6||
ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वर द्वीपे द्विपंचाश जिनालयस्थ अरहंत जिन प्रतिमाभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

त्याग भाव आकिंचन पाऊँ, शुद्ध स्वभाव धूप लाऊँ।
पर विभाव परिणति को क्षयकर, निज परिणति वैभव पाऊँ।।नंदी||7||
ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वर द्वीपे द्विपंचाश जिनालयस्थ जिनप्रतिमाभ्यो अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं नि. स्वाहा।

ब्रह्मचर्य का फल पाने को, रत्नत्रय पथ पर आऊँ।
निज स्वरूप में चर्या करके, महामोक्ष फल को पाऊँ।।नंदी ||8||
ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वर द्वीपे द्विपंचाश जिनालयस्थ जिनप्रतिमाभ्यो मोक्षफल प्राप्तये फलं नि. स्वाहा।

संवर और निर्जरा द्वारा कर्म रहित मैं हो जाऊँ।
आश्रव बंध नाश कर स्वामी मैं अनर्घ्य पदवी पाऊँ।।
नन्दीश्वर के बावन जिन चैत्यालय वन्दूँ हर्षाऊँ।
अष्टमद्वीप मनोरम जिन प्रतिमायें पूजूँ सुख पाऊँ ||9||
ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वर द्वीपे द्विपंचाश जिनालयस्थ अरहंत जिनप्रतिमाभ्यो अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

मध्यलोक में एक लाख योजन का **जम्बूद्वीप** प्रथम।
द्वीप **धातकी खण्ड** दूसरा तीजा **पुष्करवर** अनुपम ||1||
चौथा द्वीप **वारुणीवर** है द्वीप **क्षीरवर** है पंचम।
षष्टम् **घृतवर** द्वीप **मनोहर द्वीप इक्षुवर** है सप्तम ||2||
अष्टम् द्वीप श्री **नन्दीश्वर** अद्वितीय शोभाधारी।
योजन कोटि एक सौ त्रेसठ लख चौरासी विस्तारी ||3||
पूरब, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण दिशि में हैं **अंजनगिरि** चार।
इनके भव्य शिखर पर जिन चैत्यालय चारों हैं सुखकार ||4||
चहुँ दिशि चार वापी हैं लाख–लाख योजन जलमय।
इनमें सोलह **दधिमुख पर्वत** जिन पर सोलह चैत्यालय ||5||
सोलह वापी के दो कोणों पर इक–इक **रतिकर पर्वत**।
इन पर हैं **बत्तीस जिनालय** जिनकी है शोभा शाश्वत ||6||
कृष्ण वर्ण **अंजनगिरि** चौरासी सहस्त्र योजन ऊँचे।
श्वेत वर्ण के **दधिमुख पर्वत** दस सहस्त्र योजन ऊँचे ||7||
लाल वर्ण के **रतिकर पर्वत** एक सहस्त्र योजन ऊँचे।
सभी ढोल सम गोल मनोहर पर्वत हैं सुन्दर ऊँचे ||8||

चारों दिशि में महा मनोरम कुल जिन चैत्यालय बावन।
सभी अकृत्रिम अति विशाल हैं उन्नत परम पूज्य पावन ॥9॥
जिन भवनों का एक शतक योजन लम्बाई का आकार।
अर्ध शतक चौड़ाई पचहत्तर योजन ऊँचा है विस्तार ॥10॥
चौसठ वन की सुषमा से शोभित है अनुपम नन्दीश्वर।
है अशोक सप्तच्छद चम्पक आम्र नाम के वन सुन्दर ॥11॥
इन सबमें [1]अवतंश आदि रहते हैं चौंसठ देव प्रबल।
गाते नन्दीश्वर की महिमा अरहंतो का यश उज्जवल ॥12॥
देव देवियाँ नृत्य वाद्य गीतों से करते जिन पूजन।
जयध्वनि से आकाश गुंजाते थिरक–थिरक करते नर्तन ॥13॥
कार्तिक फागुन अरु अषाढ़ में इन्द्रादिक सुर आते हैं।
अंतिम आठ दिवस पूजन कर मन में अति हर्षाते हैं ॥14॥
दो–दो पहर एक इक दिशि में आठ पहर करते पूजन।
धन्य धन्य नन्दीश्वर रचना धन्य धन्य पूजन अर्चन ॥15॥
ढाई द्वीप तक मनुज क्षेत्र है आगे होता नहीं गमन।
ढाई द्वीप से आगे तो जा सकते हैं केवल सुरगण ॥16॥
शक्तिहीन हम इसीलिए करते हैं यहीं भाव पूजन।
नन्दीश्वर की सब प्रतिमाओं को है भाव सहित वन्दन ॥17॥
सारे अघ मिटें हमारे आत्म प्रतीति जगे मन में।
शुद्धभाव अभिवृद्धि सहज हो समकित पायें जीवन में ॥18॥
यही विनय है यही प्रार्थना यही भावना है भगवान।
नन्दीश्वर की पूजन करके, करें आत्मा का ही ध्यान ॥19॥

1. अवतंश जाति के देव

आत्म ध्यान की महाशक्ति से वीतराग अरिहन्त बने।
घाति अघाति कर्म सब क्षयकर मुक्तिकंत भगवंत बनें ॥20॥
ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वर द्वीपे द्विपंचाश जिनालयस्थ पाँच हजार छः सौ सोलह अरहंत जिन प्रतिमाभ्यो पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

भाव सहित नन्दीश्वर की पूजन से होता है कल्याण।
स्वर्ग मोक्ष पद मिल जाता है धर्म ध्यान से सहज महान।।

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वर संज्ञाय नमः।

16. श्री पंचमेरु पूजन

मध्यलोक में ढाई द्वीप के पंचमेरु को करूँ प्रणाम।
मेरु **सुदर्शन, विजय, अचल, मंदर, विद्युन्माली** अभिराम ॥1॥
मेरु सुदर्शन एक लाख योजन ऊँचा है महिमावान।
शेष मेरु योजन चौरासी सहस्त्र उच्च हैं दिव्य महान ॥2॥
पाँचों मेरु अनादि निधन हैं स्वर्णमयी सुन्दर सुविशाल।
इन पर अस्सी जिन चैत्यालय वन्दूँ सदा झुकाऊँ भाल ॥3॥
इनका पूजन वन्दन करके मैं अनादि अघ तिमिर हरूँ।
मन वच काया शुद्धिपूर्वक श्री जिनवर को नमन करूँ ॥4॥
ॐ ह्रीं श्री सुदर्शन, विजय, अचल, मन्दर, विद्युन्माली पंचमेरु संबंधी अस्सी जिन चैत्यालयस्थ जिन अरहंत प्रतिमा समूह अत्र अवतर अवतर संवौषट्, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।

यह अथाह भवसागर जल पीकर भी तृषा न शांत हुई।
जन्म मरण के चक्कर में पड़कर मेरी मति भ्रान्त हुई।।

पंचमेरु के अस्सी जिन चैत्यालय को वन्दन कर लूँ।
भक्ति भाव से पूजन करके मैं भवसागर दुख हर हूँ ||1||
ॐ ह्रीं श्रीपंचमेरु संबंधी अस्सी जिन चैत्यालयस्थ अरहंत जिनबिम्बेभ्यो जलं नि. स्वाहा।

भव दावानल की भीषण ज्वाला में, जल जल दुख पाया।
ताप निकंदन निजगुण चन्दन, शीतलता पाने आया।।पचमेरु||2||
ॐ ह्रीं श्री पंचमेरु संबंधी अस्सी जिन चैत्यालयस्थ अरहंत जिनबिम्बेभ्यो चंदनं नि. स्वाहा।

भव समुद्र की चारों गतिमय, भंवरों में गोता खाया।
अक्षय पद पाने को हे प्रभु, कभी न अक्षतगुणभाया।।पंचमेरु||3||
ॐ ह्रीं श्री पंचमेरु संबंधी अस्सी जिन चैत्यालयस्थ अरहंत जिनबिम्बेभ्यो अक्षतं नि. स्वाहा।

कामभाव से भव दुख की, श्रृंखला बढ़ाता ही आया।
महाशील के सुमन प्राप्त करने को, देवशरण आया।।पंचमेरु||4||
ॐ ह्रीं श्री पंचमेरु संबंधी अस्सी जिन चैत्यालयस्थ अरहंत बिम्बेभ्यो पुष्पं नि. स्वाहा।

जग के अनगिनती द्रव्यों को, पाकर तृप्त न हो पाया।
इसीलिए निर्लोभ वृत्ति नैवेद्य, प्राप्त करने आया।।पंचमेरु||5||
ॐ ह्रीं श्री पंचमेरु संबंधी अस्सी जिन चैत्यालयस्थ अरहंत बिम्बेभ्यो नैवेद्यं नि. स्वाहा।

अंधकार में मार्ग भूलकर भटक भटक अति दुख पाया।
सम्यक्ज्ञान प्रकाश प्राप्त करने को यह दीपक लाया।।पंचमेरु||6||
ॐ ह्रीं श्री पंचमेरु संबंधी अस्सी जिन चैत्यालयस्थ अरहंत बिम्बेभ्यो दीपं नि. स्वाहा।

विकट जगत जंजाल कर्ममय, इसको तोड़ नहीं पाया।
आत्म ध्यान की ध्यान अग्नि में, कर्म जलाने मैं आया।।पंचमेरु||7||
ॐ ह्रीं श्री पंचमेरु संबंधी अस्सी जिन चैत्यालयस्थ अरहंत बिम्बेभ्यो धूपं नि. स्वाहा।

भव अटवी में अटका अब तक, नहीं धर्म का फल पाया।
चिदानंद चैतन्य स्वभावी मोक्ष, प्राप्त करने आया।। पंचमेरु||8||
ॐ ह्रीं श्री पंचमेरु संबंधी अस्सी जिन चैत्यालयस्थ अरहंत बिम्बेभ्यो फलं नि. स्वाहा।

क्षमा शील संयम व्रत तप, शुचि विनयसत्य उर में लाया।
निज अनंतसुख पाने को प्रभु मैं, वसुद्रव्य अर्घ्य लाया।।
पंचमेरु के अस्सी जिन चैत्यालय, को वन्दन कर लूँ।
भक्ति भाव से पूजन करके, मैं भवसागर दुख हर लूँ ||9||
ॐ ह्रीं श्री पंचमेरु संबंधी जिन चैत्यालयस्थ अरहंत जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं नि. स्वाहा।

श्री पंचमेरू अर्घ्यावलि

1 - श्री सुदर्शन मेरू अर्घ्य

जम्बूद्वीप **सुमेरु सुदर्शन**, परम पूज्य अति मनभावन।
भू पर **भद्रशाल वन**, पाँच शतक योजन पर **नन्दन वन**।।
साढ़े बासठ सहस्त्र योजन, ऊँचा है **सौमनस सुवन**।
फिर छत्तीस सहस्त्र योजन, ऊँचाई पर **पांडुक वन**।।
चारों वन की चार दिशा में, एक एक जिन चैत्यालय।
सोलह चैत्यालय हैं अनुपम, विनय सहित वन्दू जय जय ||1||
ॐ ह्रीं श्री जम्बूद्वीप सुदर्शन मेरु संबंधी षोडशजिन चैत्यालयस्थ अरहंत बिम्बेभ्यो अर्घ्यं नि. स्वाहा।

2 - श्री विजय मेरु अर्घ्य

खण्ड धातकी पूर्व दिशा में विजय **मेरु पर्वत** पावन।
भू पर **भद्रशाल वन** पाँच शतक योजन पर **नंदन वन**।।
साढ़े पचपन सहस्त्र योजन ऊँचा है **सौमनस सुवन**।
अट्ठाईस सहस्त्र योजन की, ऊँचाई पर पांडुक वन।।चारों।।2।।
ॐ ह्रीं श्री धातकीखण्डद्वीप पूर्व दिशा विजयमेरु संबंधी षोडशजिन चैत्यालयस्थ अरहंत जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं नि. स्वाहा।

3 - श्री अचल मेरु अर्घ्य

खण्ड धातकी पश्चिम दिशि में अचल मेरु पर्वत सुन्दर।
विजय मेरु सम इस पर भी हैं सोलह चैत्यालय मनहर।।
प्रातिहार्य आठों वसुमंगल द्रव्यों से जिनगृह शोभित।
देवइन्द्र विद्याधर चक्री दर्शन कर होते हर्षित।।चारों।।3।।
ॐ ह्रीं श्री धातकीखण्डद्वीप पश्चिम दिशा अचल मेरु संबंधी षोडशजिन चैत्यालयस्थ अरहंत जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं नि. स्वाहा।

4 - श्री मन्दर मेरु अर्घ्य

पुष्करार्ध की पूर्व दिशा में **मंदर मेरु** महा सुखमय।
विजय मेरु सम इसकी रचना सोलह चैत्यालय जय जय।।
चन्द्र सूर्य सम कांति सहित हैं रत्नमयी प्रतिमा से युक्त।
दस प्रकार के कल्पवृक्ष की मालाओं से हैं संयुक्त।।चारों।।4।।
ॐ ह्रीं श्री पुष्करार्धद्वीप पूर्व दिशा मंदर मेरु संबंधी षोडशजिन चैत्यालयस्थ अरहंत जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं नि. स्वाहा।

5 - श्री विद्युन्माली मेरु अर्घ्य

पुष्करार्ध की पश्चिम दिशि में विद्युन्माली मेरु महान।
विजय मेरु सम इसकी रचना सोलह चैत्यालय छविमान।।
सुर विद्याधर असुर सदा ही पूजन करने आते हैं।
चारण ऋद्धिधारि मुनि भी दर्शन को आते जाते हैं।।
चारों वन की चार दिशा में, एक एक जिन चैत्यालय।
सोलह चैत्यालय हैं अनुपम, विनय सहित वन्दू जय जय ।।5।।
ॐ ह्रीं श्री पुष्करार्धद्वीप पश्चिमदिशा विद्युन्माली संबंधीषोडशजिन चैत्यालयस्थ अरहंत जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

एक लाख योजन का **जम्बूद्वीप लोक** के मध्य प्रधान।
चार लाख योजन का सुन्दर **द्वीप धातकी** खण्ड महान ।।1।।
सोलह लाख सुयोजन का है **पुष्कर द्वीप** अपूर्व ललाम।
इनमें पंचमेरु हैं अनुपम परम सुहावन हैं शुभ नाम ।।2।।
सूर्य चन्द्र देते प्रदक्षिणा करते निशदिन सतत प्रणाम।
एक मेरु संबंधी सोलह पंचमेरु अस्सी जिनधाम ।।3।।
एक शतक अर अर्ध शतक योजन लम्बे चौड़े जिनधाम।
पौन शतक योजन ऊँचे हैं बने अकृत्रिम भव्य ललाम ।।4।।
एक–एक में बिम्ब एक सौ आठ विराजित हैं मनहर।
आठ सहस्त्र छः सौ चालीस हैं श्री अरहंत मूर्ति सुन्दर ।।5।।
धनुष पाँच सौ पद्मासन हैं गूंज रहा है जय जय गान।
नृत्य वाद्य गीतों में झंकृत दशों दिशायें महिमावान ।।6।।
तीर्थंकर के जन्मोत्सव की सदा गूँजती जय जयकार।
धन्य–धन्य श्रीजिनशासन की महिमा जग में अपरम्पार ।।7।।

नहीं शक्ति हममें जाने की यही भाव पूजन करते।
पुष्पांजलि व्रत की महिमा से भव–भव के पातक हरते ||8||
पंचमेरु की पूजा करके निज स्वभाव में आ जाऊँ।
भेद ज्ञान की नवल ज्योति से सम्यक् दर्शन प्रगटाऊँ ||9||
सम्यक् ज्ञान चारित्र धार मुनि बन, स्वरूप में रम जाऊँ।
वसुकर्मों का सर्वनाश कर सिद्धिशिला पर जम जाऊँ ||10||
ॐ ह्रीं श्री ढाईद्वीप स्थित ***सुदर्शन विजय, अचल, मन्दर, विद्युन्माली*** *पंचमेरु संबंधी अस्सी जिन चैत्यालयस्थ अरहंत बिम्बेभ्यो अर्घ्यं नि. स्वाहा।*

पंचमेरु जिनधाम की महिमा अगम अपार।
पुष्पांजलि व्रत जो धरें हो जायें भव पार।।

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्।।

जाप्य मंत्र : ॐ ह्रीं श्री पंचमेरु स्थित चैत्यालयस्थ अरहंत बिम्बेभ्यो नमः

17. श्री षोडशकारण पर्व पूजन

षोडशकारण पर्व धर्म की करूँ धर्म आराधना।
मुक्ति सुनिश्चित यदि इस व्रत की हो निजात्म में साधना ||1||
दुखी जगत के जीव मात्र का हित हो निज कल्याण हो।
अविनश्वर लक्ष्मी से परिणय मोक्ष प्रकाश महान हो ||2||
पूर्ण ज्ञान कैवल्य अनन्तानंत गुणों का वास हो।
तीर्थंकर पद दाता सोलहकारण धर्म विकास हो ||3||
ॐ ह्रीं श्री दर्शनविशुद्ध्यादि षोडशकारणाणि अत्र अवतर अवतर संवौषट्, ॐ ह्रीं श्री दर्शनविशुद्ध्यादि षोडशकारणाणि अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठ, ॐ ह्रीं श्री दर्शनविशुद्ध्यादि षोडशकारणाणि अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।

जल की उज्जवल निर्मलता, से मिथ्यामेल न धो सका।
आकुलता मय जन्म मरण से, रहित न अब तक हो सका।।
निर्विकल्प अविकल सुखदायक, सोलहकारण भावना।
जय जय तीर्थंकरपद दायक, सोलहकारण भावना ||1||
ॐ ह्रीं श्री दर्शनविशुद्ध्यादि षोडशकारणेभ्यो जलं नि. स्वाहा।
भाव मर प्रति समय किया है, मैंने काल अनादि से।
भव संताप बढ़ाया चलकर, उल्टी चाल अनादि से।।निर्वि.||2||
ॐ ह्रीं श्री दर्शनविशुद्ध्यादि षोडशकारणेभ्यो चंदनं नि. स्वाहा।
मुक्त नहीं हो पाया अब तक, परभावों के जाल से।
यह संसार चक्र मिट जाये, धर्म चक्र की चाल से।।निर्वि.||3||
ॐ ह्रीं श्री दर्शनविशुद्ध्यादि षोडशकारणेभ्यो अक्षतं नि. स्वाहा।
काम वेदना भव पीड़ामय, पर परिणति दुखदायिनी।
काम विनाशक निज चेतनपद, निज परणति सुखदायिनी।।निर्वि.||4||
ॐ ह्रीं श्री दर्शनविशुद्ध्यादि षोडशकारणेभ्यो पुष्पं नि. स्वाहा।
जग तृष्णा की व्याधि हजारों, आकुल करती हैं मुझे।
क्षुधा रोग की माया नागिन भव भव डसती है मुझे ।।निर्वि.||5||
ॐ ह्रीं श्री दर्शनविशुद्ध्यादि षोडशकारणेभ्यो नैवेद्यं नि. स्वाहा।
आत्मज्ञान रवि ज्योति प्रकाशित हो, अब स्वपर प्रकाशिनी।
शुद्ध परमपद प्राप्ति भावना, तम नाशक भव नाशिनी।।निर्वि.||6||
ॐ ह्रीं श्री दर्शनविशुद्ध्यादि षोडशकारणेभ्यो दीपं नि.।
एक भूल कर्मों की संगति, भव वन में भटका रही।
अग्नि लोह की संगति करके, घन की चोटें खा रही।।निर्वि.||7||
ॐ ह्रीं श्री दर्शनविशुद्ध्यादि षोडशकारणेभ्यो धूपं नि.।

निज स्वभाव बिन हुई सदा ही, अष्टकर्म की जीत ही।
महामोक्ष फल पाने का पुरूषार्थ किया, विपरीत ही।।निर्वि.||8||
ॐ ह्रीं श्री दर्शनविशुद्धयादि षोडशकारणेभ्यो फलं नि. स्वाहा।
जल फलादि वसु द्रव्य अर्घ का, अर्थ कभी आया नहीं।
अविचल अविनश्वर अनर्घपद, इसीलिए पाया नहीं।।
निर्विकल्प अविकल सुखदायक, सोलहकारण भावना।
जय जय तीर्थंकरपद दायक, सोलहकारण भावना ||9||
ॐ ह्रीं श्री दर्शनविशुद्धयादि षोडशकारणेभ्यो अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

भव्य भावना षोडशकारण, विमल मुक्ति निर्वाण पथ।
तीर्थंकर पदवी पाने का, द्रुत गतिवान प्रयाणरथ ||1||
रागादिक मिथ्यात्व रहित, समकित हो निज की प्रीतिमय।
दोष रहित [1]**दर्शनविशुद्धि भावना**, मुक्ति संगीतमय ||2||
मन वच काया शुद्धि पूर्वक, रत्नत्रय आराध लें।
तप का आदर परम **विनय सम्पन्न भावना** साध लें ||3||
पंचव्रत सहित शील स्वगुण परिपूर्ण शीलमय आचरण।
निरतिचार **भावना शीलव्रत**, दोषहीन अशरण शरण ||4||
शास्त्र पठन गुरु नमन, पाठ उपदेश स्तवन ध्यानमय।
हे **अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोग भावना**, हृदय में ज्ञानमय ||5||
मित्र भ्रात पत्नी सुत आदिक और विषय संसार के।
इनसे पूर्ण विरक्ति रखें, **संवेग भावना** धार के ||6||
हम उत्तम मध्यम जघन्य सत् पात्रों को पहिचान लें।
चार दान दे नित्य **शक्तितपस्त्याग भावना** जान लें ||7||

1. बोल्ड लेटर्स में सोलहकारण भावना के नाम हैं।

मुक्ति प्राप्ति हित आत्म आचरण शक्ति भक्ति अनुरूप हो।
द्वादश विधि से **तपश्चरण भावना**, शक्ति तप रूप हो ||8||
इष्ट वियोग अनिष्ट योग, उपसर्ग मरण या रोग हो।
साधु समाधि भावना अनुपम, कभी न दुखमय योग हो ||9||
रोगी मुनि की भक्ति पूर्वक, सेवा सुश्रुषा करें।
भव्य **भावना वैयावृत्यकरण** मन मंजूषा भरें ||10||
मन वच काया से विजयी हो करें, भक्ति अरिहंत की।
निर्मल **अर्हद भक्ति भावना**, शुद्ध रूप भगवन्त की ||11||
गुरु निर्ग्रन्थ चरण वन्दन पूजन, नित विनय प्रणाम हो।
नमस्कार **आचार्य भक्ति भावना**, हृदय वसुयाम हो ||12||
लोकालोक प्रकाशक, जिन श्रुत व्याख्यान अनुरूप हो।
बहुश्रुत भक्ति भावना मन, में उपाध्याय मुनि रूप हो ||13||
सप्त तत्व पंचास्तिकाय, छह द्रव्य आदि सत् जान लें।
जिन आगम का पढ़ना **प्रवचन भक्ति भावना** मान लें ||14||
कार्योत्सर्ग प्रतिक्रमण, समता स्वाध्याय वन्दन विमल।
देव स्तुति **षट कृत्य भावना**, आवश्यक निर्मल सरल ||15||
जिन अभिषेक नृत्य गीतों वाद्यों से पूजन अर्चना।
श्रुत प्रवचन **मार्ग प्रभावना** जिनालयों की अर्चना ||16||
शीलवान चारित्रवान, जिन मुनियों का आदर करें।
मृदुल **भावना प्रवचन वत्सल**, मुनिचरणों में शिर धरें ||17||
इनके बाह्य आचरण ही से, स्वर्ग सम्पदा झिलमिले।
आभ्यन्तर आचरण किया तो, मोक्ष लक्ष्मी फल मिले ||18||
जितना अंश शुद्धि का होगा, उतनी आत्म विशुद्धि रे।
सतत जाग्रत हो निजात्म में, मुक्ति प्राप्ति की बुद्धि रे ||19||

पूर्ण शुद्धि होगी निजात्म में तब होगा निर्वाण रे।
ज्ञानानन्दी गुण अनन्तमय स्वयं सिद्ध भगवान रे ||20||

ॐ ह्रीं श्री दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यो पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

दोहा

सोलह कारण भावना हरे जगत दुख द्वन्द।
तीर्थंकर पद प्राप्त कर करो सदा आनन्द।।

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री दर्शनविशुद्धयादि षोडशकारण भावनाभ्यो नमः।

18. श्री दशलक्षण धर्म पूजन

उत्तम क्षमा आत्मा का गुण **उत्तम मार्दव** विनय स्वरूप।
उत्तम आर्जव माया नाशक **उत्तम शौच** लोभहर भूप
उत्तम सत्य स्वभाव ज्ञानमय **उत्तम संयम** संवर रूप।
उत्तम तप निर्जरा कर्म की **उत्तम त्याग** स्वरूप अनूप।।
उत्तम आकिंचन्य विरागमय **उत्तम ब्रह्मचर्य** चिद्रूप।
धन्य धन्य दशधर्म परम पद दाता सुखमय मोक्ष स्वरूप।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तम क्षमा, मार्दव, आर्जव, सत्य, शौच, संयम, तप, त्याग, आकिंचन्य ब्रह्मचर्य दशलक्षण धर्मा अत्र अवतर अवतर संवौषट्, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

जल स्वभाव शीतल निर्मल, पीकर भी प्यास न बुझ पाई।
जन्म मरण का चक्र मिटाने, आज धर्म की सुधि आई।।
उत्तम क्षमा मार्दव आर्जव, शौच सत्य संयम तप त्याग।
आकिंचन ब्रह्मचर्य धर्म के, दशलक्षण से हो अनुराग ||1||

ॐ ह्रीं श्री उत्तम क्षमादि दशधर्मेभ्यो जन्मजरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

दाह निकंदन चन्दन पाकर भी, तो दाह न मिट पाई।
राग आग की ज्वाला बुझाने, आज धर्म की सुधि आई।।उत्तम||2||

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमादि दशधर्मेभ्यो संसार ताप विनाशनाय चंदनं नि.।

शुभ्र अखण्डित तन्दुल पाकर भी, निज रुचि न सुहा पाई।
अजर अमर अक्षय पद पाने, आज धर्म की सुधि आई।।उत्तम||3||

ॐ ह्रीं श्री उत्तम क्षमादि दशधर्मेभ्यो अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि.।

अगणित पुष्प सुवासित पाकर, काम व्याधि न मिट पाई।
अब कन्दर्प दर्प हरने को, आज धर्म की सुधि आई।।उत्तम||4||

ॐ ह्रीं श्री उत्तम क्षमादि दशधर्मेभ्यो कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।

जड़ की रुचि के कारण अब तक, निज की तृप्ति न हो पाई।
सहज तृप्त चेतन पद पाने, आज धर्म की सुधि आई।।उत्तम||5||

ॐ ह्रीं श्री उत्तम क्षमादि दशधर्मेभ्यो क्षुधारोगविनाशनायनैवेद्यं नि.।

मिथ्याभ्रम की चकाचौंध में, दृष्टि शुद्ध न हो पाई।
मोह तिमिर का अन्त कराने, आज धर्म की सुधि आई।।उत्तम||6||

ॐ ह्रीं श्री उत्तम क्षमादि दशधर्मेभ्यो मोहान्धकारविनाशनायदीपं नि.।

आर्त रौद्र ध्यानों में रहकर, धर्म ध्यान छवि ना भायी।
अष्टकर्म विध्वंस कराने आज, धर्म की सुधि आई।।उत्तम ||7||

ॐ ह्रीं श्री उत्तम क्षमादि दशधर्मेभ्यो अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।

राग हेय परिणति फल पाकर, निज परिणति ना मिल पाई।
फल निर्वाण प्राप्त करने को आज धर्म की सुधि आई।।उत्तम ||8||

ॐ ह्रीं श्री उत्तम क्षमादि दशधर्मेभ्यो महामोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।

चौरासी के क्रूर चक्र में उलझा, शान्ति न मिल पाई।
निज अमरत्व प्राप्त करने को आज धर्म की सुधि आई।।
उत्तम क्षमा मार्दव आर्जव, शौच सत्य संयम तप त्याग।
आकिंचन ब्रह्मचर्य धर्म के, दशलक्षण से हो अनुराग ||9||
ॐ ह्रीं श्री उत्तम क्षमादि दशधर्मेभ्यो अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

1 - उत्तम क्षमा धर्म

उत्तम क्षमा धर्म है सुख का सागर, तीन लोक में सार।
जन्म मरण दुख का अभाव कर, शीघ्र नाश करता संसार।।
क्रोधकषाय विनाशक दुर्गति नाशक मुनियों द्वारा पूज्य।
व्रत संयम को सफल बनाता सुगति प्रदाता है अति पूज्य।।
जहाँ क्षमा है वहीं धर्म है, स्व पर दया का मूल महान।
जय जय उत्तम क्षमा धर्म की जो है जग में श्रेष्ठ प्रधान ||1||
ॐ ह्रीं श्री उत्तम क्षमा धर्मांगाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

2 - उत्तम मार्दव धर्म

उत्तम मार्दव धर्म ज्ञानमय, वसु मद रहित परम सुखकार।
मानकषाय नष्ट करता है, विनय गुणों का है भण्डार।।
विनय बिना तत्वों का हो सकता, न कभी सम्यक्श्रद्धान।
दर्शन ज्ञान चारित्र विनय तप, बिना न होता सम्यक्ज्ञान।।
जहाँ मार्दव वहीं धर्म है, वहीं मोक्ष नगरी का द्वार।
उत्तम मार्दव धर्म हमारा, विनय भाव की जय जयकार ||2||
ॐ ह्रीं श्री उत्तम मार्दव धर्मांगाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

3 - उत्तम आर्जव धर्म

उत्तम आर्जव धर्म कुटिलता, से विरहित ऋजुता से पूर्ण।
निज आतम का परम मित्र है, करता माया शल्य विचूर्ण।।
लेशमात्र भी मायाचारी, कुगति प्रदायक अति दुखकार।
सरल भाव चेतन गुणधारी, टंकोत्कीर्ण महासुखकार।।
शिवमय शाश्वत मोक्ष प्रदाता, मंगलमय अनमोल परम।
उत्तम आर्जव धर्म आत्म का, अभय रूप निश्चल अनुपम ||3||
ॐ ह्रीं श्री उत्तम आर्जव धर्मांगाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

4 - उत्तम शौच धर्म

उत्तम शौच धर्म सुखकारी, मन वच काया करता शुद्ध।
लोभ कषाय नाश कर देता, समकित होता परम विशुद्ध।।
ऋद्धि सिद्धि का लोभ न, किन्चित इसके कारण हो पाता।
जो सन्तोषामृत पीता है, वही आत्मा को ध्याता।।
शौच धर्म पावन मंगलमय, से हो जाता है निर्वाण।
उत्तम शौच धर्म ही जग में, करता है सबका कल्याण ||4||
ॐ ह्रीं श्री उत्तम शौच धर्मांगाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

5 - उत्तम सत्य धर्म

उत्तम सत्य धर्म हितकारी, निज स्वभाव शीतल पावन।
वचन गुप्ति के धारी मुनिवर ही, पाते हैं मुक्ति सदन।।
सब धर्मों में यह प्रधान है, भव तम नाशक सूर्य समान।
सुगति प्रदायक भवसागर से, पार उतरने को जलयान।।

सत्य धर्म से अणुव्रत और, महाव्रत होते हैं निर्दोष।
जय जय उत्तम सत्य धर्म त्रिभुवन में गूंज रहा जयघोष ||5||
ॐ ह्रीं श्री उत्तम मार्दव धर्मांगाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

6 - उत्तम संयम धर्म

उत्तम संयम तीन लोक में, दुर्लभ, सहज मनुज गति में।
दो क्षण को पाने की क्षमता, देवों में न सुरपति में।।
पंचेन्द्रिय मन वश में करना, त्रस थावर रक्षा करना।
अनुकम्पा आस्तिक्य प्रशम, संवेगधार मुनिपद धरना।।
धन्य धन्य संयम की महिमा, तीर्थंकर तक अपनाते।
उत्तम संयम धर्म जयति, जय हम पूजन कर हर्षाते ||6||
ॐ ह्रीं श्री उत्तम संयम धर्मांगाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

7 - उत्तम तप धर्म

उत्तम तप है **धर्म** परम पावन, स्वरूप का मनन जहाँ।
यही सुतप है अष्टकर्म की, होती है निर्जरा जहाँ।।
पंचेन्द्रिय का दमन सर्व, इच्छाओं का निरोध करना।
सम्यक तप धर निज स्वभाव से, भाव शुभाशुभ को हरना।।
धन्य धन्य बाह्यान्तर द्वादश, तप विध धन्य धन्य मुनिराज।
उत्तम तप जो धारण करते हो जाते हैं श्री जिनराज ||7||
ॐ ह्रीं श्री उत्तम तप धर्मांगाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

8 - उत्तम त्याग धर्म

उत्तम त्याग धर्म है अनुपम, पर पदार्थ का निश्चय त्याग।
अभय शास्त्र औषधि आहार हैं, चारों दान सरल शुभ राग।।

सरल भाव से प्रेम पूर्वक, करते हैं जो चारों दान।
एक दिवस गृह त्याग साधु, हो करते हैं निज का कल्याण।।
अहो दान की महिमा, तीर्थंकर प्रभु तक लेते हैं आहार।
उत्तम त्याग धर्म की, जय जय जो है स्वर्ग मोक्ष दातार ||8||
ॐ ह्रीं श्री उत्तम त्याग धर्मांगाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

9 - उत्तम आंकिचन्य धर्म

उत्तम आकिंचन्य है **धर्म**, स्वरूप ममत्व भाव से दूर।
चौदह अंतरंग दश बाहर के, हैं जहाँ परिग्रह चूर।।
तृष्णाओं को जीता पर, द्रव्यों से राग नहीं किंचित।
सर्व परिग्रह त्याग मुनीश्वर विचरें वन में आत्माश्रित।।
परम ज्ञानमय परम ध्यानमय सिद्ध स्वपद का दाता है।
उत्तम आकिंचन व्रत जग में श्रेष्ठ धर्म विख्याता है ||9||
ॐ ह्रीं श्री उत्तम आकिंचन्य धर्मांगाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

10 - उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म

उत्तम ब्रह्मचर्य दुर्धर **व्रत** है सर्वोत्कृष्ट जग में।
काम वासना नष्ट किये बिन नहीं सफलता शिवमग में।।
विषय भोग अभिलाषा तज जो आत्मध्यान में रम जाते।
शील स्वभाव सजा दुर्मतिहर काम शत्रु पर जय पाते।।
परमशील की पवित्र महिमा ऋषि गणधर वर्णन करते।
उत्तम ब्रह्मचर्य के धारी ही भवसागर से तिरते ||10||
ॐ ह्रीं श्री उत्तम ब्रह्चर्य धर्मांगाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

उत्तम क्षमा धर्म को धारूँ क्रोध कषाय विनाश करूँ।
पर पदार्थ को इष्ट अनिष्ट न मानूँ आत्म प्रकाश करूँ ||1||
उत्तम मार्दव धर्म ग्रहण कर विनय स्वरूप विकास करूँ।
पर कर्त्तत्व मान्यता त्यागूँ अहंकार का नाश करूँ ||2||
उत्तम आर्जव धर्म धार माया कषाय संहार करूँ।
कपट भाव से रहित शुद्ध आतम का सदा विचार करूँ ||3||
उत्तम शौच धर्म धारण कर लोभ कषाय विनष्ट करूँ।
शुचिमय चेतन से अशुद्ध ये चार घातिया कर्म हरूँ ||4||
उत्तम सत्य धर्म से निर्मल निज स्वरूप को सत्य करूँ।
हितमित प्रिय सच बोलूँ नित निज परिणति के संग नृत्य करूँ||5||
उत्तम संयम धर्म सभी जीवों के प्रति करूणा धारूँ।
समिति गुप्ति व्रत पालन करके निज आतम गुण विस्तारूँ ||6||
उत्तम तप धर्म शुक्ल ध्यान से आठों कर्मों को जारूँ।
अन्तरंग बहिरंग तपों से निज आतम को उजियारूँ ||7||
उत्तम त्याग पांच पापों का सर्व देश मैं त्याग करूँ।
योग्य पात्र को योग्य दान दे उर में सहज विराग भरूँ ||8||
उत्तम आकिंचन्य रागादिक भावों का परिहार करूँ।
सर्व परिग्रह से विमुक्त हो मुनिपद अंगीकार करूँ ||9||
उत्तम ब्रह्मचर्य उर धारूँ आत्म ब्रह्म में लीन रहूँ।
कामबाण विध्वंस करूँ मैं शील स्वभावाधीन रहूँ ||10||
दशलक्षणव्रत की महिमा का नित प्रति जयजयगान करूँ।
दश धर्मों का पालन करके महामोक्ष निर्वाण वरूँ ||11||
ॐ ह्रीं श्री उत्तम क्षमा, मार्दव, आर्जव, शौच, सत्य, संयम, तप, त्याग, आकिंचन्य, ब्रह्मचर्य दशधर्मेभ्यो पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

श्री दशलक्षण धर्म की महिमा अगम अपार।
जो भी इसको धारते वे हो जाते भवपार।।
इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्
जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री उत्तम क्षमा, मार्दव, आर्जव, शौच, सत्य, संयम, तप, त्याग, आकिंचन्य, ब्रह्मचर्य धर्मेभ्यो नमः

19. श्री रत्नत्रय धर्म पूजन

जय जय **सम्यक् दर्शन** पावन, मिथ्याभ्रम नाशक श्रद्धान।
जय जय **सम्यक् ज्ञान** तिमिर हर, जय जय वीतराग विज्ञान।।
जय जय **सम्यक् चारित** निर्मल, मोह क्षोभ हर महिमावान।
अनुपम रत्नत्रय धारणकर, मोक्षमार्ग पर करूँ प्रयाण।।
ॐ ह्रीं श्री सम्यक् रत्नयत्राय धर्म अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्री सम्यक् रत्नयत्राय धर्म अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री सम्यक् रत्नत्राय धर्म अत्र मम् सन्निहितो भवभववषट्।
सम्यक् सरिता सलिल जल द्वारा मिथ्याभ्रम प्रभु दूर हटाव।
जन्म मरण का क्षय कर डालूँ, साम्य भाव रस मुझे पिलाव।।
दर्शन ज्ञान चरित्र साधना से पाऊँ निज शुद्ध स्वभाव।
रत्नत्रय की पूजन करके, राग द्वेष का करूँ अभाव ||1||
ॐ ह्रीं श्री सम्यक रत्नत्राय धर्माय जन्म जरामृत्यु विनाशनाय जलं।
शुभ भावों का चंदन घिस घिस, निज से किया सदा अलगाव।
भव ज्वाला शीतल हो जाये, ऐसी आत्म प्रतीत जगाव।।दर्शन||2||
ॐ ह्रीं श्री सम्यक रत्नत्राय धर्माय संसार ताप विनाशनाय चंदनं नि.
भव समुद्र की भंवरों में फंस, टूटी अब तक मेरी नाव।
पुण्योदय से तुमसा नाविक, पाया मुझको पार लगाव।।दर्शन||3||
ॐ ह्रीं श्री सम्यक रत्नत्राय धर्माय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि.।

काम क्रोध मद मोह लोभ से, मोहित हो करता परभाव।
दृष्टि बदल जाये तो सृष्टि बदल जाये, यह सुमतिजगाव।।दर्शन।।4।।
ॐ ह्रीं श्री सम्यक रत्नत्रय धर्माय कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।
पुण्य भाव की रुचि में रहता, इच्छाओं का सदा कुभाव।
क्षुधारोग हरने को केवल, निज की, रुचि ही श्रेष्ठ उपाव।।दर्शन।।5।।
ॐ ह्रीं श्री सम्यक रत्नत्रय धर्माय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।
ज्ञान ज्योति बिन अंधकार में, किये अनेकों विविध विभाव।
आत्मज्ञान की दिव्य विभासे, मोहतिमिर का करूँ अभाव।।दर्शन।।6।।
ॐ ह्रीं श्री सम्यक रत्नत्रय धर्माय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।
घाति कर्म ज्ञानावरणादिक, निज स्वरूप घातक दुर्भाव।
ध्रुव स्वभावमय शुद्ध दृष्टि दो, अष्टकर्म से मुझे बचाव।।दर्शन।।7।।
ॐ ह्रीं श्री सम्यक रत्नत्रय धर्माय अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।
निज श्रद्धान ज्ञान चारित्रमय, निज परिणति से पा निज ठाँव।
महामोक्ष फल देने वाले, धर्म वृक्ष की पाऊँ छाँव।।दर्शन।।8।।
ॐ ह्रीं श्री सम्यक रत्नत्रय धर्माय महामोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।
दुर्लभ नर तन फिर पाया है, चूक न जाऊँ अंतिम दाव।
निज अनर्घ पद पाकर, नाश करूँगा मैं अनादि का घाव।।
दर्शन ज्ञान चरित्र साधना से पाऊँ निज शुद्ध स्वभाव।
रत्नत्रय की पूजन करके, राग द्वेष का करूँ अभाव ।।9।।
ॐ ह्रीं श्री सम्यक रत्नत्रय धर्माय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

1 - श्री सम्यक् दर्शन अर्घ्य

आत्मतत्व की प्रतीत निश्चय, सप्ततत्व श्रद्धा व्यवहार।
सम्यक् दर्शन से हो जाते, भव्य जीव भवसागर पार ।।1।।

विपरीताभिनिवेश रहित, **अधिगमज निसर्गज** समकित सार।
औपशमिक क्षायिक क्षयोपशम, होता है यह तीन प्रकार ।।2।।
आज्ञा, मार्ग, बीज, उपदेश, सूत्र, संक्षेप अर्थ विस्तार।
समकित है **अवगाढ़** और, **परमावगाढ़** दश भेद प्रकार ।।3।।
जिन वर्णित तत्त्वों में शंका लेश नहीं, **निःशंकित अंग।**
सुरपद या लौकिक सुख वाँछा लेश नहीं, **निःकांक्षित अंग** ।।4।।
अशुचि पदार्थों में न ग्लानि हो, शुचिमय **निर्विचिकित्सा अंग।**
देव शास्त्र गुरु धर्मात्माओं में, रुचि **अमूढ़दृष्टि सुअंग** ।।5।।
पर दोषों को ढकना, स्वगुण वृद्धि करना **उपगूहन अंग।**
धर्म मार्ग से विचलित को, थिर रखना **स्थितिकरण सुअंग** ।।6।।
साधर्मी में गौ बछड़े सम, पूर्ण प्रीति **वात्सल्य सुअंग।**
जिन पूजा तप दया दान, मन से करना **प्रभावना अंग** ।।7।।
आठ अंग पालन से होता है, सम्यक् दर्शन निर्मल।
सम्यक् ज्ञान चारित्र उसी के, कारण होता है उज्जवल ।।8।।
शंका कांक्षा विचिकित्सा अरु, **मूढ़दृष्टि अनउपगूहन।**
अस्थितिकरण अवात्सल्य, **अप्रभावना** वसु दोष सघन ।।9।।
कुगुरु कुदेव कुशास्त्र और **इनके, सेवक छः अनायतन।**
देवमूढ़ता गुरुमूढ़ता, लोकमूढ़ता तीन जघन ।।10।।
जाति रूप कुल ऋद्धि तपस्या, पूजा, बल, ज्ञान मद आठ।
मूल दोष सम्यक् दर्शन के, यह पच्चीस तजो मद आठ ।।11।।
जय जय सम्यक् आठों, अंग सहित अनुपम सुखकार।
यही धर्म का सुदृढ़ मूल है, इसकी महिमा अपरम्पार ।।12।।
ॐ ह्रीं श्री अष्टांग सम्यक् दर्शनाय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

2 - श्री सम्यक् ज्ञान अर्घ्य

निज अभेद का ज्ञान सुनिश्चय, आठ भेद सब हैं व्यवहार।
सम्यक्ज्ञान परम हितकारी, शिव सुखदाता मंगलकार ||1||
अक्षर पद वाक्यों का शुद्धोच्चारण है **व्यंजनाचार**।
शब्दों के यथार्थ अर्थ का अवधारण है **अर्थाचार** ||2||
शब्द अर्थ दोनों का, सम्यक् जानपना है **उभयाचार**।
योग्यकाल में जिनश्रुत का, स्वाध्याय कहाता **कालाचार** ||3||
नम्र रूप रह लेश न उद्धत, होना ही है **विनयाचार**।
सदा ज्ञान का आराधन, स्मरण सहित **उपध्यानाचार** ||4||
शास्त्रों के पाठी अरु श्रुत का, आदर है **बहुमानाचार**।
नहीं छुपाना शास्त्र और गुरु नाम, **अनिन्हव** है आचार ||5||
आठ अंग है यही ज्ञान के, इनसे दृढ़ हो सम्यक् ज्ञान।
पांच भेद हैं मति श्रुत अवधि, मनःपर्यय अरु केवलज्ञान ||6||
मति होता है इन्द्रिय मन से, तीन शतक अरु छत्तीसभेद।
श्रुत के प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं, चउ अनुयोग सु भेद ||7||
द्वादशांग चौदह पूर्व परिकर्म, चूलिका प्रकीर्णक।
अक्षर और अनक्षरात्मक, भेद अनेकों हैं सम्यक् ||8||
अवधिज्ञान त्रय देशावधि, परमावधि सर्वावधि जानों।
भव प्रत्यय और **गुणप्रत्यय** के छह पहिचानों ||9||
मनःपर्यय **ऋजुमति विपुलमति**, उपचार अपेक्षा से जानों।
नय प्रमाण से जान ज्ञान, प्रत्यक्ष परोक्ष पृथक मानों ||10||
जय जय सम्यक् ज्ञान अष्ट अंगों से, युक्त मोक्ष सुखकार।
तीन लोक में विमल ज्ञान की, गूंज रही हैं जय जयकार ||11||
ॐ ह्रीं श्री अष्टविध सम्यक् ज्ञानाय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

3 - श्री सम्यक् चारित्र का अर्घ्य

निज स्वरूप में रमण सुनिश्चय, दो प्रकार चारित्र व्यवहार।
श्रावक त्रेपन क्रिया साधु की, तेरह विधि चारित्र अपार ||1||
पंच उदम्बर त्रय मकार तज, **जीवदया निशि भोजन** त्याग।
देववन्दना जल गालन, **निशिभोजन** त्यागी श्रावक जान ||2||
दर्शन ज्ञान चारित्रमयी ये, त्रेपन क्रिया सरल पहिचान।
पाक्षिक नैष्ठिक साधक, तीनों श्रावक के हैं भेद प्रधान ||3||
परम **अहिंसा** षटकाय के, जीवों की रक्षा करना।
परम **सत्य** है **हितमित प्रियवच**, **सरलसत्य** उर में धरना ||4||
परम **अचौर्य**, बिना पूछे तृण तक, भी नहीं ग्रहण करना।
पंच महाव्रत यही साधु के, पूर्ण देश पालन करना ||5||
ईर्या समिति से प्रासुक, भू पर चार हाथ भू लख चलना।
भाषा समिति चार विकथाओं से, विहीन भाषण करना ||6||
श्रेष्ठ **ऐषणा समिति अनुद्देषिक, आहार** शुद्धि करना।
है **आदान निक्षेपण** संयम के, उपकरण देख धरना ||7||
प्रतिष्ठापना समिति देह के, मल मूत्रादि भू देख त्याग करना।
पंच समिति पालन कर, अपने राग द्वेष को क्षय करना ||8||
मनोगुप्ति है सब विभाव भावों का, हो मन से परिहार।
वचनगुप्ति है आत्मचिंतवन, ध्यान अध्ययन मौन संवर ||9||
काय गुप्ति है काय चेष्टा रहित, भावमय कायोत्सर्ग।
तीन गुप्ति धर साधु मुनीश्वर, पाते हैं शिवमय अपवर्ग ||10||
षट आवश्यक द्वादश तप, पंचेन्द्रिय का निरोध अनुपम।
पंचाचार विनय आराधन, द्वादश व्रत आदिक सुखतम ||11||

अट्ठाईस मूलगुण धारण, सप्त भयों से रहना दूर।
निज स्वभाव आश्रय से करना पर विभावको चकनाचूर ||12||
निरतिचार तेरह प्रकार का है, चारित्र महान प्रधान।
इसके पालन से होता है, सिद्ध स्वपद पावन निर्वाण ||13||
श्रेष्ठधर्म है श्रेष्ठमार्ग है, श्रेष्ठ साधु पद शिवसुखकार।
सम्यक् चारित्र बिना न कोई, हो सकता भवसार पार ||14||
ॐ ह्रीं श्री त्रयोदशविधि सम्यक्चारित्राय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

अष्ट अंगयुत निर्मल सम्यक्दर्शन मैं धारण कर लूँ।
आठ अंगयुत निर्मल सम्यक्ज्ञान आत्मा में वर हूँ ||1||
तेरह विधि सम्यक्चारित्र के मुक्ति भवन में पग धर लूँ।
श्री अरहंत सिद्ध पद पाऊँ सादि अनंत सौख्य भर लूँ ||2||
निज स्वभाव का साधन लेकर मोक्षमार्ग पर आ जाऊँ।
निज स्वभाव धर भाव शुभाशुभ परिणामों पर जयपाऊँ ||3||
एक शुद्ध निज चेतन शाश्वत दर्शन ज्ञान स्वरूपी जान।
ध्रुव टंकोत्कीर्ण चिन्मय चित्चमत्कार चिद्रूपी मान ||4||
इनका ही आश्रय लेकर मैं सदा इसी के गुण गाऊँ।
द्रव्य दृष्टि बन निजस्वरूप की महिमा से शिवसुख पाऊँ ||5||
रत्नत्रय को वन्दन करके शुद्धात्मा का ध्यान करूँ।
सम्यक्दर्शन ज्ञान चरित से परम स्वपद निर्वाण वरूँ ||6||
ॐ ह्रीं श्री सम्यकदर्शन, सम्यकज्ञान, सम्यकचारित्रमयी रत्नत्रय धर्माय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

दोहा

रत्नत्रय व्रत श्रेष्ठ की महिमा अगम अपार।
जो व्रत को धारण करे हो जाये भव पार।।
इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्
जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री सम्यक्दर्शन ज्ञान चारित्रेभ्यो नमः

विशेष – पर्व-पूजायें

जिनागम में जिनेन्द्र पूजन पाँच प्रकार की बतायी है। इन्द्रों द्वारा की जाने वाली इन्द्रध्वज पूजन अष्टमद्वीप नन्दीश्वर में इन्द्रों व देवों द्वारा की जाने वाली अष्टान्हिका पूजन चक्रवर्ती सम्राटों के द्वारा की जाने वाली कल्पद्रुम पूजन मुकुटबद्ध राजाओं द्वारा की जाने वाली सर्वतोभद्र पूजन व श्रावकों द्वारा की जाने वाली नित्यमह पूजन है। इन पूजनों के अतिरिक्त इस संग्रह में श्री तीर्थंकर पंचकल्याणक, बाहुबलि, गौतम स्वामी, कुन्दकुन्दाचार्य, समयसार, जिनवाणी जैसी उत्कृष्ट पूजनें भी सम्मिलित हैं। इन पूजनों के माध्यम से सभी आत्मार्थी बन्धु मोक्षमार्ग के पथिक बनकर अजर अमर अविनाशी पद को प्राप्त करें। यही भावना है।

1 गुरुजनों के वचनों का आदर एवं अपने वचनों की संभाल करें।

20. श्री तीर्थंकर पंचकल्याणक पूजन

चौबीसों जिन के **पाँचों कल्याणक**, शुभ मंगलदायी।
गर्भ जन्म तप ज्ञान मोक्ष, कल्याणक पूजूँ सुखदायी।।
ऋषभ अजित संभव अभिनंदन, सुमतिपद्म सुपार्श्व भगवंत।
चंद्र सुविधि शीतल श्रेयांस जिन, वासुपूज्य प्रभु विमल अनंत।।
धर्म शांति कुन्थु अरजिन, मल्लि मुनिसुव्रत नमि गुणवंत।
नेमि पार्श्व प्रभु महावीर के, पाँचों कल्याणक जयवन्त।।
ॐ ह्रीं श्री तीर्थंकर पंचकल्याणक समूह अत्र अवतर अवतर संवौषट्। ॐ ह्रीं श्री तीर्थंकर पंचकल्याणक समूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। ॐ ह्रीं श्री तीर्थंकर पंचकल्याणक समूह अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।

शुभ्र नीर की तीन धार दे, जन्म जरा मृतु हरण करूँ।
सम्यकदर्शन की विभूति पा, मोक्ष मार्ग को ग्रहण करूँ।।
जिन तीर्थंकर के बतलाये, रत्नत्रय को वरण करूँ।
गर्भ जन्म तप ज्ञान मोक्ष पांचों, कल्याणक नमन करूँ ||1||
ॐ ह्रीं श्री तीर्थंकर पंचकल्याणकेभ्यो जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

मलयागिरि चंदन अर्पित कर, भव का आतप हरण करूँ।
सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर मैं भी, मोक्षमार्ग को ग्रहण करूँ।।जिन||2||
ॐ ह्रीं श्री तीर्थंकर पंचकल्याणकेभ्यो संसारताप विनाशनाय चंदनं नि.।

अक्षत से अक्षय पद पाऊँ, भव सागर दुख हरण करूँ।
सम्यक् चारित्र के प्रभाव से, पर मोक्षमार्ग को ग्रहण करूँ।।जिन||3||
ॐ ह्रीं श्री तीर्थंकर पंचकल्याणकेभ्यो अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं नि.।

सुन्दर पुष्प सुगंधित लाकर, काम शत्रु मद हरण करूँ।
सम्यक् तप की महाशक्ति से, मोक्षमार्ग को ग्रहण करूँ।।जिन||4||
ॐ ह्रीं श्री तीर्थंकर पंचकल्याणकेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि.।

शुभ नैवेद्य भेंटकर स्वामी, क्षुधा व्याधि को हरण करूँ।
शुद्ध ध्यान निज के प्रताप से, मोक्षमार्ग को ग्रहण करूँ।।जिन||5||
ॐ ह्रीं श्री तीर्थंकर पंचकल्याणकेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि.

तम का नाशक दीप जलाकर, मोह तिमिर को हरण करूँ।
निज अंतर आलोकित करके, मोक्षमार्ग को ग्रहण करूँ।।जिन||6||
ॐ ह्रीं श्री तीर्थंकर पंचकल्याणकेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।

ध्यान अग्नि में धूप डालकर, अष्टकर्म को हरण करूँ।
शुक्ल ध्यान की प्राप्ति हेतु मैं, मोक्षमार्ग को ग्रहण करूँ।।जिन||7||
ॐ ह्रीं श्री तीर्थंकर पंचकल्याणकेभ्यो अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।

शुद्ध भाव फल लेकर स्वामी, पाप पुण्य को हरण करूँ।
परम मोक्षपद पाने को मैं, मोक्षमार्ग को ग्रहण करूँ।।जिन||8||
ॐ ह्रीं श्री तीर्थंकर पंचकल्याणकेभ्यो मोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।

वसु विधि अर्घ चढ़कर मैं, अष्टम वसुधा को वरण करूँ।
निज अनर्घ पद प्राप्ति हेतु मैं, मोक्षमार्ग को ग्रहण करूँ।।
जिन तीर्थंकर के बतलाये, रत्नत्रय को वरण करूँ।
गर्भ जन्म तप ज्ञान मोक्ष, पांचों, कल्याणक नमन करूँ ||9||
ॐ ह्रीं श्री तीर्थंकर पंचकल्याणकेभ्यो अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

1. श्री गर्भ कल्याण अर्घ्य

श्री जिन गर्भ कल्याणक की, महिमा अपरम्पार।
रत्नों की बौछार हो, घर घर मंगलाचार।।

गर्भ पूर्व छह मास जन्म तक, नित नूतन मंगल होते।
नव बारह योजन नगरी रच, इन्द्र महा हर्षित होते ||1||
गर्भ दिवस जिन माता को दिखते, हैं सोलह स्वप्न महान।
बैल, सिंह, माला, लक्ष्मी, गज, रवि, शशि, सिंहासन, छविमान||2||
मीन युगल, दो कलश, सरोवर सुरविमान, नागेन्द्र विमान।
रत्न राशि, निर्धूम अग्नि सागर, लहराता अतुल महान ||3||
स्वप्न फलों को सुनकर हर्षित, होता है अनुपम आनंद।
धन्य गर्भ कल्याणक देवियाँ माँ की सेवा करती हैं सानन्द ||4||
ॐ ह्रीं श्री तीर्थंकर गर्भ कल्याणकाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

2. श्री जन्म कल्याणक अर्घ्य

श्री जन्म कल्याण की, महिमा अपरम्पार।
तीन लोकों में हुआ, प्रभु का जय जयकार।।

जन्म समय तीनों लोकों में, होता है आनन्द अपार।
सभी जीव अन्तर्मुहूर्त को पाते, अति साता सुखकार ||1||
इन्द्रशची ऐरावत पर चढ़, ऊधम मचाते आते हैं।
जिन प्रभु का अभिषेक, मेरु पर्वत के शिखर रचाते हैं ||2||
क्षीरोदधि से एक सहस्त्र, अरु अष्ट कलश सुर भरते हैं।
स्वर्ण कलश शुभ्र इन्द्रभाव से, प्रभु मस्तक पर करते हैं ||3||
मात पिता को सौंप इन्द्र करता है नाटक नृत्य महान।
परम जन्म कल्याण महोत्सव पर होता है जय जयगान ||14||
ॐ ह्रीं श्री तीर्थंकर जन्म कल्याणकाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

3. श्री तप कल्याणक अर्घ्य

श्री जिन तप कल्याण की, महिमा अपरम्पार।
तप संयम की हो रही, पावन जय जयकार।।

कुछ निमित्त पा जब प्रभु के, मन में आता वैराग्य अपार।
भव्य भावना द्वादश भाते, तजते राजपाट संसार ||1||
[1]**लौकान्तिक ब्रह्मर्षि** एक भव, अवतारी होते पुलकित।
प्रभु वैराग्य सुदृढ़ करने को, कहते धन्य धन्य हर्षित ||2||
इन्द्रादिक प्रभु को [2]**शिविका**, पर ले जाते बाहर वन में।
महाव्रती हो केश लोंचकर, लय होते निज चिंतन में ||3||
इन केशों को इन्द्र प्रवाहित, क्षीरोदधि में करता है।
तप कल्याण महोत्सव तप की, विमल भावना भरता है ||4||
ॐ ह्रीं श्री तीर्थंकर तप कल्याणकाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

4. श्री ज्ञान कल्याणक अर्घ्य

परम ज्ञान कल्याण की, महिमा अपरम्पार।
स्वपर प्रकाशक आत्म में झलक रहा संसार।।

क्षपक श्रेणी चढ़ शुक्ल ध्यान से, गुणस्थान बारहवाँ पा।
चार घातिया कर्म नाशकर, गुणस्थान तेरहवाँ पा ||1||
केवलज्ञान प्रकट होते ही, होती परमौदारिक देह।
अष्टादश दोषों से विरहित, छयालीस गुण मंडित नेह ||2||
समवशरण की रचना होती, होते अतिशय देवोपम।
शत इन्द्रों के द्वारा वंदित, प्रभु की छवि अति सुन्दरतम ||3||

1. 5वें स्वर्ग के अन्त में रहने वाले देव लौकोन्तिक ब्रह्मर्षि एक भव अवतारी होते हैं।
2. पालकी

दिव्य ध्वनि खिरती है, सब जीवों का होता है कल्याण।
परमज्ञान कल्याण महोत्सव, पर जिनप्रभु का ही यश ज्ञान ||4||
ॐ ह्रीं श्री तीर्थंकर ज्ञान कल्याणकाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

5. श्री मोक्ष कल्याणक अर्घ्य

परम मोक्ष कल्याण की महिमा अपरम्पार।
अष्ट कर्म नाशकर, नाथ हुए भवपार।।
गुणस्थान चौदहवाँ पाकर, योगों का निरोध करते।
अंतिम शुक्ल ध्यान के द्वारा, कर्म अघातिया भी हरते ||1||
अ, ई, उ, ऋ, लृ उच्चारण में, लगता है जितना काल।
तीन लोक के शीश विराजित, हो जाते हैं प्रभु तत्काल ||2||
तन कपूर वत उड़ जाता है, नख अरु केश शेष रहते।
मायामयी शरीर देव रच, अंतिम क्रिया अग्नि दहते ||3||
मंगल गीत नृत्य वाद्यों की, ध्वनि से होता हर्ष अपार।
भव्य मोक्ष कल्याण मनाते सब जीवों को मंगलकार ||4||
ॐ ह्रीं श्री तीर्थंकर मोक्षकल्याणकाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

जिनवर पंच कल्याणक की, महिमा अगम अपार
गर्भ जन्म तप ज्ञान सह, महामोक्ष शिवकार ||1||
वृषभादिक चौबीस जिनेश्वर के, मंगल कल्याण महान।
गर्भ जन्म तप ज्ञान मोक्ष, पांचों कल्याणक महिमावान ||2||
श्री पंचकल्याणक पूजन, करके निज वैभव पाऊँ।
सोलहकारण भव्य भावना, मैं भी हे जिनवर भाऊँ ||3||

जिनध्वनि सुनकर मेरे मन में, रहा नहीं प्रभु भय का लेश।
पूर्ण शुद्ध ज्ञायक स्वरूपमय, एक मात्र है उज्जवल वेश ||4||
संयोगी भावों के कारण, भटक रहा भव सागर में।
जिन प्रभु का उपदेश सुना, पर झिला नहीं निज गागर में ||5||
अवसर आज अपूर्व मिल गया, प्रभु चरणों की पूजन का।
सम्यक्दर्शन आज मिला है, फल पाया नर जीवन का ||6||
हे प्रभु मुझे मार्गदर्शन दो, अब मैं आगे बढ़ जाऊँ।
अणुव्रत धार महाव्रत धारूँ, गुणस्थान भी चढ़ जाऊँ ||7||
परम पंचकल्याण विभूषित, जिन प्रभु की महिमा गाऊँ।
घाति अघाति कर्म सब क्षयकर, शाश्वत सिद्ध स्वपद पाऊँ ||8||
ॐ ह्रीं श्री तीर्थंकर गर्भ, जन्म, तप, ज्ञान, मोक्ष पंचकल्याण केभ्यो पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

तीर्थंकर जिन देव के, पूज्य पंच कल्याणक।
भाव सहित जो पूजते, पाते शांति महान।।

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री तीर्थंकर पंचकल्याणकेभ्यो नमः

21. णमोकारमंत्र पूजन

ॐ णमो अरिहंताणं जप, अरिहंतों का ध्यान करूँ।
ॐ णमो सिद्धाणं जप कर, सिद्धों का गुणगान करूँ ||1||
ॐ णमो आइरियाणं जप, आचार्यों को नमन करूँ।
ॐ णमो उवज्झायाणं जप, उपाध्याय को नमन करूँ||2||
णमो लोए सव्वसाहूणं जप, सर्व साधुओं को वन्दन।
णमोकार का महामन्त्र जप, मिथ्यातम को करूँ वमन||3||

ऐसो पंच णमोयारो जप, सर्व पाप अवसान करूँ।
सर्व मंगलों में पहिला मंगल, पढ़ मंगल गान करूँ ||4||
णमोकार का मंत्र जपूँ मैं, णमोकार का ध्यान करूँ।
णमोकार की महाशक्ति से, निज आतम कल्याण करूँ||5||

ॐ ह्रीं श्री पंचनमस्कार मन्त्र अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्री पंचनमस्कारमन्त्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री पंचनमस्कारमन्त्र अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

ज्ञानावरणी कर्मनाश हित, मिथ्यातम का करूँ अभाव।
जन्म मरण दुख क्षय कर डालूँ, प्राप्त करूँ निज शुद्धस्वभाव।।
णमोकार का मन्त्र जपूँ मैं, णमोकार का ध्यान करूँ।
णमोकार की महाशक्ति से, नाथ आत्म कल्याण करूँ ||1||

ॐ ह्रीं पंचनमस्कारमन्त्राय जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं नि.।

दर्शनावरणी क्षय करने, चिर अविरति का करूँ अभाव।
यह संसार ताप क्षय करने, प्राप्त करूँ निज शुद्ध स्वभाव।।णमो||2||

ॐ ह्रीं श्री पंचनमस्कार मन्त्राय संसार ताप विनाशनय चंदनं नि.।

वेदनीय की पीड़ा हरने, कर लूँ पंच प्रमाद अभाव।
अक्षय पद पाने को स्वामी प्राप्त करूँ, निज शुद्ध स्वभाव।।णमो||3||

ॐ ह्रीं श्री पंचनमस्कार मन्त्राय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि.।

मोहनीय का दर्प कुचल दूँ कर लूँ पूर्ण कषाय अभाव।
कामबाण की व्याधि मिटाऊँ प्राप्त करूँ निजशुद्ध स्वभाव।।णमो||4||

ॐ ह्रीं श्री पंचनमस्कार मन्त्राय मोहान्धकार विनाशनाय पुष्पं नि.।

आयु कर्म के सर्वनाश हित, शीघ्र करूँ त्रय रोग अभाव।
क्षुधाव्याधिकानाश करूँ मैं प्राप्त करूँ निज शुद्ध स्वभाव।।णमो||5||

ॐ ह्रीं श्री पंचनमस्कार मन्त्राय क्षुधा रोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।

नाम कर्म का मूल मिटा दूँ, नष्ट करूँ मैं सर्व विभाव।
भ्रम अज्ञान विनाश करूँ, मैं प्राप्त करूँ निज शुद्ध स्वभाव।।णमो||6||

ॐ ह्रीं श्री पंचनमस्कार मन्त्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपंनि.।

गोत्रकर्म को दग्ध करूँ मैं, कर्म प्रकृति सब करूँ अभाव।
अष्टकर्म विध्वंस करूँ मैं, प्राप्त करूँ निज शुद्ध स्वभाव।।णमो||7||

ॐ ह्रीं श्री पंचनमस्कार मन्त्राय अष्ट कर्म विनाशनाय धूपं नि.

अन्तराय मूलोच्छेद कर, सर्व बंध करूँ अभाव।
परम मोक्ष फल पाऊँ स्वामी, प्राप्त करूँ निज शुद्धस्वभाव।।णमो||8||

ॐ ह्रीं श्री पंचनमस्कार मन्त्राय मोक्ष फल प्राप्तये फलं नि. स्वाहा।

परम भेद विज्ञान प्राप्त कर, कर लूँ मैं संसार अभाव।
पद अनर्घ पाने को स्वामी, प्राप्त करूँ निज शुद्ध स्वभाव।।
णमोकार का मन्त्र जपूँ, मैं णमोकार का ध्यान करूँ।
णमोकार की महाशक्ति से, नाथ आत्म कल्याण करूँ ||9||

ॐ ह्रीं श्री पंचनमस्कार मन्त्राय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

णमोकार जिन मंत्र का, जाप करूँ दिन रात।
पाप पुण्य को नाश कर, पाऊँ मोक्ष प्रभात।।
छयालीस गुणधारी स्वामी, नमस्कार अरिहंतों को।
अष्ट स्वगुणधारी अनन्तगुण, मंडित वन्दू सिद्धों को ||1||
है **छत्तीस गुणों से भूषित,** नमस्कार आचार्यों को।
है **पच्चीस गुणों से शोभित,** नमस्कार उपाध्यायों को ||2||
अट्ठाईस मूलगुण धारी, नमस्कार सब मुनियों को।
ॐ शब्द में गर्भित पाँचों, परमेष्ठी प्रभु गुणियों को ||3||

सर्व मंगलों में सर्वोत्तम, सर्वश्रेष्ठ मंगलदाता।
ह्रीं शब्द में गर्भित, चौबीसों, तीर्थंकर विख्याता ||4||
णमोकार पैंतीस अक्षर का, मंत्र पवित्र ध्यान कर लूँ।
यह नवकार **मंत्र अड़सठ अक्षर से,** युक्त ज्ञान कर लूँ ||5||
अर्हत् सिद्धाचार्योपाध्याय सर्व साधु नमः भज लूँ।
सोलह अक्षर का पावन मंत्र जपूँ दुष्कृत तज लूँ ||6||
छह अक्षर का मंत्र जपूं, **अरहंत सिद्ध** को नमन करूँ।
अ सि आ उ सा पंचाक्षर, का मंत्र जपूँ [1]अघशमन करूँ ||7||
अक्षर चार मंत्र जप लूं, **अरहंत देव** का ध्यान करूँ।
अर्हम् अक्षर तीन, मंत्र जप, स्वपर भेद विज्ञान करूँ ||8||
दो अक्षर का **सिद्ध मंत्र** जप सर्व सिद्धियाँ प्रकट करूँ।
अक्षर एक ॐ ही जपकर सब पापों को विघट करूँ ||9||
सप्ताक्षर का मंत्र णमो अरहंताणं का मैं जाप करूँ।
छह अक्षर का **मंत्र णमो सिद्धाणं** जप भवताप हरूँ ||10||
सप्ताक्षर का मंत्र णमो आइरियाणं जप हर्षाऊँ।
सप्ताक्षर का णमो उवज्झायणं जप कर मुस्काऊँ ||11||
नौ अक्षर का मंत्र णमो लोए सव्वसाहूणं ध्याऊँ।
ऐसो पंच णमोयारो जप, सर्व पाप हर सुख पाऊँ ||12||
नव पद या नवकार पाँच पद का, मैं णमोकार ध्याऊँ।
एक शतक सत्ताईस अक्षर का, चत्तारि पाठ गाऊँ ||13||
चत्तारि मंगलम् श्रेष्ठ मंगल है, जग में परम प्रधान।
अरिहंता मंगलम पाठ कर गाऊँ, निज आतम के गान ||14||

1. पापों का नाश करूँ

सिद्धामंगलम् साहू मंगलम्, का मैं भाव हृदय भर लूँ।
केवलि पण्णत्तो धम्मो मंगलम्, स्वधर्म प्राप्त कर लूँ ||15||
चत्तारि लोगुत्तमा ही, सर्वोत्तम है परम शरण।
अरिहंता लोगुत्तमा ही से होगा भव कष्ट हरण ||16||
सिद्धा लोगुत्तमा सु. साहू लोगुत्तमा परम पावन।
केवलि पण्णतो धम्मो लोगुत्तमा मोक्ष साधन ||17||
चत्तारि शरणं पव्वज्जामि, का गूंजा जय जय गान।
अरिहंतेशरणं पव्वज्जामि, का हो प्रभु लक्ष्य महान ||18||
सिद्धेशरणं पव्वज्जामि, मोक्ष सिद्ध को मैं पाऊँ।
साहूशरणं पव्वज्जामि, **शुद्ध भावना** ही भाऊँ ||19||
केवलिपण्णत्तं धम्मं, शरणं पव्वज्जामि है ध्येय।
महामोक्ष मंगल शिवदाता, पाचों परमेष्ठि प्रभु श्रेय ||20||
महामन्त्र **निःकांक्षित** होकर, शुद्ध भाव से नित ध्याऊँ।
पंच परम परमेष्ठि का सम्यक् स्वरूप उर में लाऊँ ||21||
णमोकार का मंत्र जपूँ मैं, णमोकार का ध्यान करूँ।
महामन्त्र की महाशक्ति पा, नाथ आत्म कल्याण करूँ ||22||
अर्हं अर्हं अर्हं जपकर, निज शुद्धातम का कर लूँ भान।
नमः सर्व सिद्धेभ्यः जपकर, मोक्षमार्ग पर करूँ प्रयाण ||23||
ॐ ह्रीं श्री पंचनमस्कार मन्त्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

णमोकार के मन्त्र की महिमा अगम अपार।
भाव सहित जो ध्यावते हो जाते भवपार।।

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं अरिहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, सर्वसाधु पंच परमेष्ठिभ्यो नमः।

22. श्री आदिनाथ भरत बाहुबली जिन पूजन

स्थापना

आदिनाथ प्रभु भरत बाहुबलि, स्वामी को सादर वन्दन।
पिता पुत्र शिवपुरगामी तीनों, को सविनय अभिनन्दन ||1||
शुद्धज्ञान का आश्रय लेकर, निज स्वभाव को किया नमन।
केवलज्ञान प्रगट पाया, सहज भाव से मुक्ति सदन ||2||
निज चैतन्य राज को ध्याया, पापों का परिहार किया।
निज स्वभाव से मुक्त हुए प्रभु, सबने जय जयकार किया ||3||
आदिनाथ प्रभु **भरत बाहुबलि** की, पूजन कर हर्षाऊँ।
निज स्वरूप की प्राप्ति करूँ मैं, नित नूतन मंगल गाऊँ ||4||
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथ भरत बाहुबलि जिनेन्द्राः अत्र अवतर अवतर
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथ भरत बाहुबलि जिनेन्द्राः अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथ भरत बाहुबलि जिनेन्द्राः अत्र मम सन्निहितो।

भेद ज्ञान की प्राप्ति हेतु मैं, करूँ आत्मा का निर्णय।
सम्यक् जल की भेंट चढ़ाऊँ, हो जाऊँ मैं अमर अभय।।
आदिनाथ प्रभु भरत बाहुबलि की, पूजन कर हर्षाऊँ।
निज स्वरूप की प्राप्ति करूँ मैं, नित नूतन मंगल गाऊँ ||1||
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथ भरत बाहुबलि जिनेन्द्रेभ्यो जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

निज स्वभाव रस प्राप्ति हेतु, मैं भेदज्ञान का लूँ आधार।
सम्यक् चंदन भेंट चढ़ाऊँ, भव आताप सकल निरवार।।आदि.||2||
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथ भरत बाहुबलि जिनेन्द्रेभ्यो संसारताप विनाशनाय चंदनं नि. स्वाहा।

स्वपर विवेक जगा अन्तर में, अक्षय पद को प्राप्त करूँ।
सम्यक अक्षत भेंट चढ़ाऊँ, वेदनीय दुखत्वरित हरूँ।।आदि.||3||
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथ भरत बाहुबलि जिनेन्द्रेभ्यो अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि. स्वाहा।

कामभाव विध्वंस हेतु मैं, शील स्वभाव महान धरूँ।
सम्यक पुष्प भेंट कर स्वामी, पर विभाव अवसान करूँ।।आदि.||4||
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथ भरत बाहुबलि जिनेन्द्रेभ्यो कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

क्षुधा रहित मेरा स्वभाव, है इसे नहीं जाना जिनराज।
सम्यकचरु की भेंट चढ़ाऊँ, पाऊँस्वामी निजपद राज।।आदि.||5||
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथ भरत बाहुबलि जिनेन्द्रेभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।

मोह भ्रांति के महाशत्रु ने, घेरा है मुझको दिन रात।
सम्यक् दीप चढ़ाकर स्वामी पाऊँ मैं सम्यक्त्व प्रभात।।आदि.||6||
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथ भरत बाहुबलि जिनेन्द्रेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

अष्टकर्म के बंधन में पड़, चारों गति में भरमाया।
सम्यक् धूप चढ़ाऊँ इनके क्षय का, अब अवसर आया।।आदि.||7||
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथ भरत बाहुबलि जिनेन्द्रेभ्यो अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि. स्वाहा।

भवविषतरु फल खाए अब तक, शाश्वत निज स्वभाव को भूल।
सम्यकफल अर्पित करके प्रभु, होजाऊँ निज के अनुकूल।।आदि.||8||
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथ भरत बाहुबलि जिनेन्द्रेभ्यो महामोक्षफल प्राप्तये फलं नि. स्वाहा।

सम्यक अर्घ्यं चढ़ाकर स्वामी, पद अनर्घ्य निश्चित पाऊँ।
मेरी यही प्रार्थना है प्रभु, फिर न लौट भव में आऊँ।।
आदिनाथ प्रभु भरत बाहुबलि की, पूजन कर हर्षाऊँ।
निज स्वरूप की प्राप्ति करूँ मैं, नित नूतन मंगल गाऊँ ||9||

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथ भरत बाहुबलि जिनेन्द्रेभ्यो अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

अर्घ्यावलि

आदिनाथ को नमन कर, वन्दूँ भरत महेश।
चरण बाहुबलि पूजकर, वन्दूँ त्रय परमेश।।
पृथक पृथक त्रय अर्घ्य, विनय सहित अर्पण करूँ।
सकल विकारी भावना, नाशूँ यह उद्देश्य।।

1. अर्घ्य - श्री आदिनाथजी

ऋषभदेव को नमन करूँ मैं, **नाभिरायनृप** के नंदन।
मरु देवी के राजदुलारे, बारंबार तुम्हें वन्दन ||1||
तुम **सर्वार्थ सिद्धि** से आए, नगर **अयोध्या जन्म** लिया।
इन्द्रादिक सुरनर सबने मिल, जन्मोत्सव सानंद किया ||2||
नंदा और **सुनंदा** से परिणय कर, लौकिक सुख पाया।
नंदा के **सौ पुत्र सुनंदा**, ने सुत बाहुबलि [1]जाया ||3||
नीलांजना मरण लख तुमने, वन में जा वैराग्य लिया।
ज्येष्ठ पुत्र थे भरत जिन्हें प्रभु, तुमने राज्य प्रदान किया ||4||
औपादिक सारे विकार हर, कर्म घाति अवसान किया।
एक सहस्त्र वर्ष तप करके, तुमने केवलज्ञान लिया ||5||

1. जन्म दिया।

भरत क्षेत्र के भव्य प्राणियों को, निश्चय संदेश दिया।
खुला मोक्षपथ जो कि बंद था, आत्मतत्त्व उपदेश दिया ||6||
अखिल विश्व में जल थल नभ में, प्रभु का जय जयकार हुआ।
कोटि कोटि जीवों का प्रभु के, द्वारा परमोपकार हुआ ||7||
मुक्त हुए **कैलाश शिखर** से, [1]**प्रतिमा योग** किया धारण।
अष्टकर्म हर शिवपुर पहुँचे, जग के हुए तरणतारण ||8||
बार–बार वंदन करता हूँ बार–बार मैं करूँ नमन।
बार–बार वंदन करता हूँ, तुमको आदिनाथ भगवान ||9||

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

2. अर्घ्य - श्री भरत जी

भरत चक्रवर्ती की महिमा, तीन लोक में है न्यारी।
छह खण्डों के स्वामी होकर भी, प्रभु रहे निर्विकारी ||1||
दर्शनमोह तो जीत चुके थे, पूर्व भवों में ही कर यत्न।
पर चारित्रमोह जय करने का ही किया महान प्रयत्न ||2||
अनुज बाहुबलि से हारे, पर मन में आया नहीं कुभाव।
वस्तु स्वरूप विचारा प्रभु ने, मेरा तो है ज्ञानस्वभाव ||3||
नीर क्षीर का था विवेक जल, कमल भांति वे रहते थे।
[2]**तेल तोय** सम प्रथक प्रथक वे, परभावों से रहते थे ||4||
रागद्वेष पर जय करने का, सदा यत्न वे करते थे।
सम भावों से हर्ष विषादों को, वे पल में हरते थे ||5||
लाख तिरासी पूर्व आयु तक, भोगे भोग बहुत विशाल।
किन्तु लक्ष्य में शुद्ध आत्मा थी, तो शाश्वत अटूट त्रिकाल ||6||

1. निर्माण भूमि पर स्थिर होना प्रतिमा योग कहलाता है।
2. तेल और जल

इसीलिए तो भरत चक्रवर्ती, के मन में था उत्साह।
पर में रहकर पर से भिन्न रहे, ऐसा था ज्ञान अथाह ||7||
पूर्व भवों में भेद ज्ञान की, कला रही थी उनके पास।
ज्ञाता दृष्टा बनकर भोगे, भोगों के प्रति रहे उदास ||8||
निज स्वभाव में आते आते, ही वैराग्य महान हुआ।
ज्ञानपयोनिधि रस पीते पीते ही, केवलज्ञान हुआ ||9||
यह सब कुछ अन्तर्मुहुर्त में हुआ, भरत जी को तत्काल।
आत्मज्ञान वैभव की महिमा, दिया राग सब त्वरित निकाल ||10||
उनकी ऐसी उत्तम परिणति के, पीछे था ज्ञान महान।
इसीलिए अन्तर्मुहुर्त में, किए घातिया अरि अवसान ||11||
दे उपदेश भव्य जीवों को, किया सर्व जग का कल्याण।
धन्य धन्य हे भरत महाप्रभु, इन्द्रादिक गाते गुणगान ||12||
निजानंद रसलीन हुए फिर, शेष कर्म का भी कर अवसान।
पहुंचे सिद्धशिला पर स्वामी, पाया सिद्ध स्वपद निर्वाण ||13||
यही कला यदि आ जाए प्रभु, इस जीवन में अब मेरे।
फिर न लगाना मुझे पड़ेगा, इस जग के अनन्त फेरे ||14||
ॐ ह्रीं श्री भरत जिनेन्द्राय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

3. अर्घ्य - श्री बाहुबलि जी

बाहुबलि प्रभु के चरणों में, नमन करूँ मैं बारंबार।
राज्य संपदा को तज तप का, अवसर पाया भली प्रकार ||1||
छह खण्डों के विजयी भरत को, चक्रवर्ती जीता क्षण में।
आत्म अखंड साधना करने, जूझे कर्म रिसे रण में ||2||

घोर तपस्या का व्रत लेकर, निश्चय संयम उर में धार।
एक वर्ष तप करके तुमने, किया निर्जरा का व्यापार ||3||
पहिले घाति कर्म जय करके, केवलज्ञान लब्धि पाई।
फिर अघातिया जीते प्रभु ने, मुक्तिरमा भी हर्षाई ||4||
पोदनपुर से मुक्त हुए प्रभु, पाया शाश्वत पद निर्वाण।
इन्द्रादिक देवों ने आकर गाए, प्रभु के जय जय गान ||5||
हे प्रभु मेरे संकट हर लो, मैं अनादि से हूँ दुख युक्त।
निज स्वभाव साधन की निधि दो, हो जाऊँ भव दुख से मुक्त ||6||
ॐ ह्रीं श्री बाहुबली जिनेन्द्रेभ्यो अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

जिन गुण वर्णन कर सकूँ, ऐसी शक्ति नहीं भगवान।
जिन गुण संपत्ति प्राप्ति हित, करूँ स्वयं का ध्यान।।

छंद ताटंक

ऋषभदेव जिनवर को वन्दूँ, बार–बार मैं हर्षाकर।
ज्ञानभाव की प्राप्ति करूँ मैं, भेद ज्ञान रस वर्षा कर ||1||
भरत मोक्षगामी को वन्दूँ, पूजन करके अष्ट प्रकार।
भाव वन्दना द्रव्य वन्दना, दोनों से कर लूँ सत्कार ||2||
श्री बाहुबलि को मैं वन्दू, परभावों का करूँ विनाश।
अथक अडिग तप करूँ निरंतर, ऐसा दो प्रभु ज्ञान प्रकाश ||3||
भव तन भोगों से विरक्त हो, चलूँ आपके पथ पर नाथ।
मैं अनाथ भी एक दिवस बन, जाऊँगा तुव कृपा सनाथ ||4||
दृष्टि बदल जाते ही दिशा, बदल जाती है सहज स्वयम्।
हो जाता पुरुषार्थ सफल, मिट जाता है मिथ्या भ्रमतम ||5||

जब तक दृष्टि नहीं बदलेगी, तब तक ही भव दुख होगा।
दृष्टि बदल जाएगी तो फिर, अन्तर में शिव सुख होगा ||6||
अब तक तो पर्याय दृष्टि रह, यह संसार बढ़ाया है।
द्रव्य दृष्टि से सदा दूर यह, बंध मार्ग अपनाया है ||7||
अब तो द्रव्य दृष्टि बन हर लूँ, यह अनादि मिथ्यातम।
निज स्वभाव साधन से पाऊँ, अविचल सिद्ध स्वपद क्रमक्रम ||8||
नाथ आपकी भव्य मूर्ति के, दर्शन से होकर पालन।
दो आशीर्वाद हे स्वामी पाऊँ निज स्वभाव साधन ||9||
जप तप व्रत संयम का वैभव, मुझे प्राप्त हो जाए देव।
सम्यक दर्शन ज्ञान चरित्रमय, पाऊँ मुक्तिमार्ग स्वयमेव ||10||
निज चैतन्य राज पद पाऊँ, ऐसी कृपा और कर दो।
सम्यकदर्शन प्रगटाऊँ मैं, ऐसी भव्य [1]भोर कर दो ||11||
निश्चय संयम के प्रभाव से, अष्टकर्म [2]अवसान करूँ।
शुक्ल ध्यान का संबल पाकर महामोक्ष निर्वाण वरूँ ||12||

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथ भरत बाहुबलि जिनेन्द्राय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

ऋषभ भरत श्री बाहुबलि चरण कमल उर धार।
मन वच तन जो पूजते, हो जाते भव पार।।

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री आदिनाथ भरत बाहुबली जिनेन्द्रेभ्यो नमः

23. श्री पंच बालयति तीर्थंकर पूजन

जय प्रभु **वासुपूज्य** तीर्थंकर **मल्लिनाथ** प्रभु नेमि जिनेश।
जय श्री **पार्श्वनाथ** परमेश्वर जय जय **महावीर** योगेश।।

राग द्वेष हर मोह क्षोभहर मंगलमय हे जिन तीर्थेश।
पंच बालयति परम पूज्य प्रभु बाल ब्रह्मचारी ब्रह्मेश।।

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य, मल्लिनाथ, नेमिनाथ, पार्श्वनाथ, महावीर पंच बालयति जिनेन्द्राः अत्र अवतर अवतर संवौषट्। ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य, मल्लिनाथ, नेमिनाथ, पार्श्वनाथ, महावीर पंच बालयति अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य, मल्लिनाथ, नेमिनाथ, पार्श्वनाथ, महावीर पंच बालयति जिनेन्द्राः अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।

इस जल में इतनी शक्ति नहीं, जो अंतरमल को धो डाले।
शुद्धातम का जो अनुभव ले, वह पूर्ण शुद्धता को पा ले।।
वासुपूज्य श्री मल्लि नेमि प्रभु, पारस महावीर भगवान।
पाप ताप संताप विनाशक, पंच बालयति पूज्य महान ||1||

ॐ ह्रीं श्री पंच बालयति जिनेन्द्रेभ्यो जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं।

चन्दन में इतनी शक्ति नहीं जो, अन्तर ज्वाला शान्त करें।
शुद्धातम का जो अनुभव ले, वह भव की पीड़ा शांत करें।।वासु.||2||

ॐ ह्रीं श्री पंचबालयति जिनेन्द्रेभ्यो भवताप विनाशनाय चंदनं नि.।

तन्दुल में इतनी शक्ति नहीं जो, निज अखण्ड पद प्रगटाये।
शुद्धातम का जो अनुभव ले, वह निश्चित अक्षय पद पाये।।वासु.||3||

ॐ ह्रीं श्री पंच बालयति जिनेन्द्रेभ्यो अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि.।

पुष्पों में इतनी शक्ति नहीं जो, शील स्वभाव प्रकाश करे।
शुद्धातम का जो अनुभव ले, वह काम भाव का नाश करे।।वासु.||4||

ॐ ह्रीं श्री पंचबालयति जिनेन्द्रेभ्यो कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।

ऐसा नैवेद्य नहीं जग में, जो तृष्णा व्याधि मिटा डाले।
शुद्धातम का जो अनुभव ले, तो क्षुधा अनादि हटा डाले।।वासु.||5||

ॐ ह्रीं श्री पंचबालयति जिनेन्द्रेभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।

ऐसा दीपक न कहीं जग में, जो [1]**अन्तर के तम को** हर ले।
शुद्धातम का जो अनुभव ले, वह अन्तर आलोकित कर ले।।वासु.।6।।
ॐ ह्रीं श्री पंच बालयति जिनेन्द्रेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।
जड़ रूप धूप में शक्ति नहीं जो, कर्म शक्ति का हरण करे।
शुद्धातम का जो अनुभव ले, वह निज स्वरूप का वरण करे।।वासु.।।7।।
ॐ ह्रीं श्री पंच बालयति जिनेन्द्रेभ्यो अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।
तरु फल में ऐसी शक्ति नहीं जो, अन्तर पूर्ण शान्ति लाये।
शुद्धातम का जो अनुभव ले, वह महामोक्ष फल को पाये।।वासु.।।8।।
ॐ ह्रीं श्री पंच बालयति जिनेन्द्रेभ्यो मोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।
यह अर्घ्य न ऐसा शक्तिवान् जो, सिद्ध लोक तक पहुँचाये।
शुद्धातम का जो अनुभव ले, वह निज अनर्घ पद को पाये।।
वासुपूज्य श्री मल्लि नेमि प्रभु, पारस महावीर भगवान।
पाप ताप संताप विनाशक, पंच बालयति पूज्य महान ।।9।।
ॐ ह्रीं श्री पंच बालयति जिनेन्द्रेभ्यो अनर्घ्य पद प्राप्त अर्घ्यं नि.।

अर्घ्यावलि

1. अर्घ्य - श्री वासुपूज्य स्वामी

चम्पापुर राजा वसुपूज्य, सुमाता विजया के नन्दन।
पन्द्रह मास रतन बरसाये, सुरपति ने माँ के आंगन ।।1।।
दिक्कुमारियों ने सेवा कर, माँ का करती मनोरंजन।
सोलह स्वप्न लखे माता ने, निद्रा में सोते इक दिन ।।2।।
जन्म लिया तुमने, कुमार वय में ही की दीक्षा धारण।
चार घातिया कर्मनाश कर, केवलज्ञान लिया पावन ।।3।।

1. आत्मा के अज्ञान को

भादव शुक्ला चतुर्दशी को, **चम्पापुर** से मुक्त हुए।
परम पूज्य प्रभु हर अघातिया, मुक्ति रमा से युक्त हुए ।।4।।
महिष चिन्ह चरणों में शोभित, वासुपूज्य को करूँ नमन।
शुद्ध आत्मा की प्रतीति कर मैं, भी पाऊँ मुक्ति सदन ।।5।।
ॐ ह्रीं गर्भजन्मतपज्ञानमोक्ष पंच कल्याणक प्राप्त श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

2. अर्घ्य - श्री मल्लिनाथ स्वामी

मिथिलापुर नगरी के अधिपति **कुम्भराज** गृह जन्म लिया।
माता प्रभावती हर्षायीं, देवों ने आनन्द किया ।।1।।
ऐरावत गज पर ले जाकर, गिरि सुमेरु अभिषेक किया।
मात–पिता को सौंप इन्द्र ने, हर्षित नाटक नृत्य किया ।।2।।
लघु वय में दीक्षाधारी, पंचमुष्ठि कच–लोच किया।
छह दिन ही छद्मस्थ रहे फिर, तुमने केवलज्ञान लिया ।।3।।
संवलकूट शिखर सम्मेदाचल पर, जय जय गान हुआ।
फागुन शुक्ल पंचमी के दिन, महामोक्ष कल्याण हुआ ।।4।।
कलश चिन्ह चरणों में शोभित, मल्लिनाथ को करूँ नमन।
मन, वच, तन, प्रभु के गुण गाऊँ, मैं भी पाऊँ सिद्ध सदन ।।5।।
ॐ ह्रीं गर्भ जन्म तप ज्ञान मोक्ष पंच कल्याणक प्राप्त श्री मल्लिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

3. अर्घ्य - श्री नेमिनाथ स्वामी

नृपति समुद्रविजय हर्षाये, **शिवादेवी** उर धन्य किया।
नेमिनाथ तीर्थंकर तुमने, **शौरीपुर** में जन्म लिया ।।1।।

नगर द्वारिका से विवाह हित, **जूनागढ़** को किया प्रयाण।
पशुओं की करुण पुकार सुन, उर छाया वैराग्य महान ||2||
भव तन भोगों से विरक्त हो, पंच महाव्रत ग्रहण किया।
शीघ्र अनन्त चतुष्टय प्रगटा, पर विभाव सब हरण किया ||3||
ले कैवल्य, मोक्ष सुख पाया, पाया शिवपद अविकारी।
शुभ **आषाढ़ शुक्ल अष्टम** को, धन्य हो गई **गिरनारी** ||4||
शंख चिन्ह चरणों में शोभित, नेमिनाथ को करूँ नमन।
निज स्वभाव के साधन द्वारा, मैं भी पाऊँ मुक्ति सदन ||5||
ॐ ह्रीं गर्भ जन्म तप ज्ञान मोक्ष पंच कल्याणक प्राप्त श्री नेमीनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

4. अर्घ्य - श्री पार्श्वनाथ स्वामी

वाराणसी नगर अति सुन्दर, **अश्वसेन नृप** के नन्दन।
माता वामा देवी के सुत, **पार्श्वनाथ** प्रभु जग वन्दन ||1||
तुम कुमार वय में ही दीक्षित, होकर निज में हुए मगन।
कमठ शत्रु कर सका न कुछ भी, यद्यपि किया उपसर्ग सघन||2||
केवलज्ञान प्राप्त होते ही, रचा इन्द्र ने समवशरण।
दे उपदेश भव्य जीवों को मुक्ति वधू का किया वरण ||3||
श्रावण शुक्ल सप्तमी के दिन, अष्टकर्म किया हनन।
कूट स्वर्णभद्र सम्मेद शिखर से, तुमने पाया सिद्ध सदन ||4||
सर्प चिन्ह चरणों में शोभित, पार्श्वनाथ को करूँ नमन।
त्रैकालिक ज्ञायक स्वभाव से, मैं भी पाऊँ मोक्ष भवन ||5||
ॐ ह्रीं गर्भ जन्म तप ज्ञान मोक्ष कल्याणक प्राप्त श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

5. अर्घ्य - श्री महावीर स्वामी

कुण्डलपुर वैशाली नृप सिद्धार्थ पुत्र श्री वीर जिनेश।
प्रिय कारिणी **माता त्रिशला** के, उर से जन्में महा महेश ||1||
अविवाहित रह राजपाट सब, ठुकराया मुनिव्रत धारे।
द्वादश वर्ष तपस्या करके, कर्म शिथिल सब कर डाले ||2||
केवलज्ञान लब्धि प्रगटा कर तीर्थंकर, जगती को उपदेश दिया।
तीस वर्ष कर विहार प्रभु, मोक्षमार्ग संदेश दिया ||3||
कार्तिक कृष्ण अमावस्या को, अष्टकर्म अवसान किया।
पावापुर के महोद्यान से, सिद्ध स्वपद निर्वाण लिया ||4||
सिंह चिन्ह चरणों में शोभित, वर्धमान को करूँ नमन।
ध्रुव चैतन्य स्वरूप लक्ष्य में ले, मैं भी पाऊँ मुक्ति भवन ||5||
ॐ ह्रीं गर्भ जन्म तप ज्ञान मोक्ष कल्याणक प्राप्त श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

जय प्रभु **वासुपूज्य** जिन स्वामी, **मल्लिनाथ** जय **नेमि महान**।
जय **श्री पार्श्वनाथ** प्रभु जिनवर, जय जय **महावीर** भगवान||1||
पर परिणति तज निज परिणति से, चारों गति हर हुए महान।
पाँचों तीर्थंकर प्रभु तुमने, पाई पंचम गति निर्वाण ||2||
अब वैराग्य जगे मन मेरे, भव भोगों में रमूँ नहीं।
भाव शुभाशुभ के प्रपंच में, और अधिक अब थमूँ नहीं ||3||
भक्ति भाव से यही विनय है, निज अटूट बल दो स्वामी।
चिंतामणि रत्नत्रय पाकर, बन जाऊँ शिव पथ गामी ||4||

मैं पाँचों समवाय प्राप्त कर, नित पांचों स्वाध्याय करूँ।
पंचम करणलब्धि को पाकर, भेद ज्ञान पुरुषार्थ करूँ ||5||
वर्ण पंच रस पंच गंध दो, स्पर्श अष्ट मुझमें न कहीं।
पाँच वर्गणा पुद्गल की, पर्यायों से संबंध नहीं ||6||
पंच भेद मिथ्यात्व त्यागकर, समकित अंगीकार करूँ।
पंच पाप तज एकदेश, **पाँचों अणुव्रत** स्वीकार करूँ ||7||
पंचेन्द्रिय के पंच विषय तज, पंच प्रमाद विनाश करूँ।
पंच महाव्रत पंच समितिधर, पंचाचार प्रकाश करूँ ||8||
पंच प्रकार भाव आश्रव का, बंध नहीं होने पाए।
पंचोत्तर[1] के वैभव का भी, लोभ नहीं उर में आए ||9||
संयम पाँच प्रकार ग्रहण कर, मैं **पाँचों चारित्र** धरूँ।
पंचम यथाख्यात चारित्र पा, **कर्मघातिया** नाश करूँ ||10||
पंचम भाव पारिणामिक से, पाऊँ स्वामी पंचम ज्ञान।
पंच परावर्तन अभाव कर, पाऊँ **पंचम गति** भगवान ||11||
पंच बालयति तुम चरणों में, यही विनय है बारम्बार।
सादि अनंत सिद्ध पद पाऊँ, नित्य निरंजन शिवसुखकार ||12||

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य मल्लिनाथ नेमिनाथ पार्श्वनाथ महावीर पंच बालयति जिनेन्द्रेभ्यो पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

पंच बालयति प्रभु चरण भाव सहित उर धार।
मन वच तन जो पूजते वे होते भव पार।।

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री पंचबालयति तीर्थंकरेभ्यो नमः

1. पाँचवा अनुत्तर विमान

24. श्री शान्ति कुन्थु अरनाथ तीर्थंकर पूजन

जय [1]**शान्तिनाथ** हे शान्तिमूर्ति, जय [2]**कुन्थुनाथ** आनन्द रूप।
जय [3]**अरनाथ** अरि कर्मजयी, तीनों [4]**तीर्थंकर** विश्वभूप।।
तुम **कामदेव** [5]अतिशय महान, सम्राट [6]**चक्रवर्ती** अनूप।
भव भोग देह से हो विरक्त, पाया निज सिद्ध स्वपद स्वरूप।।

ॐ ह्रीं श्री शांति कुन्थु अरनाथ जिनेन्द्राः अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्री शांति कुन्थु अरनाथ जिनेन्द्राः अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं श्री शांति कुन्थु अरनाथ जिनेन्द्राः अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।

पावन निर्मल नीर समुज्जवल, श्री चरणों में अर्पित है।
जन्म मरण नाशो हे स्वामी, सादर हृदय समर्पित है।।
शान्ति कुन्थु अरनाथ जिनेश्वर, तीर्थंकर मंगलकारी।
कामदेव सम्राट **चक्रवर्ती**, पद त्यागी बलिहारी ||1||

ॐ ह्रीं श्री शांति कुन्थु अरनाथ तीर्थंकरेभ्यो जन्मजरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

तन का ताप विनाशक चन्दन, श्री चरणों में अर्पित है।
भव आताप मिटाओ स्वामी, सादर हृदय समर्पित है।।शान्ति||2||

ॐ ह्रीं श्री शांति कुन्थु अरनाथ तीर्थंकरेभ्यो संसार ताप विनाशनाय चंदनं नि. स्वाहा।

अक्षय तंदुल पुंज मनोहर, श्री चरणों में अर्पित है।
अनुपम अक्षय निज पद दो प्रभु, सादर हृदय समर्पित है।।शान्ति||3||

ॐ ह्रीं श्री शांति कुन्थु अरनाथ जिनेन्द्रेभ्यो अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि. स्वाहा।

1,2,3 तीनों तीर्थंकर 4,5, 6 थीर्थंकर, कामदेव व चक्रवर्ती पदधारी होते हैं।

अतिशय सुन्दर भाव पुष्प, शुभ श्री चरणों में अर्पित है।
कामरोग विध्वंस करो प्रभु, सादर हृदय समर्पित है।।शान्ति||4||
ॐ ह्रीं श्री शांति कुन्थु अरनाथ तीर्थंकरेभ्यो कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

मन भावन नैवेद्य सुहावन, श्री चरणों में अर्पित है।
क्षुधा व्याधि नाशो हे स्वामी, सादर हृदय समर्पित है।।शान्ति||5||
ॐ ह्रीं श्री शांति कुन्थु अरनाथ तीर्थंकरेभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।

अन्धकार नाशक जड़ दीपक, श्री चरणों में अर्पित है।
मोह तिमिर हरलो हे स्वामी, सादर हृदय समर्पित है।।शान्ति||6||
ॐ ह्रीं श्री शांति कुन्थु अरनाथ तीर्थंकरेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

महासुंगधित धूप नि:शंकित, श्री चरणों में अर्पित है।
अष्टकर्म अरिध्वंस करो प्रभु, सादर हृदय समर्पित है।।शान्ति||7||
ॐ ह्रीं श्री शांति कुन्थु अरनाथ तीर्थंकरेभ्यो अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि. स्वाहा।

पुण्य भाव का सारा शुभफल, श्री चरणों में अर्पित है।
परम मोक्षफल दो हे स्वामी, सादर हृदय समर्पित है।।शान्ति||8||
ॐ ह्रीं श्री शांति कुन्थु अरनाथ तीर्थंकरेभ्यो मोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।

अष्ट द्रव्य का अर्घ अष्ट विधि, श्री चरणों में अर्पित है।
निज अनर्घ पद दो हे स्वामी, सादर हृदय समर्पित है।।
शान्ति कुन्थु अरनाथ जिनेश्वर, तीर्थंकर मंगलकारी।
कामदेव सम्राट चक्रवर्ती, पद त्यागी बलिहारी ||9||
ॐ ह्रीं श्री शांतिकुन्थु अरनाथ तीर्थंकरेभ्यो अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

अर्घ्यावलि

1. अर्घ्य - श्री शान्तिनाथ तीर्थंकर

नगर **हस्तिनापुर** के अधिपति **विश्वसेन** नृप परम उदार।
माता ऐरा देवी के सुत **शान्तिनाथ** मंगल दातार ||1||
कामदेव बारहवें, पंचम चक्री, सोहलहवें तीर्थेश।
भरत क्षेत्र को पूर्ण विजयकर स्वामी आप हुए चक्रेश ||2||
नभ में नाशवान बादल लख, उर में जागा ज्ञान विशेष।
भव भोगों से उदासीन हो, ले वैराग्य हुये परमेश ||3||
निज **आत्मानुभूति** के द्वारा वीतराग अरहन्त हुए।
मुक्त हुए **सम्मेद शिखर** से, परम सिद्ध भगवन्त हुए ||4||
ॐ ह्रीं गर्भ जन्म तप ज्ञान निर्वाण पंचकल्याणक प्राप्त श्री शांतिनाथ तीर्थंकराय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

2. अर्घ्य - श्री कुन्थुनाथ तीर्थंकर

नगर **हस्तिनापुर** के राजा, **सूर्य सेन** के प्रिय नंदन।
राजदुलारे **श्रीमति देवी रानी** के सुत को वन्दन ||1||
कामदेव तेरहवें, तीर्थंकर सतरहवें कुन्थु महान।
छठे चक्रवर्ती बन पाई, षटखण्डों पर विजय प्रधान ||2||
भौतिक वैभव त्याग मुनीश्वर निज, स्वरूप में लीन हुए।
शुभाशुभ माव का अभावकर, शुक्लध्यान तल्लीन हुए ||3||
ध्यान अग्नि से कर्म दग्ध कर, केवलज्ञान स्वरूप हुए।
सिद्ध हुए **सम्मेदशिखर** से, तीन लोक के भूप हुए ||4||
ॐ ह्रीं गर्भजन्म तप ज्ञान निर्वाण पंच कल्याणक प्राप्त श्री कुन्थनाथ तीर्थंकराय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

3. अर्घ्य - श्री अरनाथ तीर्थंकर

नगर **हस्तिनापुर** के पति नृपराज **सुदर्शन** पिता महान।
माता मित्रा देवी की आँखों के तारे हैं भगवान ॥1॥
कामदेव चौदहवें, सप्तम चक्री, श्री अरनाथ जिनेश।
अष्टादशम तीर्थंकर जिन, परम पूज्य जिनराज महेश ॥2॥
छहखंडों पर शासन करते, करते जग अनित्य पाया।
भव तन भोगों से विरक्तिमय, उर वैराग्य उमड़ आया ॥3॥
पंच महाव्रत धारण करके, निज स्वभाव में हुए मगन।
पा कैवल्य श्री **सम्मेद शिखर** से, पाया मुक्ति गगन ॥4॥
ॐ ह्रीं गर्भ जन्म तप ज्ञान निर्वाण पंच कल्याणक प्राप्त श्री अरनाथ तीर्थंकराय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

शान्ति कुन्थु अरनाथ जिनेश्वर के, चरणों में नित वन्दन।
विमल ज्ञान आशीर्वाद दो, काट सकूँ मैं भव बन्धन ॥1॥
सम्यक्दर्शनज्ञानचरितमय, लिया पंथ निर्ग्रंथ महान।
सोलह वर्ष रहे छद्मस्थ, अवस्था में तीनों भगवान ॥2॥
परम तपस्वी परम संयमी, मोनी महाव्रती जिनराज।
निज स्वभाव के साधन द्वारा पाया तुमने निजपद राज ॥3॥
शुक्लध्यान के द्वारा स्वामी, पाया तुमने केवलज्ञान।
दे उपदेश भव्य जीवों को, किया सकल जग का कल्याण ॥4॥
मैं अनादि से दुखिया व्याकुल, मेरे संकट दूर करो।
पाप ताप संताप लोभ भय, मोह क्षोभ चकचूर करो ॥5॥
सम्यक्दर्शन प्राप्त करूँ मैं, निज परिणति में रमण करूँ।
रत्नत्रय का अवलम्बन ले, मोक्षमार्ग को गृहण करूँ ॥6॥

वीतराग विज्ञान ज्ञान की, महिमा उर में छा जाए।
भेद ज्ञान हो निज आश्रय से, शुद्ध आत्मा दर्शाए ॥7॥
यही विनय है यही भावना, विषय कषाय अभाव करूँ।
तुम समान मुनि बन हे स्वामी, निज चैतन्य स्वभाव वरूँ ॥8॥
ॐ ह्रीं श्री शांति कुन्थु अरनाथ तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं नि. स्वाहा।
मृग अज, मीन चिन्ह चरणों में, प्रभु प्रतिमा जो करें नमन।
जन्म जन्म के पातक क्षय हो, मिट जाता भव दुख क्रन्दन।।
रोग शोक दारिद्र आदि पापों का होता शीघ्र शमन।
भव समुद्र से पार उतरते जो नित करते प्रभु पूजन ॥9॥

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री शांति कुन्थु अरनाथ तीर्थंकरेभ्यो नमः।

25. श्री तीर्थंकर समवशरण पूजन

तीर्थंकर प्रभु मोह क्षीणकर, जब प्रगटाते केवलज्ञान।
इन्द्र आज्ञा से कुबेर रचना, करता स्वर्गों से आन ॥1॥
बारह सभा जहाँ जुड़ती हैं, होता है, प्रभु का उपदेश।
ओंकारमय दिव्यध्वनि से पाते सभी जीव संदेश ॥2॥
पुण्योदय से समवशरण अरु जिन मंदिर मैंने पाया।
अष्ट द्रव्य ले विनय भाव से, पूजन करने को आया ॥3॥
श्री जिनवर के समवशरण को, भाव सहित मैं करूँ प्रणाम।
वीतराग पावन मुद्रा, दर्शनकर ध्याऊँ आठों याम ॥4॥
ॐ ह्रीं श्री समवशरण मध्य विराजमान तीर्थंकरदेव अत्र अवतर अवतर संवौषट्। ॐ ह्रीं श्री समवशरण मध्य विराजमान तीर्थंकरदेव अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। ॐ ह्रीं श्री समवशरण मध्य विराजमान तीर्थंकरदेव अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।

1 **अष्टादश दोषों** से विरहित, अरहंतों को नमन करूँ।
अनुभव रस अमृत जल पीकर, त्रिविधताप को शमन करूँ।।
जिन तीर्थंकर समवशरण को, भाव सहित मैं नमन करूँ।
पूर्ण शुद्ध ज्ञायक स्वरूप, मैं मोक्षमार्ग अनुसरण करूँ ॥1॥
ॐ ह्रीं श्री समवशरण मध्य विराजमान तीर्थंकराय जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

छयालीस गुण मंडित प्रभुवर, अर्हंतों को नमन करूँ।
अनुभव रस चंदन शीतल पा, भवआतप का हरण करूँ।।जिन॥2॥
ॐ ह्रीं श्री समवशरण मध्य विराजमान तीर्थंकराय संसार ताप विनाशनाय चंदनं नि. स्वाहा।

चार अनंत चतुष्टयधारी, अर्हंतों को नमन करूँ।
अनुभव रसमय अक्षत पाकर, भव समुद्र का हरण करूँ।।जिन॥3॥
ॐ ह्रीं श्री समवशरण मध्य विराजमान तीर्थंकराय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि. स्वाहा।

जन्मसमय दश, ज्ञानसमय दश, अतिशययुत प्रभु नमन करूँ।
अनुभव रस के पुष्प प्राप्तकर, कामबाण का हनन करूँ।।जिन॥4॥
ॐ ह्रीं श्री समवशरण मध्य विराजमान तीर्थंकराय कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

देवोपम **चौदह अतिशय** संयुक्त, देव को नमन करूँ।
अनुभव रस नैवेद्य प्राप्तकर, क्षुधारोग का हरण करूँ।।जिन॥5॥
ॐ ह्रीं श्री समवशरण मध्य विराजमान तीर्थंकराय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।

1. 18 दोष – (1) क्षुधा, (2) तृषा, (3) राग, (4) द्वेष, (5(मोह, (6) जन्म, (7) जरा, (8) मरण, (9) रोग, (10) शोक, (11) भय, (12) स्वेद, (13) खेद, (14) निद्रा, (15) मद, (16) विस्मय,(17) रति, (18) चिन्ता।

अष्ट प्रातिहार्यों से शोभित, अर्हंतों को नमन करूँ।
अनुभव रसमय दीपज्योति पा, मोहतिमिर को हनन करूँ।।जिन॥6॥
ॐ ह्रीं श्री समवशरण मध्य विराजमान तीर्थंकराय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

नव क्षायिक लब्धियाँ प्राप्त, जिनवर देवों को नमन करूँ।
अनुभव रस की धूप बनाकर, अष्टकर्म को हरण करूँ।।जिन॥7॥
ॐ ह्रीं श्री समवशरण मध्य विराजमान तीर्थंकराय अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि. स्वाहा।

वसु मंगल द्रव्यों से शोभित, गंधकुटी को नमन करूँ।
अनुभव रस के फल मैं पाऊँ, मोक्षस्वपद का वरण करूँ।।जिन॥8॥
ॐ ह्रीं श्री समवशरण मध्य विराजमान तीर्थंकराय मोक्षफल प्राप्तये फलं नि. स्वाहा।

परमौदारिक देह प्राप्त श्री अर्हंतों को नमन करूँ।
अनुभवरस के अर्घ्य बनाऊँ मैं, अनर्घ्य पदवरण करूँ।।
जिन तीर्थंकर समवशरण को, भाव सहित मैं नमन करूँ।
पूर्ण शुद्ध ज्ञायक स्वरूप, मैं मोक्षमार्ग अनुसरण करूँ ॥9॥
ॐ ह्रीं श्री समवशरण मध्य विराजमान तीर्थंकराय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

समवशरण जिनराज का, महापूज्य द्युतिवान।
भव्य जीव उपदेश सुन, करते निज कल्याण।।
ऋषभ देव समवशरण का, **बारह योजन** का विस्तार।
अर्द्ध अर्द्ध घटते **सन्मति तक**, रहा **एक योजन विस्तार** ॥1॥

शत इन्द्रों से वंदित श्री जिनवर का समवशरण सुन्दर।
तीन लोक का सारा वैभव, प्रभु चरणों में न्यौछावर ||2||
सौ योजन तक नहीं कहीं, दुर्भिक्ष दृष्टि में है आता।
भूमि स्वच्छ दर्पणवत होती, गंधोदक नित बरसाता ||3||
गोलाकार समवशरण रचना, होती है उन्नत आकाश।
चारों दिशि में बीस सहस्त्र, सीढ़ियाँ होतीं भू आकाश ||4||
चार कोट अरू पाँच वेदी के, बीच भूमि होती हैं आठ।
चारों ओर वीथियाँ होती, गंधकुटी तक अनुपम ठाठ ||5||
पार्श्व वीथियों में दो दो, वेदी होती है रत्नमयी।
सभी भूमियों के पथ होते, सुन्दर तोरण द्वारमयी ||6||
द्वारों पर नवनिधि व धूप, घट मंगल द्रव्य सजे होते।
साढ़े बारह कोटि वाद्य, देवों द्वारा बजते रहते ||7||
द्वार द्वार के दोनों बाजू, एक एक नाटक शाला।
जहाँ देव कन्याएँ करती, नृत्य हृदय हरने वाला ||8||
प्रथम कोट की चारों दिशि में, धर्मचक्र होते हैं चार।
धूलि शाल है नाम मनोहर, मानस्तंभ बने हैं चार ||9||
प्रथम भूमि चैत्यालय की है, मंदिर चारों ओर बनें।
फिर वापिका बनी शुभ सुन्दर, जो जल से परिपूर्ण घने ||10||
द्वितीय कोट फिर पुष्प वाटिकाओं, की पंक्ति महान विशाल।
फिर वन भूमि अशोक आम्र, चंपक अरु सप्त पर्ण तरुमाल ||11||
तृतिय कोटि में कल्पभूमि, वेदी अरु बनी नृत्यशाला।
भवन भूमि स्तूप मनोहर, ध्वजा पंक्तियों की माला ||12||
यही महोदय मंडप अनुपम, श्रुतकेवलि करते व्याख्यान।
केवलज्ञान लब्धि के धारी, भी देते उपदेश महान ||13||

चौथा कोटिशाल अति सुन्दर, कल्पवासी द्वारा रक्षित।
आगे चलकर श्री मंडप है, महाविभूतियों से भूषित ||14||
भूमि आठवीं गंधकुटी है, तीन पीठ पर सिंहासन।
तरु अशोक शिर तीन छत्र हैं, भामंडल द्युतिमय दर्पण ||15||
चारों दिशि में जिन प्रभु के मुख, दिखते मानों मुख हों चार।
अंतरीक्ष जिनदेव विराजे, खिरे दिव्य ध्वनि मंगलकार ||16||
तीन लोक की सकल संपदा, चरणों में करती वंदन।
इन्द्रादिक सुर नर मुनि पशु भी, चरणों में होते अर्पण ||17||
द्वादश सभा महान बनी हैं, दिव्य ध्वनि का मोद अपार।
नभ से पुष्प वृष्टि सुर करते, होता जय ध्वनि का उच्चार ||18||
द्वादश कोटे हैं पहिले में, गणधर ऋषिमुनि रहें विराज।
दूजे कल्पवासी देवियाँ, तीजे रहीं आर्यिका साज ||19||
चौथे में ज्योतिषी देवियाँ, पंचम व्यंतर देवि अमेव।
षष्टम भवनवासी की देवी, सप्तम भवनवासी के देव ||20||
अष्टम व्यंतर देव बैठते, नवम ज्योतिषी देव प्रसिद्ध।
दसवें कल्पवासी सुर होते, ग्यारहवें में मनुज प्रसिद्ध ||21||
बारहवें कोठे में बैठे हैं, तिर्यंच जीव चुपचाप।
तीर्थंकर की ध्वनि सुन सब, हर लेते हैं मन का संताप ||22||
प्रभु महात्म्य से रोग मरण, आपत्ति बैर तृष्णा न कहीं।
काम क्षुधामय पीड़ा दुख, आतंक यहाँ पर कहीं नहीं ||23||
पंचमेरु के क्षेत्र विदेहों के, है समवशरण प्रख्यात।
विद्यमानतीर्थंकर बीस, विराजित हैं शाश्वत विख्यात ||24||
प्रभु की अमृत वाणी सुनकर, कर्ण तृप्त हो जाते हैं।
जन्म जन्म के पातक क्षण में, शीघ्र विलय हो जाते हैं ||25||

जब विहार होता है प्रभु का, सुर रचते हैं स्वर्ण कमल।
जहाँ जहाँ प्रभु जाते होती, समवशरण रचना अविकल ||26||
समवशरण रचना का वर्णन, करने की प्रभु शक्ति नहीं।
सोलहकारण भव्य भावना भाए बिन प्रभु मुक्ति नहीं ||27||
ऐसी निर्मल बुद्धि मुझे दो, निज आतम का ज्ञान करूँ।
समवशरण की पूजन करके, शुद्धातम का ध्यान करूँ ||28||
पाप पुण्य आश्रव विनाशकर रागद्वेष पर जय पाऊँ।
कर्म प्रकृतियों पर जय पाकर, सिद्धलोक में आ जाऊँ ||29||
ॐ ह्रीं श्री समवशरण मध्य विराजमान तीर्थंकराय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

समवशरण दर्शन करूँ गाऊँ मंगल चार।
भेद ज्ञान की शक्ति से हो जाऊँ भवपार।।

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री समवशरण मध्य विराजमान तीर्थंकराय नमः।

26. श्री बाहुबलि स्वामी पूजन

जयति बाहुबलि स्वामी जय जय, करूँ वन्दना बारम्बार।
निज स्वरूप का आश्रय लेकर, आप हुये भवसागर पार।।
हे त्रैलोक्यनाथ, त्रिभुवन में, छाई महिमा अपरम्पार।
सिद्ध स्वपद की प्राप्ति हो गई, हुआ जगत में जय जयकार।।
पूजन करने मैं आया हूँ, अष्ट द्रव्य का ले आधार।
यही विनय है चारों गति के, दुख से मेरा हो उद्धार।।
ॐ ह्रीं श्री जिन बाहुबलिस्वामिन् अत्र अवतर अवतर संवौषट्। ॐ ह्रीं श्री जिन बाहुबलिस्वामिन् अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। ॐ ह्रीं श्री जिन बाहुबलिस्वामिन् अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।

उज्जवल निर्मल जल प्रभु पद पंकज में आज चढ़ाता हूँ।
जन्म मरण का नाश करूँ, आनन्द कन्द गुण गाता हूँ।
श्री बाहुबलि स्वामी प्रभु, चरणों में शीश झुकाता हूँ।
अविनश्वर शिव सुख पाने को, नाथ शरण में आता हूँ ||1||
ॐ ह्रीं श्री जिनबाहुबलि स्वामिने जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि.।
शीतल मलय सुगन्धित पावन, चन्दन भेंट चढ़ाता हूँ।
भव आताप नाश हो मेरा, ध्यान आपका ध्याता हूँ।।श्री बाहु.||2||
ॐ ह्रीं श्री जिन बाहुबलि स्वामिने संसार ताप विनाशनाय चंदनं नि.।
उत्तम शुभ्र अखंडित तन्दुल, हर्षित चरण चढ़ाता हूँ।
अक्षय पद की सहज प्राप्ति हो, यही भावना भाता हूँ।।श्री बाहु.||3||
ॐ ह्रीं श्री जिन बाहुबलि स्वामिने अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि.।
काम शत्रु के कारण अपना शील स्वभाव न पाता हूँ।
कामभाव का नाश करूँ मैं, सुन्दर पुष्प चढ़ाता हूँ।।श्री बाहु.||4||
ॐ ह्रीं श्री जिन बाहुबलि स्वामिने काम बाण विनाशनाय पुष्पं नि.।
तृष्णा की भीषण ज्वाला से, प्रति पल जलता जाता हूँ।
क्षुधारोग से रहित बनूँ मैं, शुभनैवेद्य चढ़ाता हूँ।।श्री बाहु.||5||
ॐ ह्रीं श्री जिन बाहुबलि स्वामिने क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।
मोह ममत्व आदि के कारण, सम्यकमार्ग न पाता हूँ।
यह मिथ्यात्व तिमिर मिट जाये, मैं प्रभुवर दीप चढ़ाता हूँ।।श्रीबाहु.||6||
ॐ ह्रीं श्री जिन बाहुबलि स्वामिने मोहान्धकार विनाशनाय दीपंनि.।
है अनादि से कर्मबन्ध दुखमय, न पृथक कर पाता हूँ।
अष्टकर्म विध्वंस करूँ, अतएव सु धूप चढ़ाता हूँ।।श्री बाहु.||7||
ॐ ह्रीं श्री जिन बाहुबलि स्वामिने अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।

सहज सम्पदा युक्त स्वयं होकर भी भव भव दुख पाता हूँ।
परम मोक्षपद शीघ्र मिले, उत्तम फल चरण चढ़ाता हूँ।।श्री बाहु.।।8।।
ॐ ह्रीं श्री जिन बाहुबलि स्वामिने मोक्षफल प्राप्तये फलं नि. ।
पुण्यभाव से स्वर्गादिक पद, बार बार पा जाता हूँ।
निज अनर्घपद मिला न अब तक, इससे अर्घ चढ़ाता हूँ।।
श्री बाहुबलि स्वामी प्रभु, चरणों में शीश झुकाता हूँ।
अविनश्वर शिव सुख पाने को, नाथ शरण में आता हूँ ।।9।।
ॐ ह्रीं श्री जिन बाहुबलि स्वामिने अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि. ।

जयमाला

आदिनाथ सुत बाहुबलि प्रभु, **मात सुनन्दा** के नन्दन।
चरम शरीरी **कामदेव** तुम, **पोदनपुर पति** अभिनन्दन ।।1।।
छह खण्डों पर विजय प्राप्त कर, भरत चढ़े **वृषभाचल** पर।
अगणित चक्री हुए नाम लिखने को, मिला न थल तिलभर ।।2।।
मैं ही चक्री हुआ अहं का मान, ध्वस्त हो गया तभी।
एक प्रशस्ति मिटाकर अपनी, लिखी प्रशस्ति स्वहस्त जभी ।।3।।
चले अयोध्या किन्तु नगर में, चक्र प्रवेश न कर पाया।
ज्ञात हुआ लघु भ्रात बाहुबलि, सेवा में न अभी आया ।।4।।
भरत चक्रवर्ती ने चाहा, बाहुबलि आधीन रहे।
ठुकराया आदेश भरत का, तुम स्वतंत्र स्वाधीन रहे ।।5।।
भीषण युद्ध छिड़ा दोनों भाई के मन संताप हुए।
दृष्टि, मल्ल, जल, युद्ध, भरत से, करके विजयी आप हुए ।।6।।
क्रोधित होकर भरत चक्रवर्ती ने, चक्र चलाया है।
तीन प्रदक्षिणा देकर, कर में चक्र आपके आया है ।।7।।

विजय चक्रवर्ती पर पाकर, उर वैराग्य जगा तत्क्षण।
राजपाट तज ऋषभदेव के, समवशरण को किया गमन ।।8।।
धिक–धिक यह संसार और इसकी असारता को धिक्कार।
तृष्णा की अनन्त ज्वाला में, जलता आया है संसार ।।9।।
जग की नश्वरता का तुमने, किया चिंतवन बारम्बार।
देह भोग संसार आदि से, हुई विरक्ति पूर्ण साकार ।।10।।
आदिनाथ प्रभु से दीक्षा ले, व्रत संयम को किया ग्रहण।
चले तपस्या करने वन में, रत्नत्रय को कर धारण ।।11।।
एक वर्ष तक किया कठिन तप, कार्योत्सर्ग मौन पावन।
किंतु खटक थी एक हृदय में, भरत भूमि पर है आसन ।।12।।
केवलज्ञान नहीं हो पाया, अल्पराग ही के कारण।
परिषह शीत ग्रीष्म वर्षादिक, जय करके भी अटका मन ।।13।।
भरत चक्रवर्ती ने आकर, श्री चरणों में किया नमन।
कहा कि वसुधा नहीं किसी की, भाव त्याग दो हे भगवन् ।।14।।
तत्क्षण भाव विलीन हुआ, तुम शुक्ल ध्यान में लीन हुए।
फिर अन्तर्मुहुर्त में स्वामी, मोह क्षीण स्वाधीन हुए ।।15।।
चार घातिया कर्म नष्ट कर, आप हुए केवलज्ञानी।
जय जयकार विश्व में गूँजा, जगती सारी मुस्कानी ।।16।।
झलका लोकालोक ज्ञान में, सर्व द्रव्य गुण पर्यायें।
एक समय में भूत भविष्यत् वर्तमान सब दर्शायें ।।17।।
फिर अघातिया कर्म विनाशे, सिद्ध लोक में गमन किया।
पोदनपुर से मुक्ति हुई, तीनों लोकों ने नमन किया ।।18।।
महामोक्ष फल पाया तुमने, ले स्वभाव का अवलम्बन।
हे भगवान् बाहुबलि स्वामी, कोटि कोटि शत् शत् वंदन ।।19।।

आज आपका दर्शन करने, चरण शरण में आया हूँ।
शुद्ध स्वभाव प्राप्त हो मुझको, यही भाव भर लाया हूँ ||20||
भाव शुभाशुभ भव निर्माता, शुद्ध भाव का दो प्रभु दान।
निज परिणति में रमण करूँ प्रभु, हो जाऊँ मैं आप समान||21||
समकित दीप जले अन्तर में, तो अनादि मिथ्यात्व गले।
रागद्वेष परणति हट जाये, पुण्य पाप सन्ताप टले ||22||
त्रैकालिक ज्ञायक स्वभाव का, आश्रय लेकर बढ़ जाऊँ।
शुद्धात्मानुभूति के द्वारा, मुक्ति शिखर पर चढ़ जाऊँ ||23||
मोक्ष लक्ष्मी को पाकर भी, निजानन्द रसलीन रहूँ।
सादि अनन्त सिद्ध पद पाऊँ, सदा सुखी स्वाधीन रहूँ ||24||
आज आपका रूप निरखकर, निज स्वरूप का भान हुआ।
तुम सम बने भविष्यत् मेरा, यह दृढ़ निश्चय ज्ञान हुआ ||25||
हर्ष विभोर भक्ति से पुलकित, होकर की है यह पूजन।
प्रभु पूजन का सम्यक् फल हो, कटें हमारे भव बन्धन ||26||
चक्रवर्ति इन्द्रादिक पद की, नहीं कामना है स्वामी।
शुद्ध बुद्ध चैतन्य परम पद, पाऊँ हे अन्तरमायी ||27||
ॐ ह्रीं श्री जिन बाहुबलि स्वामिने अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

दोहा

घर घर मंगल छाये जग में वस्तु स्वभाव धर्म जानें।
वीतराग विज्ञान ज्ञान से शुद्धातम को पहिचानें।

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री बाहुबलि जिनेन्द्राय नमः।

27. श्री गौतमगणधर स्वामी पूजन

जय जय इन्द्रभूति गौतम, गणधर स्वामी मुनिवर जय जय।
तीर्थंकर श्री महावीर के, प्रथम मुख्य गणधर जय जय।।
द्वादशांग श्रुत पूर्ण ज्ञानधारी, गौतम स्वामी जय जय।
वीरप्रभु की दिव्यध्वनि, जिनवाणी को सुनकर हुए अभय।।
ऋद्धि सिद्धि मंगल के दाता, मोक्ष प्रदाता गणधर देव।
मंगलमय शिवपथ पर चलकर, मैं भी सिद्ध बनूँ स्वयमेव ||1||
ॐ ह्रीं श्री गौतमगणधर स्वामिन् अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्री गौतमगणधर स्वामिन् अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। ॐ ह्रीं श्री गौतमगणधर स्वामिन् अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।
मैं मिथ्यात्व नष्ट करने को निर्मल जल की धार करूँ।
सम्यक् दर्शन पाऊँ, जन्म मरण क्षयकर भव रोग हरूँ।।
गौतमगणधर स्वामी के चरणों, की मैं करता पूजन।
देव आपके द्वारा भाषित, जिनवाणी को करूँ नमन ||1||
ॐ ह्रीं श्री गौतमगणधर स्वामिने जन्मजरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि.।
पंच पाप अविरत को त्यागूँ, शीतल चंदन चरण धरूँ।
भव आताप नाश करके प्रभु, मैं अनादि भव रोग हरूँ।।गौतम||2||
ॐ ह्रीं श्री गौतमगणधर स्वामिने संसार ताप विनाशनाय चंदनं नि.।
पंच प्रमाद नष्ट करने को, उज्जवल अक्षत भेंट करूँ।
अक्षय पद की प्राप्ति हेतु प्रभु, मैं अनादि भव रोग हरूँ।।गौतम||3||
ॐ ह्रीं श्री गौतमगणधर स्वामिने अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि.।
चार कषाय अभाव हेतु मैं, पुष्प मनोरम भेंट करूँ।
कामबाण विध्वंस करूँ प्रभु, मैं अनादि भव रोग हरूँ।।गौतम||4||
ॐ ह्रीं श्री गौतम गणधर स्वामिने कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।

मन वच काया योग सर्व, हरने को प्रभु नैवेद्य धरूँ।
क्षुधाव्याधि का नाम मिटाऊँ, मैं अनादि भव रोग हरूँ।।गौतम॥5॥
ॐ ह्रीं श्री गौतमगणधर स्वामिने क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।
सम्यक ज्ञान प्राप्त करने को, अन्तर दीप प्रकाश करूँ।
चिर अज्ञान तिमिर को नाशूँ, मैं अनादि भवरोग हरूँ।।गौतम॥6॥
ॐ ह्रीं श्री गौतमगणधर स्वामिने मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।
मैं सम्यक् चारित्र ग्रहण कर, अन्तर तप की धूप वरूँ।
अष्टकर्म विध्वंस करूँ प्रभु, मैं अनादि भव रोग हरूँ।।गौतम॥7॥
ॐ ह्रीं श्री गौतमगणधर स्वामिने अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।
रत्नत्रय का परम मोक्षफल, पाने को फल भेंट करूँ।
शुद्ध स्वपद निर्वाण प्राप्तकर, मैं अनादि भव रोग हरूँ।।गौतम॥8॥
ॐ ह्रीं श्री गौतमगणधर स्वामिने मोक्षफल प्राप्त फलं नि.।
जल फलादि वसु द्रव्य अर्घ, चरणों में सविनय भेंट करूँ।
पद अनर्घ सिद्धत्व प्राप्त कर, मैं अनादि भवरोग हरूँ।।
गौतमगणधर स्वामी के चरणों, की मैं करता पूजन।
देव आपके द्वारा भाषित, जिनवाणी को करूँ नमन॥9॥
ॐ ह्रीं श्री गौतमगणधर स्वामिने अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।
श्रावण कृष्णा एकम् के दिन, समयशरण में तुम आये।
मानस्तम्भ देखते ही तो, मान मोह अघ गल जाये।।
महावीर के दर्शन करते ही, मिथ्यात्व हुआ चकचूर।
रत्नत्रय पाते ही दिव्य ध्वनि का लाभ लिया भरपूर॥10॥
ॐ ह्रीं श्री गौतमगणधर स्वामिने दिव्य ध्वनि लाभ प्राप्त अर्घ्यं नि.।
कार्तिक कृष्ण अमावस्या को, कर्म घातिया करके क्षय।
सायंकाल समय में पाई, केवलज्ञान लक्ष्मी जय।।

ज्ञानावरण दर्शनावरणी, मोहनीय का करके अंत।
अंतराय का सर्वनाश कर, तुमने पाया पद भगवंत॥11॥
ॐ ह्रीं श्री गौतमगणधर स्वामिने केवलज्ञान प्राप्तये अर्घ्यं नि.।
विचरण करके दुखी जगत के, जीवों का कल्याण किया।
अंतिम शुक्ल ध्यान के द्वारा, योगों का अवसान किया।।
देव बानवे वर्ष अवस्था में, तुमने निर्वाण लिया।।
क्षेत्र गुणावा करके पावन, सिद्ध स्वरूप महान किया॥12॥
ॐ ह्रीं श्री गौतमगणधर स्वामिने महा मोक्ष पद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

जयमाला

मगध देश के गौतमपुर वासी, **वसुभूति ब्राह्मण** पुत्र।
माँ पृथ्वी के लाल लाड़ले, **इन्द्रभूति** तुम ज्येष्ठ सुपुत्र॥1॥
अग्निभूति अरु **वायुभूति**, लघु भ्राता द्वय उत्तम विद्वान।
शिष्य पांच सौ साथ आपके, चौदह विद्या ज्ञान निधान॥2॥
शुभ वैशाख शुक्ल दशमी को, हुआ **वीर को केवलज्ञान**।
समवशरण की रचना करके, हुआ इन्द्र को हर्ष महान॥3॥
बारह सभा बनी अति सुन्दर, गन्धकुटी के बीच प्रधान।
अन्तरीक्ष में महावीर प्रभु, बैठे पद्मासन निज ध्यान॥4॥
छयासठ दिन हो गये दिव्य ध्वनि, खिरी नहीं प्रभु की यह जान।
अवधिज्ञान से लखा इन्द्र ने, गणधर की है कमी प्रधान॥5॥
इन्द्रभूति गौतम पहले गणधर, होंगे यह जान लिया।
वृद्ध ब्राह्मण वेश बना, गौतम के घर प्रस्थान किया॥6॥
पहुँच इन्द्र ने नमस्कार कर, किया निवेदन विनयमयी।
मेरे गुरु श्लोक सुनाकर, मौन हो गये ज्ञानमयी॥7॥

अर्थ भाव वे बता न पाये, वही जानने आया हूँ।
आप श्रेष्ठ विद्वान जगत में, शरण आपकी आया हूँ ||8||
इन्द्रभूति गौतम श्लोक, श्रवण कर मन में चकराये।
झूठा अर्थ बताने के भी, भाव नहीं उर में आये ||9||
मन में सोचा **तीन काल, छै द्रव्य, जीव, षटलेश्या** क्या?
नवपदार्थ, पंचास्तिकाय, गति, समिति, ज्ञान, व्रत, चारित्र क्या ||10||
बोले गुरु के पास चलो मैं, वहीं अर्थ बतलाऊँगा।
अगर हुआ तो शास्त्रार्थ कर, उन पर भी जय पाऊँगा ||11||
अति हर्षित हो इन्द्र हृदय में, बोला स्वामी अभी चलें।
शंकाओं का समाधान कर, मेरे मन की शल्य दलें ||12||
अग्निभूति अरु वायुभूति दोनों, भ्राता संग लिए जभी।
शिष्य पांच सौ संग ले गौतम, साभिमान चल दिये तभी ||13||
समवशरण की सीमा में जाते ही, हुआ गलित अभिमान।
प्रभु दर्शन करते ही पाया, सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान ||14||
तत्क्षण सम्यक्चारित धारा, मुनि बन गणधर पद पाया।
अष्ट ऋद्धियाँ प्रगट हो गईं, ज्ञान मनःपर्यय पाया ||15||
खिरने लगी दिव्य ध्वनि प्रभु की, परमहर्ष उर में छाया।
कर्म नाशकर मोक्ष प्राप्ति का, यह अपूर्व अवसर पाया ||16||
ओंकार ध्वनि मेघ गर्जना सम, होती है गुणशाली।
द्वादशांग वाणी तुमने, अर्न्तमुहूर्त में रच डाली ||17||
दोनों भ्राता शिष्य पांच सौ ने, मिथ्यात्व तभी हरकर।
हर्षित हो जिनदीक्षा ले ली, दोनों भ्रात हुए गणधर ||18||
राजगृही के विपुलाचल पर, प्रथम देशना मंगलमय।
महावीर संदेश विश्व ने, सुना शाश्वत शिवसुखमय ||19||

इन्द्रभूति, श्री अग्निभूति, श्री वायुभूति, शुचिदत्त महान।
श्री सुधर्म, मान्डव्य, मौर्यसुत, श्री अकम्प अतिहीविद्वान ||20||
अचल और **मेदार्य, प्रभास** यही ग्यारह गणधर गुणवान।
महावीर के प्रथम शिष्य तुम, हुए मुख्य **गणधर** भगवान् ||21||
छह छह घड़ी दिव्य ध्वनि खिरती, तीन समय नितमंगलमय।
वस्तु तत्व उपदेश प्राप्तकर, भव्य जीव होते निजमय ||22||
तीस वर्ष रह समवशरण में, गूँथा श्री जिनवाणी को।
देश देश में कर विहार, फैलाया श्री जिनवाणी को ||23||
कार्तिक कृष्ण अमावस प्रातः महावीर निर्वाण हुआ।
सन्ध्याकाल तुम्हें भी, पावापुर में केवलज्ञान हुआ ||24||
ज्ञान लक्ष्मी तुमने पाई, और वीर प्रभु ने निर्वाण।
दीपमालिका पर्व विश्व में, तभी हुआ प्रारम्भ महान ||25||
आयु पूर्ण जब हुई आपकी, योग नाश निर्वाण लिया।
धन्य हो गया क्षेत्र **गुणावा**, देवों ने जय जय गान किया ||26||
आज तुम्हारे चरण कमल के, दर्शन पाकर हर्षाया।
रोम–रोम पुलकित है मेरा, भव का अन्त निकट आया ||27||
मुझको भी प्रज्ञा छैनी दो, मैं निज पर में भेद करूँ।
भेद ज्ञान की महाशक्ति से, दुखदायी भव खेद हरूँ ||28||
पद सिद्धत्व प्राप्त करके मैं, पास तुम्हारे जाऊँ।
तुम समान बन शिवपद, पाकर सदा सदा को मुस्काऊँ ||29||
जय जय गौतम गणधर स्वामी, अभिरामी अन्तर्यामी।
पाप पुण्य परभाव विनाशी, मुक्ति निवासी सुखधामी ||30||
ॐ ह्रीं श्री गौतमगणधर स्वामिने अनर्घ्य पद प्राप्ताय अर्घ्यं नि.।

गौतम स्वामी के वचन भाव सहित उर धार।
मन, वच, तन, जो पूजते वे होते भव पार।।

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री गौतमगणधराय नमः।

28. श्री सप्त ऋषि पूजन

जय जयति जय सुरमन्यु, जय **श्रीमन्युनिचय**, मुनिश्वरम्।
जय **सर्वसुन्दर**, पूज्य श्री **जयवान**, परम यतिश्वरम्।।
जय **विनयलालस** और श्री **जयमित्र**, सुमुनि ऋषीश्वरम्।
जय ध्यानपति, जय ज्ञानमति जिन साधु सप्त ऋषीश्वरम्।।
जय ऋद्धि सिद्धि महानधारी, महामुनि जगदीश्वरम्।
जय सकल जग कल्याणकारी, दयानिधि अवनीश्वरम्।।

ॐ ह्रीं श्री सुरमन्यु, श्रीमन्यु निचय, सर्वसुन्दर, जयवान, विनय लालस जयमित्र, सप्त ऋषिश्वराः अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्री सुरमन्यु, श्रीमन्यु निचय, सर्वसुन्दर, जयवान, विनय लालस जयमित्र, सप्त ऋषिश्वराः अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। ॐ ह्रीं श्री सुरमन्यु, श्रीमन्यु निचय, सर्वसुन्दर, जयवान, विनय लालस जयमित्र, सप्त ऋषिश्वराः अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।

सप्त तत्व श्रद्धान पूर्वक, आत्म प्रतीत वरूँ स्वामी।
सप्त भयों से रहित बनूँ मैं, जन्म मरण नाशूँ स्वामी।।
सुरमन्यु, श्रीमन्यु आदि जयमित्र, सप्त ऋषीश्वर वन्दन।
श्रद्धा ज्ञान चरित्र शक्ति से, काटूँ भव भव के बंधन ||1||

ॐ ह्रीं श्री सुरमन्यु, श्रीमन्यु, निचय, सर्वसुन्दर, जयवान विनय लालस, जयमित्र, सप्त ऋषिश्वरेभ्योः जन्मजरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

नियम सप्त दस नित पालन कर, सप्ताक्षरी मंत्र ध्याऊँ।
सप्त नरक ,सुर ,पशु ,नरगतिमय , भव आताप नशाऊँ । |सुरमन्यु||2||

ॐ ह्रीं श्री सुरमन्यु, श्रीमन्यु, निचय, सर्वसुन्दर, जयवान, विनय, लालस, जयमित्र, सप्त ऋषिश्वरेभ्योः संसार ताप विनाशनाय चंदनं नि. स्वाहा।

सप्त सुगुण दाता के पाऊँ, सप्त स्थान दान दूँ नित्य।
सप्तव्यसन तज निजआतम भज ,अक्षय पदपाऊँ निश्चय । |सुरमन्यु||3||

ॐ ह्रीं श्री सुरमन्यु, श्रीमन्यु, निचय, सर्वसुन्दर, जयवान, विनय, लालस,, जयमित्र, सप्त ऋषिश्वरेभ्योः अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि।

सप्त शुद्धिपूर्वक सामायिक करूँ, त्रिकाल शुद्ध मन से।
सप्तशीलकोपालकामअरि ,नाशकरूँनिजचिन्तनसे |सुरमन्यु||4||

ॐ ह्रीं श्री सुरमन्यु, श्रीमन्यु, निचय, सर्वसुन्दर, जयवान, विनय, लालस, जयमित्र, सप्त ऋषिश्वरेभ्योः कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

सप्त कुंभ व्रत चार शतक छयानवे महा उपवास करूँ।
इनमें इकसठ करूँ पारणा , क्षुधारोग फिर नाश करूँ |सुरमन्यु||5||

ॐ ह्रीं श्री सुरमन्यु, श्रीमन्यु, निचय, सर्वसुन्दर, जयवान, विनय, लालस, जयमित्र, सप्त ऋषिश्वरेभ्योः क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।

सप्त नयों के द्वारा स्वामी, वस्तुतत्व का करूँ विचार।
मोहनाश हित सात प्रतिक्रमण , करके पालूँ ज्ञानाचार । |सुरमन्यु||6||

ॐ ह्रीं श्री सुरमन्यु, श्रीमन्यु, निचय, सर्वसुन्दर, जयवान, विनय, लालस, जयमित्र, सप्त ऋषिश्वरेभ्योः मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

सात भंग स्याद्वादमयी, जिनवाणी की छाया पाऊँ।
केवलज्ञान लब्धि को पाकर, अष्टकर्म पर जय पाऊँ। सुरमन्यु ॥7॥
ॐ ह्रीं श्री सुरमन्यु, श्रीमन्यु, निचय, सर्वसुन्दर, जयवान, विनय, लालस, जयमित्र, सप्त ऋषिश्वरेभ्योः अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि. ।
सप्त समुद्घातों में स्वामी, केवलिसमुद्घात पाऊँ।
आठ समय पश्चात् मोक्ष पा, पूर्ण शाश्वत सुख पाऊँ। सुरमन्यु ॥8॥
ॐ ह्रीं श्री सुरमन्यु, श्रीमन्यु, निचय, सर्वसुन्दर, जयवान, विनय, लालस, जयमित्र, सप्त ऋषिश्वरेभ्योः मोक्षफल प्राप्तये फलं नि. ।
सप्त परम स्थानों में, निर्वाण स्थान शिवपुर जाऊँ।
पद अनर्घ से सादि अनन्त, सिद्ध सुख पाऊँ हर्षाऊँ।।
सुरमन्यु, श्रीमन्यु आदि जयमित्र, सप्त ऋषीश्वर बन्दन।
श्रद्धा ज्ञान चरित्र शक्ति से, काटूँ भव भव के वंधन ॥9॥
ॐ ह्रीं श्री सुरमन्यु, श्रीमन्यु, निचय, सर्वसुन्दर, जयवान, विनय, लालस, जयमित्र, सप्त ऋषिश्वरेभ्योः अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि. ।

जयमाला

महापूज्य पावन, परम श्री सप्त ऋषिराज।
आत्म धर्म रथ सारथी, तारण तरण जहाज ॥1॥
तीर्थंकर **मुनिसुव्रत** प्रभु का, जब था शासन काल महान।
रामचन्द्र बलभद्र नृपति के, गूँजे थे जग में यशगान ॥2॥
धर्म भावना से करते थे, अगणित जीव आत्म कल्याण।
चारण आदि ऋद्धियाँ पाकर, पा लेते थे मुक्ति विहान ॥3॥
नगर **प्रभापुर** के अधिपति थे, **श्री नन्दन नृप** वैभववान।
उनके सात सुपुत्र हुए **धरणी**, **रानी** से अति विद्वान ॥4॥

सुरमन्यु, श्रीमन्यु, निचय, जयमित्र, सर्वसुन्दर जयवान।
श्री **विनयलालस** गुणधारी, सत्यशील से शोभावान ॥5॥
लाड़ प्यार में पले सर्व भौतिक, सुख से भूषित सुकुमार।
राजकाज भी देखा करते थे, सातों ही राजकुमार ॥6॥
नृप प्रीतिंकर मुनि बन घोर, तपस्या में रत हुए महान।
शुक्ल ध्यान धर घाति कर्म, हर पाया अनुपम केवलज्ञान ॥7॥
अगणित देवों ने स्वर्गों से, आकर गाया जय जय गान।
पिता सहित सातों पुत्रों को भी, आया निज आतम भान ॥8॥
प्रतिबोधित हो दीक्षा, लेकर मुनि पद अंगीकार किया।
अट्ठाइस मूलगुण धारे, मोक्ष मार्ग स्वीकार किया ॥9॥
श्री नन्दन ने केवलज्ञान, प्राप्त कर सिद्धालय पाया।
सातों पुत्रों ने तप करके, सप्त ऋषी नाम पाया ॥10॥
ये सातों ही एक साथ, तप करते थे भव भयहारी।
महाशील का पालन करते, अनुपम ज्ञानी ब्रह्मचारी ॥11॥
कुछ दिन में हो गये, चारण ऋद्धियों के स्वामी।
महातपस्वी परम यशस्वी, ऋद्धीश्वर जग में नामी ॥12॥
रामचन्द्र जी के लघु भ्राता, करते थे मथुरा में राज।
न्यायपूर्वक प्रजा पालते थे, **शत्रुघ्न** नृपति महाराज ॥13॥
मधु राजा को जीत राज, **मथुरा** का इनने पाया था।
मधु का मित्र असुरपति इक, **चमरेन्द्र यक्ष** तब आया था।14।।
अति क्रोधित हो रौद्र भावमय, उसके मन में बैर जगा।
किया प्रकोप महामारी का, मथुरा का दुर्भाग्य जगा ॥15॥
ईति भीति फैलाई इतनी, नगरी सूनी हुई अरे।
जहाँ गीत मंगल होते थे, वहाँ शोक के मेघ घिरे ॥16॥

हाहाकार मचा नगरी में, शून्य हुए गृह मनुजों से।
पाप उदय हो तो क्या कोई, पार पा सका दनुजों से ||17||
पुण्योदय से इक दिन श्री सप्त ऋषि मथुरा आये।
गगन विहारी नभ से उतरे, जन जन ने दर्शन पाये ||18||
तत्क्षण रोग महामारी का, नष्ट हुआ सब हर्षाये।
राजा प्रजा सभी ने अति हर्षित, होकर मंगल गाये ||19||
मुनि चरणों के शुभ प्रताप से, सारी नगरी धन्य हुई।
सात महाऋषियों के दर्शन कर, मथुरापुरी धन्य हुई ||20||
जल थल नभ से पुत्र सप्त ऋषियों की गूँजी जय जयकार।
धन्य तपस्या धन्य महामुनि, धन्य हुआ तुमसे संसार ||21||
सीता जी ने नगर अयोध्या में, इनको आहार दिया।
विनय भाव से वन्दन करके, अक्षय पुण्य अपार किया ||22||
श्री सप्त ऋषि परम ध्यान धर, हुए भवार्णव के उस पार।
परम मोक्ष मंगल के स्वामी, सकल लोक को मंगलकार ||23||
महा ऋद्धिधारी ऋषियों को, सादर शीश झुकाऊँ मैं।
मन वच काय त्रियोगपूर्वक, चरण शरण में आऊँ मैं ||24||
ऐसा दिन कब आयेगा प्रभु, जब जिन मुनि बन जाऊँगा।।
निज स्वरूप का अवलम्बन ले, आठों कर्म नशाऊँगा ||25||
सप्त नरक अथवा निगोद आदि, भव व्यथा मिटाऊँगा।
जिनगुण सम्पत्ति हेतु, महाव्रत धार सब रोग नशाऊँगा ||26||
अष्टादश दोष मैं टालूँ, सात विषय करूँ नित नाश।
तजूँ सप्त पक्षामासों को, पाऊँ सम्यक्ज्ञान प्रकाश ||27||
सप्त रत्न का लोभ न जागे, ना चौदह रत्नों का राग।
सप्तविंशति अधिक शताक्षरि, मन्त्र जपूँ कर निज अनुराग ||28||

मनुज देव पशु नर्क निगोदादिक, में दुख ही दुःख पाया।
भव सन्ताप मिटाने का प्रभु, आज स्वर्ण अवसर आया ||29||
सप्त तपो ऋद्धियाँ प्राप्त कर, वीतरागता उर लाऊँ।
पाप पुण्य पर भाव नाश हित, श्री सप्त ऋषि को ध्याऊँ ||30||
द्वादश तप की महिमा पाऊँ, शुद्धातम के गुण गाऊँ।
ग्रीष्म शीत वर्षा ऋतु में भी, निज आतम लख मुस्काऊँ ||31||
विविध भाँति के व्रत मैं पालूँ, निरतिचार हो शल्य रहित।
प्रभो सिंह निष्क्रीडित आदिक, तप व्रत परिसंख्यान सहित ||33||
केवलज्ञान प्रगट कर स्वामी, चार घातिया नाश करूँ।
सिद्धशिला पर सदा विराजूँ, आदि अनंत पद मोक्ष वरूँ ||33||
सप्त ईति और भीति, पल में हो जायें अवसान।
अखिल विश्व में मंगल छाये, सभी सुखी हो समतावान ||34||
ॐ ह्रीं श्री सुरमन्यु, श्रीमन्यु आदि सप्त ऋषीश्वरेभ्यो पूर्णार्घ्यं नि.।

श्री सप्त ऋषीश्वर चरण जो लेते उर धार।
अष्ट ऋद्धियाँ प्राप्त कर हो जाते भवपार ||35||

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्

जाप्यमंत्र :

ॐ ह्रीं श्री सुरमन्यु, श्रीमन्यु आदि सप्त ऋषीश्वरेभ्यो नमः।

29. श्री कुन्द कुन्द आचार्य पूजन

कुन्द–कुन्द आचार्य देव के, चरण कमल में करूँ नमन।
कुन्द–कुन्द आचार्य देव की, वाणी उर में धरूँ सुमन।।
कुन्द–कुन्द आचार्य देव की, भाव सहित करके पूजन।
निज स्वभाव के साधन द्वारा, मोक्षप्राप्ति का करूँ यतन।।

[1]**परिणामो बंधो परिणामो मोक्खो** करूँ आत्म दर्शन।
सिद्ध स्वपद की प्राप्ति हेतु मैं, निज स्वरूप में करूँ रमन।।
ॐ ह्रीं श्री कुन्द कुन्द आचार्य देवाय चरणाग्रेषु पुष्पांजलि क्षिपामि।

समयसार वैभव के जल से, उर में उज्जवलता लाऊँ।
[2]**दंसण मूलोधम्मो सम्यकदर्शन** निज में प्रगटाऊँ।।
कुन्द कुन्द आचार्य देव के, चरण पूज निज को ध्याऊँ।
सब सिद्धों को वंदनकर ध्रुव, अचल सुअनुपमगति पाऊँ ||1||
ॐ ह्रीं श्री कुन्दकुन्द आचार्य देवाय जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

समयसार वैभव चंदन से, निज सुगन्ध को विकसाऊँ।
[3]**वत्थुसहावोधम्मो** सम्यकज्ञानसूर्य को प्रगटाऊँ।।कुन्द||2||
ॐ ह्रीं श्री कुन्द कुन्द आचार्य देवाय संसारताप विनाशनाय चंदनं नि. स्वाहा।

समयसार वैभव के उत्तम, अक्षत गुण निज में लाऊँ।
[4]**चारित्तंखलुधम्मो सम्यकचारित्त**, रथपर चढ़ जाऊँ।।कुन्द||3||
ॐ ह्रीं श्री कुन्द कुन्द आचार्य देवाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं नि.।

समयसार वैभव के पावन, पुष्पों में मैं रम जाऊँ।
[5]**दाणं पूजा मुख्खयसावयधम्मो** शीलस्वगुण पाऊँ।।कुन्द||4||
कुन्द कुन्द आचार्य देव के, चरण पूज निज को ध्याऊँ।
सब सिद्धों को वंदनकर, ध्रुव अचल सु अनुपमगति पाऊँ।।
ॐ ह्रीं श्री कुन्द कुन्द आचार्य देवाय कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।

---

1. परिणामों से बन्ध और परिणाम से मोक्ष होता है। 2. धर्म का मूल सम्यकदर्शन है (अष्टपाहुड़), 3. वस्तु स्वभाव ही धर्म है। 4. चारित्र ही धर्म है (प्रवचनसार गाथा–7) 5. श्रावक धर्म में दान पूजा मुख्य है (समयसार गाथा–10)

समयसार वैभव के मनभावन नैवेद्य हृदय लाऊँ।
[6]**जोजाणदिअरिहंत**निजज्ञायकस्वभाव आश्रयपाऊँ।।कुन्द||5||
ॐ ह्रीं श्री कुन्द कुन्द आचार्य देवाय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।

समयसार वैभव के ज्योतिर्मय, दीपक उर में लाऊँ।
[7]**दंसणभट्टा–भट्टा** मिथ्यामोहतिमिरहर सुख पाऊँ।।कुन्द||6||
ॐ ह्रीं श्री कुन्द कुन्द आचार्य देवाय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।

समयसार वैभव का शुचिमय, ध्यान धूप उर में लाऊँ।
[8]**ववहारोभ्भूयत्थो निश्चय**, आश्रित हो शिवपद पाऊँ।।कुन्द||7||
ॐ ह्रीं श्री कुन्द कुन्द आचार्य देवाय अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।

समयसार वैभव के भव्य, अपूर्व मनोरम फल लाऊँ।
[9]**णियमं मोक्ख उवायो** द्वारा महामोक्ष पद प्रगटाऊँ।।कुन्द||8||
ॐ ह्रीं श्री कुन्द कुन्द आचार्य देवाय मोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।

समयसार वैभव का निर्मल भाव अर्घ उर में लाऊँ।
[10]**अहमिक्कोखलुसुद्धो** चिंतनकर अनर्घपद को पाऊँ।।
कुन्द कुन्द आचार्य देव के, चरण पूज निज को ध्याऊँ।
सब सिद्धों को वंदनकर ध्रुव, अचल सुअनुपमगतिपाऊँ ||9||
ॐ ह्रीं श्री कुन्द कुन्द आचार्य देवाय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

जयमाला

मंगलमय भगवान वीर प्रभु, मंगलमय गौतमगणधर।
मंगलमय श्री कुन्द–कुन्द मुनि, मंगल जैन धर्म सुखकर ||1||

---

6. जो अरहन्तो को जानता है। (प्रवचन सारगाथा 80) 7. जो पुरुष दर्शन से भ्रष्ट है वे भ्रष्ट हैं (अष्ट पाहुड़–3) 8. व्यवहारनय–अमूतार्थ है।(समयसार गाथा–11) 9. नियम (रत्नत्रय रूप) मोक्ष का उपाय है। (नियमसार गाथा–4), 10. मैं निश्चय से एक हूँ, शुद्ध हूँ (समयसार गाथा 18.73)

कन्नड़ प्रांत बड़ा दक्षिण में, कोण्ड कुण्ड था ग्राम अपूर्व।
कुन्द कुन्द ने जन्म लिया था, दो सहस्त्र वर्षों के पूर्व ||2||
ग्यारह वर्ष आयु थी जब, तुमने स्वामी वैराग्य लिया।
श्रेष्ठ महाव्रत धारण करके, मुनिपद का सौभाग्य लिया ||3||
एक दिवस जंगल में बैठे, घोर तपस्या में थे लीन।
कंचन सी काया तपती थी, आत्म ध्यान में थे तल्लीन ||4||
उसी समय इक पूर्व जन्म का, मित्र देव व्यन्तर आया।
देख तपस्या रत भू पर आ, श्रद्धा से मस्तक नाया ||5||
ध्यान पूर्ण होने पर मुनि ने, जब अपनी आंखें खोलीं।
देखा देव पास बैठा है बोले, हित मित प्रिय बोली ||6||
धर्म वृद्धि हो, धर्म वृद्धि हो, धर्म वृद्धि हो तुम हो कौन।
हर्षित पुलकित गद्गद् होकर तोड़ा तब व्यंतर ने मौन ||7||
नमस्कार कर भक्ति भाव से, पूर्व जन्म का दे परिचय।
पिछले भव में परम मित्र थे, क्षमा करें मेरी अविनय ||8||
सीमंधरस्वामी के दर्शन को, विदेह भू जाता हूँ।
यही प्रार्थना चलें आप भी, नम्र विनय मन लाता हूँ ||9||
चिर इच्छा साकार हुई मुनिवर ने स्वर्ण समय जाना।
बोले श्री जिनवाणी सुनकर, मुझे लौट भारत आना ||10||
मुनि को साथ लिया उसने,आकाश मार्ग से गमन किया।
तीर्थंकर सर्वज्ञ देवको, जा विदेह में नमन किया।1 1 ।।
सीमंधर के समवशरण को देखा मन में हर्षाये।
जन्म जन्म के पातक क्षय कर, अनुपम ज्ञान रत्न पाये ||12||
सीमंधर प्रभु के चरणों में झुककर, किया विनय वन्दन।
प्रभु की शांत मधुर छवि लखकर, धन्य हुए भारत नन्दन ||13||

प्रभु के प्रश्न हुआ लघु मुनिवर, कौन, कहाँ से आये हैं।
खिरी दिव्य ध्वनि कुन्दकुन्द मुनि, भरत क्षेत्र से आये हैं ||14||
सीमंधरस्वामी ने दिव्य ध्वनि में, कुन्द–कुन्द का नाम लिया।
भव भव के अघ नष्ट हो गये, मुनि ने विनयभाव से प्रणाम किया||15||
विनयी होकर कुन्द कुन्द ने, जिनवाणी का पान किया।
अष्ट दिवस रह समवशरण में, द्वादशांग का ज्ञान लिया ||16||
अक्षय ज्ञान उदधि मन में भर, और हृदय में प्रभु का नाम।
सीमंधर तीर्थंकर प्रभु को, करके बारम्बार प्रणाम ||17||
फिर विदेह से चले और, नभ पथ से भारत में आये।
तीर्थंकर वाणी का सागर, मन मंदिर में लहराये ||18||
जो सुनकर आये जिनवाणी, फिर उसको लिपि रूप दिया।
जगत जीव कल्याण करें निज, ऐसा शास्त्र स्वरूप दिया ||19||
राग मात्र को हेय बताया, उपादेय निज शुद्धातम।
भाव शुभाशुभ का अभाव कर, होता चेतन परमातम ||20||
समयसार में निश्चय नय का, पावन मय संदेश भरा।
श्री पंचास्तिकाय को रचकर, द्रव्य तत्त्व उपदेश भरा ||21||
प्रवचनसार बनाया तुमने, भेद ज्ञान को बतलाया।
मूलाचार लिखा मुनिजन हित, साधु मार्ग को दर्शाया ||22||
नियमसार की रचना अनुपम, **रयणसार** गूंथा चितलाय।
लघु सामायिक पाठ बनाया, लिखा **सिद्धप्राभृत** सुखदाय ||23||
श्री अष्टपाहुड़ षट प्राभृत द्वादशानुप्रेक्षा के बोल।
चौरासी पाहुड़ लिक्खे जो ज्ञात नहीं हमको अनमोल ||24||
ताड़ पत्र पर लिखे ग्रंथ तब, सफल हुई चिर अभिलाषा।
जन जन की वाणी कल्याणी, धन्य हुई प्राकृत भाषा ||25||

जीवों के प्रति करुणा जागी, मोक्ष मार्ग उपदेश दिया।
और तपस्या भूमि बनाकर, गिरि कुंद्रादि पवित्र किया ||26||
अमृतचन्द्राचार्य देव की टीका **आत्मख्याति** विख्यात।
पद्मप्रभमलधारि देव की, टीका **नियमसार** प्रख्यात ||27||
श्री जयसेनाचार्य रचित **तात्पर्यवृत्ति टीका** पावन।
श्री कानजी स्वामी के भी अनुपम **समयसार प्रवचन** ||28||
पद्मनन्दि गुरु वक्रग्रीव मुनि एलाचार्य आपके नाम।
गृद्धपिच्छ आचार्य यतीश्वर, **कुन्द कुन्द** हे गुण के धाम ||29||
हे आचार्य आपके गुण वर्णन करने की शक्ति नहीं।
पथ पर चलें अपके ऐसी भी तो अभी विरक्ति नहीं ||30||
भक्ति विनय के सुमन आपके, चरणों में अर्पित हैं देव।
भव्य भावना यही एक दिन मैं, सर्वज्ञ बनूँ स्वयमेव ||31||
[1]**जीवादी सद्दहणं सम्पत्तं** पाऊँ प्रभु करूँ प्रणाम।
इन चरणों की पूजन का फल, पाऊँ सिद्ध पुरी का धाम ||32||
ॐ ह्रीं श्री कुन्द कुन्द आचार्य देवाय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

कुन्द कुन्द मुनि के वचन भाव सहित उरधार।
निज आतम जो ध्यावते पाते ज्ञान अपार।।

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री कुन्द कुन्दाचार्य देवाय नमः।

30 - श्री जिनवाणी पूजन

जय जय श्री जिनवाणी जय जग कल्याणी जय जय जय।
तीर्थंकर की दिव्यध्वनि जय, गुरु गणधर गुम्फित जय जय ||1||

11. जीवादि पदार्थों का श्रद्धान सम्यक्दर्शन है। (समयसार गाथा 155)

स्याद्वाद पीयूषमयी जय, लोकालोक प्रकाशमयी।
द्वादशांग श्रुत ज्ञानमयी जय वीतराग विज्ञानमयी ||2||
श्री जिनवाणी के प्रताप से मैं अनादि मिथ्यात्व हरूँ।
श्री जिनवाणी मस्तक धारूँ बारम्बार प्रणाम करूँ ||3||
ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भूत सरस्वती वाग्वादिनि अत्र अवतर अवतर संवौषट्, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।

मिथ्यात्व कलुषता के कारण, पाया न बिन्दु समता जल का।
अपने ज्ञायक स्वभाव का भी, अब तक प्रतिभास नहीं झलका।।
मैं श्री जिनवाणी चरणों में, मिथ्यातम हरने आया हूँ।
श्री महावीर की दिव्य ध्वनि, हृदयंगम करने आया हूँ ||1||
ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भूत सरस्वती देव्यै जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

श्रद्धा विपरीत रही मेरी निज पर का ज्ञान नहीं भाया।
चन्दन सम शीतलतामय हूँ, इतना भी ध्यान नहीं आया। मैं श्री||2||
ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भूत सरस्वती देव्यै संसारताप विनाशनाय चंदनं नि. स्वाहा।

यह आधि व्याधि पर की उपाधि, भव भ्रमण बढ़ाती आई है।
अक्षय अखंड निज की समाधि, अब तक न कभी भी पाई है। मैं श्री||3||
ॐ ह्रीं श्री जिन मुखोद्भूत सरस्वती देव्यै अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि. स्वाहा।

एकत्व बुद्धि करके पर में, कर्त्तापन का अभिमान किया।
मैं निज का कर्ता भोक्ता हूँ, ऐसा न कभी भी भान किया। मैं श्री||4||
ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भूत सरस्वती देव्यै कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

यह माया अनन्तानुबंधी, प्रति समय जाल उलझाती है।
चारों कषाय की यह तृष्णा, उलझन न कभी सुलझाती है। मैं श्री॥5॥
ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भूत सरस्वती देव्यै क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।

तत्त्वों के सम्यक् निर्णय बिन, श्रद्धा की ज्योति न जल पाई।
अज्ञान अंधेरा हटा नहीं, सन्मार्ग न देता दिखलाई। मैं श्री॥6॥
ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भूत सरस्वती देव्यै मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

होकर अनन्त गुण का स्वामी, पर का ही दास रहा अब तक।
निजगुण की सुरभि नहीं भाई, भवदधि में कष्टसहा अबतक। मैं श्री॥7॥
ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भूत सरस्वती देव्यै अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।

मैं तीन लोक का नाथ, पुण्य धूल में पागल हूँ।
चिन्तामणि रत्न छोड़कर, मैं रागों से आकुल व्याकुल हूँ। मैं श्री॥8॥
ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भूत सरस्वती देव्यै मोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।

अब तक का जितना पुण्य, शेष हर्षित हो अर्पण करता हूँ।
अनुपम अनर्घ पद पा जाऊँ, मैं यही भावना भाता हूँ।।
मैं श्री जिनवाणी चरणों में, मिथ्यातम हरने आया हूँ।
श्री महावीर की दिव्य ध्वनि, हृदयांगम करने आया हूँ॥9॥
ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भूत सरस्वती देव्यै अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

जयमाला

जय जय जय ओंकार दिव्यध्वनि योगी जन नित करते ध्यान।
मोहतिमिर मिथ्यात्व विनाशक, ज्ञान प्रकाशक सूर्य समान॥1॥
वस्तु स्वरूप प्रकाशक, निज पर भेद ज्ञान की ज्योति महान।
सप्तभंग, स्याद्वाद नयाश्रित, द्वादशांग श्रुतज्ञान प्रमाण॥2॥

द्वादशांग अंगपूर्व चौदह, परिकर्म सूत्रों से शोभित है।
पंच चूलिका चौ अनुयोग, प्रकीर्णक चौदह भूषित है॥3॥
जय जय **आचारांग प्रथम**, जय **सूत्रकृतांग द्वितीय** नमन।
स्थानांग तृतीय नमन, जय **चौथा समवायांग** नमन॥4॥
जय **व्याख्या प्रज्ञप्ति** पाँचवा, **षष्टम् ज्ञातधर्म कथांग**।
उपासकाध्ययनांग सातवाँ, अष्टम् अन्तःकृतशांग॥5॥
अनुत्तरोत्पादकदशांग नौ, प्रश्न व्याकरण अंग दशम्।
जब **विपाकसूत्रांग ग्यारहवाँ, दृष्टिवाद द्वादशम्** परम्॥6॥
दृष्टिवाद के **चौदह भेद**, रूप है **चौदह पूर्व** महान।
ग्यारह अंगपूर्व नौ तक का, **द्रव्यलिंगी कर सकता ज्ञान**॥7॥
पहला है उत्पादपूर्व, दूजा अग्रायणीय जानों।
तीजा है वीर्यानुवाद, चौथा है अस्तिनास्ति मानों॥8॥
पंचम ज्ञानप्रवाद है **षष्टम सत्यप्रवाद** पूर्व जानो।
सप्तम् आत्मप्रवाद, आठाँ कर्मप्रवाद पूर्व मानो॥9॥
नवमाँ प्रत्याख्यानप्रवाद सु **दशवाँ, विद्यानुवाद** जान।
ग्यारहवाँ कल्याणवाद, बारहवाँ प्राणानुवाद महान॥10॥
तेरहवाँ क्रियाविशाल चौदहवाँ लोकबिन्दु है सार।
अंगप्रविष्ट अरु **अंगबाह्य** के, भेद प्रभेद सदा सुखकार॥11॥
दृष्टिवाद का भेद **पांचवाँ**, पंच चूलिका नाम यथा।
जलगत थलगत मायागत, अरु **रुपगता आकाशगता**॥12॥
पांच भेद **परिकर्म उपांग** के, **प्रथम चंद्रप्रज्ञप्ति** महान।
दूजा सूर्यप्रज्ञप्ति तीसरा जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति प्रधान॥13॥

चौथा **द्वीप–समूह प्रज्ञप्ति**, पंचम **व्याख्याप्रज्ञप्ति** जान।
सूत्र आदि अनुयोग अनेकों हैं, उपांग धन धन श्रुत जान ||14||
तत्त्वों के सम्यक् निर्णय से, होता शुद्धातम का ज्ञान।
सरस्वती माँ के आश्रय से, होता है शाश्वत कल्याण ||15||
इसीलिए जिनवाणी का अध्ययन चिंतवन मैं कर लूँ।
काल लब्धि पाकर अनादि, अज्ञान निविड़तम को हर लूँ ||16||
नव पदार्थ छः द्रव्य काल, त्रय सात तत्व को मैं जानूँ।
तीन लोक **पंचास्तिकाय छह, लेश्याओं** को पहचानूँ ||17||
षट्कायक की दया पालकर, **समिति गुप्ति व्रत** को पालूँ।
द्रव्यभाव चारित्र धार कर, तप संयम को अपना लूँ ||18||
निज स्वभाव में लीन रहूँ मैं, निज स्वरूप में मुस्काऊँ।
क्रम–क्रम से मैं चार घातिया नाश करूँ, निज पद पाऊँ ||19||
प्राप्त **चतुर्दश गुणस्थान** कर, पूर्ण अयोगी बन जाऊँ।
यह मानव पर्याय धन्य हो, जाये माँ ऐसा बल दो।
सम्यकदर्शन ज्ञान चरित, रत्नत्रय पावन निर्मल हो ||21||
भव्य भावना जगी हृदय में, जीवन मंगलमय कर दो।
हे जिनवाणी माता मेरा, अन्तर ज्योतिर्मय कर दो ||22||
ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भूत सरस्वती देव्यै पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

जिनवाणी का सार है, भेद ज्ञान सुखकार।
जो अंतर में धारते, हो जाते भवपार।।

इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत्।
जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भूत श्रुतज्ञानाय नमः।

31 - ग्रन्थाधिराज श्री समयसार पूजन

जय जय जय ग्रन्थाधिराज श्री समयसार जितश्रुत वन्दन।
कुन्द–कुन्द आचार्य रचित, परमागम को सादर वन्दन ||1||
द्वादशांग जिनवाणी का है, इसमें सार परम पावन।
आत्म तत्व की सहज प्राप्ति का है अपूर्व अनुपम साधन ||2||
सीमंधर प्रभु की दिव्य ध्वनि, इसमें गूंज रही प्रतिक्षण।
इसको हृदयंगम करते ही हो, जाता सम्यकदर्शन ||3||
समयसार का सार प्राप्त कर, सफल करूँ मानव जीवन।
सम सिद्धों को वन्दन करके, करता विनय सहित पूजन ||4||
ॐ ह्रीं श्री परमागम समयसाराय पुष्पांजलिं क्षिपामि।
निज स्वरूप को भूल आज तक, चारों गति में किया भ्रमण।
जन्म मरण क्षय करने को, अब निज में करूँ रमण।।
समयसार का करूँ अध्ययन, समयसार का करूँ मनन।
कारण समयसार को ध्याऊँ, समयसार को करूँ नमन ||1||
ॐ ह्रीं श्री परमागम समय साराय जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि.।

भव ज्वाला में प्रतिपल जल जल, करता रहा करुण क्रन्दन।
निज स्वभाव ध्रुव का आश्रय ले काटूँगा जग के बंधन।।समय||2||
ॐ ह्रीं श्री परमागम समय साराय संसारताप विनाशनाय चंदनं नि.।
पुण्य पाप के मोह जाल में, बढ़ी सदा भव की उलझन।
संवर भाव जगा उर में तो, भव समुद्र का हुआ पतन।।समय||3||
ॐ ह्रीं श्री परमागमसमयसाराय अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं नि.।

काम भोग बन्धन की कथनी, सुनी अनन्तों बार सघन।
चिर परिचित जिनश्रुत अनुभूति न जागी मेरे अंतर्मन।।समय||4||
ॐ ह्रीं श्री परमागम समयसाराय कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।
क्षुधारोग की औषधि पाने का, न किया है कभी जतन।
आत्मभान करते ही महका, वीतरागता का उपवन।।समय||5||
ॐ ह्रीं श्री परमागम समयसाराय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।
भ्रम अज्ञान तिमिर के कारण, पर में माना अपनापन।
सत्यबोध होते ही पाई, ज्ञान सूर्य की दिव्य किरण।।समय||6||
ॐ ह्रीं श्री परमागम समयसाराय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।
आर्त रौद्रध्यानों में पड़कर, परभावों में रहा मगन।
शुचिमय ध्यान धूप देखी, तो धर्मध्यान की लगी लगन।।समय||7||
ॐ ह्रीं श्री परमागम समयसाराय अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।
भव तरु विषमय फल खाकर, करता आया हूँ भाव मरण।
सिद्ध स्वपद की चाह जगी तो, यह पर्याय हुई धन धन।।समय||8||
ॐ ह्रीं श्री परमागम समयसाराय महामोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।
आश्रव बंधभाव का कारण, मिटा राग का एक न कण।
द्रव्य दृष्टि बनते ही पाया, निज अनर्घ पद का दर्शन।।
समयसार का करूँ अध्ययन, समयसार का करूँ मनन।
कारण समयसार को ध्याऊँ, समयसार को करूँ नमन||9||
ॐ ह्रीं श्री परमागम समयसाराय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

जयमाला

समयसार के ग्रन्थ की, महिमा अगम अपार।
निश्चयनय भूतार्थ है, अभूतार्थ व्यवहार ||1||

दुर्नय तिमिर निवारण कारण, समयसार को करूँ प्रणाम।
हूँ **अबद्धस्पृष्ट नियत अविशेष, अनन्य** मुक्ति का धाम ||2||
सप्त तत्व अरू **नव पदार्थ** का, इसमें सुन्दर वर्णन है।
जो **भूतार्थ** का आश्रय लेता, पाता सम्यकदर्शन है ||3||
जीव अजीव अधिकार प्रथम में, भेदज्ञान की ज्योति प्रधान।
[1]''**जो पस्सदि अप्पाणं णियदं**'' हो जाता सर्वज्ञ महान ||4||
कर्ता कर्म अधिकार समझकर, कर्ता बुद्धि विनाश करूँ।
[2]''**सम्मद्दंसण णाणं एसो**'', निज शुद्धात्म प्रकाश करूँ ||5||
पुण्य पाप अधिकार जान, दोनों में भेद नहीं मानूँ।
ये विभाव परिणति से हैं, उत्पन्न बंधमय ही जानूँ ||6||
[3]''**रत्तो बंधदि कम्मं**'', जानूँ उर विराग ले कर्म हरूँ।
राग शुभाशुभ का निषेध कर, निज स्वरूप को प्राप्त करूँ ||7||
मैं **आश्रव अधिकार** जानकर, राग द्वेष अरु मोह हरूँ।
भिन्न द्रव्य आश्रव से होकर, भावाश्रव को नष्ट करूँ ||8||
मैं संवर अधिकार समझकर संवरमय ही भाव करूँ।
[4]''**अप्पाणं झायंतो**'' दर्शन ज्ञानमयी निज भाव करूँ ||9||
मैं अधिकार निर्जरा जानूँ पूर्ण निर्जरावन्त बनूँ।
पूर्व उदय में समय रहकर, मैं चेतन ज्ञायक मात्र बनूँ||10||
[5]''**अपरिग्गहो अणिच्छो भणिदो**'' सारे कर्म झराऊँगा।
मैं रतिवन्त ज्ञान में होकर, शाश्वत शिव सुख पाऊँगा||11||

1. अपनी आत्म को–नियत देखता है (समयसार गाथा 15)
2. सम्यक्दर्शन ज्ञान ऐसी संज्ञा मिहती है। (समयसार गाथा 144)
3. रागी जीव कर्म बांधता है (समयसार गाथा 150)
4. आत्मा को ध्याता हुआ (समयसार गाथा 186)
5. अनिच्छुक को अपरिगृही कहा है (समयसार गाथा 6, 210, 211, 212, 213)

बन्ध अधिकार बन्ध की ही, तो सकल प्रक्रिया बतलाता।
बिन समकित जपतप व्रत, संयम बंध मार्ग ही कहलाता ||12||
राग द्वेष से विरहित होकर, जीव बन्ध से रहता दूर।
[6]**णिच्छय णया सिदापुणमुणिणो**, अष्टकर्म करताचकचूर ||13||
जान मोक्ष अधिकार शीघ्र ही, नष्ट करूँ विषकुम्भ विभाव।
आत्म स्वरूप प्रकाशित करके, प्रगटाऊँ परिपूर्ण स्वभाव ||14||
शुद्ध आत्मा ग्रहण करूँ मैं, सर्व बंध का कर छेदन।
निशंकित होकर पाऊँगा, मुक्ति शिला का सिंहासन ||15||
सर्व विशुद्ध ज्ञान का है, अधिकार अपूर्व अमूल्य महान।
पर कर्तृत्व नष्ट हो जाता, होता शिवपथ पर अभियान ||16||
कर्म फलों को मूढ़ भोगता, ज्ञानी उनका ज्ञाता है।
इसीलिए अज्ञानी दुख पाता, ज्ञानी सुख पाता है ||17||
भाव वासना नौ अधिकारों से, कर निज में वास करूँ।
[7]**मिच्छत्तं अविरमणं** कषाय जोग, की सत्ता नाश करूँ ||18||
कुन्द–कुन्द ने समयसार मंदिर, का, किया दिव्य निर्माण।
वीतराग सर्वज्ञ देव की, दिव्य ध्वनि का इसमें ज्ञान ||19||
सर्व **चार सौ पन्द्रह गाथाएँ, प्राकृत भाषा** में जान।
सारभूत निज समयसार का ही, अनुभव लूं भव्य महान ||20||
अमृतचन्द्राचार्य देव ने, **आत्मख्याति** टीका लिखकर।
कलश चढ़ाये **दो सौ अठहत्तर**, स्वर्णिम अनुपम हैं सुन्दर ||21||
श्री **जयसेनाचार्य स्वामी** की, **तात्पर्यवृत्ति** टीका।
ऋषि मुनि विद्वानों ने लिक्खा, वर्णन समयसारजी का ||22||

6. निश्चय नयाश्रित मुनिमोक्ष प्राप्त करते हैं।
7. मिथ्यात्वअविरत कषाय योग ये आश्रव है। (समयसार गाथा 164)

ज्ञानी ध्यानी मुनियों ने भी, तोरण द्वार सजाये हैं।
समयसार के मधुर गीत गा, वन्दनवार चढ़ाये हैं ||23||
भिन्न–भिन्न भाषाओं में इसके अनुवाद हुए सुन्दर।
काव्य अनेकों लिखे गये हैं, समयसार जी पर मनहर ||24||
श्री कानजी स्वामी ने भी, करके समयसार प्रवचन।
समयसार मंदिर पर सविनय, हर्षित किया **ध्वजारोहण** ||25||
समयसार पढ़ सम्यकदर्शन, ज्ञान चरित्र प्रगटाऊँगा।
तिव्वं मंद सहावं क्षयकर, वीतराग पद पाऊँगा ||26||
पंच परावर्तन अभाव कर, सिद्ध लोक में जाऊँगा।
काल लब्धि आई है मेरी, परम मोक्ष पद पाऊँगा ||27||
भक्ति भाव से समयसार की, मैंने पूजन की है देव।
कारण समयसाराय की महिमा, उरमें जाग उठी स्वयमेव ||28||
नमः समयसार स्वानुभव, ज्ञान चेतनामयी रमण।
एक शुद्ध टंकोत्कीर्ण, चिन्मात्र पूर्ण चिद्रूप स्वयम् ||29||
नय पक्षों से रहित आत्मा ही, है समयसार भगवान।
समयसार ही समयकदर्शन, समयसार ही सम्यक्ज्ञान ||30||

ॐ ह्रीं श्री परमागम समयसाराय पूर्णार्घ्यं नि.।

समयसार के भाव को जो धरते उर धार।
निज अनुभव को प्राप्तकर हो जाते भवपार।।

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री परमागम समय साराय नमः।

32 - श्री भक्तामर स्तोत्र पूजन

जय जयति जय स्तोत्र भक्तामर, परम सुखकारणम्।
जय ऋषभदेव जिनेन्द्र जय जय, भवोदधितारणम् ||1||
जय वीतराग महान जिनपति, विश्ववंद्य महेश्वरम्।
जय आदिदेव सु महादेव, सुपूज्य प्रभु परमेश्वरम् ||2||
जय ज्ञान सूर्य अनन्त गुणपति, आदिनाथ जिनेश्वरम्।
जय मानतुंग मुनीश पूजित, प्रथम जिन तीर्थंकरम् ||3||
मैं भाव पूर्वक करूँ पूजन, स्वपद ज्ञान प्रकाशकम्।
दो भेदज्ञान महान अनुपम, अष्टकर्म विनाशनम् ||4||
ॐ ह्रीं ऋषभनाथ जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट्, श्री ऋषभदेव अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, जिनेन्द्र अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।

जन्म मरण भयहारी स्वामी, आदिनाथ प्रभु को वंदन।
त्रिविध दोष ज्वर हरने को, चरणों में जल करता अर्पण।।
ऋषभदेव के चरणकमल में, मन वच काया सहित प्रणाम।
भक्तामर स्तोत्र पाठकर, मैं पाऊँ निज में विश्राम ||1||
ॐ ह्रीं श्री ऋषभनाथ जिनेन्द्राय जन्मजरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि.।

भव आताप विनाशक स्वामी, आदिनाथ प्रभु को वन्दन।
भव दावानल शीतल करने, चन्दन करता हूँ अर्पण।।ऋषभ||2||
ॐ ह्रीं श्री ऋषभनाथ जिनेन्द्राय संसारताप विनाशनाय चंदनं नि.।

भव समुद्र उद्धारक स्वामी, आदिनाथ प्रभु को वन्दन।
अक्षय पद की प्राप्ति हेतु प्रभु, अक्षत करता हूँ अर्पण।।ऋषभ||3||
ॐ ह्रीं श्री ऋषभनाथ जिनेन्द्राय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि.।

कामव्यथा संहारक स्वामी, आदिनाथ प्रभु को वन्दन।
मैं कन्दर्प दर्प हरने को, सहज पुष्प करता अर्पण।।ऋषभ||4||
ॐ ह्रीं श्री ऋषभनाथ जिनेन्द्राय कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।

क्षुधा रोग के नाशक स्वामी, आदिनाथ प्रभु को वन्दन।
अब अनादि की क्षुधा मिटाऊँ, प्रभु नैवेद्य करूँ अर्पण।।ऋषभ||5||
ॐ ह्रीं श्री ऋषभनाथ जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।

स्वपर प्रकाशक ज्ञान ज्योतिमय, आदिनाथ प्रभु को वंदन।
मोह तिमिर अज्ञान हटाने, दीपक चरणों में अर्पण।।ऋषभ||6||
ॐ ह्रीं श्री ऋषभनाथ जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।

कर्म व्यथा के नाशक स्वामी, आदिनाथ प्रभु को वंदन।
अष्टकर्म विध्वंस हेतु, भावों की धूप करूँ अर्पण।।ऋषभ||7||
ॐ ह्रीं श्री ऋषभनाथ जिनेन्द्राय, अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।

नित्य निरंजन महामोक्ष पति, आदिनाथ प्रभु को वंदन।
मोक्षसुफल पाने को स्वामी, चरणों में फल है अर्पण।।ऋषभ||8||
ॐ ह्रीं श्री ऋषभनाथ जिनेन्द्राय महामोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।

जल गंधाक्षत पुष्प सुचरु, दीप धूप फल अर्घ सुमन।
पद अनर्घ पाने को स्वामी, चरणों में सादर अर्पण।।
ऋषभदेव के चरणकमल में, मन वच काया सहित प्रणाम।
भक्तामर स्तोत्र पाठकर, मैं पाऊँ निज में विश्राम ||9||
ॐ ह्रीं श्री ऋषभनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

जयमाला

वृषभांकित जिनराज पद वन्दूँ बारम्बार।
ऋषभदेव परमात्मा परम सौख्य आधार ||1||

भक्तामर की यशोपताका, फहराते हैं साधु भक्त जन।
भाव पूर्वक पाठ मात्र से कट जाते सब संकट तत्क्षण ||2||
भक्तामर रच मानतुंग ने, निज–पर का कल्याण किया।
अड़तालीस काव्य रचनाकार, शुभअमरत्व प्रदान किया ||3||
नृपकारा से मुक्त हुए मुनि, श्रुत उपदेश महान दिया।
आदिनाथ की स्तुति करके, निज स्वरूप का ध्यान किया ||4||
मैं भी प्रभु की महिमा गाकर, भाव पुष्प करता हूँ अर्पण।
त्रैलोक्येश्वर महादेव जिन, आदिदेव को सविनय वन्दन ||5||
नाभिराय मरुदेवी के सुत, आदिनाथ तीर्थंकर नामी।
आज आपकी शरण प्राप्तकर अति हर्षित हूँ अंतर्यामी ||6||
मैंने कष्ट अनंतानंत उठाये हैं अनादि से स्वामी।
आत्मज्ञान बिन भटक रहा हूँ, चारों गति में त्रिभुवननामी ||7||
नर सुर नारक पशुपर्यायों में, प्रभु मैंने अति दुख पाये।
जड़ पुद्गल तन अपना माना, निज चैतन्य गीत ना गाये ||8||
कभी नर्क में, कभी स्वर्ग में, कभी निगोद आदि में भटका।
सुखाभास की आकांक्षा ले, चार कषायों में ही अटका ||9||
एक बार भी कभी भूलकर, निजस्वरूप का किया न दर्शन।
द्रव्यलिंग भी धारा मैंने, किन्तु न भाया आत्म चिंतवन ||10||
आज सुअवसर मिला भाग्य से, भक्तामर का पाठ सुन लिया।
शब्द अर्थ भावों को जाना, निज चैतन्य स्वरूप गुन लिया ||11||
अब मुझको विश्वास हो गया, भव का अन्त निकट आया।
भक्तामर का भाव हृदय में, मेरे नाथ उमड़ आया है ||12||

भेद ज्ञान की निधि पाऊँगा, स्वपर भेद विज्ञान करूँगा।
शुद्धात्मानुभूति के द्वारा अष्टकर्म अवसान करूँ ||13||
इस पूजन का सम्यकफल प्रभु, मुझको आप प्रदान करो अब।
केवलज्ञान सूर्य की पावन किरणों का, प्रभु दान करो अब ||14||
क्रोधमान माया लोभादिक, सर्व कषाय विनष्ट करूँ मैं।
वीतराग निज पद प्रगटाऊँ, भव बन्धन के कष्ट हरूँ मैं ||15||
स्वर्गादिक की नहीं कामना, भौतिक सुख से नहीं प्रयोजन।
एक मात्र ज्ञायकस्वभाव निजका ही आश्रय लूँ हे भगवान ||16||
विषय भोग अभिलाषाएँ, पलक मारते चूर करूँ मैं।
शाश्वत निज अखंड पद पाऊँ, परभवों को दूर करूँ मैं ||17||
मिथ्यात्वादिक पाप नष्ट कर, सम्यकदर्शन को प्रगटाऊँ।
सम्यक् ज्ञान चरित्र शक्ति से, घाति अघाति कर्म विघटाऊँ ||18||

ॐ ह्रीं श्री ऋषभनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

भक्तामर स्तोत्र की महिमा अगम अपार।
भावभासना जो करे हो जाएं भव पार।।

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री ऋषभनाथ जिनेन्द्राय नमः।

33 - श्री इन्द्रध्वज पूजन

मध्यलोक में चार शतक, अट्ठावन जिन चैत्यालय हैं।
तेरह द्वीपों में अकृत्रिम, पावन पूज्य जिनालय हैं ||1||
सर्व इन्द्र, इन्द्रध्वज पूजन, करते बहु वैभव के साथ।
हर मंदिर पर ध्वजा चढ़ाते, झुका त्रियोग पूर्वक माथ ||2||

मैं भी अष्ट द्रव्य ले स्वामी, भक्ति सहित करता पूजन।
निज भावों की ध्वजा चढ़ाऊँ, मिटे पंच परावर्तन ||3||

ॐ ह्रीं श्री मध्यलोक तेरह द्वीप सम्बन्धी चार सौ अट्ठावन जिनालयस्थ शाश्वत जिन बिम्ब समूह अत्र अवतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम् सन्निहितो भव भव्।

रत्न जड़ित कंचनझारी में, क्षीरोदधि का जल लाऊँ।
जन्म मरण भव रोग नशाऊँ, निज स्वभाव में रम जाऊँ।।
तेरह द्वीप इन्द्रध्वज पूजन करके प्रभु को अभिनंदूँ।
इन्द्रध्वज पूजन करके प्रभु, शुद्धातम को अभिनंदूँ ||1||

ॐ ह्रीं श्री मध्यलोक तेरह द्वीप सम्बन्धी चार सौ अट्ठावन जिनालयस्थ शाश्वत जिनबिम्बेभ्यो जन्मजरा मृत्यु विनाशनायजलं नि. स्वाहा।

मलयागिरि का बावन चंदन, रजत कटोरी में लाऊँ।
भव बाधा आताप नाश हित, निज स्वभाव में रम जाऊँ।।तेरह||2||

ॐ ह्रीं श्री मध्यलोक तेरह द्वीप सम्बन्धी चार सौ अट्ठावन जिनालयस्थ शाश्वत जिनबिम्बेभ्यो संसार ताप विनाशनाय चंदनं नि.।

उत्तम उज्जवल धवल अखण्डित, तंदुल चरणों में लाऊँ।
अक्षय पद की प्राप्ति हेतु, मैं निज स्वभाव में रमजाऊँ।।तेरह||3||

ॐ ह्रीं श्री मध्यलोक तेरहद्वीप सम्बन्धी चार सौ अट्ठावन जिनालयस्थ शाश्वत जिनबिम्बेभ्यो अक्षयपद प्राप्ताय अक्षतं नि.।

महा सुगन्धित शोभनीय बहु, पीत पुष्प लेकर आऊँ।
काम भाव पर जय पाने को, निज स्वभाव में रम जाऊँ।।तेरह||4||

ॐ ह्रीं श्री मध्यलोक तेरहद्वीप सम्बन्धी चार सौ अट्ठावन जिनालयस्थ शाश्वत जिनबिम्बेभ्यो कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।

विविध भाँति के भाव पूर्ण, नैवेद्य रम्य लेकर आऊँ।
क्षुधा रोग का दोष मिटाने, निज स्वभाव में रम जाऊँ।।तेरह||5||

ॐ ह्रीं श्री मध्यलोक तेरह द्वीप सम्बन्धी चार सौ अट्ठावन जिनालयस्थ शाश्वत जिनबिम्बेभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।

मोह तिमिर अज्ञान नाश, करने को ज्ञान दीप लाऊँ।
मैं अनादि मिथ्यात्व नष्ट कर, निज स्वभाव में रम जाऊँ।।तेरह||6||

ॐ ह्रीं श्री मध्यलोक तेरह द्वीप सम्बन्धी चार सौ अट्ठावन जिनालयस्थ शाश्वत जिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।

प्रकृति एक सौ अड़तालीस, कर्म की धूप बना लाऊँ।
अष्टकर्म अरि क्षय करने को, निज स्वभाव में रम जाऊँ।।तेरह||7||

ॐ ह्रीं श्री मध्यलोक तेरह द्वीप सम्बन्धी चार सौ अट्ठावन जिनालयस्थ शाश्वत जिनबिम्बेभ्यो अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।

राग द्वेष परिणति अभाव कर, निज परिणति के फल पाऊँ।
भव्य मोक्ष फल पाने को, निज स्वभाव में रम जाऊँ।।तेरह ||8||

ॐ ह्रीं श्री मध्यलोक तेरह द्वीप सम्बन्धी चार सौ अट्ठावन जिनालयस्थ शाश्वत जिनबिम्बेभ्यो महामोक्ष फल प्राप्तये फलं.नि.।

द्रव्यकर्म नोकर्म भाव कर्मों को जीत अर्घ लाऊँ।
देहमुक्त निज पद अनर्घ हित, निज स्वभाव में रम जाऊँ।।
तेरह द्वीप चार सौ अट्ठावन, जिन चैत्यालय वन्दूँ।
इन्द्रध्वज पूजन करके प्रभु, शुद्धातम को अभिनंदूँ ||9||

ॐ ह्रीं श्री मध्यलोक तेरह द्वीप सम्बन्धी चार सौ अट्ठावन जिनालयस्थ शाश्वत जिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

2 **समझो! तानों नहीं! नहीं तो तनाव होगा।**

जयमाला

तेरह द्वीप महान के, श्री जिन बिम्ब महान।
इन्द्रध्वज पूजन करूँ, पाऊँ सुख निर्वाण ||1||
मेरु सुदर्शन, विजय, अचल, मंदर, विधुन्माली अभिराम।
भद्रशाल, सौमनस, पांडुक, नंदनवन शोभित सुललाम ||2||
ढाई द्वीप में पंचमेरु के वन्दू अस्सी चैत्यालय।
विजयार्ध के एक शतक, सत्तर वन्दू मैं जिनआलय ||3||
जम्बू वृक्ष पाँच मैं वन्दू, शाल्मलि तरु के पाँच महान।
मानुषोत्तर चार और इष्वाकारों के चार प्रधान ||4||
वक्षारों के अस्सी वन्दूँ, गजदन्तों के वन्दूँ बीस।
तीस कुलाचल के मैं वन्दूँ, श्रद्धा भाव सहित जगदीश ||5||
मनुज लोक के चार शतक में, दो कम चैत्यालय वन्दूँ।
ढाई द्वीप से आगे के द्वीपों में, साठ भवन वन्दू ||6||
इकशत त्रेसठ कोटि लाख, चौरासी योजन नन्दीश्वर।
अष्टम द्वीप दिशा चारों में हैं कुल बावन जिन मंदिर ||7||
चारों दिशि में अंजनगिरि, दधिमुख, रतिकर, पर्वत सुन्दर।
देव सुरेन्द्र सदा पूजन वंदन, करने आते सुखकर ||8||
कुण्डलगिरि है द्वीप ग्यारहवाँ, चारों चैत्यालय वन्दूँ।
द्वीप रुचकवर तेरहवें के, चार जिनालय मैं वन्दूँ ||9||
मध्यलोक के तरह द्वीपों में, चारसौ अट्ठावन जिनगृह।
एक–एक में एक शतक, अरु आठ आठ प्रतिमा विग्रह ||10||
अष्ट प्रतिहार्यो से शोभित, रत्नमयी जिन बिम्ब प्रवर।
अष्ट–अष्ट मंगल द्रव्यों से हैं, शोभायमान मनहर ||11||

उनन्चास सहस्त्र चारसौ, चौंसठ जिन प्रतिमा पावन।
सभी अकृत्रिम हैं अनादि हैं, परम पूज्य अति मनभावन ||12||
एक शतक अरु अर्ध शतक, योजन लम्बे चौड़े जिन धाम।
पौन शतक योजन ऊँचे हैं, भव्य गगनचुम्बी सुललाम ||13||
उत्तम से आधे मध्यम इससे, आधे जघन्य विस्तार।
इन्द्र चढ़ाते ध्वजा सुपूजन, इन्द्रध्वज करते सुखकार ||14||
उच्च शिखर पर दश चिन्हों के, ध्वजा फहराते हैं हर्षित।
अष्ट द्रव्य देवोपम चरण चढ़ाते हैं कर मस्तक नत ||15||
माला, सिंह, कमल, गज, अंकुश, गरुड़ मयूर वृषभ के चित्र।
चकवा चकवी, हंसचिन्ह, शोभित बहुरंगी ध्वजा पवित्र ||16||
मेरु मंदिरों पर माला का चिन्ह ध्वजाओं में होता।
विजयार्ध की सर्वध्वजाओं में तो वृषभ चिन्ह होता ||17||
जंबू शाल्मलितरु के ध्वज पर, अंकुश चिन्ह सरल होते।
मानुषोत्तर इष्वाकारों के ध्वज, गज शोभित होते ||18||
वक्षारों के जिन मंदिर पर, गरुड़ चिन्ह के ध्वज होते।
गजदंतों के चैत्यालय पर, सिंह विभूषित ध्वज होते ||19||
सर्वकुलाचल के जिनगृह पर, कमल चिन्ह के ध्वज होते।
नन्दीश्वर में चकवा चकवी, चिन्ह सुशोभित ध्वज होते ||20||
कुण्डलवर गिरि में मयूर के, चिन्ह विभूषित ध्वज होते।
द्वीप रुचकवर गिरि मंदिर, पर हंसचिन्ह के ध्वज होते ||21||
महाध्वजा अरु क्षुद्र ध्वजायें, पंचवर्ण की होती हैं।
जिन पूजन करने वालों के, यश की गाथा गाते हैं ||22||
सुर सुरांगना इन्द्र शची, प्रभु गुण गाते हर्षाते हैं।
नाच नाचकर अरिहंतों के, यश की गाथा गाते हैं ||23||

गीत नृत्य वाद्यों से झंकृत हो, जाते हैं तीनों लोक।
जय जयकार गूँजता नभ में, पुलकित हो जाता सुरलोक ||24||
इसीलिए इसको इन्द्रध्वज, पूजन कहता है आगम।
पुण्य उदय जिनका हो वे ही, प्रभु पूजन करते अनुपम ||25||
इन्द्र महापूजा रचता है, मध्यलोक में हितकारी।
अब मिथ्यात्व तिमिर हरने को, मेरी है प्रभु तैयारी ||26||
प्रभु दर्शन से निज आतम का, जब दर्शन होगा स्वामी।
इस पूजा का सम्यक् फल तब, मुझको भी होगा स्वामी ||27||
एक दिवस ऐसा आयेगा, शुद्ध भाव ही होगा पास।
पाप पुण्य परभाव नाश कर, सिद्ध लोक में होगा वास ||28||

ॐ ह्रीं श्री मध्यलोक तेरह द्वीप सम्बन्धी चारसौ अट्ठावन जिनालयस्थ शाश्वत जिन बिम्बेभ्यो पूर्णार्घ्यं नि.।

भाव सहित जो इन्द्रध्वज की पूजन कर हर्षाते हैं।
निमिष मात्र में उनके संकट सारे ही मिट जाते हैं।।

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री मध्यलोक तेरह द्वीप सम्बन्धी चार सौ अट्ठावन जिनालयस्थ शाश्वत जिनबिम्बेभ्यो नमः।

34 - श्री कल्पद्रुम पूजन

चक्रवर्ती सम्राट महाकल्पद्रुम पूजन करते हैं।।
षटखण्डों के अधिपति श्री जिनवर का दर्शन करते हैं ||1||
रत्नपुंज प्रभु चरणाम्बुज में वे न्यौछावर करते हैं।
दान किमिच्छक देकर जन–जन के कष्टों को हरते हैं ||2||
वीतराग सर्वज्ञ जिनेश्वर के पद अर्चन करते हैं।
अनुपम पुण्य सातिशय का, भंडार में भरते हैं ||3||

साम्राज्य भर में देते याचक जन, को देते मुंह मांगा दान।
जिनशासन की प्रभावना, कर होता मन में हर्ष महान ||4||
मैं भी कल्पद्रुम पूजन करने, चरणों में आया हूँ।
शुभ भावों की अष्ट द्रव्य, अति हर्षित हो प्रभु लाया हूँ ||5||
यही याचना है जिन स्वामी, मेरे संकट नाश करो।
मोह तिमिर का सर्वनाश कर, मुझमें ज्ञान प्रकाश भरो ||6||

ॐ ह्रीं कल्पद्रुम मंडल स्थित श्री वीतराग सर्वज्ञ जिनेश्वर अत्र अवतर अवतर संवौषट्, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।

सुस्थित रूप सरोवर जल में, पड़ा रत्न ज्यों दिखलाता।
मन के मान सरोवर जल में, निज आतम त्यों दर्शाता।।
जन्म मरण दुख सड़न गलनमय, जड़पुद्गल का बना शरीर।
पंच शरीरों से विमुक्त हो, योगी हो जाता अशरीर।।
कल्पद्रुम पूजन करके प्रभु जन्म मृत्यु का करूँ विनाश।
शुद्ध भाव का अवलम्ब ले, निज स्वभाव का करूँ प्रकाश ||1||

ॐ ह्रीं कल्पद्रुम मंडल स्थित श्री वीतराग सर्वज्ञ जिनेश्वराय जन्म जरामृत्यु विनाशनाय जलं नि.।

राग द्वेष से मलिन सलिल मन, जब जब होता डाँवाडोल।
कर्माश्रव की इसमें उठती है, तब–तब अगणित कल्लोल।।
पाप कर्म मल रहित हृदय में, निस्तरंग निश्चल निर्भ्रान्त।
परम अतीन्द्रिय शुद्ध आत्मा, अनुभव में आता अतिशांत।।
कल्पद्रुम पूजन करके प्रभु, काम भाव का करूँ विनाश।
शुद्धभाव का अवलम्बन ले, निजस्वभाव का करूँ प्रकाश ||2||

ॐ ह्रीं श्री वीतराग सर्वज्ञ कल्पद्रुम मंडल स्थित श्री वीतराग सर्वज्ञ जिनेश्वराय संसारताप विनाशनाय चंदनं नि.।

वर्ण गंध रस स्पर्श शब्द जिन, इन्द्रिय विषयों से विरहित।
विमल स्वरूपी सहजानन्दी, निर्मल दर्शन ज्ञान सहित।।
पूर्वोपार्जित कर्म उदय में, साम्यभाव जिय जब धरता।
संचित कर्म विलय हो जाते, नूतन बंध नहीं करता।।
कल्पद्रुम पूजन करके प्रभु, पाऊँ पद अखण्ड अविनाश।।
शुद्धभाव का अवलम्बन ले, निजस्वभाव का करूँ प्रकाश ||3||

ॐ ह्रीं कल्पद्रुम मंडल स्थित श्री वीतराग सर्वज्ञ जिनेश्वराय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि. ।

हैं नहीं मार्गणा गुणस्थान हैं जीव स्थान नहीं इसमें।
क्रोध मान माया लोभादिक, लेश्यादिक न कहीं इसमें।।
बंध कला संस्थान संहनन, शुद्ध जीव को कभी नहीं।
ये सब कर्म जनित हैं इसे, रंच मात्र सम्बन्ध नहीं।।
कल्पद्रुम पूजन करके प्रभु, काम भाव का करूँ विनाश।
शुद्धभाव का अवलम्बन ले, निजस्वभाव का करूँ प्रकाश ||4||

ॐ ह्रीं कल्पद्रुम मंडल स्थित श्री वीतराग सर्वज्ञ जिनेश्वराय कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि. ।

सम्यक्‌दर्शन ज्ञान चरित्री, आत्म स्वरूप परम पावन।
इसकी दृढ़ प्रतीति होते ही, हो जाता सम्यक्‌दर्शन।।
अणुभर भी यदि राग शेष तो, परमानन्द नहीं होता।
कर्माश्रव का द्वार पूर्णतः, तब तक बन्द नहीं होता।।
कल्पद्रुम पूजन करके प्रभु, क्षुधारोग का करूँ विनाश।
शुद्धभाव का अवलम्बन ले, निज स्वभाव का करूँ प्रकाश ||5||

ॐ ह्रीं कल्पद्रुम मंडल स्थित श्री वीतराग सर्वज्ञ जिनेश्वराय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि. ।

यह **क्षयोपशमलब्धि विशुद्धि, देशना** अरु **प्रायोग्य** सुचार।
भव्य अभव्यों ने समान है, पाई सदा अनन्तोंबार।।
करणलब्धि भव्यों को होती, इसके बिन चारों बेकार।
पंचमलब्धि मिले तो होता, समकित ज्ञान चरित्र अपार।।
कल्पद्रुम पूजन करके प्रभु, मोह तिमिर का करूँ विनाश।
शुद्धभाव का अवलम्बन ले, निजस्वभाव का करूँ प्रकाश ||6||

ॐ ह्रीं कल्पद्रुम मंडल स्थित श्री वीतराग सर्वज्ञ जिनेश्वराय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि. ।

शुद्ध आत्मा निश्चयनय से, उपादेय है सर्व प्रकार।
देवशास्त्र गुरु पंच परम, परमेष्ठि की श्रद्धा व्यवहार।।
द्रव्यकर्म ज्ञानावरणादिक, भावकर्म रागादिक विभाव।
देहादिकनोकर्म रहित है, शुद्ध जीव का नित्य स्वभाव।।
कल्पद्रुम पूजन करके प्रभु, अष्टकर्म का करूँ विनाश।
शुद्धभाव का अवलम्बन ले, निजस्वभाव का करूँ प्रकाश ||7||

ॐ ह्रीं कल्पद्रुम मंडल स्थित श्री वीतराग सर्वज्ञ जिनेश्वराय अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि. ।

निज स्वभाव से कट जाता है कर्म घातिया का जंजाल।
केवलज्ञानादिक नवलब्धि, प्रकट हो जाती है तत्काल।।
फिर अघातिया स्वयं भागते, देख जीव की अतुलित शक्ति।
यहाँ पूर्ण हो जाती है प्रभु, निश्चय रत्नत्रय की भक्ति।।
कल्पद्रुम पूजन करके प्रभु, पाऊँ मोक्ष सुफल अविनाश।
शुद्धभाव का अवलंबन ले, निजस्वभाव का करूँ प्रकाश ||8||

ॐ ह्रीं कल्पद्रुम मंडल स्थित श्री वीतराग सर्वज्ञ जिनेश्वराय मोक्षफल प्राप्तये फलं नि. ।

ज्यों डंठल से फल झड़ जाता, फिर न कभी जुड़ सकता है।
कर्म प्रथक होते ही भव की ओर, न जिय मुड़ सकता है।।
परम शुक्लमय ध्यान अग्नि में, कर्मदग्ध करके अमलान।
होता महाविशुद्ध ज्ञानपति, परम ध्यानपति सिद्ध महान।।
कल्पद्रुम पूजन करके प्रभु, पाऊँ पद अनर्घ्य अविनाश।
शुद्धभाव का अवलंबन ले, निजस्वभाव का करूँ प्रकाश ||9||
ॐ ह्रीं कल्पद्रुम मंडल स्थित श्री वीतराग सर्वज्ञ जिनेश्वराय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

जयमाला

कल्पद्रुम पूजन करूँ, विनय भक्ति से आज।
शुद्धभाव की शक्ति से, बन जाऊँ जिनराज।।
वीतराग सर्वज्ञ देव का, शरण भाग्य से अब पाया।
इस संसार समुद्र तीर के, मैं समीपवर्ती आया ||1||
अभ्ररहित नभ से प्रदीप्त ज्यों, किरणों वाला रवि ज्योतित।
घातिकर्म हर रत्नत्रय के, दिव्य तेज से प्रभु शोभित ||2||
मनुज प्रकृति का किया, अतिक्रमण देवों के भी देव हुए।
रागद्वेष का कर सर्वनाश, अरहंत देव स्वयमेव हुए ||3||
महाविषम संसारउदधि को, तुमने पार किया भगवान।
नय पक्षातिक्रान्त हो स्वामी, तुमने पाया पद निर्वाण ||4||
मणि रत्नों से दिव्य आरती, मैंने की है बारम्बार।
कल्पवृक्ष के पुष्पों से भी, पूजन की है अगणित बार ||5||
पर सत्यार्थ स्वभाव द्रव्य का मैंने किया नहीं स्वीकार।
कभी नहीं भूतार्थ सुहाया, भाया अभूतार्थ व्यवहार ||6||

कर्मकांड शुभ राग भाव से, सदा बढ़ाया है संसार।
ज्ञान कांड का लक्ष्य न साधा, क्रियाकांड का कर व्यापार ||7||
मिथ्यादर्शन ज्ञान चरित, इनके आराधक अनायतन।
इनमें ही रत रहकर मैंने, नष्ट किये अनन्त जीवन ||8||
देव मूढ़ता, शास्त्र मूढ़ता, गुरू मूढ़ता, वसु अभिमान[1]।
जाति ज्ञान कुल रूप ऋद्धिबल पूजा तप मद का हो अवसान ||9||
मिथ्यादर्शन अविरत पंच, प्रमाद कषाय योग दुर्बन्ध।
सम्यक्दर्शन हो जाये तो, मैं भी हो जाऊँ निर्बन्ध ||10||
परमानन्द स्वरूप अतीन्द्रिय, सुख का धाम एक चिन्मात्र।
ज्ञानानंद स्वभावी चिद्‌धन, जलहल ज्योति मुक्ति का पात्र||11||
परम ज्योति अतिशय प्रकाशमय, कर्मों से है आच्छादित।
पूर्ण त्रिकाली ध्रुव के आश्रय से होता है कर्म रहित ||12||
श्रद्धा ज्ञान सिद्धी होते ही, होता है चारित्र विकास।
तभी सर्व संकल्प विकल्पों का, होता है पूर्ण विनाश ||13||
पर्यायों से दृष्टि हटाकर, निज अखंड पर ही दूँ दृष्टि।
परम शुद्ध पर्याय प्रगट हो, सिद्ध स्वपद की होगी सृष्टि ||14||
भव्य जीव भी जब तक, पर द्रव्यों में ही रहता आसक्त।
तब तक मोक्ष नहीं पाता है, चाहे जितना रहे विरक्त ||15||
साम्य समाधि योग अथवा, शुद्धोपयोग का चित्त निरोध।
आर्तरौद्र दुर्ध्यान छोड़ हो धर्मशुक्ल भावना प्रमोद ||16||
जीवकर्म संबंध दूध अरु, पानी के समान सहजात।
दोनों प्रथक प्रथक पहचानूँ, भेद ज्ञान का पाऊँ प्रात ||17||

1. वसु अभिमान – 8 मद

सेना स्वयं नष्ट हो जाती, जब राजा मारा जाता।
मोहराज का नाश हुआ तो, घातिकर्म क्षय हो जाता ||18||
परगत ध्यान पंचपरमेष्ठि, **स्वगत** ध्यान जिन आतम का।
यह **रूपस्थ** ध्यान है, उत्तम वीतराग परमातम का ||19||
परगत तत्व पंचपरमेष्ठि, प्रभु का ध्यान देव सविकल्प।
स्वगत तत्व निज शुद्ध आत्मा **रुपातीतध्यान** अविकल्प ||20||
जब तक योगी पर द्रव्यों में, रहता है संलग्न विकल्प।
उग्र तपस्या करके भी पा, सकता नहीं मोक्ष अविकल ||21||
अगर राग परमाणु मात्र भी, विद्यमान हैं अन्तर में।
जिन आगम का वेत्ता होकर, भी बहता भवसागर में ||22||
दर्शन ज्ञान चरित्र सदा ही, है सेवन करने के योग्य।
सर्व शुभाशुभ भाव अचेतन, तो सेवन के सदा अयोग्य ||23||
मन वच काया की प्रवृत्ति, रुकने पर होता है संवर।
आश्रव रुकता कर्म निर्जरित, होते चिरसंचित जर्जर ||24||
नाथ अचेतन पुद्‌गल ही तो, सदा दिखाई देता है।
जीव चेतनमयी अदृश्य है, नहीं दिखाई देता है ||25||
प्रकट स्व संवेदन से होता, देहप्रमाण विनाश रहित।
लोकालोक देखने वाला, दर्श ज्ञान सुख वीर्य सहित ||26||
राग द्वेष की कल्लोलों से, हो न मनोबल डाँवाडोल।
आत्मतत्व को ही मैं देखूं, बना रहूँ प्रभु पूर्ण अडोल ||27||
बाह्यान्तर द्वादश प्रकार का, दुर्धर तपोभार स्वीकार।
मोक्षमार्ग पर बढ़ूँ निरंतर, पाऊँ सिद्ध पद अविकार ||28||
लोक प्रमाण असंख्यात् संकल्प विकल्पात्मक परभाव।
इनका तिरस्कार कर स्वामी, राग द्वेष का करूँ अभाव ||29||

मैं अटूट वैभव का स्वामी हूँ चैतन्य चक्रवर्ती।
निज अखंड साधना न साधी, ध्यान किया प्रभु परवर्ती ||30||
पुण्यों के समग्र वैभव हो, होम आज मैं करता हूँ।
श्री जिन पूजन महायज्ञ में, सर्वस्व समर्पण करता हूँ ||31||
मुक्ति प्राप्ति की जगी भावना, भव वांछा का नाम नहीं।
ज्ञाता दृष्टा होऊँ, संयोगी भावों का काम नहीं ||32||
तुम प्रभु साक्षत् कल्पद्रुम, देते मुँह मांगा वरदान।
महामोक्ष मंगल के दाता, वीतराग अर्हन्त महान ||33||
कल्पद्रुम पूजन महान का, है उद्देश्य यही भगवान।
परभावों का सर्वनाश कर, पाऊँ सिद्ध स्वपद निर्वाण ||34||
ॐ ह्रीं श्री वीतराग सर्वज्ञ कल्पद्रुम जिनेश्वराय पूर्णार्घ्यं नि.
शुद्ध भाव से कल्पद्रुम पूजन जो करते सुख पाते।
निज स्वरूप का आश्रय लेकर सिद्धलोक में ही जाते ||35||

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्।
जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री वीतराग सर्वज्ञ कल्पद्रुम जिनेश्वराय नमः

35. श्री सर्वतोभद्र पूजन

सर्वतोभद्र पूजन करने का, भाव हृदय में आया है।
चारों दिशि में जिनराज चतुर्मुख, दर्शनकरसुखपाया है ||1||
यह पूजन मुकुटबद्ध राजाओं के द्वारा की जाती है।
अत्यन्त महावैभव पूर्वक, वसुद्रव्य चढ़ाई जाती है ||2||
अतिभव्य चतुर्मुख मंडप का, करते निर्माण भक्ति पूर्वक।
अरहन्त चतुर्मुख जिनप्रतिमा, पधराते परमविनयपूर्वक ||3||

मैं मुकुटबद्ध तो नहीं किन्तु, शुभ भाव बद्ध हूँ याचक हूँ।
शिव सुख की आकांक्षा मन में, भोगों से दूर अयाचक हूँ ||4||
मैं यथा शक्ति निज भावों की, वसुद्रव्य सजाकर लाया हूँ।
सर्वतोभद्र पूजन करने, जिन देव शरण में आया हूँ ||5||

ॐ ह्रीं श्री सर्वतोभद्रमंडल स्थित चतुर्मुख जिन अत्र अवतर अवतर संवौषट् अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।

मैं एक शुद्ध संवीज्यमान गणशाली हूँ।
प्रभु जन्म मरण के नाश हेतु, लाया पूजन की थाली हूँ।।
सर्वतोभद्र पूजन करके, यह जीवन सफल बनाऊँगा।
जिनराज चतुर्मुख दर्शन कर, मैं सम्यक्दर्शन पाऊँगा ||1||

ॐ ह्रीं श्री सर्वतोभद्र मंडल स्थित चतुर्मुख जिनेभ्यो जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं नि.।

मैं निर्विकल्प हूँ शीतल हूँ, मैं परम शांत गुणशाली हूँ।
संसार ताप क्षय करने को, लाया पूजन की थाली हूँ।।सर्वतो||2||

ॐ ह्रीं श्री सर्वतोभद्र मंडल चतुर्मुख जिनेभ्यो संसारताप विनाशनाय जलं नि.।

मैं अविनश्वर हूँ अविकल्प हूँ अक्षय अनन्त गुणशाली हूँ।
अक्षय पद प्राप्ति हेतु स्वामी, लाया पूजन की थाली हूँ।।सर्वतो||3||

ॐ ह्रीं श्री सर्वतोभद्र मंडल स्थित चतुर्मुख जिनेभ्यो अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि.।

मैं हूँ स्वतंत्र निष्काम पूर्ण, सिद्धों सम वैभवशाली हूँ।
इस काम शत्रु के नाश हेतु, लाया पूजन की थाली हूँ।।सर्वतो||4||

ॐ ह्रीं श्री सर्वतोभद्र मंडल स्थित चतुर्मुख जिनेभ्यो कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।

मैं परम तृप्त मैं परम शक्ति, सम्पन्न परम गुणशाली हूँ।
अब क्षुधारोग के नाश हेतु, लाया पूजन की थाली हूँ।।सर्वतो||5||

ॐ ह्रीं श्री सर्वतोभद्र मंडल स्थित चतुर्मुख जिनेभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।

मैं स्वपर प्रकाशक ज्योति पुंज, मैं परम ज्ञान गुणशाली हूँ।
मोहान्धकार भ्रमनाश हेतु, लाया पूजन की थाली हूँ।।सर्वतो||6||

ॐ ह्रीं श्री सर्वतोभद्र मंडल स्थित चतुर्मुख जिनेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।

मैं नित्य निरन्जन चिन्मय हूँ, चिद्रूप चन्द्र गुणकारी हूँ।
मैं अष्टकर्म के नाश हेतु, लाया पूजन की थाली हूँ।।सर्वतो ||7||

ॐ ह्रीं श्री सर्वतोभद्र मंडल स्थित चतुर्मुख जिनेभ्यो अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।

मैं चित्स्वरूप चिच्चमत्कार, चैतन्य सूर्य गुणशाली हूँ।
मैं महामोक्ष फल पाने को, लाया पूजन की थाली हूँ।।सर्वतो ||8||

ॐ ह्रीं श्री सर्वतोभद्र मंडल स्थित चतुर्मुख जिनेभ्यो मोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।

मैं द्रव्य कर्म अरु भाव कर्म, नोकर्म रहित गुणशाली हूँ।
अनुपम अनर्घ्य पद पाने को, लाया पूजन की थाली हूँ।।
सर्वतोभद्र पूजन करके, यह जीवन सफल बनाऊँगा।
जिनराज चतुर्मुख दर्शन कर, मैं सम्यक्दर्शन पाऊँगा ||9||

ॐ ह्रीं श्री सर्वतोभद्र मंडल स्थित चतुर्मुख जिनेभ्यो अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

(3) **असंयमित जीवन बिना ब्रेक की गाड़ी है।**

जयमाला

सर्वतोभद्र पूजन करके, जिन प्रभु की महिमा गाता हूँ।
चारों दिशि में अरहंत चतुर्मुख, वंदन कर हर्षाता हूँ॥1॥
प्रभु समवशरण में अंतरीक्ष हैं, रत्नमयी सिंहासन पर।
त्रय छत्र शीश अतिशुभ्र धवल, भामण्डल द्युति रवि से बढ़कर॥2॥
है तरु अशोक शोभायमान, हर लेता सर्व शोक गिन गिन।
देवोपम दुन्दुभियाँ बजती, सुर पुष्प वृष्टि होती छिन–छिन ॥3॥
मिल यक्ष चमर चौंसठ ढोरें, प्रभु दिव्य ध्वनि खिरती अनुपम।।
वसु प्रातिहार्य से भूषित है, जिनवर छवि सुन्दर पावनतम ॥4॥
वसु मंगल द्रव्यों की शोभा, जन जन का मन करती हर्षित।
समयक्त्व उन्हें मिलता जिनके, मन में होती जिनछवि अंकित॥5॥
है परमौदारिक देह अनन्त, चतुष्टय से तुम भूषित हो।
सर्वज्ञ वीतरागी महान निज ध्यानलीन प्रभु शोभित हो ॥6॥
जिन मंदिर समवशरण का ही, पावन प्रतीक कहलाता है।
वेदी पर गंधकुटी का ही उत्तम स्वरूप झलकाता है ॥7॥
मैं यही कल्पना कर मन में, जिनवर को वंदन करता हूँ।
भावों की भेंट चढ़ा करके, भव भव के पातक हरता हूँ॥8॥
जो मुकुटबद्ध नृप होते वे, यह पूजन महा रचाते हैं।
अपने राज्यों में दान, किमिच्छिक देते अति हर्षाते हैं ॥9॥
इसीलिए आज निज वैभव से, प्रभु मैंने की है यह पूजन।
शुभ अशुभ विभाव नाश हो, प्रभु कटजाते सभी कर्म बंधन ॥10॥
सर्वतोभद्र तप मुनि करते, उपवास पचहत्तर होते हैं।
बेला तेला चौला पंचौला, उपवासादिक होते हैं ॥11॥

पारणा बीच में होती है पच्चीस, पुण्य बहु होते हैं।
सर्वतोभद्र निज आतम के ही गीत हृदय में होते हैं ॥12॥
प्रभु मैं ऐसा दिन कब पाऊँ मुनि बनकर निज आतम ध्याऊँ।
ज्ञानावरणादिक अष्टकर्म हर नित्य निरंजन पद पाऊँ ॥13॥
चऊ घाति कर्म को क्षय करके अब निज स्वरूप में आऊँगा।
सर्वतोभद्र पूजन का फल, अरहंत देव बन जाऊँगा ॥14॥
फिर मैं अघातिया कर्म नाश प्रभु, सिद्ध लोक में जाऊँगा।
परिपूर्ण शुद्ध सिद्धत्व प्रगट कर, सदा–सदा मुस्काऊँगा ॥15॥
ॐ ह्रीं श्री सर्वतोभद्र चतुर्मुख जिनेन्द्रेभ्यो पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

सर्वतोभद्र पूजन महान जो करते हैं निज भावों से।
भवसागर पार उतरते हैं बचते हैं सदा विभावों से।।

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री सर्वतोभद्र चतुर्मुख जिनाय नमः।

36. श्री नित्यमह पूजन

अरिहंतों को नमस्कार कर, सब सिद्धों को नमन करूँ।
आचार्यों को नमस्कार कर, उपाध्याय को नमन करूँ ॥1॥
और लोक के सर्व साधुओं को, मैं सविनय नमन करूँ।
नित प्रातः सामायिक करके, तत्व ज्ञान का यतन करूँ ॥2॥
भाव द्रव्य ले भक्तिभाव से, मैं श्री जिन मंदिर जाऊँ।
जिनप्रभु का प्रक्षाल करूँ मैं, श्री जिनवर के गुणगाऊँ ॥3॥
शुद्धभाव से णमोकार जप, सहस्त्रनाम पढ़ हर्षाऊँ।
श्री जिनदेव नित्यमह पूजूँ नाचूँ गाऊँ सुख पाऊँ ॥4॥

शांति पाठ पढ़ क्षमा याचना कर, शुद्धातम को ध्याऊँ।
वीतराग जिन चरणों में निज, प्रभु की परम शरण पाऊँ ||5||
ॐ ह्रीं श्री नित्यमह समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो अत्र अवतर अवतर संवौषट् अत्र तिष्ट तिष्ठ ठः ठः अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।
निज भावों का प्रभु जल ले, पाँचों परमेष्ठि उर लाऊँ।
जन्म मरण का नाश करूँ मैं, देवशास्त्र गुरु गुणगाऊँ।।
तीस चौबीसी, बीस जिनेश्वर, कृत्रिम–अकृत्रिम जिनध्याऊँ।
सर्व सिद्ध प्रभु, पंचमेरु, नन्दीश्वरगणधर ऋषि भाऊँ।।
सोलहकारण दशलक्षण, रत्नत्रय नव सुदेव ध्याऊँ।
चौबीसों जिन ढाई द्वीप, अतिशय निर्वाण क्षेत्र ध्याऊँ ||1||
ॐ ह्रीं श्री नित्यमह समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं नि.।
निज भावों का चन्दन ले, पाँचों परमेष्ठि उर लाऊँ।
भवज्वाला की तपन मिटाऊँ, देवशास्त्र गुरु गुण गाऊँ।।तीस||2||
ॐ ह्रीं श्री नित्यमह समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो संसारताप विनाशनाय चंदनं नि.।
निज भावों का अक्षत ले पांचों परमेष्ठि उर लाऊँ।
पद अखंड अक्षय प्रगटाऊँ देवशास्त्र गुरु गुणगाऊँ।।तीस||3||
ॐ ह्रीं श्री नित्यमह समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं।
निज भावों के पुष्प सजा पाँचों परमेष्ठि उर लाऊँ।
कामक्रोध लोभादि मिटाऊँ देवशास्त्र गुरु गुणगाऊँ।।तीस||4||
ॐ ह्रीं श्री नित्यमहसमुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं।
निज भावों के प्रभु चरु ले, पांचों परमेष्ठि उर लाऊँ।
क्षुधारोग की ज्वाल बुझाऊँ, देवशास्त्र गुरु गुणगाऊँ।।तीस||5||

ॐ ह्रीं श्री नित्यमह समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।
निज भावों के दीप जला पांचों परमेष्ठि उर लाऊँ।
मोहतिमिर अज्ञान नशाऊँ देवशास्त्र गुरु गुणगाऊँ।।तीस||6||
ॐ ह्रीं श्री नित्यमह समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।
निज भावों की धूप चढ़ा, पाँचों परमेष्ठि उर लाऊँ।
अष्टकर्म को नष्ट करूँ मैं, देवशास्त्र गुरु गुणगाऊँ।।तीस ||7||
ॐ ह्रीं श्री नित्यमह समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।
निज भावों के फल लेकर, पाँचों परमेष्ठि उर लाऊँ।
उत्तम महामोक्ष फल पाऊँ देवशास्त्र गुरु गुण गाऊँ।।तीस ||8||
ॐ ह्रीं श्री नित्यमह समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो मोक्षफल प्राप्तये फलं।
निज भावों के अर्घ बना, पाँचों परमेष्ठि उर लाऊँ।
अविनाशीअनर्घ पद पाऊँ, देवशास्त्र गुरू गुण गाऊँ।।
तीस चौबीसी, बीस जिनेश्वर, कृत्रिम–अकृत्रिम जिनध्याऊँ।
सर्व सिद्ध प्रभु, पंचमेरु, नन्दीश्वरगणधर ऋषि भाऊँ।।
सोलहकारण दशलक्षण, रत्नत्रय नव सुदेव ध्याऊँ।
चौबीसों जिन ढाई द्वीप, अतिशय निर्वाण क्षेत्र ध्याऊँ ||9||
ॐ ह्रीं श्री नित्यमह समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं

जयमाला

प्रभु पूजन जिन देव की, नित नव मंगल होय।
तीन लोक की संपदा भी, चरणों को धोय ||1||
श्री अरिहंत सिद्ध आचार्योपाध्याय मुनिवर वंदन।
देवशास्त्र गुरु के चरणों में सविनय बारंबार नमन ||2||

भरतैरावत ढाई द्वीप की, तीस चौबीसी का अर्चन।
विद्यमान जिन बीस विदेही, सीमंधर आदिक वन्दन ॥3॥
तीन लोक के कृत्रिम अकृत्रिम, जिनगृह असंख्यात वंदन।
सर्व सिद्धि मंगल के दाता, सब सिद्धों को करूँ नमन ॥4॥
श्री जिन सहस्त्रनाम को ध्याऊँ जिनवाणी को करूँ नमन।
पंचमेरु के अस्सी जिन, चैत्यालय को सादर वन्दन ॥5॥
अष्टम द्वीप श्री नन्दीश्वर, बावन जिन चैत्यालय वन्दन।
भव्य भावना सोलहकारण, भाऊँ ऐसा करूँ जतन ॥6॥
उत्तम क्षमा आदि दशलक्षण, धर्म को सदा ही करूँ नमन।
सम्यक्दर्शन ज्ञान चरितमय, रत्नत्रय व्रत करूँ ग्रहण ॥7॥
वृषभादिक श्री वीर जिनेश्वर, के चरणों का नित अर्चन।
गणधर वृषभसेन गौतम को, विघ्न विनाश हेतु वन्दन ॥8॥
बाहुबलि जी भरत चक्रवर्ती, अनन्तवीर्य को वन्दन।
पंच बालयति शान्ति कुन्थु अर, चक्रेश्वर जिनवर वंदन ॥9॥
भूत भविष्य वर्तमान की, तीनों चौबीसी को वन्दन।
सहस्त्रकूट चैत्यालय वन्दू, मानस्तम्भ जिन समवशरण ॥10॥
गर्भ जन्म तप ज्ञान मोक्ष, पाँचों कल्याणक को वंदन।
तीर्थंकर की जन्म भूमियों को, मैं सादर करूँ नमन ॥11॥
तीर्थ अयोध्या श्रावस्ती, कौशाम्बीपुर काशी वन्दन।
चन्द्रपुरी काकंदी भद्दिलपुर, हस्तिनापुरी वन्दन ॥12॥
सिंहपुरी कंपिला रत्नपुरि, मिथिला शौर्यपुरी को वन्दन।
राजगृही चम्पापुर कुण्डलपुर, वैशाली को करूँ नमन ॥13॥

जिन प्रभु समवशरण, पंच कल्याणक, अतिशय क्षेत्र नमन।
वीतराग निर्ग्रन्थ मुनीश्वर, श्री जिनवाणी को वंदन ॥14॥
तीर्थंकर निर्वाण क्षेत्र अरु, सिद्ध क्षेत्र को है वन्दन।
चम्पापुर पावापुर उर्जयंत, सम्मेदशिखर कैलाश नमन ॥15॥
शंत्रुजय पावागढ़ तारंगागिरि तुंगीगिरि को वन्दन।
कुन्थलगिरि गजपंथ चूलगिरि, सोनागिरि को करूँ नमन ॥16॥
कोटिशिला रेवातट पावागिरि, द्रोणगिरि को वन्दन।
रेशंदीगिरि कुण्डलगिरि, मंदारगिरि पटना वन्दन ॥17॥
श्री सिद्धवरकूट गुणावा, मथुरा राजगृही वन्दन।
मुक्तागिरि पोदनपुर आदि, सिद्ध क्षेत्रों को वन्दन ॥18॥
विपुलाचल वैभार स्वर्णगिरि, उदय रत्नगिरि को वन्दन।
अहिच्छेत्र की ज्ञान भूमि को, ज्ञान प्राप्ति हित करूँ नमन ॥19॥
ढाई द्वीप के सिद्ध क्षेत्र, अरु अतिशय क्षेत्रों को वन्दन।
मनवचन काय शुद्धि पूर्वक, सब तीर्थों को करूँ नमन ॥20॥
कल्पद्रुम सर्वतोभद्र इन्द्रध्वज नित्यमह महापूजन।
अष्टान्हिका, आदि पर्वों पर विविध विधान महापूजन ॥21॥
मध्यलोक के चार शतक, अट्ठावन चैत्यालय वंदन।
अधो लोक के सात करोड़, बहत्तर लाख भवन वन्दन ॥22॥
उर्ध्व लोक के लाख चौरासी, संतानवै सहस तेईस को वन्दन।
ज्योतिष व्यंतर भवन असंख्यों, जिन प्रतिमा को करूँ नमन ॥23॥
गौतम गणधर स्वामी सुधर्मा, जम्बूस्वामी श्रीधर धन।
श्री देशभूषण कुलभूषण, इन्द्रजीत अरु कुम्भकरण ॥24॥

रामचन्द्र हनुमान नील महानील, गवय गवाक्ष्य वन्दन।
मुनि सुडीह सुग्रीव आदि रावण के, सुत मुनिवर वन्दन ||25||
वरदत्तराय अरु सागरदत्त श्री गुरुदत्तादि को वन्दन।
अर्जुन भीम युधिष्ठिर पांडव, द्रविड़ देश के नृप वन्दन ||26||
पंच महा ऋषिवर दत्तादिक नंग अनंग कुमार को नमन।
स्वर्णभद्र आदिक मुनि चारों, सेठ सुदर्शन को वन्दन ||27||
शम्बु प्रद्युम्न और, अनिरुद्ध कुमार आदि को वन्दन।
रामचन्द्र सुत लव मदनांकुश, लाड़ देश नृप को वंदन ||28||
पंचशतक सुत दशरथ नृप के, देश कलिंग नृपति को वंदन।
बालि महाबलि मुनिस्वामी नागकुमार आदि को वन्दन ||29||
कामदेव बलभद्र चक्रवर्ती जो मोक्ष गए उनको वन्दन।
भरत क्षेत्र से मुनि अनंत निर्वाण गए उन सबको वन्दन ||30||
नव देवों को वन्दन कर, शुद्धातम को करूँ नमन।
मोह राग द्वेष का अभाव कर, वीतरागता करूँ ग्रहण ||31||
प्रभु **नित्यमह पूजन** करके, निज स्वभाव में आ जाऊँ।
तीन समय सामायिक साधू, निज स्वरूप में रम जाऊँ ||32||
श्री जिन पूजन का उत्तम फल, सम्यक्दर्शन प्रगटाऊँ।
ग्यारह प्रतिमा पाल साधु, पद लेकर निज आतम ध्याऊँ ||33||
प्रायश्चित विनय वैय्यावृत आलोचना हृदय लाऊँ।
प्रतिक्रमण व्युत्सर्ग करूँ मैं, दोष नाश शिवपद पाऊँ ||34||
उपसर्गों से नहीं डिगूं, परिषह जय कर समता लाऊँ।
गुणस्थान आरोहण क्रम से, श्रेणी चढ़ूँ मोक्ष पाऊँ ||35||

निज स्वभाव साधन के द्वारा, वीतराग निज पद पाऊँ।
श्री जिन शासन के प्रभुत्व से, मोक्षमार्ग पर चढ़ जाऊँ ||36||
ॐ ह्रीं श्री नित्यमह समुच्चय जिनेभ्यो अनर्घ्य पद प्राप्तये पूर्णार्घ्यं नि.।

अनुपम पूजा नित्यमह, स्वर्ग मोक्ष दातार।
निज आतम जो ध्यावते, हो जाते भव पार।।

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्

जाप्यमंत्र : ह्रीं श्री नित्यमह समुच्चय सर्व जिनेन्द्रेभ्यो नमः।

श्री विशेष पर्व पूजनें

जैन आगम में इन पर्वों का विशेष महत्व है। इन पर्वों के महत्व को दर्शाने वाली पौराणिक कथायें इनसे जुड़ी हैं। ये पर्व हमें सांसारिक प्रयोजनों से हटाकर धर्म आराधना के लिए प्रेरणा देते हैं। इन पूजनों में महत्वपूर्ण बात यह है कि प्रत्येक पूजनों में चारों अनुयोगों के सारभूत तत्व गर्भित हैं। अतः प्रत्येक आत्मार्थी बन्धु इन पर्वों पर इन पर्वों के माध्यम से धर्म आराधना करके अनंत सुख को प्राप्त करें। यही कामना है।

37. श्री क्षमावाणी पर्व पूजन

क्षमावाणी का पर्व सुपावन, देता जीवों को संदेश।
उत्तम क्षमाधर्म को धारों, जो अतिभव्य जीव का वेश ||1||
मोह नींद से जागो चेतन, अब त्यागो मिथ्याभिनिवेश।
द्रव्य दृष्टि बन निज स्वभाव से, चलो शीघ्र सिद्धों के देश ||2||
क्षमा, मार्दव, आर्जव, संयम, शौच, सत्य को अपनाओ।
त्याग, तपस्या, आकिंचन, व्रत ब्रह्मचर्य मय हो जाओ ||3||

एक धर्म का सार यही है, समतामय ही बन जाओ।
सब जीवों पर क्षमा भाव धर स्वयं क्षमामय हो जाओ ||4||
क्षमा धर्म की महिमा अनुपम, क्षमा धर्म ही जग में सार।
तीन लोक में गूंज रही है, क्षमावाणी की जय जयकार ||5||
ज्ञाता दृष्टा हो समग्र को, देखो उत्तम निर्मल भेष।
रागों से विरक्त हो जाओ, रहे न दुख का किंचित लेश ||6||
ॐ ह्रीं श्री उत्तम क्षमाधर्म अत्र अवतर अवतर संवौषट्, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।

जीवादिक नव तत्वों का, श्रद्धान यही सम्यक्त्व प्रथम।
इनका ज्ञान ज्ञान है, रागादिक का त्याग चारित्र परम।।
[1]**संते पुव्वणिबद्धं जाणादि** वह अबंध का ज्ञाता है।
सम्यक्दृष्टि सुजीव आश्रव, बंध रहित हो जाता है।।
उत्तम क्षमा धर्म उर धारूँ, जन्म मरण क्षय कर मानूं।
पर द्रव्यों से दृष्टि हटाऊँ, निज स्वभाव को पहचानूं ||1||
ॐ ह्रीं श्री उत्तम क्षमा धर्मांगाय जन्मजरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि.।
सप्त भयों से रहित निशंकित, निज स्वभाव में सम्यक्दृष्टि।
मिथ्यात्वादिक भावों में जो रहता वह है मिथ्यादृष्टि।।
तीन मूढ़ता छह अनायतन, तीन शल्य का नाम नहीं।
आठ दोष समकितके अरु ,**आठों मद** का कुछ काम नहीं।।उत्तम||2||
ॐ ह्रीं श्री उत्तम क्षमा धर्मांगाय संसारताप विनाशनाय चंदनं नि.।
अशुभ कर्म जाना कुशील, शुभ को सुशील मानता अरे।
जो संसार बंध का कारण, वह सुशील मानता अरे।।

1. (सम्यक्दृष्टि) सत्ता में मौजूद पूर्वबद्धकर्मों को जानता है।

कर्म फलों के प्रति जिनको, आकांक्षा उर में रही नहीं।
वह निकांक्षित सम्यक् दृष्टि, भव की वांछा रही नहीं।।उत्तम||3||
ॐ ह्रीं श्री उत्तम क्षमा धर्मांगाय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि.।
राग शुभाशुभ दोनों ही, संसार भ्रमण का कारण है।
शुद्ध भाव ही एकमात्र, परमार्थ भवोदधि तारण है।
वस्तु स्वभाव धर्म के प्रति, जो लेश जुगुप्सा करे नहीं।।उत्तम||4||
ॐ ह्रीं श्री उत्तम क्षमा धर्मांगाय कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।
शुद्ध आत्मा जो ध्याता, वह पूर्ण शुद्धता पाता है।
जो अशुद्ध को ध्याता है, वह ही अशुद्धता पाता है।।
परभावों में जो न मूढ़ है, दृष्टि यथार्थ सदा जिसकी।
वह अमूढ़ दृष्टि का धारी, सम्यक् दृष्टि सदा उसकी।।उत्तम||5||
ॐ ह्रीं श्री उत्तम क्षमा धर्मांगाय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।
राग द्वेष मोहादि आश्रव, ज्ञानी को होते न कभी।
ज्ञाता दृष्टा को ही होते, उत्तम संवर भाव सभी।।
शुद्धातम की भक्ति सहित, जो पर भावों से नहीं जुड़ा।
उपगूहन का अधिकारी है, सम्यक दृष्टि महान बड़ा।।उत्तम||6||
ॐ ह्रीं श्री उत्तम क्षमा धर्मांगाय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।
कर्म बंध के चारों कारण, मिथ्या अविरति योग कषाय।
चेतयिता इनका छेदन कर, करता है निर्वाण उपाय।।
जो उन्मार्ग छोड़कर निज को, निज में स्थापित करता।
स्थिति करणयुक्त होता, वह सम्यक् दृष्टि स्वहित करता।।उत्तम||7||
ॐ ह्रीं श्री उत्तम क्षमा धर्मांगाय अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।

पुण्य पाप मय सभी, शुभाशुभ योगों से रहता जो दूर।
सर्व संग से रहित हुआ, वह दर्शन ज्ञानमयी सुख पूर।।
सम्यक् दर्शन ज्ञान चारितधारी, के प्रति गौ वत्सल भाव।
वात्सल्य का धारी सम्यक् दृष्टि मिटाता पूर्ण विभाव।।उत्तम ||8||
ॐ ह्रीं श्री उत्तम क्षमा धर्मांगाय मोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।
ज्ञान विहीन कभी भी, पलभर ज्ञान स्वरूप नहीं होता।
बिना ज्ञान के ग्रहण किए, कर्मों से मुक्त नहीं होता।।
विद्यारूपी रथ पर चढ़, जो ज्ञान रूप रथ चलवाता।
वह जिन शासन की प्रभावना करता शिवपथ दर्शाता।।
उत्तम क्षमा धर्म उर धारूँ, जन्म मरण क्षय कर मानूं।
पर द्रव्यों से दृष्टि हटाऊँ, निज स्वभाव को पहचानूं ||9||
ॐ ह्रीं श्री उत्तम क्षमा धर्मांगाय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

जयमाला

उत्तम क्षमा स्वधर्म को, वन्दन करूँ त्रिकाल
नाश दोष पच्चीस कर, काटूँ भव जन्मजात ||1||
सोलहकारण पुष्पांजलि दशलक्षण रत्नत्रय व्रतपूर्ण।
इनके सम्यक् पालन से, हो जाते हैं वसुकर्म विचूर्ण ||2||
भाद्रमास में **सोलहकारण** तीस दिवस तक होते हैं।
शुक्ल पक्ष में **दशलक्षण**, पंचम से दस दिन होते हैं ||3||
पुष्पांजलि दिन पाँच पंचमी, से नवमी तक होते हैं।
पावन **रत्नत्रय व्रत** अंतिम, तीन दिवस के होते हैं ||4||
आश्विन कृष्णा एकम् उत्सव, **क्षमावाणी** का होता है।
उत्तम क्षमा धार उर श्रावक, मोक्ष मार्ग को जाता है ||5||

भाद्रमास अरु **माघ मास**, अरु **चैत्र मास** में आते हैं।
तीन बार आ पर्वराज, जिन संदेश सुनाते हैं ||6||
[1]**जीवे कम्मं बद्धं पुट्ठं** यह तो है व्यवहार कथन।
है अबद्ध अस्पृष्ट कर्म से, निश्चय नय का सही कथन ||7||
जीव देह को एक बताना, यह है नय व्यवहार अरे।
जीव देह तो पृथक पृथक है, निश्चय नय कह रहा अरे ||8||
निश्चय नय का विषय छोड़, व्यवहार माँहि करते वर्तन।
उनको मोक्ष नहीं हो सकता और न ही सम्यकदर्शन ||9||
[2]**दोण्हविणयाण भणियं जाणई** जो पक्षातिक्रांत होता।
चित्स्वरूप का अनुभव करता, सकल कर्म मल को खोता ||10||
ज्ञानी ज्ञानस्वरूप छोड़कर, जब अज्ञान रूप होता।
तब अज्ञानी कहलाता है, पुद्गल बन्ध रूप होता ||11||
[3]**जह विस भुव भुज्जंतोवेज्जो** मरण नहीं पा सकता है।
ज्ञानी पुद्गल कर्म उदय को, भोगे बन्ध न करता है ||12||
मुनि अथवा गृहस्थ कोई भी, मोक्षमार्ग है कभी नहीं।
सम्यक्दर्शन ज्ञान चरित ही, मोक्षमार्ग है सही–सही ||13||
मुनि अथवा गृहस्थ के लिंगों में जो ममता करता है।
मोक्षमार्ग तो बहुत दूर, भव अटवी में ही भ्रमता है ||14||
प्रतिक्रमण प्रतिसरण आदि, आठों प्रकार के हैं विष कुम्भ।
इनसे जो विपरीत वहीं है, मोक्षमार्ग के अमृत कुम्भ ||15||

1. जीव कर्म को बांधता है तथा स्पर्शित है (समयसार गाथा 141)
2. दोनों ही नयों के कथन को मात्र जानता है (समयसार गाथा 143)
3. जिस प्रकार वैद्य पुरुष विष को भोगता खाता हुआ भी (समयसार गाथा 175)

पुण्य भाव की भी तो इच्छा, ज्ञानी कभी नहीं करता।
परभावों से अरति सदा है, निज का ही कर्ता धर्ता ||16||
कोई कर्म किसी का भी नहीं, सुख–दुख का स्वयं समर्थ।
जीव स्वयं ही अपने सुख–दुख का निर्माता स्वयं समर्थ ||17||
क्रोध, मान, माया, लोभादिक, नहीं जीव के किंचित मात्र।
रूप, गंध, रस, स्पर्श शब्द भी, नहीं जीव के किंचित् मात्र ||18||
देह संहनन संस्थान भी नहीं, जीव के किंचित मात्र।
राग द्वेष मोहादि भाव भी, नहीं जीव के किंचित मात्र ||19||
सर्वभाव से भिन्न त्रिकाली, पूर्ण ज्ञानमय ज्ञायक मात्र।
नित्य, ध्रौव्य, चिद्रूप, निरंजन, दर्शनज्ञानमयी चिन्मात्र ||20||
वाक् जाल में उलझे वह, कभी सुलझ न पायेंगे।
निज अनुभव रस पान किये बिन, नहीं मोक्ष वे पायेंगे ||21||
अनुभव ही तो शिव समुद्र है, अनुभव शाश्वत सुख का सोत्र।
अनुभव परम सत्य शिव सुन्दर, अनुभव शिव से ओतप्रोत ||22||
निज स्वभाव के सम्मुख हो जा, पर से दृष्टि हटा भगवान।
पूर्ण सिद्ध पर्याय प्रकट कर, आज अभी पा ले निर्वाण ||23||
ज्ञान चेतना सिंधु स्वयं तू, स्वयं अनन्त गुणों का भूप।
त्रिभुवन पति सर्वज्ञ ज्योतिमय, चिंतामणि चेतन चिद्रूप ||24||
यह उपदेश श्रवण कर, हे प्रभु मैत्री भाव हृदय धारूँ।
जो विपरीत वृत्ति वाले हैं, उन पर मैं समता धारूँ ||25||
धीरे धीरे पाप, पुण्य शुभ अशुभ आश्रव संहारूँ।
भव तन भोगों से विरक्त हो, निज स्वभाव को स्वीकारूँ ||26||
दशधर्मों को पढ़ सुनकर अन्तर में आये परिवर्तन।
व्रत उपवास तपादिक द्वारा, करूँ सदा ही निज चिंतन ||27||

राग द्वेष अभिमान पाप हर, काम क्रोध को चूर करूँ।
जो संकल्प विकल्प उठे प्रभु, उनको क्षण–क्षण दूर करूँ ||28||
अणुभर भी यदि राग रहेगा, नहीं मोक्ष पद पाऊँगा।
तीनलोक में काल अनंता, राग लिए भरमाऊँगा ||29||
राग शुभाशुभ के विनाश से, वीतराग बन जाऊँगा।
शुद्धात्मानुभूति के द्वारा, स्वयं सिद्ध पद पाऊँगा ||30||
पर्यूषण में दूषण त्यागूँ, बाह्य क्रिया में रमें न मन।
शिवपथ का अनुसरण करूँ मैं, बन के नाथ सिद्ध नन्दन ||31||
जीव मात्र पर क्षमा भाव रख, मैं व्यवहार धर्म पालूँ।
निज शुद्धातम पर करूणा कर, निश्चय धर्म सहज पालूँ ||32||
ॐ ह्रीं श्री उत्तम क्षमा धर्मांगाय पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

मोक्षमार्ग दर्शा रहा क्षमावाणी का पर्व।
क्षमाभाव धारण करो राग द्वेष हर सर्व।।

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री उत्तम क्षमा धर्मांगाय नमः।

38. श्री दीपमालिका पूजन

महावीर निर्वाण दिवस पर, महावीर पूजन कर लूँ।
वर्धमान अतिवीर वीर सन्मति, प्रभु को वन्दन कर लूँ ||1||
पावापुर से मोक्ष गये प्रभु, जिनवर पद अर्चन कर लूँ।
जगमग जगमग दिव्य ज्योति से, धन्य मनुज जीवन कर लूँ ||2||
कार्तिक कृष्ण अमावस्या को, शुद्ध भाव मन से भर लूँ।
दीपमालिका पर्व मनाऊँ, भव भव के बंधन हर लूँ ||3||

ज्ञान सूर्य का चिर प्रकाश ले, रत्नत्रय पथ पर बढ़ लूँ।
परभावों का राग तोड़कर, निज स्वभाव में मैं अड़लूँ ॥4॥
ॐ ह्रीं श्री कार्तिक कृष्ण अमावस्यां मोक्ष मंगल प्राप्त श्री महावीर जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट।

चिदानन्द चैतन्य अनाकुल, निज स्वभावमय जल भर लूँ।
जन्म मरण का चक्र मिटाऊँ, भव भव की पीड़ा हर लूँ।।
दीपावली के पुण्य दिवस, पर वर्धमान पूजन कर लूँ।
महावीर अतिवीर सन्मति वीर प्रभु वन्दन कर लूँ ॥1॥
ॐ ह्री श्री कार्तिक कृष्ण अमावस्यां मोक्ष मंगल प्राप्त श्री महावीर जिनेन्द्राय जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

अमल अखंड अतुल अविनाशी, निज चन्दन उर में धर लूँ।
चारों गति का ताप मिटाऊँ, निज पंचमगति आदर लूँ।।दीपा.॥2॥
ॐ ह्रीं श्री कार्तिक कृष्ण अमावस्यां मोक्ष प्राप्त श्री महावीर जिनेन्द्राय संसारताप विनाशनाय चंदनं नि. स्वाहा।

अजर अमर अक्षय अविकल, अनुपम अक्षत पद उर धर लूँ।
भवसागर तिर मुक्तिवधू से, मैं पावन परिणय कर लूँ।।दीपा.॥3॥
ॐ ह्रीं श्री कार्तिक कृष्ण अमावस्यां मोक्ष मंगल प्राप्त श्री महावीर जिनेन्द्राय अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं नि. स्वाहा।

रूप गंध रस स्पर्श रहित, निज शुद्ध पुष्प मन में भर लूँ।
कामबाण की व्यथा नाशकर, मैं निष्काम रूप धर लूँ।।दीपा.॥4॥
ॐ ह्रीं श्री कार्तिक कृष्ण अमावस्यां मोक्ष मंगल प्राप्त श्री महावीर जिनेन्द्राय कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

आत्म शक्ति परिपूर्ण शुद्ध नैवेद्य भाव उर में धर लूँ।
चिर अतृप्ति का रोगनाशकर सहज तृप्त निजपद वर लूँ।।दीपा.॥5॥
ॐ ह्रीं श्री कार्तिक कृष्ण अमावस्यां मोक्ष मंगल प्राप्त श्री महावीर जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।

पूर्ण ज्ञान कैवल्य प्राप्ति हित, ज्ञान दीप ज्योतित कर लूँ।
मिथ्याभ्रमतम मोहनाशकर, निज सम्यक्त्व प्राप्त कर लूँ।।दीपा.॥6॥
ॐ ह्रीं श्री कार्तिक कृष्ण अमावस्यां मोक्ष मंगल प्राप्त श्री महावीर जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

पुण्य भाव की धूप जलाकर, घाति अघाति कर्म हर लूँ।
क्रोधमान माया लोभादिक, मोहदोष सब क्षय कर लूँ।।दीपा.॥7॥
ॐ ह्रीं श्री कार्तिक कृष्ण अमावस्यां मोक्ष मंगल प्राप्त श्री महावीर जिनेन्द्राय अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि. स्वाहा।

अमिट अनन्त अचल अविनश्वर, श्रेष्ठ मोक्षपद उर धर लूँ।
अष्ट स्वगुण से युक्त सिद्ध गति पा सिद्धत्व प्राप्त कर लूँ।।दीपा.॥8॥
ॐ ह्रीं श्री कार्तिक कृष्ण अमावस्यां मोक्ष मंगल प्राप्त श्री महावीर जिनेन्द्राय मोक्षफल प्राप्तये फलं नि. स्वाहा।

गुण अनन्त प्रगटाऊँ अपने, निज अनर्घ पद को वर लूँ।
शुद्ध स्वभावी ज्ञान प्रभावी, निज सौन्दर्य प्रगट कर लूँ।।
दीपावली के पुण्य दिवस, पर वर्धमान पूजन कर लूँ।
महावीर अतिवीर, सुसन्मति वीर प्रभु वन्दन कर लूँ ॥9॥
ॐ ह्रीं श्री कार्तिक कृष्ण अमावस्यां मोक्ष मंगल प्राप्त श्री महावीर जिनेन्द्राय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

(4) **वर्तमान के दुःख का कारण वर्तमान का मोह है।**

श्री पंचकल्याणक अर्घ्य

शुभ **आषाढ़ शुक्ल षष्ठी** को, **पुष्पोत्तर** तज प्रभु आये।
माता **त्रिशला** धन्य हो गई, सोलह सपने दरशाये।।
पन्द्रह मास रत्न बरसे, **कुण्डलपुर** में आनन्द हुआ।
वर्धमान के गर्भोत्सव पर, दूर शोक दुख द्वन्द हुआ ||1||
ॐ ह्रीं आषाढ़ शुक्ल षष्ठयां गर्भ मंगल प्राप्त श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

चैत्र शुक्ल की त्रयोदशी को, सारी जगती धन्य हुई।
नृप सिद्धार्थ राज हर्षाये, **कुण्डलपुर** अनन्य हुई।।
मेरु सुदर्शन पाण्डुक वन में, सुरपति कर प्रभु का अभिषेक।
नृत्य वाद्य मंगल गीतों के, द्वारा किया हर्ष अतिरेक ||2||
ॐ ह्रीं चैत्र शुक्ल त्रयोदश्यां जन्म मंगल प्राप्त श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

मगसिर कृष्णा दशमी को, उर में छाया वैराग्य अपार।
लौकान्तिक देवों के द्वारा, किया धन्य प्रभु का जयकार।।
बाल ब्रह्मचारी गुणधारी, वीर प्रभु ने किया प्रयाण।
वन में जाकर दीक्षाधारी, निज में **लीन** हुये भगवान ||3||
ॐ ह्रीं मगसिर कृष्ण दशम्यां तपोमंगल प्राप्त श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

द्वादश वर्ष तपस्या करके पाया तुमने केवलज्ञान।
कर **वैशाख शुक्लदशमी** को त्रेसठ कर्म प्रकृति अवसान।।
सर्व द्रव्य गुण पर्यायों को, युगपत एक समय में जान।
वर्धमान सर्वज्ञ हुए प्रभु, वीतराग अरिहन्त महान ||4||
ॐ ह्रीं वैशाख शुक्ल दशम्यां केवलज्ञान प्राप्त श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

कार्तिक कृष्ण अमावस्या को, वर्धमान प्रभु मुक्त हुए।
सादि अनन्त समाधि प्राप्त कर, मुक्ति रमा में युक्त हुए।।
अंतिम शुक्ल ध्यान के द्वारा, कर अघातिया का अवसान।
शेष प्रकृति पच्चासी को, भी क्षय करके पाया निर्वाण ||5||
ॐ ह्रीं कार्तिक कृष्ण अमावस्यां मोक्ष मंगल प्राप्त श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

महावीर ने पावापुर से, मोक्ष लक्ष्मी पाई थी।
इन्द्रसुरों ने हर्षित होकर, दीपावली मनाई थी ||1||
केवलज्ञान प्राप्त होने पर, तीस वर्ष तक किया विहार।
कोटि–कोटि जीवों का प्रभु ने, दे उपदेश किया उपकार ||2||
पावापुर उद्यान पधारे, योग निरोध किया साकार।
गुणस्थान चौदह को तज कर, पहुँचे भव समुद्र के पार ||3||
सिद्धशिला पर हुए विराजित, मिली मोक्ष लक्ष्मी सुखकार।
जल थल नभ में देवों द्वारा, गूंज उठी प्रभु की जयकार ||4||
इन्द्रादिक सुर आये हर्षित, मन में धारे मोद अपार।
महामोक्ष कल्याण मनाया, अखिल विश्व ने मंगलकार ||5||
अष्टादश गण राज्यों के राजाओं ने जयगान किया।
नतमस्तक होकर जन जन ने, महावीर गुणगान किया ||6||
तन कपूरवत उड़ा शेष नख केश रहे इस भूतल पर।
मायामयी शरीर रचा देवों ने क्षणभर के भीतर ||7||
अग्निकुमार सुरों ने झुक, मुकुटानल से तन भस्म किया।
सर्व उपस्थित जन समूह, सुरगण ने पुण्य अपार लिया ||8||

कार्तिक कृष्ण अमावस्या का, दिवस मनोहर सुखकर था।
उषा :कालका उजियाराकुछ, तम मिश्रित अति मनहर था ||9||
रत्न ज्योतिषियों का प्रकाश कर देवों ने मंगल गाये।
रत्नदीप की आवलियों से पर्व दीपमाला लाये ||10||
सबने शीश चढ़ाई भस्मी, पद्म सरोवर बना वहाँ।
वही भूमि है अनुपम सुन्दर, जल मंदिर है बना जहाँ ||11||
इसी दिवस गौतमस्वामी को, सन्ध्या केवलज्ञान हुआ।
केवलज्ञान लक्ष्मी पाई पद, सर्वज्ञ महान हुआ ||12||
प्रभु के ग्यारह गणधर में थे, प्रमुख श्री गौतम स्वामी।
क्षपक श्रेणि चढ़ शुक्ल ध्यान से, हुए देव अन्तर्यामी ||13||
देवों ने अति हर्षित होकर, रत्न ज्योति का किया प्रकाश।
हुई दीपावली द्विगुणित, आनन्द का छाया उल्लास ||14||
प्रभु के चरणाम्बुज दर्शन कर, हो जाता मन अति पालन।
परम पूज्य निर्वाण भूमि, शुभ पावापुर है मनभावन ||15||
अखिल जगत में दीपावली, त्यौहार मनाया जाता है।
महावीर निर्वाण महोत्सव, धूम मचाता आता है ||16||
हे प्रभु महावीर जिन स्वामी, गुण अनन्त के हो धामी।
भरत क्षेत्र के अंतिम तीर्थंकर, जिनराज विश्वनामी ||17||
मेरी केवल एक विनय है, मोक्ष लक्ष्मी मुझे मिले।
भौतिक लक्ष्मी के चक्कर में, मेरी श्रृद्धा नहीं हिले ||18||
भव भव जन्म मरण के चक्कर, मैंने पाये हैं इतने।
जितने रजकण इस भूतल पर, पाये हैं प्रभु दुख उतने ||19||
अवसर आज अपूर्व मिला है, शरण आपकी पाई है।
भेद ज्ञान की बात सुनी है, तो निज की सुधि आई है ||20||

अब मैं कहीं नहीं जाऊँगा, जब तक मोक्ष नहीं पाऊँ।
दो आशीर्वाद हे स्वामी, नित्य नये मंगल गाऊँ ||21||
ॐ ह्रीं कार्तिक कृष्ण अमावस्यां निर्वाण कल्याण प्राप्त श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्य नि. स्वाहा।

दीपमालिका पर्व पर, महावीर उर धार।
भाव सहित जो पूजते, पाते सौख्य अपार।।

इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत्

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेन्द्राय नमः।

39. श्री ऋषभ जयन्ती पूजन

जम्बूद्वीप सुभरत क्षेत्र में है, उत्तरप्रदेश शुभ नाम।
सरयूतट पर नगर अयोध्या, प्रभु की जन्मभूमि अभिराम।।
कर्मभूमि के प्रथम जिनेश्वर, आदिनाथ मंगलदाता।
जो भी शरण आपकी आता, सम्यकदर्शन प्रगटाता।।
वर्तमान चौबीसी के, तीर्थंकर आदीश्वर भगवान।
विनय सहित पूजन करता हूँ निजस्वभाव को लूँ पहचान।।
ऋषभदेव श्री ऋषभदेव प्रभु, महादेव के गुण गाऊँ।।
ॐ ह्रीं श्री ऋषभदेव जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट्, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।

शुद्धनीर प्रभु चरण चढ़ाऊँ, जन्म जरादिक विनशाऊँ।
वीतराग विज्ञान ज्ञानघन निज स्वभाव में आ जाऊँ।।
ऋषभ जयंती के अवसर पर मिथ्याभ्रम प्रभु विघटाऊँ।
स्वपर भेद विज्ञान प्राप्तकर सम्यग्दर्शन प्रगटाऊँ ||1||
ॐ ह्रीं श्री ऋषभदेव जिनेन्द्राय जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि.

सहज सुगंधित चंदन लाऊँ, भवाताप सब विनशाऊँ।
वीतराग विज्ञान ज्ञानधन, निज स्वभाव में आ जाऊँ। ऋषभ॥2॥
ॐ ह्रीं श्री ऋषभदेव जिनेन्द्राय संसारताप विनाशनाय चंदनं नि.।
सर्वोत्तम भावों के अक्षत, लाऊँ अक्षय पद पाऊँ।
वीतराग विज्ञान ज्ञानधन, निजस्वभाव में आ जाऊँ। ऋषभ॥3॥
ॐ ह्रीं श्री ऋषभदेव जिनेन्द्राय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि.।
सुरतरु पुष्प सुवासित लाऊँ, कामव्याधि सब विनशाऊँ।
वीतराग विज्ञान ज्ञानधन, निज स्वभाव में आ जाऊँ। ऋषभ॥4॥
ॐ ह्रीं श्री ऋषभदेव जिनेन्द्राय कामवाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।
पुण्यभाव नैवेद्य त्यागकर, क्षुधारोग पर जय पाऊँ।
वीतराग विज्ञान ज्ञानघन, निज स्वभाव में आ जाऊँ ऋषभ॥5॥
ॐ ह्रीं श्री ऋषभदेव जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।
अंतरतम के नाश हेतु हे नाथ ज्ञान दीपक लाऊँ।
वीतराग विज्ञान ज्ञानघन, निज स्वभाव में आ जाऊँ। ऋषभ॥6॥
ॐ ह्रीं श्री ऋषभदेव जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपंनि.।
अष्टकर्म की धूप जलाऊँ, शुक्ल ध्यान अनुपम ध्याऊँ।
वीतराग विज्ञान ज्ञानघन निज स्वभाव में आ जाऊँ। ऋषभ॥7॥
ॐ ह्रीं श्री ऋषभदेव जिनेन्द्राय अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।
महामोक्ष फल प्राप्त करूँ निश्चय रत्नत्रय उर लाऊँ।
वीतराग विज्ञान ज्ञानघन निज स्वभाव में आ जाऊँ। ऋषभ॥8॥
ॐ ह्रीं श्री ऋषभदेव जिनेन्द्राय महामोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।
शुद्धभाव का अर्घ्य बनाऊँ पद अनर्घ्य अविचल पाऊँ।
वीतराग विज्ञान ज्ञानघन, निज स्वभाव में आ जाऊँ॥

ऋषभ जयंती के अवसर पर मिथ्याभ्रम प्रभु विघटाऊँ।
स्वपर भेद विज्ञान प्राप्तकर सम्यग्दर्शन प्रगटाऊँ॥9॥
ॐ ह्रीं श्री ऋषभदेव जिनेन्द्राय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

जयमाला

ऋषभदेव जिनराज को, नित प्रति करूँ प्रणाम।
भाव सहित पूजन करूँ, पाऊँ निज ध्रुवधाम॥1॥
भोग भूमि का अन्त हुआ, तब कल्पवृक्ष सब हुए विलीन।
ज्योति मंद होते ही नभ में, दृष्टि रवि शशि हुए प्रवीण॥2॥
चौदह कुलकर हुए जिन्होंसे, कर्म भूमि प्रारम्भ हुई।
अंतिम कुलकर नाभिराय से, नई दिशा आरम्भ हुई॥3॥
तृतीय काल के अन्त समय में, भरत क्षेत्र को धन्य किया।
सर्वार्थ सिद्धि से चयकर तुमने, मरुदेवी उरवास लिया॥4॥
चैत्र कृष्ण नवमी को प्रातः नगर अयोध्या जन्म लिया।
तब स्वर्गों में बजी बधाई, जग ने जय जय गान किया॥5॥
सुरपति ने स्वर्णिम सुमेरु पर, क्षीरोदधि अभिषेक किया।
पग में वृषभ चिन्ह लखते ही, वृषभनाथ यह नाम दिया॥6॥
लक्ष चौरासी वर्षों का होता, **पूर्वांग** एक जानों।
लक्ष चौरासी पूर्वांग का, होता **एक पूर्व** जानों॥7॥
लाख चौरासी पूर्व आयु थी **धनुष पांच सौ पाया तन**।
लाख तिरासी पूर्व राज्य कर, हुए जगत से उदास मन॥8॥
नीलांजना मरण लखते ही, भव तन भोग उदास हुए।
कर चिन्तवन भावना द्वादश, निज स्वभाव के पास हुए॥9॥

मात पिता से आज्ञा लेकर पुत्र भरत को राज्य दिया।
बाहुबलि ने प्रभु आज्ञा से, पोदनपुर का राज्य लिया ||10||
लौकांतिक सुर साधुवाद देने, प्रभु चरणों में आये।
तपकल्याण मनाने को, इन्द्रादिक सुर आ हर्षाये ||11||
अन्य नृपति भी दीक्षित होने, प्रभु के साथ गए वनवास।
वन में जाकर प्रभु ने दीक्षाधारी, निज में किया निवास ||12||
एक सहस्त्र वर्ष तप करके निज स्वभाव का ध्यान किया।
पाप पुण्य परभाव नाशकर, अद्‌भुत केवल ज्ञान लिया ||13||
समवशरण रच इन्द्रसुरों ने, किया अपूर्व ज्ञान कल्याण।
मोक्षमार्ग संदेश आपने, दिया जगत को श्रेष्ठ प्रधान ||14||
भरत क्षेत्र में बन्द मोक्ष का, मार्ग पुनः प्रारम्भ किया।
पुत्र अनन्तवीर्य ने शिव पद पा, यह क्रम आरम्भ किया ||15||
प्रभु ने एक लाख पूर्व तक, भरत क्षेत्र में किया विहार।
अष्टापद कैलाश शिखर से, आप हुए भवसागर पार ||16||
योग निरोध पूर्ण करके, फिर प्रभु ने पाया पद निर्वाण।
सिद्ध स्वपद सिंहासन पाया, वसु कर्मों का कर अवसान ||17||
वृषभसेन गणधर, चौरासी गणधर, में थे **मुख्य प्रधान**।
कर रचना **अन्तर्मुहर्त** में, **द्वादशांग** की हुए महान ||18||
सात तत्त्व उपदेश आपका, हम भी हृदयगंम कर लें।
आत्मतत्त्व निज की प्रतीति, कर हम सब मिथ्यातम हर लें ||19||
तज पर्याय दृष्टि दुखदायी, द्रव्य दृष्टि ही बन जायें।
ध्रुव स्वरूप का अवलंबन ले, सादि अनंत स्वपद पाये ||20||
प्रभु की जन्म जयन्ती के अवसर पर तत्त्व विचार करें।
निश्चय समकित की औषधि से भव के सर्व विकार हरें ||21||

अपने अपने परिणामों के द्वारा पायें आत्म प्रकाश।
वीतराग निर्ग्रन्थ मार्ग का जागा है उर में विश्वास ||22||
ॐ ह्रीं श्री ऋषभनाथ जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं नि.।

ऋषभ जयन्ती पर्व की गूंज रही जयकार।
वीतराग जिनमार्ग ही एक जगत में सार।।

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री ऋषभनाथ जिनेन्द्राय नमः।

40. श्री महावीर जयन्ती पूजन

महावीर की जन्म जयन्ती का दिन जग में है विख्यात।
चैत्र शुक्ल की त्रयोदशी को, हुआ विश्व में नवल प्रभात ||1||
कुण्डलपुर वैशाली नृप, सिद्धार्थराज गृह जन्म लिया।
माता त्रिशला धन्य हो गई, वर्धमान रवि उदय हुआ ||2||
इन्द्रादिक ने मंगल गाये, गिरि सुमेरु पर कर नर्तन।
एक सहस्त्र आठ कलशों से, क्षीरोदधि से किया न्वहन ||2||
तीन लोक में आनन्द छाया, घर–घर मंगलाचार हुआ।
दशों दिशायें हुईं सुगंधित, प्रभु का जय जयकार हुआ ||3||
दुखी जगत के जीवों का, प्रभु के द्वारा उपकार हुआ।
निज स्वभाव जप मोक्ष गये प्रभु, सिद्ध स्वपद साकार हुआ ||4||
मैं भी प्रभु के जन्म महोत्सव पर, पुलकित हो गुण गाऊँ।
अष्ट द्रव्य से प्रभु चरणों की, पूजन करके हर्षाऊँ ||5||
ॐ ह्रीं चैत्र शुक्ल त्रयोदश्यां जन्म मंगलप्राप्त श्री महावीर जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।

क्षीरोदधि का क्षीर वर्ण सम भाव नीर लेकर आऊँ।
प्रभु चरणों में भेंट चढ़ाऊँ, परम शांत जीवन पाऊँ।।
महावीर के जन्म दिवस पर, महावीर प्रभु को ध्याऊँ।
महावीर के पथ पर चलकर, महावीर सम बन जाऊँ ||1||

ॐ ह्रीं चैत्र शुक्ल त्रयोदश्यां जन्म मंगलप्राप्त श्री महावीर जिनेन्द्राय जन्मजरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि. ।

मलयागिरि चन्दन से उत्तम, गंध स्वयं की प्रगटाऊँ।
निज स्वभाव साधन से स्वामी, शाश्वत शीतलता पाऊँ।।महा.||2||

ॐ ह्रीं चैत्र शुक्ल त्रयोदश्यां जन्म मंगलप्राप्त श्री महावीर जिनेन्द्राय संसार ताप विनाशनाय चंदनं नि. ।

शुभ्र अखण्डित धवलाक्षत ले भाव सहित, प्रभु गुणगाऊँ।
निज स्वरूप की महिमा गाऊँ, अनुपम अक्षय पद पाऊँ।।महा.||3||

ॐ ह्रीं चैत्र शुक्ल त्रयोदश्यां जन्म मंगलप्राप्त श्री महावीर जिनेन्द्राय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि. ।

कल्पवृक्ष के पुष्प मनोहर, भावमयी लेकर आऊँ।
पर परिणति से विमुख बनूँ, निष्काम नाथ मैं बन जाऊँ।।महा.||4||

ॐ ह्रीं चैत्र शुक्ल त्रयोदश्यां जन्म मंगलप्राप्त श्री महावीर जिनेन्द्राय कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि. ।

षट रस के नैवेद्य अनूठे भाव पूर्ण लेकर आऊँ।
निज परिणति में रमण करूँ मैं पूर्ण तृप्त प्रभु बन जाऊँ।।महा.||5||

ॐ ह्रीं चैत्र शुक्ल त्रयोदश्यां जन्म मंगलप्राप्त श्री महावीर जिनेन्द्राय क्षुधारोग विध्वंसनाय नैवेद्यं नि. ।

स्वर्ण थाल में रत्नदीप, निज भावों का लेकर आऊँ।
केवलज्ञान प्रकाश सूर्य की, ज्योति किरण निज प्रगटाऊँ।।महा.||6||

ॐ ह्रीं चैत्र शुक्ल त्रयोदश्यां जन्म मंगलप्राप्त श्री महावीर जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि. ।

दशगन्धों की दिव्य धूप मैं, शुद्ध भाव की ले आऊँ।
दश धर्मों की परम शक्ति से, अष्टकर्म रज विघटाऊँ।।महा.||7||

ॐ ह्रीं चैत्र शुक्ल त्रयोदश्यां जन्म मंगलप्राप्त श्री महावीर जिनेन्द्राय अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि. ।

विविध भाँति के सुर फल प्रभु, परम भावनामय लाऊँ।
महामोक्षफल पाऊँ स्वामी, फिर न लौट भव में आऊँ।।महा.||8||

ॐ ह्रीं चैत्र शुक्ल त्रयोदश्यां जन्म मंगलप्राप्त श्री महावीर जिनेन्द्राय महामोक्ष फल प्राप्तये फलं नि. ।

जल फलादि वसु द्रव्य अर्घ, शुभ ज्ञानभाव का ले आऊँ।
साम्य भाव चारित्र धर्म पा, निज अनर्घ पदवी पाऊँ।।
महावीर के जन्म दिवस पर, महावीर प्रभु को ध्याऊँ।
महावीर के पथ पर चलकर, महावीर सम बन जाऊँ ||9||

ॐ ह्रीं चैत्र शुक्ल त्रयोदश्यां जन्म मंगलप्राप्त श्री महावीर जिनेन्द्राय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि. ।

जयमाला

जन्म दिवस श्री वीर का, गाओ मंगल गान।
आत्म ज्ञान की शक्ति से, होता निज कल्याण ||1||

इस अखिल विश्व में जब प्रभु हिंसा का राज्य रहा था।
तब सत्य शांति सुख विलय कर पापों का स्त्रोत बहा था ||2||
ले ओट धर्म की पापी, अन्याय पाप करते अति।
थे धर्म बताते वैदिकी, हिंसा हिंसा न भवति ||3||

पशु बलि, जन बलि, यज्ञों में होती थी जब अति भारी।
स्त्री शौद्रनाधीयताम् का आधिपत्य था भारी ||4||
जगती तल पर होता था, हिंसा का तांडव नर्तन।
उत्पीडित विश्व हुआ लख, पापों का भीषण गर्जन ||5||
जब–जग ने त्राहि त्राहि की अरु, पृथ्वी कांपी थर थर।
दिव्य ज्योति दिखलाई, आशा के नभ मण्डल पर ||6||
भारत के स्वर्ण सदन में, अवतरित हुए करुणामय।
श्री वीर दिवाकर प्रगटे तब, विश्व हुआ ज्योतिर्मय ||7||
आगमन वीर का लखकर सन्तुष्ट हुआ जग सारा।
अन्यायी हुए प्रकम्पित, पापों का तजा सहारा ||8||
पतितों दलितों दीनों को, तब प्रभु ने शीघ्र उठाया।
अरु दिव्य अलौकिक अनुपम, जग को सन्देश सुनाया ||9||
पापी को गले लगाना, पर घृणा पाप से करना।
प्रभु ने शुभ धर्म बताया, दुख कष्ट विश्व के हरना ||10||
ये पुण्य पाप की छाया ही, जग में सदा भ्रमाती।
पर द्रव्यों की ममता ही, चारों गति में अटकाती ||11||
अब मोह ममत्व विनाशो, समकित निज उर में लाओ।
तप संयम धारण करके, निर्वाण परम पद पाओ ||12||
है धर्म अहिंसामय ही, रागादिक भाव है हिंसा।
रत्नत्रय सफल तभी है, उर में हो पूर्ण अहिंसा ||13||
निज के स्वरूप को देखो, निज का ही लो अवलम्बन।
निज के स्वभाव से निश्चित, कट जायेंगे भव बन्धन ||14||
हैं जीव समान सभी ही एकेन्द्रिय हो या पंचेन्द्रिय।
हैं शुद्ध सिद्ध निश्चय से चैतन्य स्वरूप अतिन्द्रिय ||15||

केवलि पण्णंतं धम्मं शरणं पव्वज्जामी से।
जग हुआ मधुर गुंजारित, प्रभु की निर्मल वाणी से ||16||
पर हाय सदा हम भूले, उपदेश वीर के अनुपम।
जाते अधर्म के पथ पर, छाया अज्ञान निविड़तम ||17||
हम रुढ़िवाद के बंधन में, जकड़े हुए खड़े हैं।
अवनति के गहरे गड्ढे में, बेसुध हुए पड़े हैं ||18||
इससे अब तो हम चेतें, श्री वीर जयन्ती आई।
भू मण्डल के जीवों को नूतन सन्देशा लाई ||19||
चेतो चेतो हे वीरों अब नहीं समय सोने का।
आलस्य मोह निद्रा में, अवसर है नहीं खोने का ||20||
कर्तव्य धर्ममय पालो, अरु त्यागो कर्म निरर्थक।
तब वीर जयन्ति मनाना होगा, अति अनुपम सार्थक ||21||
श्री वर्धमान सन्मति को, अतिवीर वीर को वन्दन।
है महावीर स्वामी का, अति विनय भाव से अर्चन ||22||
आशीर्वाद दो हे प्रभु हम, द्रव्य दृष्टि बन जायें।
रागादि भाव को जयकर, परमात्म परम पद पायें ||23||

ॐ ह्रीं चैत्र शुक्ल त्रयोदश्यां जन्म मंगलप्राप्त श्री महावीर जिनेन्द्राय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

वीर जयन्ती दे रही शुभ संदेश महान।
प्राणिमात्र में प्रेमकर करो आत्म कल्याण।।

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेन्द्राय नमः।

5 **जहाँ अपनी बुद्धि न चले, बुद्धिमानों की सुनें।**

41. श्री अक्षय तृतीया पर्व पूजन

अक्षय तृतीया पर्व दान का, **ऋषभदेव** ने दान लिया।
नृप श्रेयांस दान दाता थे, जगती ने यशगान किया ||1||
अहो दान की महिमा, तीर्थंकर भी लेते हाथ पसार।
होते पंचाश्चर्य पुण्य का, भरता है अपूर्व भण्डार ||2||
मोक्षमार्ग के महाव्रती को, भाव सहित जो देते दान।
निज स्वरूप जप वह पाते हैं, निश्चितशाश्वत पद निर्वाण ||3||
दान तीर्थ के **कर्ता नृप श्रेयांस,** हुए प्रभु के गणधर।
मोक्ष प्राप्त कर सिद्ध लोक में, पाया शिवपद अविनश्वर ||4||
प्रथम जिनेश्वर आदिनाथ प्रभु तुम्हें नमन है बारम्बार।
गिरि कैलाश शिखर से तुमने, लिया सिद्ध पद मंगलकार ||5||
नाथ आपके चरणाम्बुज में, श्रद्धा सहित प्रणाम करूँ।
त्याग धर्म की महिमा गाऊँ, मैं सिद्धों का धाम वरूँ ||6||
शुभ वैशाख शुक्ल तृतीया का, दिवस पवित्र महान हुआ।
दान धर्म की जय जय गूंजी, अक्षयतृतीया पर्वप्रधान हुआ ||7||
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथ जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।

कर्मोदय से प्रेरित होकर, विषयों का व्यापार किया।
उपादेय को भूल, हेय तत्वों से मैंने प्यार किया।।
जन्म मरण दुख नाश हेतु मैं, आदिनाथ प्रभु को ध्याऊँ।
अक्षय तृतीया पर्व दान का, नृप श्रेयांस सुयश गाऊँ ||1||
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथ जिनेन्द्राय जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं।

मन वच काय की चंचलता, कर्म आश्रव करती है।
चार कषायों की छलना ही, भवसागर दुख भरती है।।
भवाताप के नाश हेतु मैं, आदिनाथ प्रभु को ध्याऊँ।।अक्षय||2||
ॐ ह्रीं आदिनाथ जिनेन्द्राय संसार ताप विनाशनाय चंदनं नि.।
इन्द्रिय विषयों के सुख क्षण भंगुर विद्युतसम चमक अथिर।
पुण्य क्षीण होते ही आते, महा असाता के दिन फिर।।
पद अखंड की प्राप्ति हेतु मैं, आदिनाथ प्रभु को ध्याऊँ।।अक्षय||3||
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथ जिनेन्द्राय अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं नि.।
शील विनय व्रत तप धारण भी, यदि सच्चाई परमार्थ नहीं।
बाह्य क्रिया में ही उलझे, वह भी सच्चा पुरुषार्थ नहीं।।
कामबाण के नाश हेतु मैं, आदिनाथ प्रभु को ध्याऊँ।।अक्षय||4||
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथ जिनेन्द्राय कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।
विषय लोलुपी भोगों की ज्वाला में, जल जल दुख पाता।
मृगतृष्णा के पीछे पागल, नर्क निगोदादिक जाता।।
क्षुधाव्याधि के नाश हेतु मैं, आदिनाथ प्रभु को ध्याऊँ।।अक्षय||5||
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथ जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।
ज्ञान स्वरूप आत्मा का, जिनको श्रद्धान नहीं होता।
भव भव में ही भटका करता है, निर्वाण नहीं होता।।
मोह तिमिर के नाश हेतु मैं, आदिनाथ प्रभु को ध्याऊँ।।अक्षय||6||
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथ जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।
कर्म फलों का वेदन करके, सुखी दुखी जो होता है।
अष्ट प्रकार कर्म का बन्धन, सदा उसी को होता है।।
कर्म शत्रु नाश हेतु मैं, आदिनाथ प्रभु को ध्याऊँ।।अक्षय ||7||
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथ जिनेन्द्राय अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।

जो कर्मों से विरक्त होकर, बन्धन का अभाव करता।
प्रज्ञा छैनी ले बन्धन को, पृथक शीघ्र निज से करता।।
महामोक्ष फल प्राप्ति हेतु मैं, आदिनाथ प्रभु को ध्याऊँ।।अक्षय||8||
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथ जिनेन्द्राय मोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।
पर मेरा क्या कर सकता है, मैं पर का क्या कर सकता।
यह निश्चय करने वाला ही, भव अटवी के दुख हरता।।
पदअनर्घ की प्राप्ति हेतु मैं, आदिनाथ प्रभु को ध्याऊँ।
अक्षय तृतीया पर्व दान का, नृप श्रेयांस सुयश गाऊँ ||9||
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

जयमाला

चार दान दो जगत में, जो चाहो कल्याण।।
औषधिभोजन अभय, अरु सद्शास्त्रों का दान ||1||
पुण्य पर्व अक्षय तृतीया का, हमें दे रहा है ये ज्ञान।
दान धर्म की महिमा अनुपम, श्रेष्ठ दान दो बनो महान ||2||
दान धर्म की गौरव गाथा का, प्रतीक है यह त्यौहार।
दान धर्म का शुभ प्रेरक है, सदा दान की जय जयकार ||3||
आदिनाथ ने अर्ध वर्ष तक, किये तपस्या मय उपवास।
मिली न विधि फिर अन्तराय, होते होते बीते सत मास ||4||
मुनि आहार दान देने की, विधि थी नहीं किसी को ज्ञात।
मौन साधना में तन्मय हो, प्रभु विहार करते प्रख्यात ||5||
नगर **हस्तिनापुर के अधिपति, सोम** ओर **श्रेयांस** सुभ्रात।
ऋषभदेव के दर्शन कर, कृत कृत्य हुए पुलकित अभिजात ||6||

श्रेयांसराज को पूर्व जन्म का, स्मरण हुआ तत्क्षण विधिकार।
विधिपूर्वक पड़गाहा प्रभु को, दिया **इक्षु रस** का **आहार** ||7||
पंचाश्चर्य हुए प्रांगण में, हुआ गगन में जय जयकार।
धन्य धन्य श्रेयांस, दान का तीर्थ चलाया मंगलकार ||8||
दान पुण्य की यह परम्परा, हुई जगत में शुभ प्रारम्भ।
हो निष्काम भावना सुन्दर, मन से लेश नहीं कुछ दम्भ ||9||
चार भेद हैं दान धर्म के, **औषधि शास्त्र अभय आहार**।
हम सुपात्र के योग्य दान दें, बनें जगत में परम उदार ||10||
धन वैभव तो नाशवान है, अतः करें जी भरके दान।
इस जीवन में दान कार्यकर, करें स्वयं अपना कल्याण ||11||
अक्षय तृतीया के महत्व को, यदि निज में प्रगटायेंगे।
निश्चित ही ऐसा दिन आयेगा, हम अक्षयपद पायेंगे ||12||
हे प्रभु आदिनाथ मंगलमय, हमको भी ऐसा वर दो।
सम्यक् ज्ञान महान सूर्य का, अन्तर में प्रकाश कर दो ||13||
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ्य पद प्राप्तये पूर्णार्घ्यं नि.।
अक्षय तृतीया पर्व की महिमा अपरम्पार।
त्याग धर्म जो साधते हो जाते भवपार।।
इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्
जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री आदिनाथ जिनेन्द्राय नमः।

42. श्री श्रुतपंचमी पर्व पूजन

स्याद्वादमय द्वादशांग युत, माँ जिनवाणी कल्याणी।
जो भी शरण हृदय से लेता, हो जाता केवलज्ञानी ||1||

जय जय जय हितकारी, शिव सुखकारी माता जय जय जय।
कृपा तुम्हारी से ही होता, भेद ज्ञान का सूर्य उदय ||2||
श्री **धरसेनाचार्य** कृपा से, मिला परम जिनश्रुत का ज्ञान।
भूतबली मुनि **पुष्पदन्त** ने, **षटखंडागम** रचा महान ||3||
अंकलेश्वर में यह ग्रंथ, हुआ था पूर्ण आज के दिन।
जिनवाणी लिपि बद्ध हुई थी, पावन परम आज के दिन ||4||
ज्येष्ठ शुक्लपंचमी दिवस, जिनश्रुत का जय जयकार हुआ।
श्रुत पंचमी पर्व पर, श्री जिनवाणी का अवतार हुआ ||5||
ॐ ह्रीं श्री परमश्रुत षट् खण्डागम अत्र अवतर अवतर संवौषट्, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।

शुद्ध स्वानुभव जल धारा से, यह जीवन पवित्र कर लूँ।
साम्य भाव पीयूष पान कर, जन्म जरामृत दुख हर लूँ।।
श्रुत पंचमी पर्व शुभ उत्तम, जिनश्रुत को वंदन कर लूँ।
षट् खण्डागम, धवल, जय धवल, महाधवल, पूजन कर लूँ||1||
ॐ ह्रीं श्री परमश्रुत षट्खण्डागमाय जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

शुद्ध स्वानुभव उत्तम पावन, चन्दन से अर्चित कर लूँ।
भव दावानल के ज्वालामय, अघ संतापों को हर लूँ।।श्रुत.||2||
ॐ ह्रीं श्री परमश्रुत षट्खण्डागमाय संसार ताप विनाशनाय चंदनं नि. स्वाहा।

शुद्ध स्वानुभव को परमोत्तम, अक्षत से सुरभित कर लूँ।
महाशील गुण के प्रताप से, मैं कंदर्प दर्प हर लूँ।।श्रुत.||3||
ॐ ह्रीं श्री परमश्रुत षट्खण्डागमाय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि.।

शुद्ध स्वानुभव के पुष्पों से, निज अन्तर सुरभित कर लूँ।
महाशील गुण के प्रताप से, मैं कंदर्प दर्प हर लूँ।।श्रुत.||4||
ॐ ह्रीं श्रीपरमश्रुत षट्खण्डागमाय कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।
शुद्ध स्वानुभव के अति उत्तम, प्रभु नैवेद्य प्राप्त कर लूँ।
अमल अतीन्द्रिय निज स्वभाव से, दुखमय क्षुधाव्याधि हर लूँ।।श्रुत.||5||
ॐ ह्रीं श्रीपरमश्रुत षट्खण्डागमाय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।
शुद्ध स्वानुभव के प्रकाशमयदीप, प्रज्जवलित मैं कर लूँ।
मोह तिमिर अज्ञान नाश कर, निज कैवल्य ज्योति वर लूँ।।श्रुत.||6||
ॐ ह्रीं श्री परमश्रुत षट्खण्डागमाय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।
शुद्ध स्वानुभव गन्ध सुरभिमय, ध्यान धूप उर में भर लूँ।
संवर सहित निर्जरा द्वारा, मैं वसु कर्म नष्ट कर लूँ।।श्रुत.||7||
ॐ ह्रीं श्रीपरम श्रुत षट्खण्डागमाय अष्ट कर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।
शुद्ध स्वानुभव का फल पाऊँ, मैं लोकाग्रशिखर वर लूँ।
अजर अमर अविकल अविनाशी, पदनिर्वाण प्राप्त कर लूँ।।श्रुत.||8||
ॐ ह्रीं श्री परमश्रुत षट्खण्डागमाय महा मोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।
शुद्ध स्वानुभव दिव्य अर्घ ले, रत्नत्रय सुपूर्ण कर लूँ।
भव समुद्र को पार करूँ प्रभु, निजअनर्घ पद मैं वर लूँ।।
श्रुत पंचमी पर्व शुभ उत्तम, जिनश्रुत को वंदन कर लूँ।
षट्खण्डागम धवल जयधवल, महाधवल पूजन कर लूँ ||9||
ॐ ह्रीं श्री परमश्रुत षट्खण्डागमाय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

जयमाला

श्रुत पंचमी पर्व अति पावन है श्रुत के अवतार का।
गूंजा जयजयकारजगत् में, जिनश्रुत जयजयकार का ||1||

ऋषभदेव की दिव्य ध्वनि का, लाभ पूर्ण मिलता रहा।
महावीर तक जिनवाणी का, विमल वृक्ष खिलता रहा ||2||
हुए केवली अरु श्रुतकेवलि, ज्ञान अमर फलता रहा।
फिर आचार्यों के द्वारा यह, ज्ञान दीप जलता रहा ||3||
भव्यों में अनुराग जगाता, मुक्ति वधू के प्यार का।
श्रुत पंचमी पर्व अति पावन है, श्रुत के अवतार का ||4||
गुरु परम्परा से जिनवाणी, निर्झर सी झरती रही।
मुमुक्षुओं को परम मोक्ष का, पथ प्रशस्त करती रही||5||
किन्तु काल की घड़ी मनुज की, स्मरण शक्ति हरती रही।
श्री **धरसेनाचार्य** हृदय में, करुण टीस भरती रही||6||
द्वादशांग का लोप हुआ तो, क्या होगा संसार का।
श्रुत पंचमी पर्व अति पावन है, श्रुत के अवतार का ||7||
शिष्य **भूतबली पुष्पदन्त** की हुई परीक्षा ज्ञान की।
जिनवाणी लिपिबद्ध हेतु श्रुत, विद्या विमल प्रदान की ||8||
ताड़ पत्र पर हुई अवतरित, वाणी जन कल्याण की।
षट्खण्डागम महाग्रन्थ, करुणानुयोग जय ज्ञान की ||9||
ज्येष्ठ शुक्ल पंचमी दिवस था, सुरनर मंगलाचार का।
श्रुत पंचमी पर्व अति पावन है, श्रुत के अवतार का ||10||
धन्य **भूतबली पुष्पदन्त**, जय श्री **धरसेनाचार्य** की।
लिपि परम्परा स्थापित करके, नई क्रांति साकार की ||11||
देवों ने पुष्पों की वर्षा नभ से अगणित बार की।
धन्य धन्य जिनवाणी माता, निज पर भेद विचार की ||12||
ऋणी रहेगा विश्व तुम्हारे, निश्चय और व्यवहार का।
श्रुत पंचमी पर्व अति पावन है, श्रुत के अवतार का ||13||

धवला टीका वीरसेन कृत, बहत्तर हजार श्लोक।
जय धवला जिनसेन वीरकृत, उत्तम साठ हजार श्लोक ||14||
महाधवल हैं देवसेन कृत, चालीस हजार श्लोक।
विजयधवलअरु **अतिशय धवल**, नहीं उपलब्ध एक भी श्लोक ||15||
षट्खण्डागम टीकाएँ पढ़, मन होता भव पार का।
श्रुत पंचमी पर्व अति पावन है, श्रुत के अवतार का ||16||
फिर तो ग्रन्थ हजारों लिक्खे, ऋषि मुनियों ने ज्ञान प्रधान।
चारों ही अनुयोग रचे, जीवों पर करके करुणा दान ||17||
पुण्य कथा प्रथमानुयोग, द्रव्यानुयोग है तत्व प्रधान।
ऐक्सरे करुणानुयोग, चरणानुयोग कैमरा महान ||18||
यह परिणाम नापता है, वह बाह्य चारित्र विचार का।
श्रुत पंचमी पर्व अति पावन है श्रुत के अवतार का ||19||
जिनवाणी की भक्ति करें, हम जिनश्रुत की महिमा गायें।
सम्यग्दर्शन के वैभव, से भेदज्ञान निधि को पायें ||20||
रत्नत्रय का अवलम्बन लें, जिन स्वरूप में रम जायें।
मोक्षमार्ग पर चलें निरंतर, फिर न जगत में भरमायें ||21||
धन्य धन्य अवसर आया है, अब निज के उद्धार का।
श्रुत पंचमी पर्व अति पावन है श्रुत के अवतार का ||22||
ॐ ह्रीं श्री परम श्रुत षट्खण्डागमाय पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

श्रुत पंचमी सुपर्व पर करो तत्व का ज्ञान।
आत्म तत्व का ध्यान कर पाओ पद निर्वाण।।

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्
जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री परमश्रुतेभ्यो नमः।

43. श्री वीर शासन जयंती पर्व पूजन

वर्धमान अतिवीर प्रभु, सन्मति महावीर स्वामी।
वीतराग सर्वज्ञ जिनेश्वर, अंतिम तीर्थंकर नामी ||1||
श्री अरिहंत देव मंगलमय, स्वपर प्रकाशक गुणधामी।
सकल लोक के ज्ञाता दृष्टा, महापूज्य अन्तर्यामी ||2||
महावीर शासन का पहला, दिन श्रावण कृष्णा एकम्।
शासन वीर जयन्ती आती है, प्रतिवर्ष सुपावनतम ||3||
विपुलाचल पर्वत पर प्रभु के समवशरण में मंगलकार।
खिरी दिव्य ध्वनि शासन, वीर जयन्ती पर्व हुआ साकार ||4||
प्रभु चरणाम्बुज पूजन करने का, आया उर में शुभ भाव।
सम्यक्ज्ञान प्रकाश मुझे दो, राग द्वेष का करूँ अभाव ||5||

ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।

भाग्यहीन नर रत्न स्वर्ण को, जैसे प्राप्त नहीं करता।
ध्यान हीन मुनि निज आतम का, त्यों अनुभव कभी नहीं करता।।
शासन वीर जयन्ती पर, जल चढ़ा वीर का ध्यान करूँ।
खिरी दिव्य ध्वनि प्रथम देशना, सुन अपना कल्याण करूँ ||1||

ॐ ह्रीं श्रीमहावीर जिनेन्द्राय जन्मजरा मृत्यु विनाशनाय जलंनि.।

विविध कल्पना उठती मनमें, वे विकल्प कहलाते हैं।
बाह्य पदार्थों में ममत्व से, मन के संकल्प रुलाते हैं।
शासन वीर जयन्ती पर चन्दन अर्पित कर ध्यान करूँ।।खिरी||2||

ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेन्द्राय संसार ताप विनाशनाय चंदनं नि.।

अंतरंग बहिरंग परिग्रह त्यागूँ, मैं निर्ग्रंथ बनूँ।
जीवन मरण, मित्र अरि, सुख दुख लाभ हानि में साम्य रहूँ।।
शासनवीर जयन्ती पर, कर अक्षत भेंट, स्वध्यान करूँ।।खिरी||3||

ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेन्द्राय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि.।

शुद्ध सिद्ध ज्ञानादि गुणों से, मैं समृद्ध हूँ देह प्रमाण।
नित्य असंख्य प्रदेशी निर्मल हूँ, अमूर्तिक महिमावान।।
शासन वीर जयन्ती पर, कर भेंट पुष्प निज ध्यान करूँ।।खिरी||4||

ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेन्द्राय कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।

परम तेज हूँ परम ज्ञान हूँ, परम पूर्ण हूँ बाह्य स्वरूप।
निरालम्ब हूँ निर्विकार हूँ, निश्चय से मैं परम अनूप।।
शासन वीर जयन्ती पर, नैवेद्य चढ़ा निज ध्यान करूँ।।खिरी||5||

ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।

स्वपर प्रकाशक केवलज्ञानमयी, निज मूर्ति अमूर्ति महान।
चिदानन्द टंकोत्कीर्ण हूँ, ज्ञान ज्ञेय ज्ञाता भगवान।।
शासन वीर जयन्ती पर मैं, दीप चढ़ा निज ध्यान करूँ।।खिरी||6||

ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।

द्रव्य कर्म ज्ञानावरणादिक, देहादिक नोकर्म विहीन।
भाव कर्म रागादिक से मैं, पृथक आत्मा ज्ञान प्रवीण।।
शासन वीर जयन्ती पर मैं, धूप चढ़ा निज ध्यान करूँ।।खिरी||7||

ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेन्द्राय अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।

कर्म मल रहित शुद्ध ज्ञानमय, परममोक्ष है मेरा धाम।
भेद ज्ञान की महाशक्ति, से पाऊँगा अनन्त विश्राम।।
शासन वीर जयन्ती पर सुफल चढ़ा निज ध्यान करूँ।।खिरी||8||

ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेन्द्राय मोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।

मात्र वासनाजन्य कल्पना, है पर द्रव्यों में सुख बुद्धि।
इन्द्रियजन्य सुखों के पीछे, पाई किंचित नहीं विशुद्धि।।
शासन वीर जयन्ती पर मैं अर्घ चढ़ा निजध्यान करूँ।
खिरी दिव्य ध्वनि प्रथम देशना, सुन अपना कल्याण करूँ ||9||
ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेन्द्राय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

जयमाला

विपुलाचल के गगन को वन्दू बारम्बार।
सन्मति प्रभु की दिव्य ध्वनि जहाँ हुई साकार ||1||
महावीर प्रभु दीक्षा लेकर, मौन हुए तप संयम धार।
परिषह उपसर्गों को जय कर, देश–देश में किया विहार ||2||
द्वादश वर्ष तपस्या करके, ऋजुकूला सरिता तट आये।
क्षपक श्रेणी चढ़ शुक्ल ध्यान से, कर्मघातिया बिनसाये ||3||
स्व पर प्रकाशक परम ज्योतिमय प्रभु को केवलज्ञान हुआ।
इन्द्रादिक को समवशरण रच, मन में हर्ष महान हुआ ||4||
बारह सभा जुड़ी अति सुन्दर, सबके मन का कमल खिला।
जनमानस को प्रभु की दिव्य ध्वनि का, किन्तु न लाभ मिला ||5||
छयासठ दिन तक रहे मौन प्रभु, दिव्य ध्वनि का मिला न योग।
अपने आप स्वयं मिलता है, निमित्त नैमित्तिक संयोग ||6||
राजगृही के विपुलाचल पर, प्रभु का समवशरण आया।
अवधिज्ञान से जान इन्द्र ने, गणधर का अभाव पाया ||7||
बड़ी युक्ति से इन्द्रभूति, गौतम ब्राह्मण को वह लाया।
गौतम ने दीक्षा लेते ही, ऋषि गणधर का पद पाया ||8||

तत्क्षण खिरी दिव्यध्वनि, प्रभु की द्वादशांगमय कल्याणी।
रच डाली अन्तर मुहर्त में, गौतम ने श्री जिनवाणी ||9||
सात शतक लघु और महाभाषा, अष्टादश विविध प्रकार।
सब जीवों ने सुनी दिव्य ध्वनि, अपने उपादान अनुसार ||10||
विपुलाचल पर समवशरण का, हुआ आज के दिन विस्तार।
प्रभु की पावन वाणी सुनकर गूँजी, नभ से जय जयकार ||11||
जन जन में नव जागृति जागी, मिटा जगत का हाहाकार।
जियो और जीने दो का, यह संदेश हुआ साकार ||12||
धर्म अहिंसा सत्य और अस्तेय, मनुज जीवन का सार।
ब्रह्मचर्य अपरिग्रह से ही होगा, जीव मात्र से होगा प्यार ||13||
घृणा पाप से करो सदा ही, किन्तु नहीं पापी से द्वेष।
सभी जीव को निज सम समझो, यही वीर का था उपदेश ||14||
इन्द्रभूति गौतम ने गणधर बनकर, गूंथी जिनवाणी।
इसके द्वारा परमात्मा बन सकता, कोई भी प्राणी ||15||
मेघ गर्जना करती श्री, जिनवाणी का वह चला प्रवाह।
पाप ताप संताप नष्ट हो गये, मोक्ष की जागी चाह ||16||
प्रथमं, करणं, चरणं, द्रव्यं ये अनुयोग बताये चार।
निश्चय नय सत्यार्थ बताया, असत्यार्थ सारा व्यवहार ||17||
तीन लोक षट द्रव्यमयी, है सात तत्व की श्रद्धा सार।
नव पदार्थ छह लेश्या जानो, पंच महाव्रत उत्तम धार ||18||
समिति गुप्ति चारित्र पालकर तप संयम धारो अविकार।
परम शुद्ध निज आत्म तत्व, आश्रय से हो जाओ भवपार ||19||

वर्धमान अतिवीर वीर की पूजन का है हर्ष अपार।
काल लब्धि प्रभु मेरी आई, शेष रहा थोड़ा संसार ||20||
उस वाणी को मेरा वंदन, उसकी महिमा अपरम्पार।
सदा वीर शासन की पावन, परमजयन्ती की हो जय जयकार ||21||

ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेन्द्राय अनर्घ पद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

दिव्य ध्वनि प्रभु वीर की देती सौख्य अपार।
आत्म ज्ञान की शक्ति से, खुले मोक्ष का द्वार।।

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्

जाप्यामंत्र : ॐ ह्रीं श्री सम्पूर्ण द्वादशांगाय नमः।

44. श्री पार्श्वनाथ मोक्ष कल्याणक पूजन

पार्श्वनाथ को नमन करूँ हर्षाय के।
प्रभु चरणों में नाचूँ गाय बजाय के ||1||
महामोक्ष कल्याणक पूजूँ चाव से।
ज्ञान सुधारस पाऊँ आत्मस्वभाव से ||2||
गिरि सम्मेदशिखर से निर्वाण गए प्रभो।
स्वर्णभद्र शुभकूट श्रेष्ठ पूजूँ विभो ||3||
चरण चिन्ह की ऊर्ध्व दिशा में आप हैं।
समश्रेणी में सिद्धशिला को प्राप्त हैं ||4||
आत्मज्ञान रवि किरण प्राप्त मैं भी करूँ।
सकल कर्म के बंधन प्रभु मैं भी हरूँ ||5||
ध्रुव जीवत्व शक्ति भी अपरम्पार है।
निज निर्वाण प्राप्ति का नाथ विचार है ||6||

अष्टद्रव्य प्रभु चरण चढ़ाऊँ विनय कर।
निमिषमात्र में जुड़ूँ अनंत उपाय कर ||7||
बार बार मैं विनय सहित वंदन करूँ।
अष्ट कर्म के सारे ही बंधन हरूँ ||8||

दोहा

पार्श्व प्रभु पूजन करूँ, मन वच काय संवार।
परम मोक्ष कल्याण की, महिमा अपरम्परार।।

ॐ ह्रीं श्री मोक्ष कल्याणक प्राप्त श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट्। ॐ ह्रीं श्री मोक्ष कल्याणक प्राप्त श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। ॐ ह्रीं श्री मोक्ष कल्याणक प्राप्त श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्र अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

निर्विकल्प निजरस धारा जल, पावन चरण चढ़ाऊँ मैं।
प्रथम जीत मिथ्यात्व भाव को, निज के ही गुण गाऊँ मैं।।
महामोक्ष कल्याण विभूषित, पार्श्वनाथ को करूँ नमन।
स्वर्णभद्र प्रिय कूट मनोहर, गिरि सम्मेदाचल को वन्दन ||1||

ॐ ह्रीं श्री मोक्ष कल्याणक प्राप्त श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

निर्विकल्प निजरस चंदन प्रभु, सादर भेंट चढ़ाऊँ मैं।
मोक्षमार्ग पर आप कृपा से, अपने चरण बढ़ाऊँ मैं ।।महा.||2||

ॐ ह्रीं श्री मोक्ष कल्याणक प्राप्त श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय संसारताप विनाशनाय चंदनं नि स्वाहा।

(6) ज्यादा बोलना और जोर से बोलना शक्ति एवं प्रभाव को कम कर देता है।

निर्विकल्प अक्षत स्वभावमय, खोज–खोज कर लाऊँ मैं।
अविरतिभाव सदा नाशूँ, संयमपथ अपनाऊँ मैं।।महा।।3।।

ॐ ह्रीं श्री मोक्ष कल्याणक प्राप्त श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं नि. स्वाहा।

निर्विकल्प सुरभित पुष्पों से, अंतर सुरुचि जगाऊँ मैं।
सर्व प्रमाद अभाव करूँ प्रभु, शीलव्रती बन जाऊँ मैं।।महा।।4।।

ॐ ह्रीं श्री मोक्ष कल्याणक प्राप्त श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय कामवाण विध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

निर्विकल्प निजरस चरु लाऊँ, परम् तत्त्व बन जाऊँ मैं।
क्षुधा रोग सर्वांश नाश कर, निज स्वभाव रस पाऊँ मैं।।महा।।5।।

ॐ ह्रीं श्री मोक्ष कल्याणक प्राप्त श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।

निर्विकल्प ज्योतिर्मय दीपक, ज्ञान भाव के लाऊँ मैं।
सर्व कषाय भाव क्षय, करके केवलज्ञान पाऊँ मैं।।महा।।6।।

ॐ ह्रीं श्री मोक्ष कल्याणक प्राप्त श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

निर्विकल्प निरुपाधि ध्यानमय, परम् समाधि सजाऊँ मैं।
अष्टकर्म अरि परजय पाऊँ, भव की ज्वाल बुझाऊँ मैं।।महा ।।7।।

ॐ ह्रीं श्री मोक्ष कल्याणक प्राप्त श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अष्ट कर्म विध्वंसनाय धूपं नि. स्वाहा।

निर्विकल्प रसमय फल लाऊँ, महामोक्ष फल पाऊँ मैं।
यह संसार अभाव करूँ मैं, योगरहित हो जाऊँ मैं।।महा।।8।।

ॐ ह्रीं श्री मोक्ष कल्याणक प्राप्त श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय मोक्षफल प्राप्तये फलं नि. स्वाहा।

निर्विकल्प अर्घ्यावलि लाऊँ, सविनय चरण चढ़ाऊँ मैं।
पद अनर्घ्य अविनश्वर पाऊँ, सविनय चरण चढ़ाऊँ मैं।।
निज प्रभु के गुण गाते–गाते, निज में ही रम जाऊँ मैं।
सम श्रेणी में नाथ विराजे, उनकी छाया पाऊँ मैं।।
महामोक्ष कल्याण विभूषित, पार्श्वनाथ को करूँ नमन।
स्वर्णभद्र प्रिय कूट मनोहर, गिरि सम्मेदाचल वन्दन।।
महामोक्ष कल्याण विभूषित, पार्श्वनाथ को करूँ नमन।
स्वर्णभद्र प्रिय कूट मनोहर, गिरि सम्मेदाचल वन्दन ।।9।।

ॐ ह्रीं श्री मोक्ष कल्याणक प्राप्त श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

वीर छन्द

श्रावण शुक्ल सप्तमी के दिन, **सम्मेदाचल** किया पवित्र।
दशों दिशाओं ने गुण गाए, देखे सिद्धपुरी के चित्र ।।1।।
कूट स्वर्णभद्र की महिमा, जगती में विख्यात हुई।
इन्द्र सुरों ने शीश झुकाए, सिद्ध अवस्था प्राप्त हुई ।।2।।
हुआ उजाला जल–थल–नभ मंडल में जय–जयकार हुई।
सिद्धपुरी की महिमा अनुपम, गरिमामय साकार हुई ।।3।।
महामोक्ष कल्याण महोत्सव, त्रिभुवन में सानंद हुआ।
जितने सम्यक्दृष्टि जीव थे, सबको परमानंद हुआ ।।4।।
भक्तिभाव से मैं भी पूजूँ, पार्श्वनाथ के चरण कमल।
कर्मबंध की तोड़ श्रृंखला पाऊँ, सिद्ध स्वपद अविचल ।।5।।

7 **गुण दूसरों के देखें, अवगुण अपने देखें।**

दोहा

महा अर्घ्य अर्पित करूँ, पार्श्वनाथ को आज।
बाधाएँ सब जीत कर, पाऊँ निजपद राज।।

ॐ ह्रीं श्री श्रावण शुक्ल सप्तम्याम् मोक्षकल्याणक मंडित श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय महाअर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

पार्श्वनाथ तीर्थंकर को, बदूँ बार बार।
तुव पद चिन्हों पर चलूँ, हो जाऊँ भव पार।।

छंद ताटंक

पार्श्वनाथ की सुनो कहानी, मुक्ति मार्ग कैसे पाया।
पशु पर्याय सफल की अपनी, मिथ्या भ्रम तम विनशाया ||1||
मूल भूल पल भर में नाशी, एक समय में ज्ञान लिया।
सप्त तत्व की श्रद्धा करके, निज स्वरूप का भान किया ||2||
गज होकर भी एक देश, संयमव्रत धार हुए महान।
मंद कषाय भाव से त्यागे, शुभ भाव से अपने प्राण ||3||
पाया स्वर्गलोक का वैभव, किन्तु न उसमें मत्त हुए।
निज स्वभाव साधन के द्वारा, निज स्वभाव में रक्त हुए ||4||
नव भव तक वे मनुज हुए, वैभव सम्पन्न इन्द्र हुए।
शुद्ध आत्मा का चिन्तन कर, ऊर्ध्व लोक के चन्द्र हुए ||5||
काललब्धि पुरुषार्थ पूर्वक, पायी दशा विशुद्धि स्वरूप।
प्रतिपल प्रतिक्षण ध्याते थे, वे निज चैतन्य चंद्र चिद्रूप ||6||
आनत स्वर्ग त्याग कर आए, **माँ वामा** उर धन्य किया।
अश्वसेन नृप हुए हर्ष से, पुलकित परमानंद लिया ||7||

वाराणसी नगर की शोभा, चित्र विचित्र प्रसिद्ध हुई।
देवों द्वारा पन्द्रह मास, रत्न वर्षा अति वृद्ध हुई ||8||
जन्म समय यह त्रिभुवन नाचा, इन्द्रादिक सुर झूम उठे।
स्वर्ण कलश क्षीरोदधि जल ने प्रभु चरणों को चूम लिये ||9||
गिरि सुमेरु जन्मोत्सव करके इन्द्र सुरों ने नमन किया।
निकट भव्य जीवों ने, तत्क्षण मिथ्याभ्रम को वमन किया ||10||
बाल ब्रह्मचारी, व्रतधारी प्रभु, को जब जागा वैराग्य।
छोड़ा राज्य सौख्य तत्क्षण ही, जागा संयम का सौभाग्य ||11||
पंचमहाव्रत धारा प्रभु ने, लौकान्तिक सुर हर्षाये।
पंचमुष्टि कचलोच देख सुर इन्द्रों ने मंगल गाये ||12||
पार्श्वनाथ प्रभु ध्यानलीन हो, करने लगे सुतत्वविचार।
कमठ जीव ने पूर्व वैरवश, किया घोर उपसर्ग अपार ||13||
अहिक्षेत्र में जय करके, उपसर्ग, कमठ का हुए महान्।
चार घातिया तत्क्षण नाशे, पाया निर्मल केवलज्ञान ||14||
केवलज्ञान सहज उपजाया, रचा इन्द्र ने समवशरण।
खिरी दिव्यध्वनि मंगलवर्धक, पायी जग ने ज्ञान शरण ||15||
धर्मचक्र का किया प्रवर्तन, देश–देश में हुआ विहार।
गिरि सम्मेदशिखर पर्वत पर, आए नाथ मुक्ति के द्वार ||16||
चऊ अघातिया को क्षय करके, खोला स्वयं मुक्ति का द्वार।
सिद्धशिला पर आप विराजे, ले अनंत सौख्य शिवकार ||17||
कूट स्वर्णभद्र पर गूंजा, इन्द्र सुरों का जय–जयकार।
त्रिभुवन ने ज्ञानामृत वर्षा पाई, पावन, रस की धार ||18||
ऐसा मोक्ष महोत्सव मैंने भी, देखा हो स्यात कभी।
पर मिथ्यात्व भाव ना छोड़ा, यद्यपि किये उपाय सभी ||19||

किन्तु आज प्रभु पूजन करके, अनायास जागा उर ज्ञान।
कृपा आपकी पायी स्वामी, पायी दशा अपूर्व महान् ||20||
ज्ञान गगन से मेह बरसे, मेरे सब संशय दूर करूँ।
इस पथ पर चल कर हे स्वामी, अष्टकर्म सब चूर्ण करूँ ||21||
शक्ति अनंतानंत किन्तु हैं, सैंतालीस शक्ति अविशेष।
अपलक तुम्हें निहारूँ स्वामी, धारूँ भव्य दिगम्बर वेश ||22||
समयसार की महिमा गाऊँ, समयसार मय बन जाऊँ।
भेदज्ञान की कला प्राप्त कर, निज आतम में रम जाऊँ ||23||
अविरल धारा बहे ज्ञान की, शुद्ध भाव पाऊँ भरपूर।
अष्टकर्म कालिमा नष्ट कर, राग–द्वेष कर दूँ चकचूर ||24||
गुणस्थान चौदह से ऊपर, जाकर सिद्धलोक पाऊँ।
सिद्धशिला सिंहासन राजूँ, सदा सदा शिवसुख पाऊँ ||25||
आत्म लक्ष्मी पाऊँ हे स्वामी, ज्ञानलक्ष्मी के द्वारा।
दो वरदान ज्ञान श्रद्धा का, जिससे काटूँ भवकारा ||26||
आत्म प्रतीति बिना कोई भी, मुक्ति नहीं पा सकता है।
सम्यक् मुक्तिमार्ग पाए बिन, मोक्ष नहीं जा सकता है ||27||
पर अवलम्बी दृष्टि न त्यागी, तो जिनवाणी भी है व्यर्थ।
दृष्टि स्वावलम्बी होगी तो, श्री जिनवाणी है अव्यर्थ ||28||
जड़ को सुख–दुख कभी न होता, सुख–दुख जीवों को होता।
शुद्ध जीव संयोग रहित है, ऐसा ज्ञान श्रेष्ठ होगा ||29||
मणि रत्नो के दीप जलाऊँ, कल्पवृक्ष के पुष्प सजा।
अनुभव रस नैवेद्य बनाऊँ, समवशरण में वाद्य बजा ||30||
जिन अवलोकन में अखंड, निज रस धारा बहती छविमान।
पर अवलोकन दुखदायी है, इस रुचि का कर दूँ अवसान ||31||

निज परमात्म दशा प्रगटाऊँ, हे स्वामी ऐसा वर दो।
संवर सहित निर्जरा पाऊँ, ज्ञान भाव का निर्झर दो ||32||
ॐ ह्रीं श्री मोक्ष कल्याणक प्राप्त श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परम् शान्त सुख समुद्र, प्राप्त करूँ नाथ।
स्व पर भेदज्ञान दो, महान् पार्श्वनाथ ||1||
क्रूर मिथ्यात्व भाव, आज करूँ नष्ट।
कर्म प्रकृति बीन बीन कर, करूँ विनष्ट ||2||
मोक्षकल्याण आपका, महा महान्।
सर्वश्रेष्ठ मंगलात्मक, प्रसिद्ध जान ||3||
प्राप्त करूँ एक दिन, दो यही आशीष।
पार्श्वनाथ तीन लोकपति, महान् ईश ||4||

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्।
जाप्यमंत्र : श्री पार्श्वनाथ तीर्थंकराय नमः

45 - धन्य धन्य वीतराग वाणी

धन्य–धन्य वीतराग वाणी, अमर तेरी जग में कहानी।
चिदानन्द की राजधानी, अमर तेरी जग में कहानी।।टेक।।
उत्पाद–व्यय अरु ध्रौव्य स्वरूप, वस्तु बखानी सर्वज्ञ भूप।
स्याद्वाद तेरी निशानी, अमर तेरी जग में कहानी ||1||
नित्य–अनित्य अरु एक अनेक, वस्तु कंथचित भेद–अभेद।
अनेकांत रूपा बखानी, अमर तेरी जग में कहानी ||2||
भाव शुभाशुभ बंध स्वरूप, शुद्ध चिदानंदमय मुक्तिरूप।
मारग दिखाती है वाणी, अमर तेरी जग में कहानी ||3||
चिदानंद चैतन्य आनंद धाम, ज्ञान स्वभावी निजातम राम।
स्वाश्रय से मुक्ति बखानी, अमर तेरी जग में कहानी ||4||

46 - श्री रक्षाबन्धन पर्व पूजन

जय अकम्पनाचार्य आदि, सात सौ साधु मुनिव्रतधारी।
बलि ने कर **नरमेध यज्ञ**, उपसर्ग किया भीषण भारी ||1||
जय जय **विष्णुकुमार महामुनि**, ऋद्धि विक्रिया के धारी।
किया शीघ्र उपसर्ग निवारण, वात्सल्य करुणा धारी ||2||
रक्षाबन्धन पर्व मना मुनियों, का जय जयकार हुआ।
श्रावण शुक्ल पूर्णिमा के दिन, घर घर मंगलाचार हुआ ||3||
श्री मुनि चरण कमल मैं वन्दूँ, पाऊँ प्रभु सम्यक्‌दर्शन।
भक्ति भाव से पूजन करके, निज स्वरूप में रहूँ मगन ||4||

ॐ ह्रीं श्री विष्णुकुमार एवं अकम्पनाचार्य आदि सप्तशतकमुनि अत्र अवतर अवतर संवौषट्, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

जन्म मरण के नाश हेतु, प्रासुक जल करता हूँ अर्पण।
रागद्वेष परणति अभावकर, निज परणति में करूँ रमण।।
श्री अकम्पनाचार्य आदि मुनि, सप्तशतक को करूँ नमन।
मुनि उपसर्ग निवारक, विष्णुकुमार महामुनि को वन्दन ||1||

ॐ ह्रीं श्री विष्णुकुमार एवं अकम्पनाचार्यादि सप्तशतक मुनिभ्यो जलं नि. स्वाहा।

भव सन्ताप मिटाने को, मैं चन्दन करता हूँ अर्पण।
देह भोग भव से विरक्त हो निज परणति में करूँ रमण।।श्री||2||

ॐ ह्रीं श्री विष्णुकुमार एवं अकम्पनाचार्यादि सप्तशतक मुनिभ्यो चंदनं नि. स्वाहा।

अक्षयपद अखंड पाने को अक्षत धवल करूँ अर्पण।
हिंसादिक पापों को क्षय कर, निज परणति मैं करूँ रमण।।श्री||3||

ॐ ह्रीं श्री विष्णुकुमार एवं अकम्पनाचार्यादि सप्तशतक मुनिभ्यो अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि. स्वाहा।

कामबाण विध्वंस हेतु, मैं सहज पुष्प करता अर्पण।
क्रोधादिक चारों कषाय हर, निज परणति में करूँ रमण।।श्री||4||

ॐ ह्रीं श्री विष्णुकुमार एवं अकम्पनाचार्यादि सप्तशतक मुनिभ्यो कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

क्षुधारोग के नाश हेतु, नैवेद्य सरस करता अर्पण।
विषयभोग की आकांक्षा हर, निज परणति में करूँ रमण।।श्री||5||

ॐ ह्रीं श्री विष्णुकुमार एवं अकम्पनाचार्यादि सप्तशतक मुनिभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।

चिर मिथ्यात्व तिमिर हरने को, दीप ज्योति करता अर्पण।
सम्यक्‌दर्शन का प्रकाश पा, निज परणति में करूँ रमण।।श्री||6||

ॐ ह्रीं श्री विष्णुकुमार एवं अकम्पनाचार्यादि सप्तशतक मुनिभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

अष्टकर्म के नाश हेतु यह, धूप सुगंधित है अर्पण।
सम्यक्‌ज्ञान हृदय प्रगटाऊँ, निज परणति में करूँ रमण।।श्री ||7||

श्री ह्रीं श्री विष्णुकुमार एवं अकम्पनाचार्यादि सप्तशतक मुनिभ्यो अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि. स्वाहा।

मुक्ति प्राप्ति हेतु उत्तम फल, चरणों में करता अर्पण।
मैं सम्यक् चारित्र प्राप्तकर, निज परणति में करूँ रमण।।श्री ||8||

ॐ ह्रीं श्री विष्णुकुमार एवं अकम्पनाचार्यादि सप्तशतक मुनिभ्यो महामोक्ष फल प्राप्तये फलं नि. स्वाहा।

शाश्वत पद अनर्घ पाने को, उत्तम अर्घ्य करूँ अर्पण।
रत्नत्रय की तरणी खेऊँ, निज परिणति में करूँ रमण।।
श्री अकम्पनाचार्य आदि मुनि, सप्तशतक को करूँ नमन।
मुनि उपसर्ग निवारक, विष्णु कुमार महामुनि को वन्दन ||9||
ॐ ह्रीं श्री विष्णुकुमार एवं अकम्पनाचार्यादि सप्तशतक मुनिभ्यो अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

वात्सल्य के अंग की महिमा अपरम्पार।
विष्णुकुमार मुनीन्द्र की गूंजी जय जयकार ||1||
उज्जयनी नगरी के नृप **श्री वर्मा** के मंत्री थे चार।
बलि, प्रहलाद, नमुचि वृहस्पति चारों अभिमानी सविकार ||2||
जब **अकम्पनाचार्य संघ**, मुनियों का नगरी में आया।
सात शतक मुनि के दर्शन कर, नृप **श्री वर्मा** हर्षाया ||3||
सब मुनि मौन ध्यान में रत, लख **बलि आदिक** ने निंदा की।
कहा कि मुनि सब मूर्ख, इसी से नहीं तत्व की चर्चा की ||4||
किन्तु लौटते समय मार्ग में, **श्रुतसागर मुनि** दिखलाये।
वाद विवाद किया श्री मुनि से हारे, जीत नहीं पाये ||5||
अपमानित होकर निशि में मुनि पर प्रहार करने आये।
खड्ग उठाते ही कीलित हो गये हृदय में पछताये ||6||
प्रातः होते ही राजा ने आकर मुनि को किया नमन।
देश निकाला दिया मंत्रियों को तब राजा ने तत्क्षण ||7||
चारों मंत्री अपमानित हो पहुँचे **नगर हस्तिनापुर**।
राजा पद्मराय को अपनी, सेवाओं से प्रसन्न कर ||8||

मुँह माँगा वरदान नृपति ने बलि को दिया तभी तत्पर।
जब चाहूँगा तब ले लूँगा, बलि ने कहा नम्र होकर ||9||
फिर अकम्पनाचार्य सात सौ मुनियों सहित नगर में आये।
बलि के मन में मुनियों की हत्या के भाव सहज आये ||10||
कुटिल चाल चल बलि ने नृप से आठ दिवस का राज्य लिया।
भीषण अग्नि जलाई चारों ओर द्वेष से कार्य किया ||11||
हाहाकार मचा जगती में, मुनि स्व ध्यान में लीन हुए।
नश्वर देह भिन्न चेतन से, यह विचार निज लीन हुए ||12||
यह नरमेघ यज्ञ रच बलि ने, किया दान का ढोंग विचित्र।
दान किमिच्छक देता था, पर मन था अतिहिंसक अपवित्र ||13||
पद्मराय नृप के लघु भाई, **विष्णुकुमार** महा मुनिवर।
वात्सल्य का भाव जगा मुनियों पर, संकट का सुनकर ||14||
किया गमन आकाश मार्ग से, शीघ्र हस्तिनापुर आये।।
ऋद्धि विक्रिया द्वारा याचक, वामन रूप बना आये ||15||
बलि से माँगी तीन पाँव भू, बलिराजा हंसकर बोला।
जितनी चाहों उतनी ले लो, वामन मूर्ख बड़ा भोला ||16||
हँसकर मुनि ने एक पाँव में ही सारी पृथ्वी नापी।
पग द्वितीय में मानुषोत्तर पर्वत की सीमा नापी ||17||
ठौर न मिला तीसरे पग को, बलि के मस्तक पर रक्खा।
क्षमा क्षमा कह कर बलि ने, मुनिचरणों में मस्तक रक्खा ||18||
शीतल ज्वाला हुई अग्नि की, श्री मुनियों की रक्षा की।
जय जयकार धर्म का गूँजा, वात्सल्य की शिक्षा दी ||19||

नवधा भक्ति पूर्वक सबने, मुनियों को आहार दिया।
बलिआदिक का हुआ हृदय, परिवर्तन जय जयकार किया ||20||
रक्षा सूत्र बाँधकर तब, जनजन ने मंगलाचार किये।
साधर्मी वात्सल्य भाव से, आपस में व्यवहार किये ||21||
समकित के वात्सल्य अंग की, महिमा प्रगटी इस जग में।
रक्षाबन्धन पर्व इसी दिन से, प्रारम्भ हुआ जग में ||22||
श्रावण शुक्ल पूर्णिमा का दिन था, रक्षा सूत्र बंधा, कर में।
वात्सल्य की प्रभावना का आया, अवसर घर घर में ||23||
प्रायश्चित ले विष्णुकुमार ने, पुनः व्रत ले तप ग्रहण किया।
अष्टकर्म बन्धन को हरकर, इस भव से ही मोक्ष लिया ||24||
सब मुनियों ने भी अपने–अपने परिणामों के अनुसार।
स्वर्ण मोक्षपद पाया जग में, हुई धर्म की जय जयकार ||25||
धर्म भावना रहे हृदय में, पापों के प्रतिकूल चलूँ।
रहे शुद्ध आचरण सदा ही, धर्म मार्ग अनुकूल चलूँ ||26||
आत्म ज्ञान रुचि जगे हृदय में, निजपर को मैं पहिचानूँ।
समकित के आठों अंगों की, पावन महिमा को जानूँ ||27||
तभी सार्थक जीवन होगा सार्थक होगी यह नर देह।
अन्तर घट में जब बरसेगा पावन परम ज्ञान रस मेह ||28||
पर में मोह नहीं होगा, होगा निजात्म से अति नेह।
तब पायेंगे अखंड अविनाशी निज सुखमय शिव गेह ||29||
रक्षाबंधन पर्व धर्म का, रक्षा का त्यौहार महान।
रक्षाबंधन पर्व ज्ञान का, रक्षा का त्यौहार प्रधान ||30||

रक्षाबंधन पर्व चारित का, रक्षा का त्यौहार महान।
रक्षाबंधन पर्व आत्म का, रक्षा का त्यौहार प्रधान ||31||
श्री अकम्पनाचार्य आदि मुनि सात शतक को करूँ नमन।
मुनि उपसर्ग निवारक **विष्णुकुमार** महामुनि को वन्दन ||32||
ॐ ह्रीं श्री विष्णुकुमार एवं अकम्पनाचार्यादि सप्तशतक मुनिभ्यो पूर्णार्घ्यं नि.।

रक्षाबंधन पर्व पर श्री मुनिपद उर धार।
मन वच तन जो पूजते, पाते सौख्य अपार।।

इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत्।।

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री विष्णुकुमार एवं अकम्पनाचार्यादि सप्तशतक परम ऋषीश्वरेभ्यो नमः।

47 - श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर विधान

जैन आगम् में पूजा विधान करने की प्राचीन परम्परा प्रचलित है। प्रत्येक श्रावक की छः आवश्यक क्रियाओं में जिनेन्द्र पूजा को प्रथम स्थान प्राप्त है। सच्ची पूजा से तात्पर्य पंचपरमेष्ठी भगवन्तों के गुणानुवाद के साथ ही पूजक की यह भावना रहती है कि वह भी पंचपरमेष्ठी भगवन्तों के समस्त गुणों को प्राप्त कर निर्वाण प्राप्त करे।

सांसारिक प्रयोजनों के लिए की गई पूजा कार्यकारी नहीं है परन्तु जिनेन्द्र पूजन के समय जीव के परिणाम तीव्र कषाय से हटकर मन्द कषाय रूप हो जाते हैं। अतः परिणामों के अनुसार उसे अवश्य ही पुण्य का बन्ध होता

है। जो परम्परा मोक्ष का कारण बन सकता है।

विधान महोत्सव भी पूजन का एक बड़ा रूप है। वर्तमान में सिद्धचक्र मंडल विधान, इन्द्रध्वज मंडल विधान, गणधर वलय विधान, पंचकल्याणक, सोलहकारण, पंच परमेष्ठी, दशलक्षण–विधान आदि प्रचलित हैं। श्रावकों द्वारा विभिन्न अवसरों पर इस तरह का विधान करने की परम्परा प्रचलित है। इसी श्रृंखला में आध्यात्मिक दृष्टि से परिपूर्ण नव–देव पूजन, पंचपरमेष्ठी पूजन, वर्तमान चौबीस तीर्थंकरों के समस्त गणधरों की गणधर वलय पूजनें भी हैं। इसे प्रत्येक श्रद्धालु श्रावक कभी भी अनवरत रूप से अथवा सुविधानुसार एक से अधिक दिवसों में सम्पन्न कर सकते हैं। इसकी स्थापना विधि अन्य विधानों की तरह है।

इस संग्रह के प्रारम्भ में सामान्य पूजन स्थापना विधि दी गई है वैसे विधान की स्थापना करना चाहिए एवं विधान समाप्ति के बाद इस संग्रह के अन्त में महाअर्घ्य एवं शांति पाठ आदि दिया है उसे पढ़कर विधान पूर्ण करें। इसके अतिरिक्त अनेक बन्धुओं, माताओं बहनों द्वारा चौबीस तीर्थंकरों के पंचकल्याणकों की तिथियों में तीर्थंकर की विशेष पूजन, व्रत–उपवास आदि करने की परम्परा है। उनके लिए भी यह विधान अत्यंत उपयोगी होगा। तीर्थंकर पंचकल्याणक तिथि दर्पण भी इस पूजन संग्रह के प्रारम्भ में दिया गया है।

48. श्री चतुर्विंशाति तीर्थंकर स्तुति

जय ऋषभदेव जिनेन्द्र जय, जय अजित प्रभु अभयंकरम्।
जय नाथ सम्भव भव विनाशक, जयतु अभिन्दन परम् ||1||

जय सुमतिनाथ सुमति प्रदायक, पदम प्रभु प्रणतेश्वरम्।
जय जय सुपार्श्व स्वपर प्रकाशक, चन्द्रप्रभ चन्द्रेश्वरम् ||2||

जय पुष्पदंत पवित्र पावन, जयति शीतल शीतलम्।
जयश्रेष्ठ श्री श्रेयांस प्रभुवर, वासुपूज्य सु निर्मलम् ||3||

जय अमल अविकल विमल प्रभु, जय जय अनन्त आनंदकम्।
जय धर्मनाथ सर्वधर्म रवि, जय शान्ति जग कल्याणकम् ||4||

जय कुन्थुनाथ अनाथ रक्षक, अरहनाथ अरिंजयम्।
जय मल्लि प्रभु हत दुर्नयम्, जय मुनिसुव्रत मृत्युंजयम् ||5||

जय मुक्तिदाता नमि जिनोत्तम, नेमि प्रभु लोकेश्वरम्।
जय पार्श्व विघ्नविनाशनम्, जय महावीर महेश्वरम् ||6||

जय पाप पुण्य निरोधकम्, ज्ञानेश्वरम् क्षेमंकरम।
जय महांगल मूर्ति जय, चौबीस जिन तीर्थकरम् ||7||

49. श्री पंच परमेष्ठी पूजन

अरहंत, सिद्ध, आचार्य नमन, हे उपाध्याय हे साधु नमन।
जय पंच परम परमेष्ठी जय, भव सागर तारणहार नमन।।

मन वच काया पूर्वक करता हूँ, शुद्ध हृदय से आव्हानन।
मम् हृदय विराजो तिष्ठ तिष्ठ, सन्निकट होउ मेरे भगवान।।

निज आत्म तत्त्व की प्राप्ति हेतु, ले अष्ट द्रव्य करता पूजन।
तुव चरणों की पूजन से प्रभु, निज सिद्ध रूप का हो दर्शन।।
ॐ ह्रीं श्री अरहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, सर्वसाधु पंच परमेष्ठिन् अत्र अवतर अवतर संवौषट्, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।

मैं तो अनादि से रोगी हूँ, उपचार कराने आया हूँ।
तुम सम उज्जवलता पाने को, उज्जवल जल भरकर लाया हूँ।।
मैं जन्म जरा मृत्यु नाश करूँ, ऐसी दो शक्ति हृदय स्वामी।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव दुख मेटो अन्तर्यामी ॥1॥
ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि.।

संसार ताप से जल–जल कर, मैंने अगणित दुख पाये हैं।
निज शान्त स्वभाव नहीं भाया, पर के ही गीत सुहाये हैं।।
शीतल चन्दन है भेंट तुम्हें, संसार ताप नाशो स्वामी।।हे पंच॥2॥
ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो संसारताप विनाशनाय चंदनं नि. स्वाहा।

दुखमय अथाह भवसागर में, मेरी यह नौका भटक रही।
शुभ अशुभ भाव की भंवरों में, चैतन्य शक्ति निज अटक रही।।
तंदुल हैं धवल तुम्हें अर्पित, अक्षयपद प्राप्त करूँ स्वामी।।हे पंच॥3॥
ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि.।

मैं काम व्यथा से घायल हूँ, सुख की न मिली किंचित छाया।
चरणों में पुष्प चढ़ाता हूँ, तुमको पाकर मन हर्षाया।।
मैं कामभाव विध्वंस करूँ, ऐसा दो शील हृदय स्वामी।।हे पंच॥4॥
ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो कामवाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।

मैं क्षुधा रोग से व्याकुल हूँ, चारों गति में भरमाया हूँ।
जग के सारे पदार्थ पाकर भी, तृप्त नहीं हो पाया हूँ।।
नैवेद्य समर्पित करता हूँ, यह क्षुधा रोग मेटो स्वामी।।हे पंच॥5॥
ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।
मोहान्ध महाअज्ञानी मैं निज को, पर का कर्ता माना।
मिथ्यातम के कारण मैंने, निज आत्म स्वरूप न पहचाना।।
मैं दीप समर्पण करता हूँ, मोहान्धकार क्षय हो स्वामी।।हे पंच॥6॥
ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।
कर्मों की ज्वाला धधक रही, संसार बढ़ रहा है प्रतिफल।
संवर से आश्रव को रोकूँ, निर्जरा सुरभि महके पल–पल।।
मैं धूप चढ़ाकर अब आठों कर्मों का हनन करूँ स्वामी।।हे पंच॥7॥
ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो अष्टकर्म दहनाय धूपं नि.।
निज आत्मतत्व का मनन करूँ, चिंतवन करूँ निज चेतन का।
दो श्रद्धा, ज्ञान चरित्र, श्रेष्ठ सच्चा पथ मोक्ष निकेतन का।।
उत्तमफल चरण चढ़ाता हूँ, निर्वाण महाफल हो स्वामी।।हे पंच॥8॥
ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो महामोक्ष फल प्राप्तये फलं नि.।
जल, चन्दन, अक्षत, पुष्प दीप, नैवेद्य, धूप फल लाया हूँ।
अब तक के संचित कर्मों का मैं पुंज जलाने आया हूँ।।
यह अर्घ समर्पित करता हूँ अविचल अनर्घ पद दो स्वामी।
हे पंच परम परमेष्ठि प्रभु भव दुख मेटो अन्तर्यामी ॥9॥
ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

(8) **यदि हम तत्त्वज्ञानपूर्वक जगत से उदास नहीं होंगे, तो निराश होना पड़ेगा।**

जयमाला

जय वीतराग सर्वज्ञ प्रभो, निज ध्यान लीन गुणमय अपार।
अष्टादश दोष रहित जिनवर, अरहंत देव को नमस्कार ||1||
अविचल अविकारी अविनाशी, निज रूप निरंजन निराकार।
जय अजर अमर हे मुक्तिकंत, भगवन्त सिद्ध को नमस्कार ||2||
छत्तीस सुगुण से तुम मण्डित, निश्चय रत्नत्रय हृदय धार।
हे मुक्तिवधू के अनुरागी, आचार्य सुगुरु को नमस्कार ||3||
एकादश अंग पूर्व चौदह के, पाठी गुण पच्चीस धार।
बाह्यान्तर मुनि मुद्रा महान, श्री उपाध्याय को नमस्कार ||4||
व्रत समिति गुप्ति चारित्र धर्म, वैराग्य भावना हृदय धार।
हे द्रव्य भाव संयममय मुनिवर, सर्वसाधु को नमस्कार ||5||
बहुपुण्य संयोग मिला नरतन, जिनश्रुत जिनदेव चरणदर्शन।
हो सम्यकदर्शन प्राप्त मुझे तो, सफल बने मानव जीवन ||6||
निजपर का भेद जानकर मैं, निज को ही निज में लीन करूँ।
अब भेद ज्ञान के द्वारा मैं निज आत्म स्वयं स्वाधीन करूँ ||7||
निज में रत्नत्रय धारण कर, निज परिणति को ही पहचानूँ।
पर परणति से हो विमुख सदा, निजज्ञान तत्त्व को ही जानूँ ||8||
जब ज्ञान ज्ञेय ज्ञाता विकल्प तज, शुक्ल ध्यान मैं ध्याऊँगा।
तब चार घातिया क्षय करके, अरहंत महापद पाऊँगा ||9||
है निश्चित सिद्ध स्वपद मेरा, हे प्रभु कब इसको पाऊँगा।
सम्यक् पूजा फल पाने को अब, निजस्वभाव में आऊँगा ||10||
अपने स्वरूप की प्राप्ति हेतु, हे प्रभु मैंने की है पूजन।
तब तक चरणों में ध्यान रहे, जब तक न प्राप्त हो मुक्तिसदन ||11||
ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

हे मंगल रूप अमंगल हर, मंगलमय मंगल गान करूँ।
मंगल में प्रथम श्रेष्ठ मंगल नवकार मंत्र का ध्यान करूँ।।
इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्
जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री अ सि आ उ सा नमः।

50- श्री नवदेव पूजन

श्री अरहंत सिद्ध, आचार्योपाध्याय, मुनि साधु महान।
जिनवाणी, जिनमंदिर, जिनप्रतिमा, जिनधर्म देव नव जान ||1||
ये नवदेव परम हितकारी, रत्नत्रय के दाता हैं।
विघ्न विनाशक संकटहर्ता, तीन लोक विख्याता हैं ||2||
जल फलादि वसु द्रव्य सजाकर, हे प्रभु नित्य करूँ पूजन।
मंगलोत्तम शरण प्राप्त कर, मैं पाऊँ, सम्यकदर्शन ||3||
आत्मतत्त्व का अवलम्बन ले, पूर्ण अतीन्द्रिय सुख पाऊँ।
नव देवों की पूजन करके, फिर न लौट भव में आऊँ ||4||
ॐ ह्रीं श्री अर्हंत सिद्ध आचार्य उपाध्याय सर्वसाधु, जिनवाणी, जिनमंदिर, जिनप्रतिमा, जिनधर्म नवदेव अत्र अवतर अवतर संवौषट, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।
परम भाव जल की धारा से, जन्म मरण का नाश करूँ।
मिथ्यातम का गर्व चूर कर, रवि सम्यक्त्व प्रकाश करूँ।।
पंच परम परमेष्ठि जिनगृह, जिन प्रतिमा जिनश्रुत जिनधर्म।
महा मोक्ष पद मैं पाऊँगा पूर्ण शान्ति होकर निष्कर्म ||1||
ॐ ह्रीं श्री अर्हंत आदि नवदेवेभ्यो जन्म जरामृत्यु विनाशनाय जलं नि.।
परम भाव चंदन के बलसे भव आतप का नाश करूँ।
अन्धकार अज्ञान मिटाऊँ सम्यकज्ञान प्रकाश करूँ।।पंच||2||
ॐ ह्रीं श्री अर्हंतादि नवदेवेभ्यो संसारताप विनाशनाय चंदनं नि.।

परम भाव अक्षत के द्वारा, अक्षय पद को प्राप्त करूँ।
मोह क्षोभ से रहित बनूँ, मैं सम्यक चारित प्राप्त करूँ।।पंच||3||
ॐ ह्रीं श्री अर्हंत आदि नवदेवेभ्यो अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि.।
परम भाव पुष्पों से दुर्धर, कामभाव को नाश करूँ।
तप संयम की महाशक्ति से, निर्मल आत्म प्रकाश करूँ।।पंच||4||
ॐ ह्रीं श्री अर्हंत आदि नवदेवेभ्यो कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।
परम भाव नैवेद्य प्राप्तकर, क्षुधाव्याधि का नाश करूँ।
पंचाचार आचरण करके, परम तृप्त शिववास करूँ।।पंच||5||
ॐ ह्रीं श्री अर्हंत आदि नवदेवेभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।
परम भावमय दिव्य ज्योति से, पूर्ण मोह का नाश करूँ।
पाप पुण्य आश्रव विनाशकर, केवलज्ञान प्रकाश करूँ।।पंच||6||
ॐ ह्रीं श्री अर्हंत आदि नवदेवेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं.।
परम भावमय शुक्ल ध्यान से, अष्ट कर्म का नाश करूँ।
नित्य निरंजन शिवपद पाऊँ सिद्धस्वरूप विकास करूँ।पंच||7||
ॐ ह्रीं श्री अर्हंत आदि नवदेवेभ्यो अष्टकर्म दहनाय धूपं नि.।
परम भाव संपत्ति प्राप्त कर, मोक्ष भवन में वास करूँ।
रत्नत्रय की मुक्तिशिला पर, सादि अनंत निवास करूँ।।पंच||8||
ॐ ह्रीं श्री अर्हंत आदि नवदेवेभ्यो महामोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।
परम भाव के अर्घ चढ़ाऊँ, उर अनर्घ पद प्राप्त करूँ।
भेद ज्ञान रवि हृदय जगाकर, शाश्वत जीवन प्राप्त करूँ।
पंच परम परमेष्ठि जिनगृह, जिनप्रतिमा जिनश्रुत जिनधर्म।
महा मोक्ष पद मैं पाऊँ, पूर्ण शान्ति होकर निष्कर्म ||9||
ॐ ह्रीं श्री अर्हंत सिद्ध आचार्य उपाध्याय सर्वसाधु, जिनवाणी, जिन मंदिर, जिनप्रतिमा, जिनधर्म नवदेवेभ्यो अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

जयमाला

नवदेवों को नमन कर करूँ आत्म कल्याण।
शाश्वत सुख की प्राप्ति, हित करूँ भेद विज्ञान ||1||
जय जय **पंच परम परमेष्ठी, जिनवाणी जिनधर्म** महान।
जिनमंदिर जिनप्रतिमा, नवदेवों को नित वन्दूधरध्यान ||2||
श्री **अरहंत** देव मंगलमय, मोक्षमार्ग के नेता हैं।
सकल ज्ञेय के ज्ञाता दृष्टा, कर्म शिखर के भेत्ता हैं ||3||
हैं लोकाग्र शिखर पर सुस्थित, सिद्धशिला पर **सिद्ध अनंत**।
अष्टकर्म रज से विहीन प्रभु सकल, सिद्धिदाता भगवंत ||4||
हैं **छत्तीस गुणों** से शोभित, **श्री आचार्य देव** भगवान।
चार संघ के नायक ऋषिवर, करते सबको शान्ति प्रदान ||5||
ग्यारह अंग पूर्व चौदह के, ज्ञाता **उपाध्याय** गुणवन्त।
जिन आगम का पठन और पाठन करते हैं महिमावन्त ||6||
अट्ठाईस मूलगुण पालक **ऋषि मुनि साधु** परम गुणवान।
मोक्षमार्ग के पथिक श्रमण करते, जीवों को करुणादान ||7||
स्याद्वादमय द्वादशांग जिनवाणी, है जग कल्याणी।
जो भी शरण प्राप्त करता है, हो जाता केवलज्ञानी ||8||
जिन मंदिर जिनसमवशरणसम, इसकी महिमा अपरम्पार।
गंधकुटी में नाथ विराजे हैं, अरहंत देव साकार ||9||
जिन प्रतिमा अरहंतों की, नासाग्रदृष्टि निज ध्यानमयी।
जिन दर्शन से निज दर्शन हो जाता, तत्क्षण ज्ञानमयी ||10||
श्री जिनधर्म महा मंगलमय, जीवमात्र को सुख दाता।
इसकी छाया में जो आता, हो जाता है दृष्टा ज्ञाता ||11||

ये नवदेव परम उपकारी, वीतरागता के सागर।
सम्यकदर्शन ज्ञान चरित्र से, भर देते सबकी गागर ||12||
मुझको भी रत्नत्रय निधि, दो मैं कर्मों का भार हरूँ।
क्षीण मोह जितराग जितेन्द्रिय हो, भवसागर पार करूँ ||13||
सदा–सदा नवदेव शरण पा, मैं अपना कल्याण करूँ।
जब तक सिद्ध स्वपद ना पाऊँ हे प्रभु पूजन ध्यान करूँ ||14||

ॐ ह्रीं श्री अर्हंत सिद्ध आचार्य उपाध्याय सर्वसाधु, जिनवाणी, जिनमंदिर, जिनप्रतिमा, जिनधर्म नवदेवेभ्यो पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

मंगलोत्तम शरण हैं नव देवता महान।
भाव पूर्ण जिन भक्ति से होता दुख अवसान।।

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री अरिहंतादि नव देवेभ्यो नमः।

51 - श्री वर्तमान चौबीस तीर्थंकर पूजन

भरत क्षेत्र की वर्तमान जिन, चौबीसी को करूँ नमन।
ऋषभादिक श्री वीर जिनेश्वर के, पद पंकज में वन्दन ||1||
भक्ति भाव से नमस्कार कर, विनय सहित करता पूजन।
भवसागर से पार करो प्रभु, यही प्रार्थना है भगवन ||2||

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादि महावीर पर्यन्त चतुर्विंशति जिन समूह अत्र अवतर अवतर संवौषट्, अत्र तिष्ठतिष्ठ ठः ठः, अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।

आत्मज्ञान वैभव के जल से, यह भव तृषा बजाऊँगा।
जन्म जरा हर चिदानन्द, चिन्मय की ज्योति जलाऊँगा।।
ऋषभादिक चौबीस जिनेश्वर के, नित चरण पखारूँगा।
पर द्रव्यों से दृष्टि हटाकर, अपनी ओर निहारूँगा ||1||

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादि वीरांतेभ्यो जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि.।

आत्मज्ञान वैभव के चन्दन से, भवाताप नशाऊँगा।
भव बाधा हर चिदानन्द चिन्मय, की ज्योति जलाऊँगा।।ऋष.||2||

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादि वीरांतेभ्यो संसारताप विनाशनाय चंदनं नि.।

आत्मज्ञान वैभव के अक्षत से, अक्षय पद पाऊँगा।
चिर समुद्र चिदानन्द, चिन्मय की, ज्योति जलाऊँगा।।ऋष.||3||

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादि वीरांतेभ्यो अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं नि.।

आत्म ज्ञान वैभव के पुष्पों से, मैं काम नशाऊँगा।
शीलोदधि पा चिदानन्द चिन्मय की, ज्योति जगाऊँगा।।वृष.||4||

ॐ ह्रीं श्री ऋषभावि वीरांतेभ्यो कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।

आत्मज्ञान वैभव के चरु ले, क्षुधा व्याधि हर पाऊँगा।
पूर्ण तृप्ति पा चिदानन्द चिन्मय की, ज्योति जगाऊँगा।।वृष.||5||

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादि वीरांतेभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।

आत्म ज्ञान वैभव दीपक से, भेद ज्ञान प्रगटाऊँगा।
मोहतिमिर हर चिदानन्द चिन्मय की ज्योति जगाऊँगा।।वृष.||6||

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादि वीरांतेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।

आत्म ज्ञान वैभव की निज में, शुचिमय धूप चढ़ाऊँगा।
अष्टकर्म हर चिदानंद चिन्मय की, ज्योति जगाऊँगा।।वृष.||7||

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादि वीरांतेभ्यो अष्टकर्म विनाशनाय धूपं नि.।

आत्म ज्ञान वैभव के फल से, शुद्ध मोक्षफल पाऊँगा।
राग द्वेष हर चिदानंद चिन्मय की, ज्योति जगाऊँगा।।वृष.||8||

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादि वीरांतेभ्यो महामोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।

आत्मज्ञान वैभव का निर्मल, अर्घ अपूर्व बनाऊँगा।
पा अनर्घ पद चिदानन्द, चिन्मय की ज्योति जगाऊँगा।।
वृषभादिक चौबीस जिनेश्वर के, नित चरण पखारूँगा।
पर द्रव्यों से दृष्टि हटाकर, अपनी ओर निहारूँगा ||9||
ॐ ह्रीं ऋषभादि वीरांतेभ्यो अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

जयमाला

भव्य दिगम्बर जिनप्रतिमा, नासाग्रदृष्टि निज ध्यानमयी।
जिन दर्शन पूजन अघ नाशक, भव भव से कल्याणमयी ||1||
वृषभदेव के चरण पखारूँ, मिथ्या तिमिर विनाश करूँ।
अजितनाथ पद वन्दन करके, पंच पाप मल नाश करूँ ||2||
सम्भव जिन का दर्शन करके, सम्यकदर्शन प्राप्त करूँ।
अभिनन्दन प्रभु पद अर्चनकर, सम्यकज्ञान प्रकाश करूँ ||3||
सुमतिनाथ का सुमिरण करके, सम्यकचारित हृदय धरूँ।
श्री पदमप्रभ का पूजन कर, रत्नत्रय का वरण करूँ ||4||
श्री सुपार्श्व की स्तुति करके, मोह ममत्व अभाव करूँ।
चन्द्रप्रभ के चरण चित्त धर, चार कषाय अभाव करूँ ||5||
पुष्पदन्त के पद कमलों में, बारम्बार प्रणाम करूँ।
शीतल जिनका सुयशगान कर, शाश्वत शीतल धाम वरूँ ||6||
प्रभु श्रेयांसनाथ को वन्दू, श्रेयस पद की प्राप्ति करूँ।
वासुपूज्य के चरण पूज कर मैं, अनादि की भ्रांति हरूँ ||7||
विमल जिनेश मोक्ष पद दाता, पंच महाव्रत ग्रहण करूँ।
श्री अनन्तप्रभु के पद वन्दू पर, परणति का हरण करूँ ||8||
धर्मनाथ पद मस्तक धर कर, निज स्वरूप का ध्यान करूँ।
शांतिनाथ की शांति मूर्ति लख, परम शांत रस पान करूँ ||9||

कुंथुनाथ को नमस्कार कर, शुद्ध स्वरूप प्रकाश करूँ।
अरनाथ प्रभु सर्वदोष हर, अष्टकर्म अरि नाश करूँ ||10||
मल्लिनाथ की महिमा गाऊँ, मोह मल्ल को चूर करूँ।
मुनिसुव्रत को नित प्रति ध्याऊँ, दोष अठारह दूर करूँ ||11||
नमि जिनेश को नमन करूँ मैं, निज परिणति में रमण करूँ।
नेमिनाथ का नित्य ध्यानधर, भाव शुभा–शुभ शमन करूँ ||12||
पार्श्वनाथ प्रभु के चरणाम्बुज, दर्शन कर भव पार करूँ।
महावीर के पथ पर चलकर मैं, भवसागर पार करूँ ||13||
चौबीसों तीर्थंकर प्रभु का भाव सहित गुणगान करूँ।
तुम समान निज पद पाने को, शुद्धातम का ध्यान करूँ ||14||
ॐ ह्रीं श्री ऋषभादि वीरांतेभ्यो अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

श्री चौबीस जिनेश के, चरण कमल उर धार।
मन, वच, तन को पूजते, वे होते भव पार ||15||

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री ऋषभादि चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो नमः।

52. श्री ऋषभनाथ जिन पूजन

जय आदिनाथ[1] जिनेन्द्र जय जय प्रथम जिन तीर्थंकरम्।
जय नाभि सुत मरुदेवी नन्दन ऋषभप्रभु जगदीश्वरम् ||1||
जय जयति त्रिभुवन तिलक चूड़ामणि वृषभ विश्वेश्वरम्।
देवाधि देव जिनेश जय जय, महाप्रभु परमेश्वरम्।।
ॐ ह्रीं श्री ऋषभदेव जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।

1. प्रथम तीर्थंकर

समकित जल दो प्रभु, आदि निर्मल भाव धरूँ।
दुख जन्म–मरण मिट जाये, जल से धार करूँ।।
जय ऋषभदेव जिनराज, शिव सुख के दाता।
तुम सम हो जाता है, स्वयं को जो ध्याता ||1||
ॐ ह्रीं श्री ऋषभदेव जिनेन्द्राय जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि.।

समकित चंदन दो नाथ, भव संताप हरूँ।
चरणों में मलय सुगन्ध, हे प्रभु भेंट करूँ।।जय ऋषभदेव||2||
ॐ ह्रीं श्री ऋषभदेव जिनेन्द्राय संसारताप विनाशनाय चंदनं नि.।

समकित तन्दुल की चाह, मन में मोद भरे।
अक्षत से पूजूँ देव, अक्षय पद संवरे।।जय ऋषभदेव||3||
ॐ ह्रीं श्री ऋषभदेव जिनेन्द्राय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि.।

समकित के पुष्प सुरम्य, दे दो हे स्वामी।
यह काम भाव मिट जाए, हे अन्तर्यामी।।जय ऋषभदेव||4||
ॐ ह्रीं श्री ऋषभदेव जिनेन्द्राय कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।

समकित चरु करो प्रदान, मेरी भूख मिटे।
भव भव की तृष्णा ज्वाल, उर से दूर हटे।।जय ऋषभदेव||5||
ॐ ह्रीं श्री ऋषभदेव जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।

समकित दीपक की ज्योति, मिथ्यातम भागे।
देखूँ निज सहज स्वरूप, निज परिणति जागे।।जय ऋषभदेव||6||
ॐ ह्रीं श्री ऋषभदेव जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।

समकित की धूप अनूप, कर्म विनाश करे।
निज ध्यान अग्नि के बीच, आठों कर्म जरे।।जय ऋषभदेव ||7||
ॐ ह्रीं श्री ऋषभदेव जिनेन्द्राय अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।

समकित फल मोक्ष महान, पाऊँ आदि प्रभो।
हो जाऊँ सिद्ध समान सुखमय, ऋषभ विभो।जय ऋषभदेव ||8||
ॐ ह्रीं श्री ऋषभदेव जिनेन्द्राय महामोक्ष फल प्राप्तये फलं नि.।

वसु द्रव्य अर्घ जिनदेव, चरणों में अर्पित।
पाऊँ अनर्घ पदनाथ, अविकल अविनाशी सुख गर्भित।।
जय ऋषभदेव जिनराज, शिव सुख के दाता।
तुम सम हो जाता है, स्वयं को जो ध्याता ||9||
ॐ ह्रीं श्री ऋषभदेव जिनेन्द्राय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

श्री पंचकल्याणक अर्घ्य

शुभ आषाढ़ कृष्ण द्वितीया को, **मरुदेवी उर** में आये।
देवों ने छह मास पूर्व से, रत्न **अयोध्या** बरसाये।।
कर्म भूमि के प्रथम जिनेश्वर, तज [1]**सर्वार्थ सिद्धि** आये।
जय जय ऋषभनाथ तीर्थंकर, तीन लोक ने सुख पाये ||1||
ॐ ह्रीं श्री आषाढ़ कृष्ण द्वितीया गर्भ मंगल प्राप्त ऋषभदेवाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

चैत्र कृष्ण नवमी को राजा, नाभिराय गृह जन्म लिया।
इन्द्रादिक ने गिरि सुमेरु पर, क्षीरोदधि अभिषेक किया।।
नरक त्रिर्यंच सभी जीवों ने, सुख अन्तर्मुहुर्त पाया।
जय जय ऋषभनाथ तीर्थंकर, जग में पूर्ण हर्ष छाया ||2||
ॐ ह्रीं श्री चैत्र कृष्ण नवमी दिने जन्म मंगल प्राप्त ऋषभदेवाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

1. 5वाँ अनुत्तर विमान

चैत्र कृष्ण नवमी को ही, वैराग्य भाव उर छाया था।
[1]लौकान्तिक सुर इन्द्रादिक ने, तप कल्याण मनाया था।।
पंच महाव्रत धारण करके, पंचमुष्टि [2]कच लोंच किया।
जय प्रभु ऋषभदेव तीर्थंकर, तुमने मुनि पद धार लिया ||3||
ॐ ह्रीं श्री चैत्र कृष्ण नवमी दिने तपो मंगल प्राप्त ऋषभदेवाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

एकादशी कृष्ण फागुन को, कर्म घातिया नष्ट हुए।
केवलज्ञान प्राप्त कर स्वामी, वीतराग भगवन्त हुए।।
दर्शन, ज्ञान, अनन्तवीर्य, सुख पूर्ण चतुष्टय को पाया।
जय प्रभु ऋषभदेव जगती ने, समवशरण लख सुख पाया ||4||
ॐ ह्रीं श्री फागुनकृष्ण एकादशींदिने केवलज्ञान प्राप्त ऋषभदेवाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

माघ वदी की चतुर्दशी को, **गिरि कैलाश** हुआ पावन।
आठों कर्म विनाशे पाया, परम सिद्ध पद मनभावन।।
मोक्ष लक्ष्मी पाई गिरि कैलाश, शिखर, निर्वाण हुआ।
जय जय ऋषभदेव तीर्थंकर, भव्य मोक्ष कल्याणक हुआ ||5||
ॐ ह्रीं श्री माधवदी चतुर्दश्यां मोक्ष मंगल प्राप्त ऋषभदेवाय अर्घ्यं नि.।

जयमाला

जम्बूद्वीप सु **भरत क्षेत्र** में **नगर अयोध्या** नगरी विशाल।
नाभिराय चौदहवें कुलकर के, सुत मरुदेवी के लाल ||1||
सोलह स्वप्न हुए माता को, पन्द्रह मास रत्न बरसे।
तुम आये **सर्वार्थ सिद्धि** से, माता उर मंगल हरषे ||2||

1. 5वें स्वर्ग के अन्तिम भाग में निवास करने वाले देव
2. बाल

मति श्रुत अवधिज्ञान के धारी, जन्मे, हुए जन्म कल्याण।
इन्द्रों में हर्षित हो पाण्डुक शिला, किया अभिषेक महान ||3||
राज्य अवस्था में तुमने, जन जन के कष्ट मिटाए थे।
असि,मसि,कृषि,वाणिज्य,शिल्प,विद्याषट्कर्म सिखाए थे||4||
एक दिवस जब नृत्यलीन, **सुरि नीलांजना** विलीन हुई।
है पर्याय अनित्य आयु, उसकी पल भर में क्षीण हुई ||5||
तुमने वस्तु स्वरूप विचारा, जागा उर वैराग्य अपार।
कर चिंतवन भावना द्वादश, त्यागा राज्य और परिवार ||6||
लौकान्तिक देवों ने आकर, किया आपका जय जयकार।
आस्त्रव हेय जानकर तुमने लिया हृदय में संवर धार ||7||
वन सिद्धार्थ गये **वट, तरु** नीचे, वस्त्राभूषण त्याग दिया।
त्वरित **नमः सिद्धेभ्यः** कहकर, मौन हुए तप ग्रहण किया ||8||
स्वयं बुद्ध बन कर्मभूमि में, प्रथम सुजिन दीक्षाधारी।
ज्ञान मनःपर्यय पाया, धर पंच महाव्रत सुखकारी ||9||
धन्य हस्तिनापुर के राजा, श्री श्रेयांस ने दान दिया।
एक वर्ष पश्चात् [1]इक्षुरस से, तुमने पारणा किया ||10||
एक सहस्त्र वर्ष तप कर, प्रभु शुक्ल ध्यान में हो तल्लीन।
पाप पुण्य आश्रव विनाश कर, हुए आत्मरस में लवलीन ||11||
चार घातिया कर्म विनाशे, पाया अनुपम केवलज्ञान।
दिव्य ध्वनि के द्वारा तुमने किया, सकल जग का कल्याण||12||
चौरासी गणधर थे प्रभु के, **पहले वृषभसेन** गणधर।
मुख्य आर्यिका श्री ब्राम्ही, श्रोता **मुख्य भरत** नृपवर ||13||

1. गन्ने का रस

भरत क्षेत्र के आर्यखण्ड में, नाथ आपका हुआ विहार।
धर्मचक्र का हुआ प्रवर्तन, सुखी हुआ सारा संसार ||14||
अष्टापद कैलाश धन्य, हो गया तुम्हारा कर गुणगान।
बने अयोगी कर्म अघाति नाश किये पाया निर्वाण ||15||
आज तुम्हारे दर्शन करके, मेरे मन आनन्द हुआ।
जीवन सफल हुआ हे स्वामी, नष्ट पाप दुख द्वन्द हुआ ||16||
यही प्रार्थना करता हूँ प्रभु, उर में ज्ञान प्रकाश भरो।
चारों गतियों के भव संकट का, हे जिनवर नाश करो ||17||
तुम सम पद पा पाऊँ मैं भी यही भावना भाता हूँ।
इसीलिए यह पूर्ण अर्ध, चरणों में नाथ चढ़ाता हूँ ||18||
ॐ ह्रीं श्री ऋषभदेव जिनेन्द्राय महाअर्घ्यं नि. स्वाहा।

[1]**वृषभ चिन्ह** शोभित, **ऋषभदेव** उर धार।
मन वच तन जो पूजते, वे होते भव पार।।
इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्
जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री ऋषभदेव जिनेन्द्राय नमः।

53. श्री अजितनाथ जिन पूजन

द्वितीय तीर्थंकर जिनस्वामी, अजितनाथ[2] प्रभु को वन्दन।
भाव द्रव्य संयममय मुनि बन, किया आत्म का आराधन||1||
पंच महाव्रत धारण करके, निज स्वरूप में लीन हुए।
कर्म नाशकर वीतराग प्रभु स्वयं सिद्ध स्वाधीन हुए||2||
ॐ ह्रीं श्री अजितनाथ जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट्, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।

1. बैल का चिन्ह
2. दूसरे तीर्थंकर

परम पवित्र पुनीत शुद्ध, भावना नीर उर में लाऊँ।
मैं मिथ्यात्व शल्य क्षय करके, अजर अमर पद को पाऊँ।।
अजितनाथ के चरणाम्बुज पर, मैं न्यौछावर हो जाऊँ।
विषय कषाय रहित होकर, मैं महामोक्ष पदवी पाऊँ||1||
ॐ ह्रीं श्री अजितनाथ जिनेन्द्राय जन्मजरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि.।
निर्मल शीतल भावपूर्ण, शुचिमय चन्दन उर में लाऊँ।
माया शल्य नाश करके प्रभु, भव आतप पर जय पाऊँ।।अजि.||2||
ॐ ह्रीं श्री अजितनाथ जिनेन्द्राय संसार ताप विनाशनाय चंदनं नि.।
धवल शुद्ध पावन स्वरूप, निज भावों के अक्षत लाऊँ।
शीघ्र निदानशल्यमैंहरकर, निज अक्षय पद को पाऊँ।।अजि.||3||
ॐ ह्रीं श्री अजितनाथ जिनेन्द्राय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि.।
आत्मज्ञान के समयसारमय, भाव पुष्प निज में लाऊँ।
वीतराग सम्यक्त्व प्राप्त कर, काम भाव क्षय कर पाऊँ।।अजि.||4||
ॐ ह्रीं श्री अजितनाथ जिनेन्द्राय कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।
समता के परिपूर्ण सहज, नैवेद्य भाव उर में लाऊँ।
भव भोगों की आकांक्षा हर, क्षुधा व्याधि पर जय पाऊँ।।अजि.||5||
ॐ ह्रीं श्री अजितनाथ जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।
जगमग जगमग ज्ञानज्योति मय, भावदीप उर में लाऊँ।
निज कैवल्य प्रकाशित कर, जग अंधकार को हर पाऊँ।।अजि.||6||
ॐ ह्रीं श्री अजितनाथ जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।
शुद्धातम परिमल सुगंधमय, भाव धूप उर में लाऊँ।
बनूँ ध्यानपति निज स्वभाव से, अष्टकर्म हर सुख पाऊँ।।अजि.||7||
ॐ ह्रीं श्री अजितनाथ जिनेन्द्राय अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।

रागद्वेष से रहित वीतरागी, भावों के फल लाऊँ।
निज चैतन्य सिद्ध पद पाकर, परममुक्ति शिवपद पाऊँ।।अजि.॥8॥
ॐ ह्रीं श्री अजितनाथ जिनेन्द्राय महामोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।
अष्ट अंग सह, रहित दोष पच्चीस, हृदय समकित लाऊँ।
सहज विशुद्ध अर्घ्य भावों का, ले अनर्घ्य पद प्रगटाऊँ।।
अजितनाथ के चरणाम्बुज पर, मैं न्यौछावर हो जाऊँ।
विषय कषाय रहित होकर, मैं महामोक्ष पदवी पाऊँ ॥9॥
ॐ ह्रीं श्री अजितनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

श्री पंचकल्याणक अर्घ्य

विजय विमान त्याग माता **विजया देवी** उर धन्य किया।
कृष्ण अमावस ज्येष्ठ मास, साकेतपुरी ने नृत्य किया।।
देव देवियों ने रत्नों की वर्षा कर आनन्द लिया।
अजितनाथ तीर्थंकर प्रभु को भाव भक्ति से नमन किया ॥1॥
ॐ ह्रीं श्री ज्येष्ठ कृष्ण अमावस्यां गर्भ मंगलप्राप्त श्री अजितनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।
माघ शुक्ल दशमी को स्वामी, **नगर अयोध्या** जन्म लिया।
नृप जितशत्रु हर्ष से पुलकित, देवों ने आनन्द किया।
देव क्षीरसागर से जल लाये, इन्द्रों ने सुमेरू पर अभिषेक किया।
मात पिता को सौंप इन्द्र ने अजितनाथ प्रभु नाम दिया ॥2॥
ॐ ह्रीं श्री माघशुक्ल दशम्यां जन्म मंगलप्राप्त श्री अजितनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।
माघ शुक्ल दशमी को प्रभु ने, तप धारण का किया विचार।
लौकान्तिक ब्रह्मर्षिसुरों ने, किया आपका जय जयकार।।

वन में जाकर तरु सप्तच्छंद, नीचे जिन दीक्षाधारी।
जय जय अजितनाथ, देवों ने तप कल्याण किया भारी ॥3॥
ॐ ह्रीं श्री माघशुक्ल दशम्यां तपोमंगलप्राप्त श्री अजितनाथ जिनेन्द्रनाथ अर्घ्यं नि.।
मौन तपस्वी बारह वर्ष, रहे छदमस्थ अजित भगवान।
प्रतिमायोग धार कुछ दिन में, पाया शुक्लध्यानमयध्यान।।
त्रेसठ कर्म प्रकृतियाँ नाशी, तुमने पाया केवलज्ञान।
पौष शुक्ल एकादशी को, दिया मुक्ति संदेश महान ॥4॥
ॐ ह्रीं श्री पौष शुक्ल एकादश्यां केवल ज्ञान प्राप्त श्री अजितनाथ जिनेन्द्रनाथ अर्घ्यं नि.।
अ, इ, उ, ऋ, लृ, उच्चारण में, लगता है जितना काल।
उतने में ही कर्म प्रकृति, पिच्चासी का कर क्षय तत्काल।।
कूट सिद्धवर शिखर शैल से, **चैत्र शुक्ल पंचमी** स्वकाल।
अजितनाथ ने मोक्ष प्राप्त कर, सम्मेदाचल किया निजाह ॥5॥
ॐ ह्रीं श्री चैत्रशुक्ल पंचम्यां मोक्षमंगलप्राप्त श्री अजितनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

जयमाला

जय जय **अजितनाथ** अद्भुत निधि, अरि अमर अति सत्यंकर।
अमल अचल अतिकान्तिमान, अप्रेयात्मा अभंयकर ॥1॥
दीक्षाधर सर्वज्ञ हुए प्रभु, जन जन का कल्याण किया।
रत्नत्रयमय मोक्षमार्ग का, ही उपदेश महान दिया ॥2॥
नब्बे गणधर थे जिनमें थे, **केसरिसेन** मुख्य गणधार।
प्रमुख आर्यिका **प्रकुब्जाजी** समवशरण सुन्दर सुखकर ॥3॥
बंध मार्ग के जो कारण हैं, उनको प्रभु ने बतलाया।
निज स्वभाव का आश्रय लेकर, सिद्ध स्वपद को प्रगटाया ॥4॥

मिथ्यात्व अविरति प्रमाद कषाय, योग बन्ध के हेतु।
भव समुद्र से पार उतरने को हैं, रत्नत्रय का सेतु ||5||
एकान्त विनय विपरीत और, **संशय अज्ञान** भरा उर में।
यह **गृहीत** अरु **अगृहीत** पाँचों, मिथ्यात्व भाव उर में ||6||
इनके नाश बिना सम्यकदर्शन, हो सकता कभी नहीं।
मोक्षमार्ग प्रारम्भ, बिना, समकित के होता कभी नहीं ||7||
पृथ्वी वायु वनस्पति जल अरु **अग्नि** काय की दया नहीं।
त्रस की हिंसा सदा हुई, **षटकायक** रक्षा हुई नहीं ||8||
स्पर्शन रसना घ्राण चक्षु, कर्णेन्द्रिय वश में हुई नहीं।
पंचेन्द्रिय के वशीभूत हो, मन को वश में किया नहीं ||9||
पंचेन्द्रिय अरु **क्रोध मान माया, लोभादिक** चार कषाय।
भोजन, राज्य, चोर, स्त्री की कथा, चार विकथा दुखदाय ||10||
निद्रा नेह मिलाकर **पंद्रह,** होते आगे अस्सी भेद।
हैं सैतीस हजार पाँच सौ, इस प्रमाद के पूरे भेद ||11||
क्रोधमान माया लोभादिक, चार कषाय भेद सोलह।
नो कषाय मिल भेद हुए, पच्चीस बंध के ही उपग्रह ||12||
इनके नाश बिना प्रभु चेतन, इस भव वन में अटका है।
विषय कषाय प्रमादलीन हो, चारों गति में भटका है ||13||
मन वच काया तीन योग ये, कर्मबंध के कारण हैं।
पंद्रह भेद का ज्ञान कर लो जो, भव भव में दुखदारुण हैं ||14||
मनोयोग के चार भेद हैं, वचनयोग के भी हैं चार।
काययोग के सात भेद हैं, ये सब योग हैं बन्ध के द्वार ||15||
सत्य, असत्य, उभय, अनुभय, ये **मनोयोग के चारों** भेद।
सत्य, असत्य, उभय, अनुभय, ये **वचनयोग के चारों** भेद ||16||

काय योग के सात भेद हैं, **औदारिक, औदारिक मिश्र।**
वैक्रियक, वैक्रियक मिश्र है, **आहारक, आहारक मिश्र** ||17||
कार्माण है भेद सातवाँ, जो जन करते इनका नाश।
अष्टम वसुधा, सिद्ध स्वपद वे पाते हैं, अविचल अविनाश ||18||
कर्मबंध के ये सब कारण, इनको करूँ शीघ्र विध्वंस।
परम मोक्ष की प्राप्ति करूँ, शाश्वत सुख पाए चेतन हंस ||19||
विनय भाव से भक्ति पूर्वक, मैंने प्रभु की है पूजन।
जब तक शुद्ध स्वरूप न पाऊँ रहूँ आपकी चरण शरण ||20||
ॐ ह्रीं श्री अजितनाथ जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

गज लक्षण युत **अजित पद** भाव सहित उरधार।
मन वच तन जो पूजते वे होते भव पार।।

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्।
जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री अजितनाथ जिनेन्द्राय नमः।

54 - श्री सम्भवनाथ जिन पूजन

वर्तमान हुंडावसर्पिणी, कर्मभूमि शुभ चौथा काल।
तृतीय तीर्थंकर **श्री संभवनाथ, सुसेना माँ** के लाल ||1||
मगध देश **श्रावस्ती नगरी** के, राजा **जितारिनन्दन।**
मति श्रुत अवधिज्ञान के धारी, जन्मे स्वामी संभव जिन ||2||
निज पुरुषार्थ स्वबल के द्वारा, तुमने पाया केवलज्ञान।
चार घातिया की सैतालिस, प्रकृतियों का करके अवसान ||3||
चऊँ अघाति की सोलह, क्रूर प्रकृति नाशी अरहन्त हुए।
त्रेसठ कर्म प्रकृतियाँ क्षयकर, वीतराग भगवन्त हुए ||4||
ॐ ह्रीं श्री संभवनाथ जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट्, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, मम् सन्निहितो भव भव वषट्।

स्वानुभूति वैभव का निर्मल, सलिल सातिशय जल भर लूँ।
निज स्वभाव की निर्मलता से, मैं शुद्धत्व प्राप्त कर लूँ।।
संभव जिनका संभवतः, निज अन्तर में दर्शन कर लूँ।
तो भव भय हर कर हे स्वामी, मुक्ति लक्ष्मी को वर लूँ ||1||
ॐ ह्रीं श्री संभवनाथ जिनेन्द्राय जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि.।
स्वानुभूति वैभव का शीतल, चंदन मैं चर्चित कर लूँ।
निज स्वभाव की शीतलता से, मैं सिद्धत्व प्राप्त कर लूँ।।संभव||2||
ॐ ह्रीं श्री संभवनाथ जिनेन्द्राय संसारताप विनाशनाय चंदनं नि.।
स्वानुभूति वैभव के उत्तम, उज्जवल अक्षत चित्त धर लूँ।
निज स्वभाव की उज्जवलता से, मैं आत्मत्व प्राप्त कर लूँ।।संभव||3||
ॐ ह्रीं श्री संभवनाथ जिनेन्द्राय अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं नि.।
स्वानुभूति वैभव के कोमल नव [1]**प्रसून** उर में भर लूँ।
निज स्वभाव की मृदु सुवास से, निज शीलत्व प्राप्त कर लूँ।।संभव||4||
ॐ ह्रीं श्री संभवनाथ जिनेन्द्राय कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।
स्वानुभूति वैभव के पावन चरु, पवित्र निज में धर लूँ।
निज स्वभाव की शुद्ध वृत्ति से, क्रूर प्रवृत्ति का क्षय कर लूँ।।संभव||5||
ॐ ह्रीं श्री संभवनाथ जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।
स्वानुभूति वैभव प्रकाश से, अन्तर ज्योतिर्मय कर लूँ।
निज स्वभाव के ज्ञानदीप से, मैं अज्ञान तिमिर हर लूँ।।संभव||6||
ॐ ह्रीं श्री संभवनाथ जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।
स्वानुभूति वैभव की शुचिमय, ध्यान धूप उर में धर लूँ।
निज स्वभाव के पूर्ण ध्यान से, अष्टकर्म रिपु को हर लूँ।।संभव ||7||
ॐ ह्रीं श्री संभवनाथ जिनेन्द्राय अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।

1. पुष्प

स्वानुभूति वैभव के पावन, शिवफल अन्तर में भर लूँ।
निज स्वभाव अवलंबन द्वारा मैं, मोक्षतत्व प्राप्त कर लूँ।।संभव||8||
ॐ ह्रीं श्री संभवनाथ जिनेन्द्राय महामोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।
स्वानुभूति वैभवमय **दर्शन, ज्ञान चरित्र** हृदय धर लूँ।
चित्स्वभावमय समयसारवैभव का, स्वत्व प्राप्त कर लूँ।।
संभव जिनका संभवतः, निज अन्तर में दर्शन कर लूँ।
तो भव भय हर कर हे स्वामी, मुक्ति लक्ष्मी को वर लूँ ||9||
ॐ ह्रीं श्री संभवनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

श्री पंचकल्याणक अर्घ्य

नव बारह योजन की नगरी, रचकर धनपति मग्न हुआ।
गर्भ पूर्व छह मास रत्न, बरसा कर इन्द्र प्रसन्न हुआ।।
ग्रैवेयक से आये **मात सुसेना** का उर धन्य हुआ।
फागुन शुक्ल अष्टमी को **संभव प्रभु** का शुभ स्वप्न हुआ ||1||
ॐ ह्रीं फागुन शुक्ल अष्टम्यां गर्भकल्याण प्राप्त श्री संभवनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।
कार्तिक शुक्ल पूर्णिमा के दिन **श्रावस्ती** में जन्म हुआ।
नृप जितारि मन में हर्षाये तिहूँ जग में आनन्द हुआ।।
मेरु सुदर्शन पांडुकवन में संभव प्रभु का नव्हन हुआ।
एक सहस्त्र अष्ट कलशों में क्षीरोदधि जल से न्हवन हुआ ||2||
ॐ ह्रीं कार्तिक शुक्ल पूर्णिमायां जन्मकल्याणप्राप्त श्री संभवनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।
मगसिर शुक्ल पूर्णिमा को ही जब उर में वैराग्य हुआ।
राज्य सम्पदा को ठुकराया वस्त्राभूषण त्याग दिया।।

संभव प्रभु को लौकान्तिक देवों ने, शत शत नमन किया।
गये **सहेतुक वन** में हर्षित पंच महाव्रत ग्रहण किया ||3||
ॐ ह्रीं श्री मगसिर शुक्ल पूर्णिमायां तपोमंगलप्राप्त श्री संभवनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

कार्तिक कृष्ण चतुर्थी तक प्रभु चौदह वर्ष रहे छद्मस्थ।
केवलज्ञान लक्ष्मी पाई, चार घातिया करके ध्वस्त।।
समवशरण में जग जीवों के, अन्धकार का नाश हुआ।
संभव जिनकी दिव्य प्रभा से, सम्यकज्ञान प्रकाश हुआ ||4||
ॐ ह्रीं श्री कार्तिक कृष्ण चतुर्थी दिने ज्ञानकल्याण प्राप्त श्री संभवनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

धवलदत्त शुभ कूट शिखर पर, अंतिम शुक्ल स्वध्यान किया।
संभव जिन ने हे **अयोगकेवली** परम निर्वाण लिया।।
शेष अघाति कर्म सब क्षय कर पद सिद्धत्व महान पाया।
जय जय संभवनाथ सुरों ने मंगल मोक्ष कल्याण मनाया ||5||
ॐ ह्रीं श्री चैत्रशुक्ल षष्टी दिने मोक्षकल्याण प्राप्त श्री संभवनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

जयमाला

सर्वलोक जित सर्व, दोषहर सदानंद सागर सर्वेश।
संभवनाथसुधी संवरमय स्वयंबुद्ध सौभागी स्वदेश ||1||
इक्ष्वाकुल भूषण स्वामी, न्यायवान अति परम उदार।
अश्व चिन्ह चरणों में शोभित, स्वर्गों से आता श्रृंगार ||2||
भव तन भोग भोगते स्वामी, पूरा [1]**यौवन वय** बीता।
एक दिवस नभ में देखी, छाया बदली की छवि रीति ||3||

1. यौवन अवस्था

मेघ विनाश देखकर उर में, नश्वरता का भान हुआ।
राज्य, पाट, पुर, वैभव त्यागा, वन की ओर प्रयाण हुआ ||4||
एक सहस्त्र नृपों के संग में तुमने जिन दीक्षाधारी।
पंचमुष्टि कच लोंच किया प्रभु, लिए महाव्रत सुखकारी ||5||
नृप सुरेन्द्र गृह किया पारणा, पंचाश्चर्य हुए तत्क्षण।
मौन तपस्या **वर्ष चतुर्दश** में, जो पूर्ण हुई भगवन ||6||
समवशरण में द्वादश सभाभरी, जग का कल्याण किया।
सकल जगत में देव आपका, उपदेशामृत पान किया ||7||
शक्ति रूप से सभी जीव हैं, ज्ञान स्वभावी सिद्ध समान।
व्यक्त रूप से जो हो जाता, वही कहाता सिद्ध महान ||8||
जो निजात्म को ध्याता आया, वह बन जाता है भगवान।
जो **विभाव** में रत रहता है, वह दुखिया संसारी जान ||9||
पुण्य पाप दोनों विभाव हैं, इनको जानों ज्ञानी बन।
पुण्य पाप के खेल जगत में, देखो केवल दृष्टा बन ||10||
इनमें राग द्वेष मत करना, समता भाव हृदय धरना।
मोह ममत्व नाश कर प्राणी, अघमिथ्यात्व तिमिर हरना ||11||
यह उपदेश हृदय में धारूँ, निज अनुभव महिमा आये।
अनुभव की हरियाली सावन, भादों सी उर में छाये ||12||
पाँचों इन्द्रिय वश में करके, चार कषाये मंद करूँ।
मन कपि की चंचलता रोकूँ, उर में निज आनन्द भरूँ ||13||
सम्यक्दर्शन को धारण कर, ग्यारह प्रतिमाएँ धारूँ।
क्रम क्रम से इनका पालन कर, श्रेष्ठ महाव्रत स्वीकारूँ ||14||

इस प्रकार प्रभु पथ पर चलकर, निज स्वरूप पा जाऊँगा।
निज स्वभाव के अनुभव से ही, महामोक्ष पद पाऊँगा ||15||
ॐ ह्रीं श्री संभवनाथ जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं नि.।

संभव प्रभु के **पदकमल** भाव सहित उर धार।
मन वच तन जो पूजने वे होते भव पार।।
इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्
जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री संभवनाथ जिनेन्द्राय नमः।

55. श्री अभिनन्दननाथ जिन पूजन

[1]**अभिनन्दन अम्यध्न** अयोगी अविनश्वर अध्यात्म स्वरूप।
अमित ज्योति अभ्यर्च आत्मन् अविकारी अतिशुद्ध अनूप ||1||
रत्नत्रय की नौका पर चढ़, आप हुए भवसागर पार।
सकल कर्म मल रहित, आप की गूंज रही है जयकार ||2||
ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दननाथ जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट्, ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दननाथ जिनेन्द्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दननाथ जिनेन्द्र अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।

क्षीरोदधि का धवल दुग्धसम, अति निर्मल जल मलहारी।
जन्म जरा मृत रोग नशाऊँ, पाऊँ शिवपद अविकारी।।
हे अभिनन्दननाथ जगत्पति, भव भय भंजन दुखहारी।
जन मन रंजन नित्य निरंजन, जगदानन्दन सुखकारी ||1||
ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दननाथ जिनेन्द्रनाय जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

1. चौथे तीर्थंकर

मलयागिरि का बावन चन्दन, लाऊँ शीतलताकारी।
भव भव का आताप मिटाऊँ, पाऊँ शिवपद अविकारी। हे अभि.||2||
ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दननाथ जिनेन्द्राय संसारताप विनाशनाय चंदनं नि.।
उत्तम पुंज अखण्डित तंदुल, लाऊँ उज्जवलता धारी।
भवसागर से पार उतर कर, पाऊँ शिवपद अविकारी। हे अभि.||3||
ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दननाथ जिनेन्द्राय अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं नि. स्वाहा।
परम पारिणामिक भावों के, सहज पुष्प प्रभु भवहारी।
शीलस्वगुण से कामभाव हर, पाऊँ शिवपद अविकारी। हे अभि.||4||
ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दननाथ जिनेन्द्राय कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।
पर द्रव्यों की भूख न मिट पाई, है क्षुधारोग भारी।
तृप्तस्वयं से क्षुधारोग हर, पाऊँ शिवपद अविकारी। हे अभि.||5||
ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दननाथ जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।
मिथ्याभ्रम के कारण अब तक, छाई भीषण अंधियारी।
स्वपर प्रकाशक ज्योति प्रकाशूं, पाऊँ शिवपद अविकारी। हे अभि.||6||
ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दननाथ जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि।
अष्टकर्म बंधन में पड़ा चारों, गति में पाया दुखभारी।
ध्यान धूप से कर्म जलाऊँ, पाऊँ शिवपद अविकारी। हे अभि.||7||
ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दननाथ जिनेन्द्राय अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।
निज परिणति रसपान करूँ प्रभु, पर परिणति तजभयहारी।
परममोक्ष फल सिद्ध सुगति, पाऊँ शिवपद अविकारी। हे अभि.||8||
ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दननाथ जिनेन्द्राय मोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।

सम्यक दर्शन ज्ञान चरितमय बन रत्नत्रय गुणधारी।
निज अनर्घ पदवी को धारूँ, पाऊँ शिवपद अविकारी।।
हे अभिनन्दननाथ जगत्पति, भव भय भंजन दुखहारी।
जन मन रंजन नित्य निरंजन, जगदानन्दन सुखकारी ||9||
ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दननाथ जिनेन्द्राय अनर्घ पद प्राप्तये अर्घ्यं नि. ।

श्री पंचकल्याणक अर्घ्य

शुभ वैशाख शुक्ल षष्ठी को, **माँ सिद्धार्थ** उर आये।
सोलह स्वप्न लखे माता ने, रत्नसुरों ने बरसाये।
छप्पन दिक्कुमारियों ने, माँ की सेवा कर सुख पाया।
हे **अभिनन्दन**[1] स्वामी जय जय, देवों ने मंगल गाया ||1||
ॐ ह्रीं वैशाख शुक्ल षष्ठी दिने गर्भमंगल प्राप्त श्री अभिनन्दननाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।

माघ शुक्ल द्वादश को स्वामी, **नगर अयोध्या** जन्म हुआ।
नृपति स्वयंवर के प्रांगण में, हर्ष हुआ आनन्द हुआ।।
एक सहस्त्र अष्ट कलशों से, **गिरि सुमेरु** पर अभिषेक हुआ।
हे अभिनन्दन **पांडुकवन** में, इन्द्रशचीसुर नृत्य हुआ ||2||
ॐ ह्रीं माघ शुक्ल द्वादश्यां जन्ममंगलप्राप्त श्री अभिनन्दननाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।

नश्वर मेघों का परिवर्तन, लखकर प्रभु वैराग्य हुआ।
अग्रोद्यान सरस तरु नीचे, वस्त्राभूषण त्याग हुआ।।

1. चौथे तीर्थंकर

माघ शुक्ल द्वादश लौकांतिक, देवों का जयनाद हुआ।
हे अभिनन्दन पंचमहाव्रत, धारे दूर प्रमाद हुआ ||3||
ॐ ह्रीं माघ शुक्ल द्वादश्यां तपोमंगलप्राप्त श्री अभिनन्दननाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।

पौष शुक्ल चतुर्दशी को, निर्मल केवलज्ञान हुआ।
समवशरण की रचनाकार, धनपति को अतिबहुमान हुआ।।
द्वादश सभा बीच दिव्यध्वनि, खिरी दिव्य उपदेश हुआ।
हे अभिनन्दन भव्यजनों को, प्राप्त मुक्ति संदेश हुआ ||4||
ॐ ह्रीं पौषशुक्ल चतुर्दश्यां केवलज्ञान प्राप्त अभिनन्दननाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।

प्रतिमा योग किया जब धारण, **पावन गिरि सम्मेद** हुआ।
शुभ वैसाख शुक्ल षष्टम, [1]**आनन्दकूट** से मोक्ष हुआ।।
चार प्रकार देव सब आये, हर्षित इन्द्र महान हुआ।
हे अभिनन्दनाथ जिनेश्वर, परम मोक्ष कल्याण हुआ ||5||
ॐ ह्रीं वैशाख शुक्ल षष्ठ्यां मोक्षमंगल प्राप्त अभिनन्दननाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।

जयमाला

कर्मभूमि के **चौथे तीर्थंकर** जिनपति अभिनन्दन नाथ।
देव आपकी पूजन करके मैं अनाथ भी हुआ सनाथ ||1||
हुए **एक सौ तीन सुगणधर**, पहिले **वज्रनाभि गणधर**।
मुख्य **आर्यिका श्री मेरुषेणा**, श्रोता थे सुर मुनिवर ||2||
नाथ कर्म सिद्धांत आपका, है अकाट्य अनुपम आगम।
कर्म शुभाशुभ भव निर्माता, कर्ता भोक्ता जीव स्वयम् ||3||

1. सम्मेद शिखर के आनन्दकूट नामक शिखर से

प्रकृति कर्म की मूल आठ हैं, सभी अचेतनजड़ पुद्गल।
इनमें संयोगी भावों से, होता आया जीव विकल ||4||
यदि पुरुषार्थ करे यह चेतन, निज स्वरूप का लक्ष करे।
ज्ञाता दृष्टा बनकर इनका, सर्वनाश प्रत्यक्ष करे ||5||
प्रकृति द्रव्य पुण्यों की अड़सठ, द्रव्य पाप की एक शतक।
प्रकृति एक सौ अड़तालीस हैं, एक शतक इक अघाति की।
ये सब हैं कार्मांण वर्गणा, महामोक्ष के घात की ||7||
ज्ञानावरणी की पाँच प्रकृति हैं, दर्शनवरणी की नौ।
मोहनीय इक्कीस अट्ठाइस हैं अन्तराय की पाँच गिनौं ||8||
घातिकर्म की ये सैंतालिस, निज स्वभाव का घात करें।
इन चारों का नाश करें जो, वही ज्ञान कैवल्य वरें ||9||
वेदनीय दो, आयु चार हैं, गोत्र कर्म की तो हैं दो।
नामकर्म की तिरानवे हैं, एक शतक अरु एक गिनों ||10||
शेष रही पच्चासी पर वे, अति निर्बल हो जाती है ||11||
इनका होता नाश चतुर्दश, गुणस्थान में है सम्पूर्ण।।
शुद्ध सिद्ध पर्याय प्रकट हो, सादि अनन्त सुखों में पूर्ण ||12||
मुझको प्रभु आशीर्वाद दो, मैं अब भव का नाश करूँ।
सम्यक् पूजन का फल पाऊँ, कर्मनाश शिव वास करूँ ||13||
कर्म प्रकृतियाँ एक शतक अरु, अड़तालीस अभाव करूँ।
मैं लोकाग्र शिखर पर जाकर, सिद्ध स्वरूप स्वभाव वरूँ ||14||
नाथ आपकी पूजन कर, मुझको अति आनन्द हुआ।
जन्म जन्म के पातक नाशे दूर शोक दुख द्वंद हुआ ||15||
ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दननाथ जिनेन्द्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये पूर्णार्घ्यं नि. ।

[1]**कपि लक्षण** प्रभु पद निरख, अभिनन्दन चित् धार।
मन वच तन जो पूजते, वे होते भव पार।।
इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्
जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दननाथ जिनेन्द्राय नमः ।

56. श्री सुमतिनाथ जिन पूजन

जय जय सुमतिनाथ, **पंचम तीर्थंकर** प्रभु मंगलदाता।
कुमतिविनाशक सुमति प्रकाशक, परम शांत जग विख्याता ||1||
सहज स्वरूपी सर्वशरण, **सर्वार्थ सिद्धी** संकट हर्ता।
सत्य तीर्थंकर सर्वगुणाश्रित सूर्य कोटि प्रभु सुखकर्ता ||2||
मैं अनादि से दुखिया व्याकुल शरण आपकी आया हूँ।
सत्यमार्ग सत्यार्थ प्राप्ति हित भाव सुमन प्रभु लाया हूँ ||3||
ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथ जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट्, ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथ जिनेन्द्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथ जिनेन्द्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।

जल की निर्मलता नाथ मुझको भाई है।
शुद्धातम की महिमा नहीं कर पाई है।।
हे सुमतिनाथ जिनदेव सुमति प्रदान करो।
संसार भ्रमण का मूल भ्रम अज्ञान हरो ||1||
ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथ जिनेन्द्राय जन्मजरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि. ।
चंदन की शीतलता सदा ही भाई है।
शुद्धातम की महिमा नहीं कर पाई है।।हे सुमति||2||
ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथ जिनेन्द्राय संसारताप विनाशनाय चंदनं नि. ।

1. बन्दर का चिन्ह

तंदुल की उज्ज्वलता, हृदय को भायी है।
शुद्धातम की महिमा नहीं कर पाई है।।हे सुमति॥3॥
ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथ जिनेन्द्राय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि.।
पुष्पों की सरस सुवास, मन को भायी है।
शुद्धातम की महिमा नहीं कर पाई है।।हे सुमति॥4॥
ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथ जिनेन्द्राय कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।
नित खाकर भी नैवेद्य, तृप्ति नहीं हो पाई है।
शुद्धातम की महिमा, नहीं कर पाई है।।हे सुमति॥5॥
ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथ जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।
रत्नों की दीपक, ज्योति तो दिखलाई है।
शुद्धातम की महिमा, नहीं कर पाई है।।हे सुमति॥6॥
ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथ जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।
मन महा सुगंधित धूप, सुरभि सुहाई है।
शुद्धातम की महिमा, नहीं कर पाई है।।हे सुमति ॥7॥
ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथ जिनेन्द्राय अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।
अनुकूल पुण्य फल, राग की रुचि भाई है।
शुद्धातम की महिमा नहीं, कर पाई है।।हे सुमति ॥8॥
ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथ जिनेन्द्राय महामोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।
जग के द्रव्यों की चाह, नित ही भायी है।
शुद्धातम की महिमा, नहीं कर पाई है।।
हे सुमतिनाथ जिनदेव, सुमति प्रदान करो।
संसार भ्रमण का मूल, भ्रम अज्ञान हरो ॥9॥
ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

श्री पंचकल्याणक अर्घ्य

स्वर्ग **जयन्तविमान**[1] त्यागकर, **मात मंगला** उर आए।
नगर **अयोध्या** धन्य हो गया, रत्न सुरों ने बरसाए।।
सोलह स्वप्न लखे माता ने, **श्रावण शुक्ल दूज** भाए।
जय जय सुमतिनाथ तीर्थंकर, इन्द्रादिक सुर मुस्काए ॥1॥
ॐ ह्रीं श्रावण शुक्ल द्वितीयां गर्भकल्याण प्राप्त श्री सुमतिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

चैत्र शुक्ल एकादशी को, प्रभु भारत भू पर आए।
नृपति मेघप्रभ के आंगन में, देवी ने मंगल गाए।।
ऐरावत पर सुरपति **प्रभु** को, गोदी में ले हर्षाए।
जय जय सुमतिनाथ जन्मोत्सव पर, जग ने बहुसुख पाए ॥2॥
ॐ ह्रीं चैत्र शुक्ल एकादश्यां जन्मकल्याण प्राप्त श्री सुमतिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

शुभ वैशाख शुक्ल नवमी को, जगा हृदय वैराग्य महान।
[2]**लौकांतिक ब्रह्मर्षि** सुरों ने, किया स्वर्ग से आ गुणगान।।
दीक्षित हुए सहेतुक वन में, **तरु प्रियंगु** के नीचे आन।
जय जय सुमतिनाथ तीर्थंकर, हुआ आपका तप कल्याण ॥3॥
ॐ ह्रीं वैशाख शुक्ल नवम्यां तपकल्याण प्राप्त श्री सुमतिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

बीस वर्ष छदमस्थ रहे प्रभु, धारा **प्रतिमायोग** प्रधान।
चैत सुदी ग्यारस को पाया, शुक्ल ध्यान धर केवलज्ञान।।

1. 3रा अनुत्तर विमान
2. 5वें स्वर्ग ब्रह्मलोक के अंतिम भाग में रहने वाले देवतागण।

समवशरण की अनुपम रचना हुई, हुआ उपदेश महान।
जय जय सुमतिनाथ तीर्थंकर, अद्भुत हुआ ज्ञान कल्याण ||4||
ॐ ह्रीं चैत्र सुदीएकादश्यां ज्ञान कल्याण प्राप्त श्री सुमतिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

चैत्र शुक्ल एकादशी को, अष्टकर्म का कर अवसान।
[1]**अविचल कूट शिखर सम्मेदाचल** से, पाया पद निर्वाण।।
मुक्ति धरा तक गूंज उठे, देवों के सुन्दर मंजुल गान।
जय जय सुमतिनाथ परमेश्वर, अनुपम हुआ मोक्षकल्याण ||5||
ॐ ह्रीं चैत्रशुक्ल एकादश्यां महामोक्ष कल्याण प्राप्त श्री सुमतिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

सुमतिनाथ प्रभु मुझे सुमति दो, उर में निर्मल भाव जगे।
धर्म भाव से ही मेरी नैया, भवसागर पार लगे ||1||
एक शतक सोलह गणधर थे, **मुख्य बज्र गणधर स्वामी**।
प्रमुख आर्यिका अनंतमति थी, द्वादश सभा विश्वनामी ||2||
अहिंसादि पाँचों व्रत की, पच्चीस भावनाएँ भाऊँ।
पंच पाप के पूर्ण त्याग की, पाँच भावनाएँ ध्याऊँ ||3||
ध्याऊँ मैत्री आदि चार, प्रशमादि भावना चार प्रवीण।
शल्य त्याग की तीन भावना भव तन, भोग त्याग निज लीन ||4||
दर्शन विशुद्धि भावना सोलह, अंतर मन से मैं ध्याऊँ।
क्षमा आदि दशलक्षण की, दश धर्म भावनाएँ भाऊँ ||5||
अनशन आदि तप की बारह, दिव्य भावनाएँ ध्याऊँ।
अनित्य अशरण आदि भावना, द्वादश नित ही मैं भाऊँ ||6||

1. सम्मेद शिखर स्थित एक अविचल कूट नाम का शिखर

ध्यान भावना सोलह ध्याऊँ, तत्त्व भावना भाऊँ सात।
रत्नत्रय की तीन भावना, अनेकांत की एक विख्यात ||7||
श्रुत भावना एक नित ध्याऊँ, अरु शुद्धात्म भावना एक।
कब निर्ग्रंथ बनूँ यह भाऊँ, द्रव्य आदि भावना अनेक ||8||
एक शतक पच्चीस भावनाऐं, मैं नित प्रति प्रभु भाऊँ।
मन–वच–काय त्रियोग संवारूँ, शुद्ध भावना प्रगटाऊँ ||9||
इस प्रकार हो मोक्षमार्ग मेरा, प्रशस्त निज ध्यान करूँ।
देव आपकी भाँति धार, संयम निज का कल्याण करूँ ||10||
चार **औदयिक औपशमिक, क्षायोपशमिक क्षायिक** परभाव।
इन चारों के आश्रय से ही, होती है अशुद्ध पर्याय ||11||
इन चारों से रहित जीव का, एक **पारिणामिक निजभाव**।
पंचम भाव के आश्रय से ही, होती प्रकट सिद्ध पर्याय ||12||
पंच महाव्रत पंच समिति, त्रयगुप्ति त्रयोदश विधि चारित्र।
अष्टकर्म विषवृक्ष मूल को, नष्ट करूँ धर ध्यान पवित्र ||13||
पंचाचारयुक्त, करके प्रपंच से, रहित ध्यान ध्याऊँ।
निरुपराग निर्दोष निरंजन, निज परमात्म तत्त्व पाऊँ ||14||
पंचम परम पारिणामिक से, पंचमगति शिवमय पाऊँ।
द्रव्य कर्म अरु भाव कर्म से, हो विमुक्त निजगुण गाऊँ ||15||
सुमतिनाथ पंचम तीर्थंकर के, पद पंकज नित ध्याऊँ।
पंच परावर्तन अभावकर, सुखमय सिद्ध स्वगति पाऊँ ||16||
ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथ जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं नि.।

चकवा शोभित प्रभु चरण सुमतिनाथ उर धार।
मन वच तन जो पूजते वे हो जाते भव पार।।

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथ जिनेन्द्राय नमः।

57 - श्री पद्मप्रभ जिन पूजन

जय जय [1]**पद्म प्रभ जिनेश** पद्मनाभ पावन पद्माकर परमेश।
वीतराग सर्वज्ञ हितंकर, पद्मनाथ प्रभुपूज्य महेश ॥1॥
भवदुख हर्ता मंगलकर्ता, षष्टम तीर्थंकर पद्मेश।
हरो अमंगल प्रभु अनादि का, पूजन का है यह उद्देश्य ॥2॥
ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट्, ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।

शुद्ध भाव का धवल नीर लेकर, जिन चरणों में आऊँ।
जन्म मरण की व्याधि मिटाऊँ, नाचूँ गाऊँ हर्षाऊँ।।
परम पूज्य पावन परमेश्वर, पद्मप्रभ प्रभु को ध्याऊँ।
रोग शोक संताप क्लेश हर, मंगलमय शिवपद पाऊँ ॥1॥
ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्राय जन्म जरामृत्यु विनाशनाय जलं नि.।
शुद्ध भाव का शीतल चंदन ले, प्रभु चरणों में आऊँ।
भव आताप व्याधि को नाशूँ, नाचूँ गाऊँ हर्षाऊँ।।परम पूज्य॥2॥
ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्राय भवताप विनाशनाय चंदनं नि.।
शुद्ध भाव के उज्जवल अक्षत, ले जिन चरणों में आऊँ।
अक्षय पद अखंड पाऊँ मैं, नाचूँ गाऊँ हर्षाऊँ।।परम पूज्य॥3॥
ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्राय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि.।
शुद्ध भाव के पुष्प सुरभिमय, ले प्रभु चरणों में आऊँ।
कामबाण की व्याधि नशाऊँ, नाचूँ गाऊँ हर्षाऊँ।।परम पूज्य॥4॥
ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्राय कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।

1. 6वें तीर्थंकर

शुद्ध भाव नैवेद्य सुरुचिमय, ले प्रभु चरणों में आऊँ।
क्षुधा व्याधि का बीज मिटाऊँ, नाचूँ गाऊँ हर्षाऊँ।।परम पूज्य॥5॥
ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।
शुद्ध भाव की ज्ञान ज्योति, लेकर प्रभु चरणों में आऊँ।
मोहनीय भ्रम तिमिर नशाऊँ, नाचूँ गाऊँ हर्षाऊँ।।परम पूज्य॥6॥
ॐ ह्रीं पद्मप्रभ जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।
शुद्ध भाव की धूप सुगंधित, ले प्रभु चरणों में आऊँ।
अष्टकर्म विध्वंस करूँ मैं, नाचूँ गाऊँ हर्षाऊँ।।परम पूज्य ॥7॥
ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्राय अष्टकर्म विनाशनाय धूपं नि.।
शुद्धभाव सम्यक्त्व सुफल, पाने प्रभु चरणों में आऊँ।
शिवमय महामोक्ष फल पाऊँ, नाचूँ गाऊँ हर्षाऊँ।।परम पूज्य ॥8॥
ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्राय महामोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।
शुद्ध भाव का अर्घ अष्ट विध, ले प्रभु चरणों में आऊँ।
शाश्वत निज अनर्घ पद पाऊँ, नाचूँ गाऊँ हर्षाऊँ।।
परम पूज्य पावन परमेश्वर, पद्मप्रभ प्रभु को ध्याऊँ।
रोग शोक संताप क्लेश हर, मंगलमय शिवपद पाऊँ ॥9॥
ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्राय अनर्घ पद प्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

श्री पंचकल्याणक अर्घ्य

शुभ दिन **माघ कृष्ण षष्ठी** को **मात सुसीमा** हर्षाए।
उपरिम ग्रैवेयक विमान प्रीतिंकर तज उर में आए ॥1॥
नव बारह योजन नगरी रच, रत्न इन्द्र ने बरसाये।
जय श्री पद्मप्रभ तीर्थंकर, जगती ने मंगल गाए।।
ॐ ह्रीं श्री माघ कृष्ण षष्ठी दिने गर्भमंगल प्राप्त श्रीपद्मप्रभ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

कार्तिक कृष्ण त्रयोदशी को, **कौशाम्बी** में जन्म लिया।
गिरि सुमेरु पर इन्द्रादिक ने, क्षीरोदधि जल ने नव्हन किया।।
राजा धरणराज आँगन में, सुर सुरपति ने नृत्य किया।
जय जय पद्मप्रभ तीर्थंकर, जग ने जय जय नाद किया ||2||
ॐ ह्रीं श्री कार्तिक कृष्ण त्रयोदश्यां जन्ममंगल प्राप्त श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।

कार्तिक कृष्ण त्रयोदशी को, तुमको जाति स्मरण हुआ।
जागा उर वैराग्य तभी, **लौकान्तिक** सुर आगमन हुआ।।
तरु **प्रियंगु मनहर वन** में, दीक्षाधारी तप ग्रहण हुआ।
जय जय पद्मप्रभ तीर्थंकर, अनुपम तप कल्याण हुआ ||3||
ॐ ह्रीं श्री कार्तिक कृष्ण त्रयोदश्यां तपोमंगलप्राप्त श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।

चैत्र शुक्ल पूर्णिमा मनोहर, कर्म घाति अवसान किया।
कौशाम्बी वन शुक्ल ध्यान धर, निर्मल केवलज्ञान लिया।।
समवशरण में द्वादश सभा जुड़ी अनुपम उपदेश दिया।
जय जय पद्मप्रभ तीर्थंकर, जग को शिव सन्देश दिया ||4||
ॐ ह्रीं श्री चैत्र शुक्लपूर्णिमायां ज्ञानमंगलप्राप्त श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।

मोहन कूट सम्मेदाचल से, प्रभु ने योग निरोध किया।
फाल्गुन कृष्ण चतुर्थी को, प्रभु भव बन्धन का नाश किया।।
अष्टकर्म हर ऊर्ध्व गमनकर, सिद्ध लोक आवास लिया।
जयति पद्मप्रभ जिन तीर्थंकर, शाश्वत आत्म विकास किया ||5||
ॐ ह्रीं श्री फाल्गुन कृष्ण चतुर्थ्यां मोक्ष मंगल प्राप्त श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।

जयमाला

परम श्रेष्ठ पावन परमेष्ठी, पुरुषोत्तम प्रभु परमानन्द।
परम ध्यानरत परमब्रह्ममय, प्रशान्तात्मा पद्मानन्द ||1||
जय जय पद्मप्रभ तीर्थंकर, जय जय जय कल्याणमयी।
नित्य निरंजन जन मन रंजन, प्रभु अनन्त गुण ज्ञानमयी ||2||
राजपाट अतुलित वैभव को, तुमने क्षण में ठुकराया।
निज स्वभाव का अवलम्बन ले, परम शुद्ध पद को पाया ||3||
भव्य जनों को समवशरण में, वस्तुतत्त्व विज्ञान दिया।
चिदानन्द चैतन्य आत्मा, परमात्मा का ज्ञान दिया ||4||
गणधर एक शतक ग्यारह थे, **मुख्य वज्रचामर ऋषिवर**।
प्रमुख रात्रिषेणा सुआर्या, श्रोता पशु नर सुर मुनिवर ||5||
सात तत्त्व छह द्रव्य बताए, मोक्षमार्ग संदेश दिया।
तीन लोक के भूले भटके, जीवों को उपदेश दिया ||6||
निःशंकादिक अष्ट अंग, सम्यकदर्शन के बतलाये।
अष्ट प्रकार ज्ञान सम्यक् बिन, मोक्षमार्ग ना मिल पाये ||7||
तेरह विधि सम्यक् चारित का, सतस्वरूप है दिखलाया।
रत्नत्रय ही पावन शिवपथ, सिद्ध स्वपद को दर्शाया ||8||
हे प्रभु यह उपदेश ग्रहण कर, मैं निज का कल्याण करूँ।
निज स्वरूप की सहज प्राप्ति कर, पद निर्ग्रंथ महान वरूँ ||9||
इष्ट अनिष्ट संयोगों में मैं, कभी न हर्ष विषाद करूँ।
साम्यभाव धर निज अन्तर में, भव का वाद विवाद हरूँ ||10||
तीन लोक में सार स्वयं के, आत्म द्रव्य का भान करूँ।
पर पदार्थ की ममता त्यागूँ, सुखमय भेद विज्ञान करूँ ||11||

द्रव्य भाव पूजन करे, मैं आत्म चिंतवन मनन करूँ।
नित्य भावना द्वादश भाऊँ, राग द्वेष का हनन करूँ ||12||
तुम पूजन से पुण्य सातिशय हो, भव–भव तुमको पाऊँ।
जब तक मुक्ति स्वपद ना पाऊँ, तब तक चरणों में आऊँ ||13||
संवर और निर्जरा द्वारा, पाप पुण्य सब नाश करूँ।
प्रभु नव केवललब्धि रमा, पा आठों कर्म विनाश करूँ ||14||
तुम प्रसाद से मोक्ष लक्ष्मी पाऊँ, निजकल्याण करूँ।
सादि अनन्त सिद्ध पद पाऊँ, परम शुद्ध निर्वाण वरूँ ||15||
ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं नि.।

कमलचिन्ह शोभित चरण, पद्मप्रभ उरधार।
मन वच तन जो पूजते, वे होते भव पार।।

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्राय नमः।

58. श्री सुपार्श्वनाथ जिन पूजन

जय [1]**सुपार्श्व प्रभु सुप्रतिष्ठ, राजा के नन्दन** महाविशाल।
माँ पृथ्वी देवी के प्रियसुत, सहज स्वरूपी सदात्रिकाल ||1||
सुखदाता सुखपुंज सर्वदर्शी, सुखसागर हे सत्येश।
सकल वस्तु विज्ञाता स्वामी, सिद्धानन्द सत्य विद्येश ||2||
आत्म शक्ति का आश्रय लेकर, केवलज्ञानी आप हुए।
वीतराग सर्वज्ञ महाप्रभु, निष्कषाय निष्पाप हुए ||3||
ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथ जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट्, ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथ जिनेन्द्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथ जिनेन्द्र अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।

1 7वें तीर्थंकर

सिंधु गंगानीर निर्मल स्वर्ण झारी में भरूँ।
जन्म मरण विनाश कर, मैं चार गति के दुख हरूँ।।
श्री सुपार्श्व जिनेन्द्र चरणाम्बुज, हृदय धारण करूँ।
निज आत्मा का आश्रय ले, ज्ञान लक्ष्मी को वरूँ ||1||
ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि. स्वाहा।
मलय चंदन दाहनाशक स्वर्ण भाजन में धरूँ।
भव भ्रमण का ताप हर मैं चार गति के दुख हरूँ।।श्री सुपार्श्व||2||
ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय संसार ताप विनाशनाय चंदनं नि.।
धवल तंदुल पुंज उज्जवल शुभ्र, चरणों में धरूँ।
अक्षय अखंड अनंत पद पा, चार गति के दुख हरूँ।।श्री सुपार्श्व||3||
ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि.।
पुष्प–नन्दनवन सुरभिमय, देव चरणों में धरूँ।
काम ज्वर संताप हर मैं, चारगति के दुख हरूँ।।श्री सुपार्श्व||4||
ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।
सरस पावन सोहने, नैवेद्य चरणों में धरूँ।
चिर अतृप्ति सुतृप्त कर मैं चार गति के दुख हरूँ।।श्री सुपार्श्व||5||
ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय क्षुधा रोग विध्वंसनाय नैवेद्यं नि.।
ज्ञान दीपक ज्योति जगमग, निज प्रकाशित मैं करूँ।
मोहतम को सर्वथा हर, चार गति के दुख हरूँ।।श्री सुपार्श्व||6||
ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।
धर्म की दश अंग मय निज, धूप अन्तर में धरूँ।
कर्म अष्ट विनष्ट कर मैं, चार गति के दुख हरूँ।।श्री सुपार्श्व ||7||
ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अष्टकर्म दहनाय धूपं नि.।

पुण्य फल के राग की रुचि, अब नहीं किंचित करूँ।
मोक्ष फल परमात्म पद पा, चार गति के दुख हरूँ।।श्री सुपार्श्व ||8||
ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय मोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।
सिद्ध प्रभु के अष्ट गुण का, रात दिन सुमरण करूँ।
भाव अर्घ चरण चढ़ाऊँ चार, गति के दुख हरूँ।।
श्री सुपार्श्व जिनेन्द्र चरणाम्बुज, हृदय धारण करूँ।
निज आत्मा का आश्रय ले, ज्ञान लक्ष्मी को वरूँ ||9||
ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ पद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

श्री पंचकल्याणक अर्घ्य

मध्यम ग्रैवेयक विमान तज, मात गर्भ अवतार लिया।
माँ पृथ्वी देवी के सोलह, स्वप्नों को साकार किया।।
हुई नगर की सुन्दर रचना, रत्नों की बौछार हुई।
श्री सुपार्श्व की **भादव शुक्ला, षष्ठी** को जय जयकार हुई ||1||
ॐ ह्रीं श्री भाद्रपद शुक्ल षष्ट्यां गर्भ मंगल प्राप्त श्री सुपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।
वाराणसी नगर में राज, **सुप्रतिष्ठ गृह** जन्म हुआ।
ऐरावत पर सुरपति प्रभु को, गोदी में ले धन्य हुआ।।
नयन किए सहस्त्र किन्तु, फिर भी लख तृप्त न हो पाया।
ज्येष्ठ शुक्ल द्वादश को जन्मोत्सव, सुपार्श्व प्रभु का भाया ||2||
ॐ ह्रीं श्री ज्येष्ठ शुक्ल द्वादश्यां जन्ममंगल प्राप्त श्री सुपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।
ज्येष्ठ शुक्ल द्वादश को भाई, शुद्ध भावनाएं द्वादश।
उमड़ पड़ा वैराग्य हृदय में, निज भावों में आया रस।।

श्री वृक्ष के तले त्यागमय, तप कल्याण हुआ भारी।
श्री सुपार्श्व ने पंच महाव्रत, धारणकर दीक्षा धारी ||3||
ॐ ह्रीं श्री ज्येष्ठ शुक्ल द्वादश्यां तपो मंगलप्राप्त श्री सुपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।
फागुन कृष्ण सप्तमी को प्रभु, ज्ञान सूर्य का हुआ प्रकाश।
केवलज्ञान लक्ष्मी पाई घाति, कर्म का किया विनाश।।
पूरा लोकालोक ज्ञान में, युगपत दर्पणवत झलके।
प्रभु सुपार्श्व सर्वज्ञ हुए तुम, वीतराग पथ पर चलके ||4||
ॐ ह्रीं श्री फाल्गुन कृष्ण सप्तम्यां ज्ञान मंगलप्राप्त श्री सुपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।
फागुन कृष्णा षष्टी के दिन, **हुए अयोगी** हे भगवान।
एक समय में सिद्ध शिला पर, पहुंचे पा सिद्धत्व महान।।
गिरि सम्मेद प्रभास कूट, देवों ने किया मोक्ष कल्याण।
जयसुपार्श्व जिनराज सिद्धपद, पाया स्वामी धर निजध्यान ||5||
ॐ ह्रीं श्री फाल्गुन कृष्ण षष्ठयां मोक्षमंगल प्राप्त श्री सुपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

जय **सुपार्श्व सप्तम तीर्थंकर,** सुगुण विभूति सर्वदर्शी।
स्वस्तिक चिन्ह विभूषित चरणाम्बुज, अनुपम हृदयस्पर्शी ||1||
निज स्वरूप अवलंबन लेकर, हुए ज्ञान भावों में लीन।
भीषण उपसर्गों को जयकर, प्रभु अरहन्त हुए स्वाधीन ||2||
पंचानवे नाथ गणधर थे, **श्री बलदत्त प्रमुख गणधर।**
मुख्य आर्यिका मीनार्या थी, श्रोतासुरनर ऋषि मुनिवर ||3||

केवलज्ञान प्राप्त कर तुमने, आत्मतत्त्व का किया प्रचार।
विषय कषायों के कारण, जीवों का बढ़ता है संसार ||4||
पंच विषय स्पर्शन रसना, घ्राण चक्षु कर्णेन्द्रिय के।
इनमें लीन नहीं पा सकता, सुख आनन्द अतीन्द्रिय के ||5||
क्रोध मान माया लोभादिक, चार कषाय मूल जानों।
तीव्र मंद के भेद जानकर, इनकी गति को पहचानों ||6||
अनंतानुबंधी की चउ, **अप्रत्याख्यानावरणी** चार।
प्रत्ख्यानावरणी चार और **संज्वलन** की है चार ||7||
हास्य, अरति, रति, शोक जुगुप्सा, भय स्त्री, पुरुष, नपुंसक वेद।
नो कषाय मिल हो जाते, **पच्चीस कषाय बंध** के भेद ||8||
सम्यकदर्शन होते ही, इनका अभाव होता प्रारम्भ।।
धीरे–धीरे क्रमक्रम से इनका, मिट जाता है सब दंभ ||9||
चौथे गुणस्थान में जाती, **अनन्तानुबन्धी** की चार।
पंचम गुणस्थान में जाती, **अप्रत्याख्यानावरणी** चार ||10||
षष्टम गुणस्थान में जाती, **प्रत्याख्यानावरणी** चार।
द्वादश गुणस्थान में जाती, शेष **संज्वलन** की भी चार ||11||
नो कषाय भी इनके क्षय से, हो जाती हैं स्वयं विनाश।
सर्व कषायों के अभाव से, होता निर्मल आत्म प्रकाश ||12||
निष्कषाय जो हो जाता, वह **वीतराग जिन** पद पाता।
पूर्ण अनन्त अमूर्त अतीन्द्रिय, अविनाशी पद प्रकटाता ||13||
पूज चरण सुपार्श्वनाथ प्रभु, नित्य आपका ध्यान करूँ।
विषय कषाय अभाव करूँ, मैं मुक्ति वधू अविराम वरूँ ||14||
ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

श्री सुपार्श्व के युगल पद भाव सहित उरधार।
मन वच तन को पूजते वे होते भवपार।।
इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्
जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय नमः।

59. श्री चन्द्रप्रभ जिन पूजन

महासेन नृपनंद चंद्र, [1]**चंद्रप्रभ** जिनवर स्वामी।
मात **लक्ष्मणा के प्रियनन्दन**, जग उद्धारक प्रभु नामी ||1||
निज आत्मानुभूति से पाई, मोक्ष लक्ष्मी सुखधामी।
वीतराग सर्वज्ञ हितैषी, करूँणामय शिवपुरगामी ||2||
ॐ ह्रीं श्री चंद्रप्रभ जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट्, ॐ ह्रीं श्री चंद्रप्रभ जिनेन्द्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, ॐ ह्रीं श्री चंद्रप्रभ जिनेन्द्र अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्
तन की प्यास बुझाने वाला, यह निर्मल जल लाया हूँ।
आत्मज्ञान की प्यास बुझाने, प्रभु चरणों में आया हूँ।।
चंद्र जिनेश्वर चंद्र नाथ, चंद्रेश्वर चंदा प्रभु स्वामी।
राग द्वेष परिणति के नाशक, मंगलमय अन्तर्यामी ||1||
ॐ ह्रीं श्री चंद्रप्रभ जिनेन्द्राय जन्म जरामृत्यु विनाशनाय जलं नि.।
तन का ताप मिटाने वाला, शीतल चंदन लाया हूँ।
राग आग की दाह मिटाने, प्रभु चरणों में आया हूँ।।चंद्र||2||
ॐ ह्रीं श्री चंद्रप्रभ जिनेन्द्राय संसारताप विनाशनाय चंदनं नि.।
परम शुद्ध अक्षय पद पाने, उज्जवल अक्षत लाया हूँ।
भव समुद्र से पार उतरने, प्रभु चरणों में आया हूँ।।चंद्र||3||
ॐ ह्रीं श्री चंद्रप्रभ जिनेन्द्राय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि.।

1. ८वें तीर्थंकर

कामबाण से घायल होकर, पुष्प मनोहर लाया हूँ।
महाशील शीलेश्वर बनने, प्रभु चरणों में आया हूँ।।चंद्र||4||
ॐ ह्रीं श्री चंद्रप्रभ जिनेन्द्राय कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।
षट् द्रव्यों से भूख न मिट पाई, तो प्रभु चरूँ लाया हूँ।
आत्म तत्व की भूख मिटाने, प्रभु चरणों में आया हूँ।।चंद्र||5||
ॐ ह्रीं श्री चंद्रप्रभ जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।
अन्धकार तम हरने वाला दीप प्रभामय लाया लूँ।
आत्म दीप की ज्योति जलाने, प्रभु चरणों में आया हूँ।।चंद्र||6||
ॐ ह्रीं श्री चंद्रप्रभ जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।
पर परिणति का धुआँ उड़ाने, धूप सुगन्धित लाया हूँ।
अष्ट कर्म अरि पर जय पाने प्रभु चरणों में आया हूँ।।चंद्र ||7||
ॐ ह्रीं श्री चंद्रप्रभ जिनेन्द्राय अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।
पर विभाव फल से पीड़ित, होकर नूतन फल लाया हूँ।
अपना सिद्ध स्वपद पाने को, प्रभु चरणों में आया हूँ।।चंद्र ||8||
ॐ ह्रीं श्री चंद्रप्रभ जिनेन्द्राय मोक्षफल प्राप्ताय फलं नि.।
अष्ट द्रव्य का अर्घ मनोरम, हर्षित होकर लाया हूँ।
चिदानन्द चिन्मय पद पाने, प्रभु चरणों में आया हूँ।।
चंद्र जिनेश्वर चंद्रप्रभ, चंद्रेश्वर चन्दा प्रभु स्वामी।
राग द्वेष परिणति के नाशक, मंगलमय अन्तर्यामी ||9||
ॐ ह्रीं श्री चंद्रप्रभ जिनेन्द्राय अनर्घ पद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

श्री पंचकल्याणक अर्घ्य

चैत्र कृष्ण पंचमी मात उर, [1]**वैजयंत** तज कर आए।
सोलह स्वप्न दिखे माता को, रतन सुरों ने बरसाये।।

1. 2रा अनुत्तर विमान

मात लक्ष्मणा स्वप्न फलों को, जान हृदय में हर्षाई।
हुआ **गर्भ कल्याण महोत्सव**, घर घर में खुशियाँ छाई ||1||
ॐ ह्रीं श्री चैत्र कृष्ण पंचम्यां गर्भ मंगल प्राप्त श्री चंद्रप्रभ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।
पौष कृष्ण एकादशमी को, चन्द्रप्रभ का जन्म हुआ।
मेरु सुदर्शन पर मंगल, उत्सव कर सुरपति धन्य हुआ।।
चन्द्रपुरी में बजी बधाई, तीन लोक में सुख छाया।।
महासेन राजा के गृह में, देवों ने मंगल गाया ||2||
ॐ ह्रीं श्री पौषकृष्ण एकादश्यां जन्म मंगल प्राप्त श्री चन्द्रप्रभ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।
पौष कृष्ण एकादशी को, राज्य आदि सब छोड़ दिया।
यह संसार असार जानकर, तप से नाता जोड़ लिया।।
पंच महाव्रत धारण करके, वस्त्राभूषण त्याग दिये।
तप कल्याण मनाया देवों ने, जिनवर अनुराग लिए ||3||
ॐ ह्रीं श्री पौषकृष्ण एकादश्यां तप कल्याण प्राप्त श्री चंद्रप्रभ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।
तीन मास छद्मस्थ रहे प्रभु, उग्र तपस्या में हो लीन।
प्रतिमायोग धार चंद्रप्रभ शुक्ल ध्यान में हुए स्वलीन।
ध्यान अग्नि से **त्रेसठ कर्म प्रकृतियों**, का बल नाश किया।
फाल्गुन कृष्ण सप्तमी के दिन, **केवलज्ञान प्रकाश** लिया ||4||
ॐ ह्रीं श्री फाल्गुन कृष्ण सप्तम्यां केवलज्ञान प्राप्त श्री चंद्रप्रभ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।
शेष प्रकृति पिच्चासी का भी, अन्त समय अवसान किया।
फाल्गुन शुक्ल सप्तमी के दिन, प्रभु ने पद निर्वाण लिया।।

ललितकूट सम्मेदशिखर से, चंद्रप्रभ जिन मुक्त हुए।
ऊर्ध्व गमन कर सिद्ध लोक में, मुक्तिरमा से युक्त हुए ||5||
ॐ ह्रीं श्री फाल्गुन शुक्ल सप्तम्यां मोक्षमंगल प्राप्त श्री चंद्रप्रभ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

जयमाला

चन्द्र चिन्ह चित्रित चरण, चन्द्रप्रभ चित्त धार।
चिन्तामणि श्री चन्द्रप्रभ, चन्द्रामृत दातार ||1||
चन्द्रपुरी के न्यायवान **श्री, महासेन राजा** बलवान।
देवी लक्ष्मणा रानी उर से, जन्में चन्द्रप्रभ भगवान ||2||
इन्द्र शची सुर किन्नर यक्ष, सभी ने गाये मंगलगान।
तीर्थंकर का जन्म जानकर, धरती में भी आए प्राण ||3||
बड़े हुए प्रभु राजकाज में, न्याय पूर्वक लीन हुए।
जग के भौतिक भोग भोगते, सिंहासन आसीन हुए ||4||
इकदिन नभ में बिजली चमकी, नष्ट हुई तो किया विचार।
नाशवान पर्याय जान, छाया तत्क्षण वैराग्य अपार ||5||
वन सर्वार्थ नागतरु नीचे, परिजन परिकर धन सब त्याग।
पंचमुष्टि से केश लोंचकर, किया महाव्रत से अनुराग ||6||
हुए तपस्या लीन आत्मा का ही, प्रतिपल करते ध्यान।
शाश्वत निजस्वरूप आश्रय ले, पाया तुमने केवलज्ञान ||7||
थे **तिरानवे गणधर** जिनमें, **प्रमुख दत्तस्वामी ऋषिवर**।
मुख्य आर्यिका वरुणा, श्रोता, दानवीर आदिक सुरनर ||8||
समवशरण में तुमने प्रभुवर, वस्तु तत्त्व उपदेश दिया।
उपादेय है एक आत्मा, यह अनुपम संदेश दिया ||9||

ज्ञाता दृष्टा बने जीव तो, राग–द्वेष मिट जाता है।
जो निजात्मा में रहता है, वही परम पद पाता है ||10||
हो अयोगकेवली आपने, हे स्वामी पाया निर्वाण।
अर्धचन्द्रसम सिद्धशिला पर, पहुँचे चन्द्रप्रभ भगवान ||11||
अर्धचन्द्र शोभित चरणों में, अष्टम तीर्थंकर स्वामी।
जन्म मरण का चक्र मिटाने आया हूँ अन्तर्यामी ||12||
ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभ जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं नि.।

चन्द्रप्रभ के **पद कमल** भाव सहित उर धार।
मन वच तन जो पूजते वे होते भव पार।।

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभ जिनेन्द्राय नमः।

60- श्री पुष्पदंत जिन पूजन

जय जय **पुष्पदंत** पुरुषोत्तम, परम पवित्र पुनीत प्रधान।
नवम तीर्थंकर हे स्वामी, [1]**सुविधिनाथ** सर्वज्ञ महान ||1||
अनुपम महिमावंत मुक्ति के, [2]**कंत** पतित पावन भगवान।
पूर्ण प्रतिष्ठित शाश्वत शिवमय, परमोत्तम अनंतगुणवान ||2||
सिद्धवधू से परिणय करके, प्राप्त किया सिद्धों का धाम।
नित्य निरन्जन भवभय भंजन, भाव पूर्वक तुम्हें प्रणाम ||3||
ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंत जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट्, ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंत जिनेन्द्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंत जिनेन्द्र अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।

1. श्री पुष्पदन्त तीर्थंकर का दूसरा नाम
2. स्वामी

निज स्वभावमय सलिल नीर, की धारा अन्तर में लाऊँ।
जन्म जरा अघ दोष नाशकर, अविनश्वर पद को पाऊँ।।
परम ध्यानरत पुष्पदंत प्रभुसी, पवित्रता उर लाऊँ।
चिदानन्द चैतन्य शुद्ध, परिपूर्ण ज्ञान रवि प्रगटाऊँ ||1||

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंत जिनेन्द्राय जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि. ।

निज स्वभावमय शीतलचंदन, निज अंतस्तल में लाऊँ।
भव आताप दोष को हरकर, अविनश्वर पद को पाऊँ।।परम||2||

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंत जिनेन्द्राय संसारताप विनाशनाय चंदनं नि. ।

निज स्वभावमय अक्षत तंदुल, निज अभेद उर में लाऊँ।
कर्मकलंक कालिमा हरकर, अविनश्वर पद को पाऊँ।।परम||3||

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंत जिनेन्द्राय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि. ।

निज स्वभावमय पुष्प मनोहर निज अन्तर मन में लाऊँ।
काम भाव सर्व नाशकर, अविनश्वर पद को पाऊँ।।परम||4||

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंत जिनेन्द्राय कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि. ।

निज स्वभावमय संवर के चरु, निज गागर में भर लाऊँ।
पुण्य फलों की भूख नाशकर, अविनश्वर पद को पाऊँ।।परम||5||

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंत जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि. ।

निज स्वभावमय ज्ञानदीप, प्रज्वलित करूँ उर में लाऊँ।
मोह तिमिर अज्ञान नाशकर, अविनश्वर पद को पाऊँ।।परम||6||

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंत जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि. ।

निज स्वभावमय धूप निर्जरा, तप मय अन्तर में लाऊँ।
अरि रज रहस विहीन बनूँ मैं, अविनश्वर पद को पाऊँ।।परम||7||

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंत जिनेन्द्राय अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि. ।

निज स्वभावमय शुक्लध्यान, फल परमोत्तम उर में लाऊँ।
शुद्ध बुद्ध अविरुद्ध मोक्ष पा, अविनश्वर पद को पाऊँ।।परम||8||

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंत जिनेन्द्राय मोक्षफल प्राप्तये फलं नि. ।

निज स्वभावमय अर्घ मनोहर प्रभु के चरणों में लाऊँ।
निश्चय रत्नत्रय की महिमा से, अनर्घ पद को पाऊँ।।
परम ध्यानरत पुष्पदंत प्रभुसी, पवित्रता उर लाऊँ।
चिदानन्द चैतन्य शुद्ध परिपूर्ण ज्ञान रवि प्रगटाऊँ ||9||

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंत जिनेन्द्राय अनर्घ पद प्राप्तये अर्घ्यं नि. ।

श्री पंचकल्याणक अर्घ्य

फागुन कृष्णा नवमी को प्रभु, [1]**आरण स्वर्ग** त्याग आए।
रानी जयरामा उर में, अवतार लिया सब हर्षाए।।
पन्द्रहमास रत्न वर्षाकर, धनपति मन में मुसकाए।
पुष्पदंत के गर्भोत्सव पर, सुरांगना मंगल गाए ||1||

ॐ ह्रीं श्री फागुनकृष्णनवम्यां गर्भमंगल प्राप्त श्री पुष्पदंत जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

मगसिर शुक्ला एकम को, काकंदीपुर अति धन्य हुआ।
नृप सुग्रीवराज प्रांगण में, सुख का ही साम्राज्य हुआ।।
मेरु सुदर्शन पांडुकवन में, क्षीरोदधि से नव्हन हुआ।
देवों द्वारा पुष्पदंत का, दिव्य जन्म कल्याण हुआ ||2||

ॐ ह्रीं श्री मगसिर शुक्ला प्रतिपदादिने जन्म मंगल प्राप्त श्री पुष्पदंत जिनेन्द्राय अर्घ्य नि. स्वाहा।

---

1. 15वाँ स्वर्ग

मगसिर शुक्ला एकम के दिन, अन्तर में वैराग्य हुआ।
मेघ विलय लख वैभव त्यागा, वन की ओर प्रयाण किया।।
पंच महाव्रत धारे, लौकांतिक देवों ने जयगान किया।
जय जय पुष्पदंत परमेश्वर, अनुपम तप कल्याण हुआ ||3||

ॐ ह्रीं श्री मगसिर शुक्ल प्रतिपदादिने तपोमंगल प्राप्त श्री पुष्पदंत जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

कार्तिक शुक्ल द्वितीया के दिन, तुमने पाया केवलज्ञान।
चार घातिया, त्रेसठ कर्म, प्रकृतियों का करके अवसान।।
समवशरण की रचना करके, हुआ इन्द्र को हर्ष महान।
खिरी दिव्य ध्वनि जनकल्याणी, जय जय पुष्पदंत भगवान ||4||

ॐ ह्रीं श्री कार्तिक शुक्ल द्वितीयायां ज्ञानमंगल प्राप्त श्री पुष्पदंत जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

भादों शुक्ल अष्टमी के दिन, **सम्मेदाचल** पर जयगान।
शेष प्रकृति पच्चासी को, हर सुप्रभु कूट से पा निर्वाण।।
सिद्धशिला लोकाग्रशिखर पर, आप विराजे हे गुणधाम।
महामोक्ष मंगल के स्वामी, पुष्पदंत को करूँ प्रणाम ||5||

ॐ ह्रीं श्री भाद्र शुक्ल अष्टम्यां मोक्षमंगल प्राप्त श्री पुष्पदंत जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

जय जय पुष्पदंत परमेश्वर, परम धर्म सारथी भगवान।
पुण्या पुण्य निरोधक पुष्कल, प्रथमोंकार रूप विभुवान ||1||
निज स्वभाव साधन से तुमने, पर विभाव का हरण किया।
शुद्ध बुद्ध चैतन्य स्वपद भज, महामोक्ष का वरण किया ||2||

अट्ठासी गणधर थे प्रभु के, **प्रमुख श्री विदर्भ गणधर**।
प्रमुख आर्यिका श्री घोषा थी, समवशरण पवित्र मनहर ||3||
तुमने चौदह गुणस्थान, गुणवृद्धि रूप हैं बतलाए।
जीवों के परिणामों की इनसे, पहचान सहज आए ||4||
पहिला है मिथ्यात्व दूसरा, सासादन कहलाता है।
मिश्र तीसरा चौथा अविरत, सम्यकदृष्टि कहाता है ||5||
पंचम देशविरत छठवाँ, सुप्रमत्त विरत कहलाता है।
सप्तम अप्रमत्त है **अष्टम, अपूर्वकरण** कहलाता है ||6||
नवमा है **अनिवृत्तिकरण, दशम सूक्ष्म लोभ** होता है।
ग्यारहवाँ उपशांतमोह, बारहवाँ क्षीणमोह होता है ||7||
तेरहवाँ सयोग चौदहवाँ है **अयोग केवलि गुणथान**।
निज परिणामों से श्रेणी चढ़, जीव स्वयं पाता निर्वाण ||8||
दर्शन मोह के उदय आत्म, परिणाम सदा मिथ्या होता।
हैं अतत्त्व श्रद्धान जहाँ वह, **पहिला गुणस्थान** होता ||9||
दूजा है **मिथ्यात्व और सम्यक्त्व** अपेक्षा अनुदय रूप।
समकित नहीं मिथ्यात्व उदय भी नहीं, यही **सासादनरूप** ||10||
तीजा **सम्यक्–मिथ्या–दर्शन**, मोहोदय से होता है।
अनंतानुबंधी कषाय–परिणाम जीव का होता है ||11||
चौथा दर्शमोह के क्षय, **उपशम, क्षमोपशम** से होता।
सम्यकदर्शन गुण का इसमें, **पंचम से दशवाँ** तक है ||12||
चरितमोह में **क्षयोपशम** से, **पंचम से दशवाँ** तक है।
सम्यक्चारित गुण को क्रम से, वृद्धि छह थानक है ||13||
चरितमोह के **उपशम** से, **ग्यारहवां गुणस्थान** होता।
सूक्ष्मलोभ सदभाव जहाँ, अन्तमुहुर्त रहना होता ||14||

मोहनीय के उदय निमित्त से, जीव निश्चित गिर जाता।
यदि परिणाम संभाल न पाये, तो पहिले तक आ जाता ||15||
चरितमोह के **क्षय** से तो **बारहवाँ क्षीणमोह** होता।
पूर्ण अभाव कषायों का हो, **यथाख्यातचारित** होता ||16||
केवलज्ञान प्राप्त कर **तेरहवाँ, सयोगकेवलि** होता।
सम्यक्ज्ञान पूर्ण हो जाता, चारित गुण न पूर्ण होता ||17||
योगों के अभाव से **चौदहवाँ, अयोग केवलि** होता।
हो जाता चारित्र पूर्ण रत्नत्रय शुद्ध मोक्ष होता ||18||
क्षपक श्रेणि चढ़ **अष्टम से, जब चौदहवें** तक जाता है।
गुणस्थान से हो अतीत निज, सिद्ध स्वपद पा जाता है ||19||
मोहफंद में पड़कर मैंने, पर परिणति में रमण किया।
परद्रव्यों की चिंता में रह, चहुँगति में परिभ्रमण किया ||20||
निज स्वरूप का ध्यान न आया, कभी न निज स्मरण किया।
चिदानंद चिद्रूप आत्मा का, अब तक विस्मरण किया ||21||
निज कल्याण भावना से प्रभु, आज आपका शरण लिया।
बिना आपकी शरण अनंतानंत, भवों में भ्रमण किया ||22||
निजस्वरूप की ओर निहारूँ, शुभ अरु अशुभ विकार तजूँ।
पर पदार्थ से मैं ममत्व तज परम शुद्ध चिद्रूप भजूँ ||23||
ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंत जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

मगर चिन्ह शोभित चरण पुष्पदंत उरधार।
मन वच तन जो पूजते वे होते भवपार।।

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंत जिनेन्द्राय नमः।

61 - श्री शीतलनाथ जिन पूजन

जय प्रभु [1]शीतलनाथ शील के सागर शील सिंधु शीलेश।
कर्मजाल के शीतलकर्ता, केवलज्ञानी महा महेश ||1||
त्रैकालिक ज्ञायक स्वभाव, ध्रुव के आश्रय से हुए जिनेश।
मुझको भी निज समशीतल कर दो, है विनय यही परमेश ||2||
ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथ जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट् ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथ जिनेन्द्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथ जिनेन्द्र अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।

निर्मल उज्जवल जलधार, चरणों में सोहे।
यह जन्म रोग मिट जाय, निज में मन मोहे।।
हे शीतलनाथ जिनेश, शीतलता धारी।
हे शील सिन्धु शीलेश, सब संकटहारी ||1||
ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथ जिनेन्द्राय जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि.।

चन्दन सम सरस सुगन्ध, मुझमें भी आये।
भव ताप दूर हो जाय, शीतलता छाये।।हे शीतलनाथ||2||
ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथ जिनेन्द्राय संसार ताप विनाशनाय चंदनं नि.।

निज अक्षय पद का, ज्ञान करने आया हूँ।
हर्षित हो शुभ्र अखण्ड तन्दुल लाया हूँ।।हे शीतलनाथ||3||
ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथ जिनेन्द्राय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि.।

कन्दर्प काम के पुष्प, अब मैं दूर करूँ।
पर परिणति का व्यापार प्रभु चकचूर करूँ।।हे शीतलनाथ||4||
ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथ जिनेन्द्राय कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।

1. 10वें तीर्थंकर

चरु सेवन रुचि, दुखका भव पीड़ा दायक।
है क्षुधारहित निजसंसार ताप विनाशनाय रूप सुखमय |हे शीतलनाथ5||
ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथ जिनेन्द्राय क्षुधा रोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।
अज्ञान तिमिर घनघोर उर में छाया है।
रवि सम्यकज्ञान प्रकाश मुझको भाया है।|हे शीतलनाथ||6||
ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथ जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।
चारों कषायों का संग, हे प्रभु हट जाये।
हो कर्म चक्र का ध्वंस भव दुख मिट जाये।|हे शीतलनाथ ||7||
ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथ जिनेन्द्राय अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।
निर्वाण महाफल हेतु, चरणों में आया।
दुख रूप राग को जान अब निजगुण भाया।|हे शीतलनाथ ||8||
ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथ जिनेन्द्राय मोक्षफल प्राप्तये फलं नि. स्वाहा।
आत्मानुभूति की प्रीति, निज में है जागी।
पाऊँ अनर्घ पद नाथ, मिथ्यामति भागी।।
हे शीतलनाथ जिनेश, शीतलता धारी।
हे शील सिन्धु शीलेश, सब संकटहारी ||9||
ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ पद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

श्री पंचकल्याणक अर्घ्य

चैत्र कृष्ण अष्टमी स्वर्ग, [1]**अच्युत** को तजकर तुम आये।
दिक्कुमारियों ने हर्षित हो, **मात सुनन्दा** गुण गाये।।
इन्द्र आज्ञा से कुबेर, नगरी रचना कर हर्षाये।
शीतल जिनके गर्भोत्सव पर रत्न सुरों ने बरसाये ||1||
ॐ ह्रीं श्री चैत्रकृष्ण अष्टयां गर्भकल्याण प्राप्त श्री शीतलनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

1. 16वाँ स्वर्ग

[1]**भद्दिलपुर में राजा दृढ़रथ** के, गृह तुमने जन्म लिया।
माघ कृष्णा द्वादशी इन्द्रसुरों ने, जीवन धन्य किया।।
गिरि सुमेरु पर पांडुकवन में, क्षीरोदधि से नव्हन किया।
एक सहस्त्र अष्ट कलशों से, हर्षित हो अभिषेक किया ||2||
ॐ ह्रीं श्री माघकृष्ण द्वादश्यां जन्ममंगल प्राप्त श्री शीतलनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।
शरद् मेघ परिवर्तन लख कर, उर छाया वैराग्य महान।
लौकांतिक देवों ने आकर, किया आपका जय जयगान।।
सकल परिगृह त्याग तपस्या, करके वन को किया प्रयाण।
माघ कृष्ण द्वादशी सहेतुक, वन में गूंजा जय जय गान ||3||
ॐ ह्रीं श्री माघकृष्ण द्वादश्यां तपकल्याणक प्राप्त श्री शीतलनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।
पौष कृष्ण की चतुर्दशी को, पाया स्वामी केवलज्ञान।
समवशरण की रचना कर, देवों ने गाये मंगल गान।।
सकल विश्व को वस्तु तत्व, उपदेश आपने दिया महान।
भद्दिलपुर में गर्भ, जन्म, तप, ज्ञान हुए चारों कल्याण ||4||
ॐ ह्रीं पौषकृष्ण चतुर्दश्यां ज्ञान कल्याणक प्राप्त श्री शीतलनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।
अश्विन शुक्ल अष्टमी को, हर अष्टकर्म पाया निर्वाण।
विद्युत कूट श्री सम्मेदशिखर पर हुआ मोक्ष कल्याण।।
शेष प्रकृति पच्चासी हर कर, कर्म अघाति अभाव किया।
निज स्वभाव के साधन द्वारा, मोक्ष स्वरूप स्वभाव लिया ||5||
ॐ ह्रीं श्री अश्विन शुक्ल अष्टम्यां मोक्षकल्याणक प्राप्त श्री शीतलनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

1. भद्दिलपुर का वर्तमान नाम विदिशा

जयमाला

जय जय शीतलनाथ शीलमय, शीलपुंज शीतल सागर।
शुद्ध रूप जिन शुचिमय शीतलशील निकेतन गुण आगर ||1||
दशम तीर्थंकर हे जिनवर परमपूज्य शीतल स्वामी।
तुम समान मैं भी बन जाऊँ, विनय सुनों त्रिभुवन नामी ||2||
साम्य भाव के द्वारा तुमने, निज स्वरूप का वरण किया।
पंच महाव्रत धारण कर प्रभु, पर विभाव का हरण किया ||3||
पुरी अरिष्ट पुनर्वसु नृप ने, विधिपूर्व आहार दिया।
प्रभु कर में [1]**पयधार** दे, भव सिंधु सेतु निर्माण किया ||4||
तीन वर्ष छद्मस्थ मौन रह, आत्म ध्यान में लीन हुए।
चार घातिया का विनाशकर, **केवलज्ञान** प्रवीण हुए ||5||
ज्ञानावरणी दर्शनावरणी, अन्तराय अरु **मोह** रहित।
दोष अठारह रहित हुए तुम छयालीस गुण से मण्डित ||6||
क्षुधा, तृषा, रति, खेद, स्वेद, अरु, जन्म जरा चिंता विस्मय।
राग, द्वेष, मद, मोह, रोग, निन्द्रा, विषादअरु **मरण**न **भय** ||7||
शुद्ध, बुद्ध अरहन्त अवस्था, पाई तुम सर्वज्ञ हुए।
देव अनन्त चतुष्टय प्रगटा, निज में निज मर्मज्ञ हुए ||8||
इक्यासी गणधर थे प्रभु के, **प्रमुख कुन्धुज्ञानी गणधर**।
मुख्य आर्यिका श्रेष्ठ धारिणी, श्रोता थे नृप सीमंधर ||9||
तुम दर्शन करके हे स्वामी, आज मुझे निज भान हुआ।
सिद्ध समान सदा पद मेरा, अनुपम निर्मल ज्ञान हुआ ||10||
भक्ति भाव से पूजा करके, यही कामना करता हूँ।
राग द्वेष परणति मिट जाये, यही भावना करता हूँ ||11||

1. दूध का आहार

निर्विकल्प आनन्द प्राप्ति की, आज हृदय में लगी लगन।
सम्यक् पूजन फल पाने को, तुम चरणों में हुआ मगन ||12||
निज चैतन्य सिंह अब जागे, मोहकर्म पर जय पाऊँ।
निज स्वरूप अवलम्बन द्वारा, शाश्वत शीतलता पाऊँ ||13||
ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथ जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं नि.।

कल्पवृक्ष शोभित चरण शीतल निज उर धार।
मन वच तन जो पूजते वे होते भव पार।।

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथ जिनेन्द्राय नमः।

62 - श्री श्रेयांसनाथ जिन पूजन

श्रेष्ठ श्रेय संभव श्रुतात्मा, श्रेष्ठ सुमतिदाता श्रेयान।
श्रेयनाथ श्रेयस श्रुतिसागर, श्रीमंत श्रीपति श्रीमान ||1||
विपत्ति विदारक विपुलप्रभामय, वीतराग विज्ञान निधान।
विश्वसूर्य विख्यात कीर्ति विभु, जय श्रेयांसनाथ भगवान ||2||
मैं श्रेयांसनाथ[1] चरणों की, भाव सहित करता पूजन।
मन वच काय त्रियोग जीतकर, हे प्रभु पाऊँ मोक्षसदन ||3||
ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथ जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट्, ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथ जिनेन्द्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथ जिनेन्द्र अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।

उत्तम निर्मल संवरमय, निर्जरा नीर प्रभु लाऊँ।
क्षायिक ज्ञान प्राप्त करने को, अन्तर ज्योति जगाऊँ।।

1. 11वें तीर्थंकर

श्री श्रेयांसनाथ चरणों में, सविनय शीश झुकाऊँ।
क्षायिक लब्धि प्राप्त करने को, निज का ध्यान लगाऊँ ||1||
ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथ जिनेन्द्राय जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि. ।
पावन चंदन संवरमय, निर्जरा भाव के लाऊँ।
क्षायिकदर्शन प्राप्त करन को, अंतर ज्योति जगाऊँ ।।श्री श्रेयांस||2||
ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथ जिनेन्द्राय संसारताप विनाशनाय चंदनं नि. ।
उज्जवल अक्षत संवरमय, निर्जरा भाव के लाऊँ।
क्षायिकदान प्राप्त करने को अंतर ज्योति जगाऊँ ।।श्री श्रेयांस||3||
ॐ ह्रीं श्रेयांसनाथ जिनेन्द्राय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि. ।
पुष्प सुवासित संवरमय, निर्जरा भाव के लाऊँ।
क्षायिक लाभ प्राप्त करने को, अंतर ज्योति जगाऊँ ।।श्री श्रेयांस||4||
ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथ जिनेन्द्राय कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि. ।
शुद्ध विमल चरु संवरमय, निर्जरा भाव के लाऊँ।
क्षायिकभोग प्राप्त करने को, अन्तर ज्योति जगाऊँ ।।श्री श्रेयांस||5||
ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथ जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि. ।
दिव्य दीप निज संवरमय, निर्जरा भाव का लाऊँ।
जिनक्षायिक उपभोग प्राप्ति हित, अंतर ज्योति जगाऊँ ।।श्री श्रेयांस||6||
ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथ जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि. ।
धूप सुगंधित संवरमय, निर्जरा भाव के लाऊँ।
क्षायिक वीर्य प्राप्त करने को, अंतर ज्योति जगाऊँ ।।श्री श्रेयांस||7||
ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथ जिनेन्द्राय अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि. ।
धर्ममयी फल संवरमय, निर्जरा भाव के लाऊँ।
निज क्षायिक सम्यक्त्व प्राप्तिहित, अंतरज्योति जगाऊँ ।।श्री श्रेयांस||8||
ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथ जिनेन्द्राय महामोक्षफल प्राप्तये फलं नि. ।

अर्घ अष्ट गुण संवरमय, निर्जरा भाव के लाऊँ।
निजक्षायिक चारित्र प्राप्तिहित, अंतर ज्योति जगाऊँ।।
श्री श्रेयांसनाथ चरणों में, सविनय शीश झुकाऊँ।
क्षायिक लब्धि प्राप्त करने को, निज का ध्यान लगाऊँ ||9||
ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ पद प्राप्तये अर्घ्यं नि. ।

श्री पंचकल्याणक अर्घ्य

ज्येष्ठ कृष्ण षष्ठी को तुमने, **पुष्पोत्तर** से गमन किया।
माता विमला गर्भ पधारे, देव लोक ने नमन किया।।
सोलह स्वप्न सुफल को सुनकर, प्रभु माता ने हर्ष किया।
जय श्रेयांसनाथ कमलासन, नहीं गर्भ स्पर्श किया ||1||
ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्ण षष्ठयां गर्भमंगल प्राप्त श्री श्रेयांसनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

फाल्गुन कृष्णा एकादशी सिंहपुरी में जन्म लिया।
राजा विष्णुनाथ के गृह, सुरपति ने मनहरनृत्य किया।।
पांडुक शिला विराजित करके क्षीरोदधि से नीर लिया।
एक सहस्त्र अष्ट कलश से इन्द्रों ने अभिषेक किया ||2||
ॐ ह्रीं फाल्गुन कृष्ण एकादश्यां जन्ममंगल प्राप्त श्री श्रेयांसनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

फागुन कृष्णा एकादशी, भोगों से मन दूर भगा।
राजपाट तज वन में पहुंचे, विन्दुक तरु का भाग्य जगा।।
नग्न दिगम्बर मुद्रा धर तप, संयम से अनुराग जगा।
श्रेयांसनाथ का तप कल्याणक को, देख लगा वैराग्य सगा ||3||
ॐ ह्रीं फाल्गुन कृष्ण एकादश्यां तपोमंगल प्राप्त श्रेयांसनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

माघ कृष्ण की अमावस को, पूर्ण ज्ञान का सूर्य जगा।
तीनों लोक सर्व दर्शाता, **केवलज्ञान** प्रकाश जगा।।
दिव्य ध्वनि से समवशरण में, जीवों का उपकार हुआ।
जय श्रेयांसनाथ तीर्थंकर, दश दिशि जयजयकार हुआ ||4||
ॐ ह्रीं माघकृष्ण अमावस्यां केवलज्ञान प्राप्त श्री श्रेयांसनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

शुक्ल पूर्णिमा सावन की, मनभावन अमर पवित्र हुई।
संकुलकूट श्री सम्मेदाचल की, शिखर पवित्र हुई।।
तुमसे प्रभु निर्वाण लक्ष्मी, परिणय करके धन्य हुई।
प्रभु श्रेयांस मोक्ष मंगल से, पावन धरा अनन्य हुई ||5||
ॐ ह्रीं श्रावण शुक्ल प्रणिमायां मोक्षमंगल प्राप्तं श्री श्रेयांसनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

एकादशम तीर्थंकर श्रेयांसनाथ को करूँ प्रणाम।
श्रावक की ग्यारह प्रतिमाओं का उपदेश दिया अभिराम ||1||
गणधर देव सत्तर थे प्रभु के, प्रमुख **धर्मस्वामी गणधर**।
मुख्य आर्यिका **श्री चरणा**, श्रोता थे, **त्रिपृष्ठ नृपवर** ||2||
हे प्रभु मैं भी ग्यारह प्रतिमाएं, धारूँ ऐसा बल दो।
मोक्षमार्ग पर चलूँ निरंतर, निज स्वभाव का संबल दो ||3||
देह भोग संसार विरत हो, अष्ट मूलगुण का पालन।
पहिली दर्शन प्रतिमा है, धारण करना सम्यकदर्शन ||4||
धारूँ **अणुव्रत पाँच तीन गुणव्रत** धारूँ **शिक्षाव्रत चार**।
श्रावक के **बारह व्रत धारण**, करना **व्रत प्रतिमा** है सार ||5||

सात प्रकार शुद्धता पूर्वक, छह प्रकार की सामायिक।
तीन काल सामायिक प्रतिदिन **तीजी प्रतिमा सामायिक** ||6||
पर्व अष्टमी अरु **चतुर्दशी** को, **प्रोषध उपवास** करें।
धर्म ध्यान में समय बितावें, **प्रोषध प्रतिमा** हृदय धरें ||7||
दृष्टि जीव रक्षा की हो, जिव्हा की लोलुपता न हो।
हरित वनस्पति अचित्त कर लें, **सचित्त त्याग शुभ प्रतिमा हो** ||8||
खाद्य, स्वाद अर लेय पेय, चारों आहार रात्रि में त्याग।
कृतकारित अनुमोदन से हो, यह **प्रतिमा निशि भोजन त्याग** ||9||
सादा रहन सहन भोजन हो, पूर्ण शील भय राग रहित।
सप्तम ब्रह्मचर्य प्रतिमा हो, नव प्रकार की बाड़ सहित ||10||
घर व्यापार आदि संबंधी, सब प्रकार आरम्भ तजें।
आत्म शुद्ध हो दयाभाव हो, **प्रतिमा आरम्भत्याग** भजे ||11||
आकुलता का कारण गृह, संपत्ति परिग्रह सब त्यागें।
धार **परिग्रह त्याग सुप्रतिमा**, हो विरक्त निज में जागें ||12||
गृह व्यापारिक किसी कार्य की, अनुमति कभी नहीं दे हम।
अनुमति त्याग सुदशमी प्रतिमा, उदासीन हो जग से हम ||13||
ग्यारहवीं उद्दिष्ट त्याग प्रतिमा के हैं दो भेद प्रमुख।
खंड वस्त्र सह क्षुल्लक होते, **एक लंगोटी से ऐलक** ||14||
उद्दिष्ठ भोजन के त्यागी, विधि पूर्व भोजन करते।
एक कमंडुल एक पिछी रख, वृत्ति गोचरी को धरते ||15||
इनके पालन करने वाले, सच्चे श्रावक श्रेष्ठ व्रती।
एक देशव्रत के धारी ये, पंचम गुणस्थान वर्ती ||16||
जब इन ग्यारह प्रतिमाओं का, पालन होता निरतिचार।
पूर्ण सकल चारित्र ग्रहण कर, करते मुनिव्रत अंगीकार ||17||

दृढ़ता आए श्रेणी चढ़कर, शुक्ल ध्यानमय ध्यान गहें।
त्रेसठ प्रकृति विनाश कर्म की, अनुपम केवलज्ञान लहें ||18||
जो इस पथ पर दृढ़ हो चलता, पा जाता है मोक्ष महान।
जो विभाव में अटका वह, शिव पद से भटकामूढ़ अजान ||19||
ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथ जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

शोभित **गेंडा चिन्ह चरण** में प्रभु श्रेयांसनाथ उरधार।
मन वच तन जो भक्तिभाव से पूजें वे होते भवपार।।
इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्
जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथ जिनेन्द्राय नमः।

63. श्री वासुपूज्य जिन पूजन

जय श्री [1]वासुपूज्य तीर्थंकर, सुर नर मुनि पूजित जिनदेव।
ध्रुव स्वभाव निज का अवलंबन, लेकर सिद्ध हुए स्वयमेव ||1||
घाति अघाति कर्म सब नाशे, **तीर्थंकर द्वादशम्** सुदेव।
पूजन करता हूँ अनादि की, मेटो प्रभु मिथ्यात्व कुटेव ||2||
ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट्, ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य जिनेन्द्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य जिनेन्द्र अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।

जल से तन बार–बार धोया, पर शुचिता कभी नहीं आई।
इस हाड़–मांस चर्ममय देह का, जन्म–मरण अति दुखदाई।।
त्रिभुवन पति वासुपूज्य स्वामी, प्रभु मेरी भव बाधा हर लो।
चारों गतियों के संकट हर, हे प्रभु मुझको निज सम कर लो||1||
ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि.।

1. 12वें तीर्थंकर एवं प्रथम बालयति

गुण शीतलता पाने को मैं, चन्दन चर्चित करता आया।
भवचक्र एक भी घटा नहीं, संताप न कुछ कम हो पाया।।त्रिभु.||2||
ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय संसार ताप विनाशनाय चंदनं नि.।
मुक्ता सम उज्जवल तंदुल से, नित देह पुष्ट करता आया।
तन जर्जरता रुकी नहीं, भवकष्ट व्यर्थ भरता आया।।त्रिभु.||3||
ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि.।
पुष्पों की सुरभि सुहाई प्रभु, पर निज की सुरभि नहीं भाई।
कंदर्प दर्प की चिरपीड़ा, अब तक न शमन प्रभु हो पाई।।त्रिभु.||4||
ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।
षट् रस मय विविध विविध व्यंजन, जी भर भर कर मैंने खाये।
पर भूख तृप्त न हो पाई, दुख क्षुधा रोग के नित पाये।।त्रिभु.||5||
ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।
दीपक नित ही प्रज्वलित किये, अन्तरतम अब तक मिटा नहीं।
मोहान्धकार भी गया नहीं, अज्ञान तिमिर भी हटा नहीं।।त्रिभु.||6||
ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।
शुभ अशुभ कर्म बंधन भाया, संवर का तत्व कभी न मिला।
निर्जरित कर्म कैसे हो जब, दुखमय आश्रव का द्वार खुला।।त्रिभु.||7||
ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।
भौतिक सुख की इच्छाओं का, मैंने अब तक सम्मान किया।
निर्वाणमुक्ति फल पाने को, मैंने न कभी निज ध्यान किया।।त्रिभु.||8||
ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय मोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।

जब तक अनर्घ पद मिले नहीं, तब तक मैं अर्घ चढ़ाऊँगा।
निजपद मिलते ही हे स्वामी, फिर कभी नहीं मैं आऊँगा।।
त्रिभुवन पति वासुपूज्य स्वामी, प्रभु मेरी भव बाधा हर लो।
चारों गतियों के संकट हर, हे प्रभु मुझको निज सम कर लो ||9||
ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय अनर्घ पद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

श्री पंचकल्याणक अर्घ्य

त्याग [1]**महाशुक्र** का वैभव, **माँ विजया** उर में आये।
शुभ आषाढ़ कृष्ण षष्ठी को, देवों ने मंगल गाये।।
चम्पापुर नगरी की कर रचना, तब **बारह योजन** विस्तृत।
वासुपूज्य के गर्भोत्सव पर, हुए नगरवासी हर्षित ||1||
ॐ ह्रीं श्री आषाढ़ कृष्ण षष्ठ्यां गर्भमंगल प्राप्त श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

फागुन कृष्णा चतुर्दशी को, नाथ आपने जन्म लिया।
नृप वसुपूज्य पिता हर्षाये, भरत क्षेत्र को धन्य किया।।
गिरि सुमेरु पर पाण्डुक वन में, हुआ जन्म कल्याण महान।
वासुपूज्य का क्षीरोदधि से, हुआ दिव्य अभिषेक प्रधान ||2||
ॐ ह्रीं श्री फाल्गुन कृष्ण चतुर्दश्यां जन्ममंगल प्राप्त श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

फागुन कृष्णा चतुर्दशी को, वन की ओर प्रयाण किया।
लौकांतिक देवर्षि सुरों ने, आकर जय–जय गान किया।।
तभी **नमः सिद्धेभ्यः** कहकर प्रभु ने मुनिपद ग्रहण किया।
वासुपूज्य ने ध्यान लीन हो इच्छाओं का दमन किया ||3||
ॐ ह्रीं श्री फाल्गुन कृष्ण चतुर्दश्यां तपोमंगल प्राप्त श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

1. 10वाँ स्वर्ग

माघ शुक्ल की दोज मनोरम, वासुपूज्य को ज्ञान हुआ।
समवशरण में खिरी दिव्यध्वनि, जीवों का कल्याण हुआ।।
नाश किये **घन घाति कर्म**, तब केवलज्ञान प्रकाश हुआ।
भव्यजनों के हृदय कमल का, प्रभु से पूर्ण विकास हुआ ||4||
ॐ ह्रीं श्री माघशुक्ल द्वितीयां केवलज्ञान प्राप्त श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

अंतिम शुक्ल ध्यानधर प्रभु ने, कर्म अघाति किये चकचूर।
मुक्ति वधू के कंत हो गये योग मात्र कर निज से दूर।।
भादव शुक्ला चतुर्दशी, चम्पापुर से निर्वाण हुआ।
मोक्ष लक्ष्मी वासुपूज्य ने पाई, जय जय गान हुआ ||5||
ॐ ह्रीं श्री भाद्रपद शुक्ल चतुर्दश्यां मोक्षमंगल प्राप्त श्रीवासुपूज्य जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

वासुपूज्य विद्या निधि, विघ्न विनाशक वागीश्वर विश्वेश।
विश्वविजेता विश्व ज्योति, विज्ञानी विश्वदेव विविधेश ||1||
चम्पापुर के महाराज, वसुपूज्य पिता विजया माता।
तुमको पाकर धन्य हुए, हे **वासुपूज्य मंगल दाता** ||2||
अष्ट वर्ष की **अल्प आयु** में, आपका अणुव्रत सम जीवन लिया।
यौवन वय में ब्रह्मचर्य, आजीवन अंगीकार किया ||3||
पंच मुष्टि कचलोंच किया सब, वस्त्राभूषण त्याग दिये।
विमल **भावना द्वादश** भाई, **पंच महाव्रत** ग्रहण किए ||4||
स्वयं बुद्ध हो **नमः सिद्धेभ्यः** कह, पावन संयम अपनाया।
मति, श्रुति, अवधि जन्म से था, अब ज्ञान मनः पर्यय पाया ||5||

एक वर्ष छदमस्थ मौन रह, आत्म साधना की तुमने।
उग्र तपस्या के द्वारा ही, कर्म निर्जरा की तुमने ||6||
श्रेणी क्षपक चढ़े तुम स्वामी, मोहनीय का नाश किया।
पूर्ण अनन्त चतुष्टय पाया, पद अरहंत महान लिया ||7||
विचरण करके देश देश में, मोक्ष मार्ग उपदेश दिया।
जो स्वभाव का साधन साधे, सिद्ध बने, संदेश दिया ||8||
प्रभु के **छयासठ गणधर** जिनमें, **प्रमुख श्री मंदिर, ऋषिवर**।
मुख्य आर्यिका वरसेना थीं, नृपति स्वयं भू श्रोतावर ||9||
प्रायश्चित व्युत्सर्ग, विनय, वैयावृत्त स्वाध्याय अरुध्यान।
अन्तरंग तप छह प्रकार के, तुमने बतलाया भगवान ||10||
कहा **बाह्य तप छः प्रकार, उनोदर कायक्लेश अनशन**।
रस परित्याग व्रत परिसख्यान, विविक्त शय्यासन पावन ||11||
ये द्वादश तप जिन मुनियों को, पालन करना बतलाया।
अणुव्रत शिक्षाव्रत गुणव्रत, द्वादशव्रत श्रावक का गाया ||12||
चम्पापुर में हुए **पंचकल्याणक** आपके मंगलमय।
गर्भ, जन्म, तप, ज्ञान, मोक्ष, कल्याण भव्यजन को सुखमय ||13||
परम पूज्य चम्पापुर की पावन भू को शत्–शत् वन्दन।
वर्तमान चौबीसी के **द्वादशम**, जिनेश्वर नित्य नमन ||14||
मैं अनादि से दुखी, मुझे भी, निज बल दो भववास हरूँ।
निजस्वरूप का अवलम्बन ले, अष्टकर्म अरि नाश करूँ ||15||
ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

महिष चिंह शोभित चरण, वासुपूज्य उर धार।
मन वच तन जो पूजते वे होते भव पार।।
इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्
जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय नमः।

64. श्री विमलनाथ जिन पूजन

जय जय [1]विमलनाथ विमलेश्वर विमल ज्ञानधारी भगवान।
छयालीस गुण सहित, दोष अष्टादश रहित वृहत विद्वान ||1||
विश्वदेव विश्वरस्वामी विगतदोष विक्रमी महान।
मोक्षमार्ग के नेता प्रभुवर तुमने किया विश्व कल्याण ||2||
ॐ ह्रीं श्री विमलनाथ जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट्, ॐ ह्रीं श्री विमलनाथ जिनेन्द्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, ॐ ह्रीं श्री विमलनाथ जिनेन्द्र अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।
विमल ज्ञान जल की निर्मल, पावनता अन्तर में भर लूँ।
जन्म मरण की व्यथा नाशहित, प्रभु सम्यक्त्व प्राप्त कर लूँ।।
विमलनाथ को मन वच काया, पूर्वक नमस्कार कर लूँ।
शुद्ध आत्मा की प्रतीति कर, यह संसार भार हर लूँ ||1||
ॐ ह्रीं श्री विमलनाथ जिनेन्द्राय जन्मजरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि.।
विमल ज्ञान का शीतल पावन, चंदन अंतर में भर लूँ।
भव संताप ताप हरने को, प्रभु मैं विमलत्व प्राप्त कर लूँ।।विमल.||2||
ॐ ह्रीं श्री विमलनाथ जिनेन्द्राय संसारताप विनाशनाय चंदनं नि.।
विमल ज्ञान के अति उज्जवल, अक्षत निज अंतर में भर लूँ।
निज अक्षय अखंड पद पाने प्रभु, सरलत्व प्राप्त कर लूँ।।विमल.||3||
ॐ ह्रीं श्री विमलनाथ जिनेन्द्राय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि.।

1. 13वें तीर्थंकर

विमल ज्ञान के परम शुद्ध, पुष्पों को अन्तर में भर लूँ।
कामदर्प को चूर करूँ प्रभु, निष्कामत्व प्राप्त कर लूँ।।विमल.||4||
ॐ ह्रीं श्री विमलनाथ जिनेन्द्राय कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।

विमल ज्ञान नैवेद्य सुहावन, शुचिमय अन्तर में भर लूँ।
अब अनादि का क्षुधारोगहर, प्रभु विमलत्व प्राप्त कर लूँ।।विमल.||5||
ॐ ह्रीं श्री विमलनाथ जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।

विमल ज्ञान का जगमग दीप, जला अन्तरतम को हर लूँ।
मिथ्यातम का तिमिर नाशकर, मैं सर्वज्ञत्व प्राप्त कर लूँ।।विमल.||6||
ॐ ह्रीं श्री विमलनाथ जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।

विमल ज्ञान की चिन्मय धूप, सुगंधित अंतर में भर लूँ।
कर्मशत्रु की सर्व शक्ति हर, प्रभु अमरत्व प्राप्त कर लूँ।।विमल.||7||
ॐ ह्रीं श्री विमलनाथ जिनेन्द्राय अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।

विमल ज्ञान फल महामोक्ष, पद दाता अन्तर में भर लूँ।
शुद्धबुद्ध अविरुद्ध स्वपद पा, पूर्ण शिवपद प्राप्त कर लूँ।।विमल.||8||
ॐ ह्रीं श्री विमलनाथ जिनेन्द्राय महामोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।

विमल ज्ञान का निज परिणतिमय, पद अनर्घ उर में भर लूँ।
अचल अतुल अविनाशी पद पा, सर्व प्रभुत्व प्राप्त कर लूँ।।
विमलनाथ को मन वच काया, पूर्वक नमस्कार कर लूँ।
शुद्ध आत्मा की प्रतीति कर, यह संसार भार हर लूँ||9||
ॐ ह्रीं श्री विमलनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ पद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

(9) **आकुलित भयो, अज्ञान धार,**
अब होओ निराकुल, ज्ञान धार।

श्री पंचकल्याणक अर्घ्य

पुरी कम्पिला धन्य हो गई, [1]**सहस्त्रार** तज तुम आए।
ज्येष्ठ कृष्ण दशमी को **माता, जयदेवी** ने सुख पाए।।
षट नव मास रत्न वर्षा के, दृश्य मनोरम दर्शाये।
दिक्कुमारियों ने सेवाकर, विमलनाथ मंगल गाए ||1||
ॐ ह्रीं श्री ज्येष्ठ कृष्ण दशम्यां गर्भ मंगल प्राप्त श्री विमलनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

कपिला नृप श्री कृतवर्मा के, शुभ गृह में जन्म हुआ।
राजभवन में सुरपति का, अनुपम नाटक नृत्य हुआ।।
माघ मास की शुक्ल चतुर्थी, गिरि सुमेरु अभिषेक हुआ।
जय जय विमलनाथ जन्मोत्सव, परमहर्ष अतिरेक हुआ ||2||
ॐ ह्रीं श्री माघशुक्ल चतुर्थ्यां जन्ममंगलप्राप्त श्री विमलनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

माघ मास की शुक्ल चतुर्थी, उर वैराग्य जगा अनुपम।
लौकांतिक सुर साधु साधु कह, प्रभु विराग करते दृढ़तम।।
जम्बू वृक्ष तले वस्त्राभूषण का, त्याग किया सुखतम।
जय जय विमलनाथ प्रभु तपकल्याण, हुआ जग में अनुपम ||3||
ॐ ह्रीं श्री माघ शुक्ल चतुर्थ्यां तपोमंगल प्राप्त श्री विमलनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

तीन वर्ष छदमस्थ रहे प्रभु, पाया पावन केवलज्ञान।
माघ शुक्ल षष्ठमी को, मंगल उत्सव जग में हुआ महान।।

---
1. 12वाँ स्वर्ग
2. 15 माह तक रत्नों की वर्षा होती है।

समवशरण में वस्तु तत्त्व का, हुआ परम सुन्दर उपदेश।
जय जय **विमलनाथ तीर्थंकर**, जय जय **त्रयोदशम** तीर्थेश||4||
ॐ ह्रीं श्री माघ शुक्ल षष्ठयां ज्ञानकल्याण प्राप्त श्री विमलनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

शुभ आषाढ़ शुक्ल अष्टम को, चउ अघातिया करके नाश।
गिरि सम्मेशिखर सुवीरकुल, **कूट** हुआ निर्वाण प्रकाश।।
ऊर्ध्वलोक में गमन किया प्रभु, पाया सिद्धलोक आवास।
जय जय विमलनाथ तीर्थंकर, हुआ मोक्षकल्याणक रास||5||
ॐ ह्रीं श्री आषाढ़ शुक्ल अष्टम्यां मोक्षमंगलप्राप्त श्री विमलनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

विमलनाथ विमलेश विमलप्रभ विमल विवेक विमुक्तात्मा।
विचारज्ञ विद्यासागर विद्यापति विविक्त विद्यात्मा||1||
तेरहवें तीर्थंकर प्रभु, त्रैलोक्यनाथ जिनवर स्वामी।
तेरह विधि चारित्रबताया, तुमने हे शिव सुख धामी||2||
पचपन गणधर से शोभित प्रभु, **मुख्य हुए मंदिर गणधर**।
मुख्य आर्यिका पद्मा, श्रोता पुरुषोत्तम, सुरनर मुनिवर||3||
पंचमहाव्रत पंचसमिति, त्रय गुप्ति श्रमण मुनि का चारित।
है व्यवहार चारित्र श्रेष्ठ निश्चय स्वरूप आचरण पवित्र||4||
हिंसा, झूठ, कुशील परिग्रह, चोरी पाँच पाप का त्याग।
मन, वच, काया, कृत, कारित, अनुमोदन से **कषाय** सबत्याग||5||
योनि, जीव, मार्गणा, स्थान, कुल, भेद जान रक्षा करना।
तज आरम्भ, **अहिंसाव्रत,** परिणाम सदा पालन करना||6||

राग, द्वेष, मद, मोह आदि से, हों न [1]**मृषा** परिणाम कभी।
सदा सर्वदा **सत्य महाव्रत** का, पालन है पूर्ण तभी ||7||
ग्राम नगर वन आदिक भी पर वस्तु ग्रहण का भाव न हो।
यही तीसरा है **आचौर्य व्रत,** पर पदार्थ में राग न हो ||8||
देख रूप रमणी का उसके, प्रति वांछा का भाव न हो।
मैथुन संज्ञा रहित शुद्ध व्रत, **ब्रह्मचर्य** का पालन हो ||9||
पर पदार्थ परद्रव्यों में मूर्छा, ममत्व न किंचित हो।
त्याग भेद चौबीस परिग्रह के, **अपरिग्रह** शुभ व्रत हो ||10||
पंचमहाव्रत दोष रहित, अतिचार रहित हो अतिशुचिमय।
पूर्ण देश पालन करना, आसन्न भव्य को मंगलमय ||11||
ईर्या, भाषा, समिति एषणा, अरु **आदान निक्षेपण** जान।
प्रतिष्ठापना, समिति पांच का, पालन करते साधु महान ||12||
केवल दिन में चार हाथ लख, प्रासुक पथ पर जो जाता।
त्रसथावर प्राणी की रक्षा, **ईर्या समिति** पालन करता ||13||
पर **निन्दा, पैशून्य, हास्य, कर्कश, भाषा स्वप्रशंसा** तज।
हितमितप्रियही वचन बोलना,**भाषा समिति**स्वयं को भज ||14||
संयम हित नवकोटि रूप से, प्रासुक शुद्ध भोजन करना।
यही **एषणा समिति** कहाता, विधि पूर्वक आहार करना ||15||
शास्त्र कमंडुल पीछी आदिक, संयम के उपकरण सभी।
यत्न पूर्वक रखना है **आदान निक्षेपण समिति** तभी ||16||
पर उपरोध जंतु विरहित, प्रासुक भूपर मल को त्यागे।
प्रतिष्ठापना समिति सहज हो, जागरूक निज में जागे ||17||

1. झूठ बोलने के परिणाम

पंच समिति व्यवहार समिति, निश्चय से **निज सम्यक् परणति**।
तत्वलीन **त्रयगुप्ति** सहित, ज्ञानादिक धर्मों की संहति ||18||
कालुष संज्ञा मोहराग, द्वेषादि अशुभ भावों को तज।
परमागम का चिंतन करना, **मनोगुप्ति** व्यवहार सहज ||19||
पाप हेतु विकथाएं तज करना, असत्य की निवृत्ति सदा।
वचन गुप्ति वचनों अरु, बहिवर्चन में नहीं कदा ||20||
बंधन छेदनमारण आकुंचन, व प्रसारण इत्यादिक।
काय क्रियाओं से निवृत्ति है, **कायगुप्ति** निज सुखदायिक ||21||
तेरह विधि चारित्रपाल जो करता कायोत्सर्ग स्वयं।
त्याग शुभाशुभ, ध्यानमयी निज भजता जो शुद्धात्मपरक ||22||
घाति कर्म से रहित परम, केवल ज्ञानादि गुणों से युत।
हो जाते अरिहंत देव, चौंतीस अतिशयों से भूषित ||23||
अष्टकर्म के बंधन को कर, नष्ट अष्टगुण पाता है।
वह लोकाग्र शिखर पर स्थिर हो, सिद्ध स्वपद प्रगटाता है ||24||
मैं भी बन संपूर्ण सिद्ध निज पद पाऊँ ऐसा बल दो।
हे प्रभु विमलनाथ जिन स्वामी पूजन का शिवमयफल हो ||25||

ॐ ह्रीं श्री विमलनाथ जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं नि.।

शूकर चिन्ह चरण में शोभित विमल जिनेश्वर का पूजन।
मन वच तन से जो करते हैं वे पाते हैं मुक्ति सदन।।

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री विमलनाथ जिनेन्द्राय नमः।

(10) परोपकारी कभी अकेला नहीं होता।

65. श्री अनन्तनाथ जिन पूजन

जय जय जयति [1]अनन्तनाथ प्रभु, शुद्ध ज्ञानधारी भगवान।
परम पूज्य मंगलमय प्रभुवर, गुण अनन्तधारी भगवान ||1||
केवलज्ञान लक्ष्मी के पति भव भय दुखहारी भगवान।
परम शुद्ध अव्यक्त अगोचर, भव भव सुखकारी भगवान ||2||
जय अनन्त प्रभु अष्टकर्म, विध्वंसक शिवकारी भगवान।
महामोक्षपति परम वीतरागी, जग हितकारी भगवान ||3||

ॐ ह्रीं श्री अनंतनाथ जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट्, ॐ ह्रीं श्री अनंतनाथ जिनेन्द्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, ॐ ह्रीं श्री अनंतनाथ जिनेन्द्र अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।

मैं अनादि से जन्म मरण की, ज्वाला में जलता आया।
सागर जल से बुझी न ज्वाला, तो मैं सम्यक जल लाया।।
जय जिनराज अनन्तनाथ प्रभु, तुम दर्शन कर हर्षाया।
गुण अनन्त पाने को पूजन, करने चरणों में आया ||1||

ॐ ह्रीं श्री अनंतनाथ जिनेन्द्राय जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि.।

भव पीड़ा के दुष्कर बन्धन से, न मुक्त प्रभु हो पाया।
भवाताप की दाह मिटाने, मलयागिरि चंदन लाया।।जय||2||

ॐ ह्रीं श्री अनंतनाथ जिनेन्द्राय संसारताप विनाशनाय चंदनं नि.।

पर भावों के महाचक्र में फंस कर नित गोता खाया।
भवसमुद्र से पार उतरने, निज अखण्ड तंदुल लाया।।जय||3||

ॐ ह्रीं श्री अनंतनाथ जिनेन्द्राय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि.।

1. 14वें तीर्थंकर

कामबाण की महाव्याधि से, पीड़ित हो अति दुख पाया।
सुदृढ़ भक्ति नौका में चढ़कर शील पुष्प पाने आया।।जय||4||
ॐ ह्रीं श्री अनंतनाथ जिनेन्द्राय कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।
विविध भाँति के षटरस व्यंजन, खाकर तृप्त न हो पाया।
क्षुधारोग से विमुक्त होने मैं, नैवेद्य भेंट लाया।।जय||5||
ॐ ह्रीं श्री अनंतनाथ जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।
पर परिणति के रूप जाल में, पड़ निज रूप न लख पाया।
मिथ्याभ्रम हर ज्ञान ज्योति, पाने को नवलदीप लाया।।जय||6||
ॐ ह्रीं श्री अनंतनाथ जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।
नरक तिर्यंच देव नर गति में, भव अनन्त धर पछताया।
चहुंगति का अभाव करने को, निर्मल शुद्ध धूप लाया।।जय||7||
ॐ ह्रीं श्री अनंतनाथ जिनेन्द्राय अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।
भाव शुभाशुभ दुख के कारण, इनसे कभी न सुख पाया।
संवर सहित निर्जरा द्वारा मोक्ष सुफल पाने आया।।जय ||8||
ॐ ह्रीं श्री अनंतनाथ जिनेन्द्राय महामोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।
देह भोग संसार राग में रहा, विराग नहीं भाया।
सिद्ध शिला सिंहासन पाने, अर्घ सुमन लेकर आया।।
जय जिनराज अनन्तनाथ प्रभु, तुम दर्शन कर हर्षाया।
गुण अनन्त पाने को पूजन, करने चरणों में आया ||9||
ॐ ह्रीं श्री अनंतनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ पद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

श्री पंचकल्याणक

कार्तिक कृष्णा एकम् के दिन, हुआ **गर्भ कल्याण** महान।
माता जय श्यामा उर आये, **पुष्पोत्तर** का त्याग विमान।।

नव बारह योजन की नगरी, रची **अयोध्या** श्रेष्ठ महान।
जय अनन्त प्रभु मणि वर्षा की, पन्द्रह मास सुरों ने आन ||1||
ॐ ह्रीं श्री कार्तिक कृष्ण प्रतिपदायां गर्भकल्याण प्राप्त श्री अनंतनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।
नगर अयोध्या **सिंहसेन** नृप के, गृह गूंजी शहनाई।
ज्येष्ठ कृष्ण द्वादश को जन्में सारी जगती हर्षायी।
ऐरावत पर गिरि सुमेरू ले जा, सुरपति ने न्हवन किया।
जय अनन्त प्रभु सुर सुरांगनाओं ने मंगल नृत्य किया ||2||
ॐ ह्रीं श्री ज्येष्ठ कृष्ण द्वादश्यां जन्मकल्याण प्राप्त श्री अनंतनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।
उल्कापात देखकर तुमको, एक दिवस **वैराग्य** हुआ।
ज्येष्ठ कृष्ण द्वादशी को स्वामी राज्यपाट का त्याग हुआ।।
गये **सहेतुक वन** में **तरु, अश्वस्थ** निकट दीक्षा धारी।
जय अनन्त प्रभु नग्न दिगम्बर, वीतराग मुद्रा धारी ||3||
ॐ ह्रीं श्री ज्येष्ठ कृष्ण द्वादश्यां तपकल्याण प्राप्त श्री अनंतनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।
एक मास तक **प्रतिमायोग**, धार कर शुक्ल ध्यान किया।
चार घातिया कर्म नाशकर, तुमने केवलज्ञान लिया।।
चैत्र मास की कृष्ण अमावस्या, को शिव संदेश दिया।
जय अनन्त जिन भव्यजनों को, परम श्रेष्ठ उपदेश दिया ||4||
ॐ ह्रीं श्री चैत्र कृष्ण अमावस्यां ज्ञानकल्याण प्राप्त श्री अनंतनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।
चैत्र मास की कृष्ण अमावस्या, तुमने निर्वाण लिया।
कूट स्वयं भू सम्मेदाचल देवों ने जयगान किया।।

हो अयोग केवली योग का प्रथम समय में अन्त किया।
जय अनन्त प्रभु निज सिद्धत्व, प्रगट कर पद भगवन्त लिया ||5||
ॐ ह्रीं चैत्रकृष्ण अमावस्यायां मोक्षमंगल प्राप्त श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

जयमाला

चतुर्दशम् तीर्थंकर स्वामी, पूज्य **अनन्तनाथ भगवान**।
दिव्यध्वनि के द्वारा तुमने, किया भव्य जन का कल्याण ||1||
थे **पचास गणधर** जिनमें, **पहले गणधर थे जय मुनिवर**।
सर्वश्री थी मुख्य आर्यिका, श्रोता भव्यजीव सुर नर ||2||
चौदह जीवसमास मार्गणा, चौदह तुमने बतलायें।
चौदह गुणस्थान जीवों के, परिणामों के दर्शाये ||3||
बादर सूक्ष्म जीव एकेन्द्रिय, पर्याप्तक व **अपर्याप्तक**।
दो इन्द्रिय त्रय इन्द्रिय, चतुइन्द्रिय पर्याप्त अपर्याप्तक ||4||
संज्ञी और **असंज्ञी पंचेन्द्रिय, पर्याप्तक अपर्याप्तक**।
ये ही **चौदह जीवसमास,** जीव के जग में परिचायक ||5||
गति इन्द्रिय कषाय अरु **लेश्या, वेद योग संयम सम्यक्त्व**।
काय आहार ज्ञान दर्शन अरु हैं, **संज्ञीत्व और भव्यत्व** ||6||
यह **चौदह मार्गणा** जीवकी, होती है इनसे पहचान।
पंचानवे भेद हैं इनके जीव, सदा हैं सिद्ध समान ||7||
गति हैं **चार पांच इन्द्रिय, छह लेश्याएँ पच्चीस कषाय**।
वेद तीन सम्यक्त्व भेद छह, पन्द्रह योग और **षटकाय** ||8||
दो आहार चार दर्शन हैं, **संयम सात अष्ट हैं ज्ञान**।
दो संज्ञीत्व और हैं **दो भव्यत्व, मार्गणा भेद प्रधान** ||9||

गुणस्थान मार्गणा व **जीव समास**, सभी व्यवहार कथन।
निश्चय से ये नहीं जीव के, इन सबसे अतीत चेतन ||10||
मूल प्रकृतियाँ कर्म आठ, ज्ञानावरणादिक होती हैं।
उत्तर प्रकृति **एक सौ अड़तालीस,** कर्म की होती हैं ||11||
गुणस्थान मिथ्यात्व प्रथम में, **एक शतक सत्रह** का बंध।
दूजे सासादन में होता, **एक शतक एक** का बन्ध ||12||
मिश्र तीसरे गुणस्थान में, **प्रकृति चौहत्तर** का होता बन्ध।
चौथे अविरति गुणस्थान में, **प्रकृति सतत्तर** का होता बन्ध ||13||
पंचम देश विरति में होता, **सड़सठ कर्म प्रकृति** का बन्ध।
गुणस्थान षष्टम् प्रमत्त में, **त्रेसठ कर्म प्रकृति** का बन्ध ||14||
गुणस्थान सप्तम अप्रमत्त में, **उनसठ कर्म प्रकृति** का बन्ध।
अष्टम अपूर्वकरण में हो, **अट्ठावन कर्म प्रकृति** का बन्ध ||15||
नौ में अनिवृत्तिकरण में होता है, **बाईस प्रकृति** का बन्ध।
दसवें सूक्ष्मसाम्पराय में, **सत्ररह कर्म प्रकृति** का बन्ध ||16||
ग्यारहवें उपशांतमोह में, **एक प्रकृति साता** का बन्ध।
क्षीणमोह बारहवें में है, **एक प्रकृति साता** का बन्ध ||17||
है **सयोगकेवली त्रयोदश**, **एक प्रकृति साता** का बन्ध।
है **अयोग केवली चतुर्दश, किसी प्रकृति का कोई न बन्ध** ||18||
अष्टम् गुणस्थान से **उपशम, क्षपक** श्रेणी होती प्रारम्भ।
उपशम तो नव दस, ग्यारह तक है, **नव दस बारह क्षायक रम्य** ||19||
अविरत गुणस्थान चौथे में, होता **सात प्रकृति का क्षय**।
पंचम षष्टम् सप्तम में होता है **तीन प्रकृति का क्षय** ||20||

नवमें गुणस्थान में होती है **छत्तीस प्रकृति का क्षय।**
दसवें गुणस्थान में होता **केवल एक प्रकृति का क्षय** ||21||
क्षीणमोह बारहवें में हो **सोलह कर्म प्रकृति का क्षय।**
इस प्रकार **चौथे से बारहवें** तक **त्रेसठ प्रकृति का विलय** ||22||
गुणस्थान तेरहवें मे **सर्व, अनन्त चतुष्टयवान।**
जीवन मुक्त, परम औदारिक, सकल ज्ञेय ज्ञायक भगवान ||23||
चौदहवें में शेष प्रकृति पिच्चासी का होता है क्षय।
प्रकृति एक सौ अड़तालीस कर्म की होती पूर्ण विलय ||24||
ऊर्ध्व गमनकर देहमुक्त हो, **सिद्ध शिला** लोकाग्र निवास।
पूर्ण सिद्ध पर्याय प्रगट होता है, सादि अनन्त प्रकाश ||25||
काल अनन्त व्यर्थ ही खोये, दुख अनन्त अब तक पाये।
द्रव्य क्षेत्र अरु काल भाव–भव, परिवर्तन पांचों पाये ||26||
पर भावों में मग्न रहा तो, रही विकारी ही पर्याय।
निज स्वभाव का आश्रय लेता, होती प्रगट शुद्ध पर्याय ||27||
अष्टकर्म से रहित अवस्था, पाऊँ परम शुद्ध हे देव।
शुद्ध त्रिकाली ध्रुव स्वभाव से, मैं भी सिद्ध बनूँ स्वयमेव ||28||
इसीलिए हे स्वामी मैंने, अष्ट द्रव्य से की पूजन।
तुम समान मैं भी बन जाऊँ, ले निज ध्रुव अवलंबन ||29||
ॐ ह्रीं श्री अनंतनाथ जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं नि. ।

[1]**सेही चिन्ह** चरण में शोभित श्री अनंतप्रभु पद उर धार।
मन वच तन जो ध्यान लगाते हो जाते भव सागर पार।।

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री अनंतनाथ जिनेन्द्राय नमः।

1. एक जानवर का नाम

66. श्री धर्मनाथ जिन पूजन

धर्म धर्मपति धर्म तीर्थयुत, ध्यान धुरन्धर प्रभु ध्रुववान।
धर्म प्रबोधन धर्म विनायक, ध्यान ध्येय ध्याता धीमान ||1||
पंच दशम तीर्थंकर धर्मी, धर्म तीर्थकर्ता धमेन्द्र।
धर्म प्रचारक **धर्मनाथ प्रभु,** जयति धर्मगुरु धर्म जिनेन्द्र ||2||
ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट्, ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्र अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।

धर्म भावना का जल लेकर, क्षमाधर्म उर लाऊँ।
जन्म रोग का नाश करूँ मैं, आत्म ध्यान चित्त लाऊँ।।
धर्म धुरन्धर धर्मनाथ प्रभु, धर्म चक्र के धारी।
हे धर्मेश धर्म तीर्थंकर, शुद्ध धर्म अवतारी ||1||
ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि. ।

धर्म भावना का चन्दन ले, धर्म मार्दव ध्याऊँ।
भव भव की पीड़ा नाशूँ, आत्म धर्म गुण गाऊँ।।धर्म||2||
ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय संसारताप विनाशनाय चंदनं नि. ।

धर्म भावना के अक्षत ले, धर्म आर्जव ध्याऊँ।
निजअखंड पदप्राप्त करूँ मैं, आत्मधर्म चित्त लाऊँ।।धर्म||3||
ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि. ।

धर्म भावना पुष्प संजोऊँ, सत्य धर्म मन भाऊँ।
कामबाण की शल्य मिटाऊँ, आत्म धर्मगुण गाऊँ।।धर्म||4||
ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि. ।

धर्म भावना के चरु लाऊँ, शौच धर्म उर लाऊँ।
क्षुधारोग का नाश करूँ मैं, आत्म धर्म चितलाऊँ।।धर्म||5||
ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।
धर्म भावना दीप जलाऊँ, संयम धर्म जगाऊँ।
मोह तिमिर अज्ञान हटाऊँ, आत्म धर्म गुण गाऊँ।।धर्म||6||
ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।
धर्म भावना धूप चढ़ाऊँ, मैं तप धर्म बढ़ाऊँ।
अष्टकर्म निर्जरा करूँ मैं, आत्म धर्म चित्त लाऊँ।।धर्म ||7||
ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।
धर्म भावना का फल पाऊँ, त्याग धर्म मन लाऊँ।
मोक्षस्वपद की प्राप्ति करूँ मैं, आत्मधर्म गुण गाऊँ।।धर्म ||8||
ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय मोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।
धर्म भावना अर्घ चढ़ाऊँ, आकिंचन मन लाऊँ।
ब्रह्मचर्य निजशील पयोनिधि आत्मधर्म चितलाऊँ।।
धर्म धुरंधर धर्मनाथ, प्रभु धर्मचक्र के धारी।
हे धर्मेश धर्म तीर्थंकर, शुद्ध धर्म अवतारी ||9||
ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ पद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

श्री पंचकल्याणक अर्घ्य

त्रयोदशी वैशाख शुक्ल को सुरबाला मंगल गाए।
तज [1]सर्वार्थसिद्धि का वैभव, **देवि सुव्रता** उर आए।।

1. अन्तिम स्वर्ग

स्वप्न फलों को जान मुदित, माता मन ही मन मुस्काए।
जय जय **धर्मनाथ तीर्थंकर**, रत्न वृष्टि अनुपम छाए ||1||
ॐ ह्रीं वैशाख शुक्ल त्रयोदश्यां गर्भकल्याणक प्राप्त श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।
माघ शुक्ल की त्रयोदशी को, **रत्नपुरी** में जन्म हुआ।
राजा भानुराज हर्षाये, इन्द्रों का आगमन हुआ।।
पांडुक शिला विराजित करके, क्षीरोदधि से नव्हन हुआ।
जय जय धर्मनाथ त्रिभुवनपति, तीन लोक आनन्द हुआ ||2||
ॐ ह्रीं माघ शुक्ल त्रयोदश्यां जन्मकल्याणक प्राप्त धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।
शुक्ल माघ की त्रयोदशी को, प्रभु का तप कल्याण हुआ।
भव तन भोगों से विरक्त हो, उर में धर्म ध्यान हुआ।।
राज्यपाट सब त्याग पालकी में, विराज वन में आए।
तरु दधिपूर्ण तले दीक्षा धर, धर्मनाथ प्रभु हर्षाए ||3||
ॐ ह्रीं माघ शुक्ल त्रयोदश्यां तपकल्याणक प्राप्त धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।
पौष शुक्ल पूर्णिमा मनोहर, जब छदमस्थ काल बीता।
केवलज्ञान लक्ष्मी पाई, **चार [1]घाति अरि** को जीता।।
हुए विराजित समवशरण में, अंतरीक्ष पद्मासन धार।
जय जय धर्मनाथ जिनवर शाश्वत, उपदेश हुआ सुन्दर ||4||
ॐ ह्रीं पौष शुक्ल पूर्णिमायां ज्ञानकल्याणक प्राप्त धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।
ज्येष्ठ शुक्ल की दिव्य चतुर्थी, गिरि सम्मेद हुआ पावन।
प्राप्त अयोगी गुणस्थान चौदहवाँ पाया मुक्ति सदन।।

1. धातिया 4 कर्म (1) ज्ञानावरण, (2) दर्शनावरण, (3) मोहनीय, (4) अन्तराय

सिद्धशिला पर आप विराजे गूँज उठी जग में जयधुन।
मोक्ष सुदत्तकूट से पाया, धर्मनाथ प्रभु ने शुभ दिन ॥5॥
ॐ ह्रीं ज्येष्ठ शुक्ल चतुर्थ्यां मोक्षकल्याणक प्राप्त धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

जय जय **धर्मनाथ तीर्थंकर**, जिनवर वृषभ सौख्यकारी।
केवलज्ञान प्राप्त होते ही, खिरी दिव्य ध्वनि हितकारी ॥1॥
गणधर तिरतालिस प्रमुख, ऋषिराज अरिष्टसेन गणधर।
श्रीसुव्रता मुख्य आर्यिका, अगणित श्रोता सुर मुनि नर ॥2॥
वीतराग प्रभु परम ध्यानपति, भेद ध्यान के दरशाए।
आर्त रौद्र अरु **धर्म शुक्ल** ये, चार ध्यान हैं बतलाए ॥3॥
चिन्ता का निरोध करके, एकाग्र जिस विषय में हो मन।
रहता है अन्तमुहुर्त तक यही, ध्यान का है लक्षण ॥4॥
आर्त, रौद्र तो **अप्रशस्त** हैं, **धर्म, शुक्ल** हैं **प्रशस्त ध्यान।**
इन चारों के चार चार हैं, भेद अनेक प्रभेद सुजान ॥5॥
आर्त्तध्यान के **चार भेद** हैं **इष्ट वियोग, अनिष्ट संयोग।**
पीड़ा जनित भेद है **तीजा**, **चौथा** है **निदान** का रोग ॥6॥
रौद्रध्यान के **चार भेद**, **हिंसानंदी** व **मृषानंदी।**
चौर्यानन्दी व **तीसरा**, **चौथा परिग्रहानन्दी** ॥7॥
हिंसा में आनन्द मानना, **हिंसानन्दी** ध्यान कुध्यान।
झूठ मांहि आनन्द मानना, ध्यान **मृषानन्दी** दुखखान ॥8॥
चोरी में आनन्द मानना, **चौर्यानन्दी** ध्यान कुध्यान।
परिग्रह में आनन्द मानना, **परिग्रहानन्दी** दुर्ध्यान ॥9॥

आर्त ध्यान अरु **रौद्र ध्यान** तो, **खोटी गति** के कारण हैं।
पहिले गुणस्थान में तो यह, भव भव का दुख दारूण हैं ॥10॥
चौथे पंचम छठवें तक यह, **आर्त ध्यान** हो जाता है।
रौद्र ध्यान चौथे पंचम से, आगे कभी न जाता है ॥11॥
धर्म ध्यान के **चार भेद** हैं, **आज्ञाविचय, अपायविचय।**
तृतीय विपाकविचय कहलाता, **चौथा है संस्थान विचय** ॥12॥
जिन आज्ञा से वस्तु चिंतवन, **आज्ञाविचय** ध्यान सुखमय।
कर्मनाश के उपाय का ही, चिंतन ध्यान **अपायविचय** ॥13॥
कर्म विपाक उदय उदीरणादिक, चिंतवन **विपाकविचय।**
तीन लोक के स्वरूप का, चिंतवन ध्यान **संस्थानविचय** ॥14॥
इनमें से संस्थानविचय के, चार भेद **पिंडस्थ पदस्थ।**
तीजा है रूपस्थ ध्यान, चौथा है रूपातीत प्रशस्त ॥15॥
है **पिंडस्थ निजात्म चिंतवन**, श्री अर्हत आकृति का ध्यान।
वर्ण मातृका मंत्र ॐ आदिक में, सुस्थिति पदस्थ ध्यान ॥16॥
श्री अरहंत स्वरूप चिंतवन निज चिद्रूप **ध्यान रूपस्थ।**
ध्यान त्रिकाली शुद्धात्मा का, **रूपातीत** महान प्रशस्त ॥17॥
पांच धारणाएं पिंडस्थ, ध्यान की ध्याते परम यती।
पार्थिवी, आग्नेयी, मारुती, वारूणी, तत्व रूपवती ॥18॥
धर्मध्यान का फल संवर निर्जरा मोक्ष का हेतु महान।
चौथे गुणस्थान से सप्तम तक, होता है **धर्म–ध्यान** ॥19॥
अष्टम गुणस्थान से लेकर, चौदहवें तक **शुक्लध्यान।**
शुक्लध्यान का फलसाक्षात**शाश्वत सिद्धस्वपदभगवान** ॥20॥

ग्यारह अंग पूर्व चौदह के, ज्ञानी जो सर्वज्ञ महान।
वज्रवृषभनाराचसंहनन चरम, शरीर को यह जान ||21||
शुक्लध्यान के चार भेद हैं इनकी महिमा अमित महान।
इनके द्वारा ही होता है, आठों कर्मों का अवसान ||22||
पृथक्त्व वितर्क वीचार और, आठों कर्मों का अवसान।
सूक्ष्मक्रिया अप्रतिपाति अरु, **व्युपरतक्रियानिवर्ति** प्रधान ||23||
श्रुतविचार संक्रमण होता, ध्यान **पृथक्त्व वितर्क वीचार**।
मोहनीय घातिया विनाशक, पहिला **शुक्लध्यान** सुखकार ||24||
एक योग में योगी रहता, वह **एकत्व वितर्क अवीचार**।
तीन घातिया नाश करे जो, दूजा **शुक्लध्यान** शिवकार ||25||
अष्टम से लेकर बारहवें, गुणस्थान तक ये होते।
त्रेसठ कर्म प्रकृति क्षय होती, तब अरहन्त देव होते ||26||
काय क्रिया जब सूक्ष्म रहे तब, होता **सूक्ष्मक्रिया प्रतिपाति**।
तेरहवें में होता जब **अन्तमुहुर्त कर्म आयु रहती** ||27||
योग अभाव अघातिकर्म, क्षय करना **व्युपरत क्रिया निवर्ति**।
चौदहवें में लघु पंचाक्षर, समय मात्र इसकी स्थिति ||28||
चौदहवें के प्रथम समय में, **प्रकृति बहत्तर** का हो नाश।
अन्त समय में **तेरह कर्म प्रकृति** का होता पूर्ण विनाश ||29||
उर्ध्व गमन कर सिद्धशिला पर, सिद्ध स्वपद पाते भगवन्त।
हो लोकाग्र भाग में सुस्थित, शुद्ध निरंजन सादि अनंत ||30||
धर्मध्यान को सर्व परिग्रह, तजकर जो जन ध्याते हैं।
स्वर्गादिक सर्वार्थसिद्धि को, सहज योगी जन पाते हैं ||31||
क्षपक श्रेणि चढ़ शुक्ल ध्यान जो, ध्याते पाते केवलज्ञान।
अंतिम शुक्लध्यान के द्वारा, वे ही पाते हैं निर्वाण ||32||

आर्त्त रौद्र में **कृष्ण, नील, कापोत अशुभ लेश्या** होती।
धर्म ध्यान में **पीत, पद्म** अरु **शुक्ल लेश्या** ही होती||3||
पहिले दूजे शुक्ल ध्यान में **शुक्ल लेश्या** ही होती।
तीजे चौथे शुक्ल ध्यान में परम शुक्ल लेश्या होती ||34||
चार ध्यान को जानूँ समझूँ अप्रशस्त का त्याग करूँ।
आलंबन लेकर **प्रशस्त** का **रागातीत विराग** करूँ ||35||
रहित, परिग्रह, तत्वज्ञान परिषहजय, साम्यभाव, वैराग्य।
धर्म ध्यान के पाँचों कारण निज में पाऊँ जागेभाग्य ||36||
हे प्रभु मैं भी निज आश्रय ले निजस्वरूप को ही ध्याऊँ।
धर्म शुक्ल ध्या **अष्टकर्म क्षयकर** निज सिद्धस्वपद पाऊँ ||37||
ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं नि.।

व्रज चिन्ह शोभित चरण, भाव सहित उरधार।
मन वच तन जो ध्यावते, वे होते भवपार।

इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत्

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय नमः।

67. श्री शांतिनाथ जिन पूजन

शांति जिनेश्वर हे परमेश्वर, परमशान्त मुद्रा अभिराम।
पंचम चक्री शान्ति सिन्धु, सोलहवें तीर्थंकर सुखधाम ||1||
निजानंद में लीन शांतिनायक, जग गुरु निश्चल निष्काम।
श्री जिनदर्शन पूजन अर्चनवंदन नित प्रति करूँ प्रणाम ||2||
ॐ ह्रीं श्री शांतिनाथ जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट्, ॐ ह्रीं श्री शांतिनाथ जिनेन्द्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, ॐ ह्रीं श्री शांतिनाथ जिनेन्द्र अत्रमम् सन्निहितो भव भव वषट्।

जल स्वभाव शीतल मलहारी, आत्म स्वभाव शुद्ध निर्मल।
जन्म मरण मिट जाये प्रभु, जब जागे निज स्वभाव का बल।।
परम शांति सुखदायक शांति विधायक शांतिनाथ भगवान।
शाश्वत सुख की मुझे प्राप्ति हो, श्री जिनवर दो यह वरदान ||1||
ॐ ह्रीं श्री शांतिनाथ जिनेन्द्राय जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं नि. /
शीतल चंदन गुण सुगंधमय, निजस्वभाव अति ही शीतल।
पर विभाव का ताप मिटाता, निज स्वरूप का अंतर्बल। ।परम||2||
ॐ ह्रीं श्री शांतिनाथ जिनेन्द्राय संसारताप विनाशनाय चंदनं नि. /
भव अटवी से निकल न पाया, पर पदार्थ में अटका मन।
यह संसार पार करने का, निज स्वभाव ही है साधन। ।परम||3||
ॐ ह्रीं श्री शांतिनाथ जिनेन्द्राय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि. /
कोमल पुष्प मनोरम जिनमें, राग आग की दाह प्रबल।
निज स्वरूप की महाशक्ति से, कामव्यथा होती निर्बल। ।परम||4||
ॐ ह्रीं श्री शांतिनाथ जिनेन्द्राय कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि. /
उर की क्षुधा मिटाने वाला, यह [1]**चरु** तो दुखदायक है।
इच्छाओं की भूख मिटाता, निज स्वभाव सुखदायक है। ।परम||5||
ॐ ह्रीं श्री शांतिनाथ जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि. /
अन्धकार में भ्रमते–भ्रमते, भव–भव में दुख पाया है।
निजस्वरूप के ज्ञानभानु का, उदय न अब तक आया है। ।परम||6||
ॐ ह्रीं श्री शांतिनाथ जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि. /
इष्ट अनिष्ट संयोगों में ही, अब तक सुख दुख माना है।
पूर्ण त्रिकाली ध्रुव स्वभाव का, बल न कभी पहचाना है। ।परम||7||
ॐ ह्रीं श्री शांतिनाथ जिनेन्द्राय अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि. /

1. भोजन

शुद्ध भाव पीयूष त्याग कर, पर को अपना मान लिया।
पुण्य फलों में रुचि करके, अब तक मैंने विषपान किया। ।परम||8||
ॐ ह्रीं श्री शांतिनाथ जिनेन्द्राय मोक्षफल प्राप्तये फलं नि. /
अविनश्वर अनुपम अनर्घपद सिद्ध स्वरूप महा सुखकार।
मोक्ष भवन निर्माता निज चैतन्य राग नाशक अघहार।।
परम शांति सुखदायक शांति विधायक शांतिनाथ भगवान।
शाश्वत सुख की मुझे प्राप्ति हो, श्री जिनवर दो यह वरदान ||9||
ॐ ह्रीं श्री शांतिनाथ जिनेन्द्राय अनर्घपद प्राप्तये अर्घ्यं नि. /

श्री पंचकल्याणक अर्घ्य

भादव कृष्ण सप्तमी के दिन तज [1]**सर्वार्थसिद्धि** आये।
माता ऐरा धन्य हो गयी, **विश्वसेन** नृप हरषाये।।
छप्पन दिक्कुमारियों ने, नित नवल गीत मंगल गाये।
शांतिनाथ के गर्भोत्सव पर, रत्न इन्द्र ने बरसाये ||1||
ॐ ह्रीं श्री भाद्रपक्ष कृष्ण सप्तम्यां गर्भमंगलप्राप्त श्री शांतिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।
नगर हस्तिनापुर में जन्में, त्रिभुवन में आनन्द हुआ।
ज्येष्ठ कृष्ण की चतुर्दशी को, सुरगिरि पर अभिषेक हुआ।।
मंगल वाद्य नृत्य गीतों से, गूंज उठा था पाण्डुक वन।
हुआ जन्म कल्याण महोत्सव शांतिनाथ प्रभु का शुभदिन ||2||
ॐ ह्रीं श्री ज्येष्ठकृष्ण चतुर्दश्यां जन्ममंगलप्राप्त श्री शांतिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

1. अन्तिम स्वर्ग

मेघ विलय लख जातिस्मरण हुआ, अनित्य जगजान लिया।
लौकांतिक देवों ने आकर, धन्य धन्य जयगान किया।।
कृष्ण चतुर्दशि ज्येष्ठ मास की, अतुलित वैभव त्याग दिया।
शांतिनाथ ने मुनिव्रत धारा, शुद्धातम अनुराग किया ||3||
ॐ ह्रीं श्री ज्येष्ठकृष्ण चतुर्दश्यां तपोमंगलप्राप्त श्री शांतिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

पौष शुक्ल दशमी को, चारों घातिकर्म चकचूर किये।
पाया केवलज्ञान जगत के सारे संकट दूर हुये।।
समवशरण रचकर देवों ने, किया ज्ञानकल्याण महान।
शांतिनाथ प्रभु की महिमा का, गूंजा जग में जय जयगान ||4||
ॐ ह्रीं श्री पौष शुक्लदशम्यां केवलज्ञान प्राप्त श्री शांतिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

ज्येष्ठ कृष्ण की चतुर्दशी को, प्राप्त किया सिद्धत्व महान।
कूट **कुन्दप्रभ गिरि सम्मेद शिखर**, से पाया पद निर्वाण।।
सादि अनन्त सिद्ध पद को, प्रगटाया प्रभु ने धर निजध्यान।
जय जय शांतिनाथ जगदीश्वर, अनुपम हुआ मोक्षकल्याण ||5||
ॐ ह्रीं श्री ज्येष्ठ कृष्ण चतुर्दश्यां मोक्षमंगल प्राप्त श्री शांतिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

शांतिनाथ शिवनायक शांति, विधायक शुचिमय शुद्धात्मा।
शुभ्र मूर्ति शरणागत वत्सल, शील स्वभावी शांतात्मा ||1||
नगर **हस्तिनापुर के अधिपति, विश्वसेन नृप** के नन्दन।
माँ ऐरा के राज दुलारे, सुर नर मुनि करते वंदन ||2||

कामदेव बारहवें पंचम, चक्री तीन ज्ञानधारी।
बचपन में अणुव्रत जैसा, यौवन में पाया वैभव भारी ||3||
भरत क्षेत्र के षट खण्डों को, जय कर हुए **चक्रवर्ती**।
नव निधि चौदह रत्न प्राप्त कर, शासक हुए न्यायवर्ती ||4||
इस जग के उत्कृष्ट भोग, भोगते बहुत जीवन बीता।
एक दिवस नभ में [1]घन का, परिवर्तन लख निजमन रीता ||5||
यह संसार असार जानकर, तपधारण का किया विचार।
लौकांतिक देवर्षि सुरों ने, किया हर्ष से जय जयकार ||6||
वन में जाकर दीक्षाधारी, पंच मुष्टि कचलोंच किया।
चक्रवर्ति की अतुलसम्पदा, क्षण में त्याग विराग लिया ||7||
मन्दिरपुर के नृप सुमित्र ने, भक्ति पूर्वक **दान दिया**।
प्रभुकर में [2]**पय धारा दे, भव सिंधु सेतु निर्माण** किया ||8||
उग्र तपस्या से तुमने, कर्मों की कर निर्जरा महान।
सोलह वर्ष मौन तप करके, ध्याया शुद्धातम का ध्यान ||9||
श्रेणी क्षपक चढ़े स्वामी, केवलज्ञानी सर्वज्ञ हुए।
दिव्य ध्वनि से जीवों को, उपदेश दिया विश्वज्ञ हुए ||10||
गणधर थे **छत्तीस** आपके, **चक्रायुध पहले गणधर**।
मुख्य आर्यिका हरिषेणा थी, श्रोता पशु नरसुर मुनिश्वर ||11||
कर विहार जग में जगती के, जीवों का कल्याण किया।
उपादेय है शुद्ध आत्मा, यह संदेश महान दिया ||12||
पाप–पुण्य शुभ–अशुभ, आश्रव जग में भ्रमण कराते हैं।
जो संवर धारण करते हैं, परम मोक्ष पद पाते हैं ||13||

1. बादल 2. दुग्ध

सात तत्व की श्रद्धा करते, जो भी समकित धरते हैं।
रत्नत्रय का अवलम्बन ले, मुक्ति वधू को बरते हैं ||14||
सम्मेदाचल के पावन पर्वत, पर आप हुए आसीन।
[1]**कूट कुन्दप्रभ** से अघातिया, कर्मों से भी हुए विहीन ||15||
महामोक्ष निर्वाण प्राप्तकर, गुण अनन्त से युक्त हुए।
शुद्ध बुद्ध अविरुद्ध सिद्ध, पद पाया भव से मुक्त हुए ||16||
हे प्रभु शांतिनाथ मंगलमय, मुझको भी ऐसा वर दो।
शुद्ध आत्मा की प्रतीति, मेरे उर में जाग्रत कर दो ||17||
पाप ताप संताप नष्ट हो, जाये सिद्ध स्वपद पाऊँ।
पूर्ण शांतिमय शिवसुख पाकर, फिर न लौट भव में आऊँ ||18||
ॐ ह्रीं श्री शांतिनाथ जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं नि.।

चरणों में **मृग चिन्ह** सुशोभित शांति जिनेश्वर का पूजन।
भक्ति भाव से जो करते हैं वे पाते हैं मुक्ति गगन।।

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्

जाप्य मंत्र : ॐ ह्रीं श्री शांतिनाथ जिनेन्द्राय नमः।

68. श्री कुन्थुनाथ जिन पूजन

श्री [2]**कुंथुनाथ** जिनेश प्रभु, तुम ज्ञान मूर्ति महान हो।
अरहन्त हो भगवन्त हो, गुणवंत हो भगवान हो ||1||
तुम वीतरागी तीर्थंकर, हितंकर सर्वज्ञ हो।
जानते युगपत सकल जग, इसीलिए विश्वज्ञ हो ||2||

1. सम्मेद शिखर के शिखर पर चरण कूट कुन्दप्रभ
1. 17वें तीर्थंकर

नाथ मैं आया शरण में, राग द्वेष विनाश हो।
दो मुझे आशीष उर में, पूर्ण ज्ञान प्रकाश हो ||3||
ॐ ह्रीं श्री कुंथुनाथ जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट्, ॐ ह्रीं श्री कुंथुनाथ जिनेन्द्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, ॐ ह्रीं श्री कुंथुनाथ जिनेन्द्र अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।
नव तत्त्व के श्रद्धान का जल, स्वच्छ अन्तर में भरूँ।
समवाय पांचों प्राप्त कर, मिथ्यात्व के मल को हरूँ।।
श्री कुन्थुनाथ अनाथ रक्षक, पद कमल मस्तक धरूँ।
आनंद कंद जिनेन्द्र के पद, पूज सब कल्मष हरूँ ||1||
ॐ ह्रीं श्री कुंथुनाथ जिनेन्द्राय जन्मजरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि.।
है सार जग में आत्मा, निज तत्व चंदन आदरूँ।
प्रभु शांत मुद्रा निरखकर, मिथ्यात्व के मल को हरूँ।।श्रीकुंथु.||2||
ॐ ह्रीं श्री कुंथुनाथ जिनेन्द्राय संसार ताप विनाशनाय चंदनं नि.।
मैं जान तत्त्व अजीव को, अक्षत स्वचेतन पद धरूँ।
अक्षय अरूपी ज्ञान से, मिथ्यात्व के मल को हरूँ।।श्रीकुंथु.||3||
ॐ ह्रीं श्री कुंथुनाथ जिनेन्द्राय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि.।
इस आश्रव को जान दुखमय, पाप पुण्याश्रव हरूँ।
प्रभु कामबाण विनाश हित, मिथ्यात्व के मलको हरूँ।।श्रीकुंथु.||4||
ॐ ह्रीं श्री कुंथुनाथ जिनेन्द्राय कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।
मैं बन्ध तत्त्व स्वरूप समझूँ, आत्मचरु ले परिहरूँ।
प्रभु क्षुधारोग विनष्ट हित, मिथ्यात्व के मल को हरूँ।।श्रीकुंथु.||5||
ॐ ह्रीं श्री कुंथुनाथ जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।
अब तत्त्व संवर जानकर, निज ज्ञान का दीपक धरूँ।
कुज्ञान कुमति विनाशकर, मिथ्यात्व के मल को हरूँ।।श्रीकुंथु.||6||
ॐ ह्रीं श्री कुंथुनाथ जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।

मैं निर्जरा का तत्त्व समझूँ, ध्यान धूप हृदय धरूँ।
सब बद्धकर्म अभावहित, मिथ्यात्व के मल को हरूँ।।श्रीकुंथु.||7||
ॐ ह्रीं श्री कुंथुनाथ जिनेन्द्राय अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।
मैं मोक्ष तत्त्व महान निश्चय, रूप अन्तर में धरूँ।
सम्यक्स्वरूप प्रकाशफल, सम्यक्त्व को दृढ़तर करूँ।।श्रीकुंथु.||8||
ॐ ह्रीं श्री कुंथुनाथ जिनेन्द्राय महामोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।
मैं ज्ञान दर्शन चरितमय, निज अर्घ्य रत्नत्रय धरूँ।
सम्यक् प्रकार अनर्घ पा मैं, शाश्वत सुख को वरूँ।।
श्री कुन्थुनाथ अनाथ रक्षक, पद कमल मस्तक धरूँ।
आनंद कंद जिनेन्द्र के पद, पूज सब कल्मष हरूँ ||9||
ॐ ह्रीं श्री कुंथुनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ पद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

श्री पंचकल्याणक अर्घ्य

श्रावण कृष्ण दशमी के दिन, तज [1]**सर्वार्थ सिद्धि** आये।
कुन्थुनाथ आगमन जानकर, **श्रीमति माँ** हर्षाये।।
गर्भ पूर्व छह मास जन्म तक, शुभरत्नों की धार गिरी।
नगर हस्तिनापुर शोभा लख, लज्जित होती इन्द्रपुरी ||1||
ॐ ह्रीं श्री श्रावण कृष्णदश्याम् गर्भमंगलप्राप्त श्री कुंथुनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।
सूर्यसेन राजा गृह में, कुन्थुनाथ ने जन्म लिया।
शुभ वैशाख शुक्ल एकम् का, तुमने दिवस पवित्र किया।।

1. अन्तिम स्वर्ग

सर्वप्रथम इन्द्राणी ने दर्शन कर, जीवन धन्य किया।
पांडुकशिला विराजित कर, सुरपति ने प्रभु अभिषेक किया||2||
ॐ ह्रीं श्री वैशाख शुक्ला प्रतिपदायां जन्म मंगल प्राप्त श्री कुंथुनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।
शुभ वैशाख शुक्ल एकम को, उर छाया वैराग्य अपार।
यह संसार अनित्य जानकर, जिनदीक्षा का किया विचार।।
तिलक वृक्ष के नीचे दीक्षा, लेकर धार लिया निजध्यान।
कुन्थुनाथ प्रभु का तप, कल्याणक इन्द्रों ने किया महान ||3||
ॐ ह्रीं श्री वैशाख शुक्लप्रतिपदायां तपोमंगलप्राप्त श्री कुंथुनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।
मोह नाशकर **चैत्र शुक्ल, तृतीया** को पाया केवलज्ञान।
समवशरण की रचना करके, हुआ इन्द्र को हर्ष महान।।
खिरी दिव्यध्वनि जग जीवों को, किया आपने ज्ञान प्रदान।
कुन्थुनाथ ने मोक्षमार्ग दर्शा, कर किया विश्व कल्याण ||4||
ॐ ह्रीं श्री चैत्र शुक्ला तृतीयायां ज्ञानमंगलप्राप्त श्री कुंथुनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।
श्री सम्मेदशिखर पर आकर, प्रतिमायोग किया धारण।
अंतिम शुक्लध्यान को धर कर, स्वामी हुये तरण तारण।
प्रभु **वैशाख शुक्ल एकम** को, शेष कर्म का कर अवसान।
कूट ज्ञानधर से है पाया, कुंथुनाथ प्रभु ने निर्वाण ||5||
ॐ ह्रीं श्री वैशाख शुक्ल प्रतिपदायां मोक्षमंगलप्राप्त श्री कुंथुनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

(11) **जिन्हें दुःखी नहीं होना हो वे कषाय नहीं करें।**

जयमाला

कुंथुनाथ करुणा के सागर, करुणादानी कृपा निधान।
कुमति निकन्दन कल्मष भंजन, कर्मोत्छेदी कृती महान ||1||
भरत क्षेत्र के षटखण्डों पर, राज्य किया बीता बहु काल।
सप्तदशम् तीर्थंकर जिन, **तेरहवें कामदेव** गुणगान ||2||
षष्टम् चक्री दीनानाथ, दया के सागर दया निधान।
जाति स्मरण हुआ एक दिन, तब वैराग्य हुआ तत्काल ||3||
राज्यपाट तज गए **सहेतुक**, **वन** में जिन दीक्षा धारी।
पंचमुष्टि कचलोच किया, प्रभु हुए महाव्रत के धारी ||4||
सोलह वर्ष रहे छद्मस्थ कि, राग द्वेष को दूर किया।
क्षपक श्रेणी चढ़ कर्मघातिया, चारों को चकचूर किया ||5||
भाव शुभाशुभ नाश हेतु, प्रभु निज स्वभाव में लीन हुए।
पाप पुण्य आश्रव विनाशकर, स्वयंसिद्ध स्वाधीन हुए ||6||
गणधर थे पैंतीस आपके, **मुख्य स्वयंभू गणधर** थे।
मुख्य आर्यिका श्रीभाविता, श्रोता सुर नर मुनिवर थे ||7||
वीतराग सर्वज्ञ देव, अरहंत हुए केवलज्ञानी।
सादि अनन्त सिद्ध पद पाया, कर **अघातिया** की हानी ||8||
नाथ आपके पद पंकज में, मन वच काया, सहित प्रणाम।
भक्तिभाव से यही विनय है, सुनो जिनेश्वर हे गुणधान ||9||
सम्यक्दर्शन को धारण कर, श्रावक के व्रत ग्रहण करूँ।
पंच पाप को एक देश तज, चार कषायें मन्द करूँ ||10||
पंच विषय से राग भाव तज, पंच प्रमाद अभाव करूँ।
ग्यारह प्रतिमाएँ पालनकर, पंच महाव्रत भाव धरूँ ||11||

मनवचकाय त्रियोग सँवारूँ, तीन गुप्तियों को पालूँ।
बाह्यान्तर निर्ग्रन्थ दिगम्बर, मुनि बन द्वादश व्रत पालूँ ||12||
पंचाचार समिति पांचों हो, तेरह विधि चारित्र धरूँ।
दश धर्मों का निरतिचार, पालन कर स्वयं स्वरूप वरूँ ||13||
छठे सातवें गुणस्थान में झूलूँ, श्रेणी क्षपक चढ़ूँ।
चार घातिया को विनष्ट कर, मोक्ष भवन की ओर बढ़ूँ ||14||
इस प्रकार निज पद को पाऊँ, यही भावना है स्वामी।
पूर्ण करो मेरी अभिलाषा, कुन्थुनाथ त्रिभुवननामी ||15||
ॐ ह्रीं श्री कुंथुनाथ जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

चरणों में [1]**अज चिन्ह** सुशोभित, कुन्थुनाथ प्रतिमा अभिराम।
जो जन, मन वचन से पूजें, वे ही पाते हैं शिवधाम।।

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री कुंथुनाथ जिनेन्द्राय नमः।

69. श्री अरहनाथ जिन पूजन

जय जय श्री [2]अरहनाथ जिनेश्वर परमेश्वर अरि कर्मजयी।
अमल अतुल अविकल अविनाशी, प्रभु अनंत गुणधर्ममयी ||1||
अष्टादशम तीर्थंकर, जिन वीतराग विज्ञानमयी।
सकल लोक के ज्ञाता दृष्टा, निजानन्द रस ध्यानमयी ||2||
ॐ ह्रीं श्री अरहनाथ जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट्, ॐ ह्रीं श्री अरहनाथ जिनेन्द्रय अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, ॐ ह्रीं श्री अरहनाथ जिनेन्द्र अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।

---

1. बकरा
2. 18वें तीर्थंकर

परम अहिंसामयी धर्म शुचिमय पावन जल लाऊँ।
षटकायक की दया पालकर, निज की दया निभाऊँ।
श्री अरनाथ चरण चिन्हों पर, चलकर शिव पद पाऊँ।
सुदृढ़ भक्ति नौकापर चढ़कर, भवसागर तर जाऊँ ||1||
ॐ ह्रीं श्री अरहनाथ जिनेन्द्राय जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि.।
परम सत्यमय धर्म ग्रहण कर शीतल चन्दन लाऊँ।
परद्रव्यों से राग तोड़कर, निज की प्रीति जगाऊँ।।श्री अरह.||2||
ॐ ह्रीं श्री अरहनाथ जिनेन्द्राय संसार ताप विनाशनाय चंदनं नि.।
परम अचौर्यमयी स्वधर्म के, उज्जवल अक्षत लाऊँ।
पर पदार्थ से ममता छोडूँ, निज में ममत बढ़ाऊँ।।श्री अरह.||3||
ॐ ह्रीं श्री अरहनाथ जिनेन्द्राय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि.।
परमशील निज ब्रह्मचर्य मय, धर्म कुसुम उर लाऊँ।
शुद्ध स्वरूपाचरण भव्य, चारित्र किरण प्रगटाऊँ।।श्री अरह.||4||
ॐ ह्रीं श्री अरहनाथ जिनेन्द्राय कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।
परम धर्म अपरिग्रह मय, आकिंचन चरू लाऊँ।
परद्रव्यों से मूर्छा त्यागूँ, निज स्वभाव में आऊँ।।श्री अरह.||5||
ॐ ह्रीं श्री अरहनाथ जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।
परमधर्म सम्यक्तमयी, दीपक की ज्योति जलाऊँ।
स्वपर प्रकाशक भेदज्ञान से, चिर मिथ्यात्व भगाऊँ।।श्री अरह.||6||
ॐ ह्रीं श्री अरहनाथ जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।
परम ज्ञानमय धर्म धूप ले, शुक्ल ध्यान कब ध्याऊँ।
अष्टम गुणस्थान पर, चढ़ घातिया कर्म नशाऊँ।।श्री अरह.||7||
ॐ ह्रीं श्री अरहनाथ जिनेन्द्राय अष्टकर्म वदहनाय धूपं नि.।

यथाख्यात चारित्र प्राप्तकर, मोहक्षीण थल पाऊँ।
सकल निकल परमातम बनकर, परममोक्षफल पाऊँ।।श्री अरह.||8||
ॐ ह्रीं श्री अरहनाथ जिनेन्द्राय महामोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।
परम धर्ममय रत्नत्रय पथ, पाऊँ अर्घ चढ़ाऊँ।
निज स्वरूप सौन्दर्य प्रगटकर मैं, अनर्घपद पाऊँ।।
श्री अरनाथ चरण चिन्हों पर, चलकर शिव पद पाऊँ।
सुदृढ़ भक्ति नौकापर चढ़कर, भवसागर तर जाऊँ ||9||
ॐ ह्रीं श्री अरहनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ पद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

श्री पंचकल्याणक अर्घ्य

फागुन शुक्ला तृतीया के दिन, [1]**अपराजित** तजकर आए।
मंगल सोलह स्वप्न मात, **मित्रा देवी** को दर्शाए।।
नगर हस्तिनापुर के अधिपति, **नृपति सुदर्शन** हर्षाए।
धनपति रत्नों की वर्षाकर, अरहनाथ के गुण गाए ||1||
ॐ ह्रीं श्री फाल्गुन शुक्ला तृतीयां गर्भकल्याणक प्राप्त श्री अरहनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।
मगसिर शुक्ला चतुर्दशी को अरहनाथ जग में आए।
मेरु सुदर्शन पांडुक वन में पांडुक शिला, देव लाए।
[2]**एक चार वसुयोजन स्वर्णकलश** इक सहस्त्र आठ लाए।।
क्षीरोदधि सागर के जल से इन्द्र नव्हन कर हर्षाए ||2||
ॐ ह्रीं श्री मगसिर शुक्लाचतुर्दश्यां जन्मकल्याणक प्राप्त श्री अरहनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

1. 4था अनुत्तर विमान
2. स्वर्ण कलश – एक योजन का मुख, चार योजन चौड़ा व आठ योजन गहराई वाला

मसगिर शुक्ला दशमी के दिन, तप कल्याण हुआ अनुपम।
लौकांतिक[1] देवों ने आ प्रभु का, वैराग्य किया दृढ़तम।।
चक्रवर्ति पद त्याग श्री अरहनाथ, हुये दीक्षाधारी।
सब सिद्धों को वन्दन करके, मौन तपस्या स्वीकारी ||3||
ॐ ह्रीं श्री मगसिर शुक्ल दशम्यां तपकल्याणक प्राप्त श्री अरहनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

कार्तिक शुक्ल द्वादशी प्रभु ने, केवलज्ञान लब्धि पाई।
छयालीस गुण सहित पूज्य अरहंत, स्व पदवी प्रगटाई।।
समवशरण की ऋद्धि हुई, तीर्थंकर प्रकृति उदय आई।
अष्ट प्रातिहार्यों की छवि लख, जग ने प्रभु महिमा गाई ||4||
ॐ ह्रीं श्री कार्तिक शुक्ल द्वादश्यां ज्ञानकल्याणक प्राप्त श्री अरहनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

चैत्र मास की कृष्ण अमावस्या को, योग अभाव किया।
अष्टकर्म से रहित अवस्था पा, निज पूर्ण स्वभाव लिया।।
नाटक कूट शैल सम्मेदाचल से, पद निर्वाण लिया।
इन्द्रादिक ने श्री अरहजिन का, भव्य मोक्षकल्याण मनाया ||5||
ॐ ह्रीं श्री चैत्रकृष्ण अमावस्यायां मोक्षकल्याणक प्राप्त श्री अरहनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

अष्टादशम तीर्थंकर[2] प्रभु, अरहनाथ को करूँ नमन।
सप्तम चक्री[3] **कामदेव**[4] **चौदहवें,** अधिपति को वन्दन ||1||

1. पाँचवे स्वर्ग के देवगण
2. 18वें तीर्थंकर
3. 7वें चक्रवर्ती
4. 14वें कामदेव

मेघ विलय लख तुमको स्वामी, पलभर में वैराग्य हुआ।
गए **सहेतुक वन** में प्रभुवर, दीक्षा से अनुराग हुआ ||2||
सोलह वर्ष रहे छदमस्थ और फिर पाया केवलज्ञान।
दिव्य ध्वनि द्वारा जग के जीवों का, किया परम कल्याण ||3||
गणधर थे प्रभु तीस मुख्य, जिनमें से **श्री कुंभु गणधर**।
प्रमुख आर्यिका श्री कुन्थुसेना थी, समवशरण सुन्दर ||4||
मैं भी प्रभु उपदेश आपका, निज अन्तर में ग्रहण करूँ।।
तत्त्व प्रतीति जगे मन मेरे, आत्मरूप चिंतवन करूँ ||5||
अनन्तानुबंधी अभाव कर, **दर्शन मोह** अभाव करूँ।
चौथे गुणस्थान को पाऊँ, **समकित** अंगीकार करूँ ||6||
अप्रत्याख्यानावरणी हर, **एकदेश व्रत** ग्रहण करूँ।
पंचम गुणस्थान को पाकर भाव, **विशुद्धि वृद्धि** करूँ ||7||
प्रत्याख्यानावरण विनाशूँ मैं, **मुनिपद** को स्वीकार करूँ।
छठा सातवाँ गुणस्थान पा, **पंच महाव्रत** को धारूँ ||8||
अष्टम गुणस्थान श्रेणी चढ़, **शुक्ल ध्यानमय** ध्यान धरूँ।
तीव्र निर्जरा द्वारा मैं प्रभु, **घातिकर्म** अवसान करूँ ||9||
करूँ संज्वलन का अभाव, चारित्र मोह का नाश करूँ।
यथाख्यातचारित्र प्राप्तकर, निज कैवल्य प्रकाश करूँ ||10||
हे **सयोग केवली अनन्त, चतुष्टय** का वैभव पाऊँ।
लोकालोक ज्ञान में झलके, निज सर्वज्ञ स्वपद पाऊँ ||11||
हो **अयोग केवली प्रकृति, पच्चासी** का भी नाश करूँ।
उर्ध्वलोक में गमन करूँ, निज सिद्धस्वरूप प्रकाश करूँ ||12||
सादि अनंत स्वपद को पाकर, सिद्धालय में वास करूँ।
इस प्रकार क्रमक्रम से अपना, मोक्ष स्वरूप विकास करूँ ||13||

जिस प्रकार अरहनाथ देव तुम, तीन लोक के भूप हुए।
निज स्वभाव के साधन द्वारा, मुक्ति भूप चिद्रूप हुए ||14||
उस प्रकार मैं भी अपना, पुरुषार्थ जगाऊँ वह बल दो।
रत्नत्रय पथ परआ जाऊँ, इस पूजन का यह फल हो ||15||
ॐ ह्रीं श्री अरहनाथ जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं नि.।

[1]**मीन चिन्ह** शोभित चरण अरहनाथ उर धार।
मन वच तन जो पूजते हो जाते भव पार।।

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री अरहनाथ तीर्थंकराय नमः।

70. श्री मल्लिनाथ जिन पूजन

मल्लिनाथ[2] के चरण कमल को, नित प्रति बारम्बार प्रणाम।
बालब्रह्मचारी योगीश्वर, महामंगलात्मक गुणधाम ||1||
अष्टकर्म विध्वंसक मिथ्यातिमिर, विनाशक प्रभु निष्काम।
महाध्यानपति शुद्ध बुद्ध, अविरुद्ध वीतरागी अभिराम ||2||
आज आपकी पूजन करके, रोकूँ रागादिक परिणाम।
ज्ञानावरणादिक कर्मों की, संतति को नाशूँ अविराम ||3||
ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथ जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट्, ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथ जिनेन्द्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथ जिनेन्द्र अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।

परम पारिणामिक भावों का, जल पवित्र कब पाऊँगा।
जन्म मरण दुख का विनाशकर, वीत दोष बन जाऊँगा।।

1. मछली
2. 19वें तीर्थंकर एवं 2रे बालयति ब्रह्मचारी भगवान

मल्लिनाथ प्रभु के अनन्तगुण, पावन चित्त में ध्याऊँगा।
चिदानन्द चित्त्वमत्कार मय, निज चेतन पद पाऊँगा ||1||
ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथ जिनेन्द्राय जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं नि.।
परम पारिणामिक भावों का, शिवचन्दन कब पाऊँगा।
इस संसारताप को क्षयकर, वीतक्षोभ बन जाऊँगा।।मल्लिनाथ||2||
ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथ जिनेन्द्राय संसारताप विनाशनाय चंदनं नि.।
परम पारिणामिक भावों के, निज अक्षत कब पाऊँगा।
भव समुद्र से पार उतर कर, वीत द्वेष बन जाऊँगा।।मल्लिनाथ||3||
ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथ जिनेन्द्राय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि.।
परम पारिणामिक भावों के, नव प्रसून कब पाऊँगा।
महाशील की सुरभि प्राप्तकर, वीतकाम बन जाऊँगा।।मल्लिनाथ||4||
ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथ जिनेन्द्राय कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।
परम पारिणामिक भावों के, उत्तम चरू कब पाऊँगा।
क्षुधारोग संपूर्ण नाशकर, वीतलोभ बन जाऊँगा।।मल्लिनाथ||5||
ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथ जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।
परम पारिणामिक भावों की, ज्ञान ज्योति कब पाऊँगा।
स्वपर प्रकाशक ज्ञान प्राप्तकर, वीतमोह बन जाऊँगा।।मल्लिनाथ||6||
ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथ जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।
परम पारिणामिक भावों की, शुद्धधूप कब पाऊँगा।
अष्टकर्म अरि का विनाशकर, वीतराग बन जाऊँगा।।मल्लिनाथ||7||
ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथ जिनेन्द्राय अष्टकर्म दहनाय धूपं नि.।
परम पारिणामिक भावों का, उत्तम फल कब पाऊँगा।
महामोक्ष फल प्राप्त करूँगा, वीतराग बन जाऊँगा।।मल्लिनाथ||8||
ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथ जिनेन्द्राय महामोक्ष फल प्राप्तये फलं नि.।

परम पारिणामिक भावों का, विमल अर्घ्य कब पाऊँगा।
निज अनर्घ्य पदवी को पाकर, स्वयं सिद्ध बन जाऊँगा।।
मल्लिनाथ प्रभु के अनन्तगुण, पावन चित्त में ध्याऊँगा।
चिदानन्द चित्चमत्कार मय, निज चेतन पद पाऊँगा ||9||
ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ पद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

श्री पंचकल्याणक अर्घ्य

मिथलापुरी नगर के राजा, **कुम्भराज भूपति** गुणधाम।
रानी प्रभावती माता ने, देखे सोलह स्वप्न ललाम।
चैत्र शुक्ल एकम को त्याग, **अपराजित**[1] स्वर्ग विमान।
मल्लिनाथ आगमन जान सुर, रत्नवृष्टि करते नित आन ||1||
ॐ ह्रीं श्री चैत्र शुक्ल प्रतिपदायां गर्भमंगल प्राप्त श्री मल्लिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

मगसिर शुक्ला एकादशमी, कुम्भराज नृप धन्य हुए।
जिनके आंगन में सुर सुरपति, इन्द्राणी के नृत्य हुए।।
जन्मोत्सव के मंगल उत्सव, गिरि सुमेरु पर धन्य हुए।
जय जय मल्लिनाथ जिन स्वामी, पूजन कर सब धन्य हुए ||2||
ॐ ह्रीं श्री मगसिर शुक्ल एकादश्यां जन्ममंगलप्राप्त श्री मल्लिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

एकादशी शुक्ल मगसिर के, दिन उर में वैराग्य जगा।
जग का वैभव भोग नाशमय, क्षण भंगुर निस्सार लगा।।

1. 4था अनुत्तर विमान

तरु अशोक के निकट महाव्रत, धारण कर दीक्षाधारी।
पंचमुष्टि कचलोच किया प्रभु, मल्लिनाथ की बलिहारी ||3||
ॐ ह्रीं श्री मगसिर शुक्ल एकादशम्यां तपोमंगलप्राप्त श्री मल्लिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

छह दिन ही [1]**छदमस्थ** रहे प्रभु, आत्मध्यान में हो तल्लीन।
कर्मघाति चारों को क्षयकर, पाया केवलज्ञान प्रवीण।।
समवशरण में **पौष कृष्ण, द्वितीया** को शुभ उपदेश दिया।
मल्लिनाथ तीर्थंकर प्रभुने, मोक्षमार्ग संदेश दिया ||4||
ॐ ह्रीं श्री पौषवदी द्वितीयां ज्ञानमंगलप्राप्त श्री मल्लिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

फाल्गुन शुक्ल पंचमी को अपरान्ह, समय पाया निर्वाण।
संबलकूट शिखर सम्मेदाचल से, हुए सिद्ध भगवान।
महामोक्ष कल्याण महोत्सव, इन्द्रादिक ने किया महान।
जय जय मल्लिजिनेश्वर सिद्धपति, चहुँदिशि में गूँजा जयगान||5||
ॐ ह्रीं श्री फागुन शुक्ल पंचमी दिने मोक्षमंगल प्राप्त श्री मल्लिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

महाकरुणादिक महागुणाकर, महाशिष्ट मोहारिजयी।
मल्लिनाथ मुनि ज्येष्ठ मुक्ति, प्रिय मुक्ति प्ररूपक मृत्युंजयी ||1||
तुम कुमार वय में दीक्षा धर, वीतराग भगवान हुए।
शतइन्द्रों से वन्दनीक प्रभु, केवलज्ञान निधान हुए ||2||
अट्ठाईस हुए गणधर प्रभु के, **मुख्य हुए विशाख गणधर**।
मुख्य आर्यिका बंधुसेना थी, श्रोता सर्वाभौम नृपवर ||3||

1. मात्र 6 दिन की तपस्या के पश्चात् 7वे दिन केवलज्ञान प्राप्त किया।

भव्य दिव्य उपदेश आपने, दिया सकल जग को तत्काल।
जो निजात्म की शरण प्राप्त करता, हो जाता स्वयं निहाल ||4||
क्रोध मान दोनों कषाय हैं, **द्वेषरूप** अतिक्रूर विभाव।
दोनों का जब क्षय होता है, तो होता है द्वेष अभाव ||5||
माया लोभ कषाय **राग** की, वृद्धि नित्य करती जाती।
इनके क्षय होने पर ही तो, **वीतरागता** है आती ||6||
इनकी **चार चौकड़ी** के चक्कर में, चहुँगति दुख भरता।
द्रव्य क्षेत्र अरु **काल भाव भव, परिवर्तन** पाँचों करता ||7||
अनन्तानुबन्धी कषाय ते, **घात स्वरूपाचरण** करे।
घात देशसंयम का यह, **अप्रत्याख्यानावरण** करे ||8||
घात सकल संयम का करती, **प्रत्याख्यानावरण कषाय**।
यथाख्यात चारित्र घात करती, हैं यह **संज्वलन कषाय** ||9||
नरक त्रिर्यंच देव नरगति, की पाई आयु अनंतीबार।
सम्यक् ज्ञान बिना यह प्राणी, अब तक भटका है संसार ||10||
मनुज और त्रिर्यंच आयु उत्कृष्ट तीन पल्यों की है।
मनुज त्रिर्यंच जघन्य आयु, केवल अन्तमुर्हत की है ||11||
देव नरक गति की उत्कृष्ट आयु, सागर तैतीस की है।
देव नरक की जघन्य आयु दस सहस्त्र वर्षों की है ||12||
पंचेन्द्रिय के पंचविषय अरु, चार कषाय चार विकथा।
निद्रा नेह प्रमाद भेद पंदरह के, क्षय से मिटे व्यथा ||13||
जो प्रमाद का नाश करेगा, अप्रमत्त बन जायेगा।
सप्तम गुणस्थान पायेगा, श्रेणी चढ़ सुख पायेगा ||14||

यह उपदेश हृदय में धारूँ, सर्व कषाय विनाश करूँ।
मोहमल्ल को जीतूँ स्वामी, सम्यक् ज्ञान प्रकाश करूँ ||15||
मैं मिथ्यात्व तिमिर को हरकर, अविरत को भी दूर करूँ।
क्रम क्रम से योगों को हरकर, अष्टकर्म चकचूर करूँ ||16||
यही भावना है अन्तर में, कब प्रभु पद निर्ग्रन्थ वरूँ।
पद निर्ग्रन्थ पंथ पर चलकर, मैं अनन्त भव अन्त करूँ ||17||
ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथ जिनेन्द्राय गर्भ जन्म तप ज्ञान मोक्ष कल्याणक प्राप्त पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

मल्लिनाथ पद **कलशचिन्ह** लख चरण कमल जो ले उरधार।
मन वच तन जो ध्यान लगाते वे हो जाते हैं भव पार।।

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्
जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथ जिनेन्द्राय नमः।

71. श्री मुनि सुव्रतनाथ जिन पूजन

हे मुनिसुव्रत[1] भगवान तुमने कर्म घाति स्वयं हने।
कैवल्यज्ञान प्रकाशकर पाया परम पद आपने ||1||
निज पर विवेक जगा हृदय में पूर्ण शुद्धात्मा बने।
संसार को सन्मार्ग दिखला सिद्ध परमात्मा बने ||2||
भव सिंधु की मझधार में डूबा मुझे तारो प्रभो।
दो भेद ज्ञान प्रकाश मुझको शीघ्र उद्धारो प्रभो ||3||
ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथ जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट्, ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथ जिनेन्द्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथ जिनेन्द्र अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।

1. 20वें तीर्थंकर

अब आत्म जल की सलिल धारा, शुद्ध अन्तर में धरूँ।
यह जन्म मरण अभाव करके, स्वपद अजरामर वरूँ।।
मैं मुनिसुव्रत भगवान का, पूजन करूँ अर्चन करूँ।
निज आत्मा में आपके ही, रूप का दर्शन करूँ ||1||

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथ जिनेन्द्राय जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

अब आत्म चन्दन दुख निकंदन, शुद्ध अन्तर में धरूँ।
भवभ्रमण ताप अभाव करके, स्वपद अजरामर वरूँ। मैं मुनि.||2||

ॐ ह्रीं श्री मुनि सुव्रतनाथ जिनेन्द्राय संसार ताप विनाशनाय चंदनं नि.।

अब आत्म अक्षत धवल उज्जवल, शुद्ध अन्तर में धरूँ।
अक्षय अनंत स्वरूप पाकर, स्वपद अजरामर वरूँ। मैं मुनि.||3||

ॐ ह्रीं श्री मुनि सुव्रतनाथ जिनेन्द्राय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि.।

अब आत्म पुष्प सुवास शिवमय, शुद्ध अन्तर में धरूँ।
दुष्काम हर निष्काम बनकर, स्वपद अजरामर वरूँ। मैं मुनि.||4||

ॐ ह्रीं श्री मुनि सुव्रतनाथ जिनेन्द्राय कामाबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।

अब आत्ममय नैवेद्य पावन, शुद्ध अन्तर में धरूँ।
यह क्षुधाव्याधि अभाव करके, स्वपद अजरामर वरूँ। मैं मुनि.||5||

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथ जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।

अब आत्म दीपक ज्योति झिलमिल, शुद्ध अन्तर में धरूँ।
मिथ्यात्त्वमोह अभाव करके, स्वपद अजरामर वरूँ। मैं मुनि.||6||

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथ जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।

अब आत्म धूप अनूप अविकल, शुद्ध अन्तर में धरूँ।
घनघाति कर्म अभाव करके, स्वपद अजरामर वरूँ। मैं मुनि.||7||

ॐ ह्रीं श्री मुनि सुव्रतनाथ जिनेन्द्राय अष्टकर्म दहनाय धूपं नि.।

निज आत्मा की अनुभूति का फल, शुद्ध अन्तर में धरूँ।
सर्वोत्कृष्ट सुमोक्षफल ले, स्वपद अजरामर वरूँ। मैं मुनि.||8||

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथ जिनेन्द्राय मोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।

वसु गुणमयी शुद्धात्मा का अर्घ, अन्तर में धरूँ।
सब पर **विभाव** अभाव करके, स्वपद अजरामर वरूँ।।
मैं मुनिसुव्रत भगवान का, पूजन करूँ अर्चन करूँ।
निज आत्मा में आपके ही, रूप का दर्शन करूँ ||9||

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ पद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

श्री पंचकल्याणक अर्घ्य

[1]**आनत स्वर्ग** त्यागकर, आए **माता सोमा** के उर में।
श्रावण कृष्णा दूज हुआ, गर्भोत्सव मंगल घर घर में।।
छप्पन देवी माताकी, सेवा करती [2]**अंत:पुर** में।
सुव्रतनाथ प्रभु बजी बधाई, मधुर राजगृह के पुर में ||1||

ॐ ह्रीं श्री श्रावण कृष्ण द्वितीयायां गर्भमंगलप्राप्त श्री मुनिसुव्रतनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

शुभ वैशाख कृष्ण दशमी को, जन्म महोत्सव हुआ महान।
नृपति सुमित्र हर्ष से पुलकित, देते हैं मुँह माँगा दान।।
सुरपति प्रभु को शीश विराजित, कर **पांडुकवन** ले जाते।
सुव्रतनाथ अभिषेक **क्षीरसागर**, जल से कर हर्षाते ||2||

ॐ ह्रीं श्री वैशाख कृष्ण दशम्यां जन्म मंगल प्राप्त मुनिसुव्रतनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

---

1. 13वाँ स्वर्ग
2. राजमहल

प्रभु **वैशाख कृष्ण दशमी** को, भव भोगों से हुए विरक्त।
यह संसार असार जानकर, त्याग गृह परिवार समस्त।।
स्वयंबुद्ध हो **चंपकतरु** के नीचे जिन दीक्षा धारी।
नाथ मुनिसुव्रत व्रत धारी साधु हो गए अनगारी ॥3॥
ॐ ह्रीं श्री वैशाख कृष्ण दशम्यां तपोमंगलप्राप्त श्री मुनिसुव्रतनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

ग्यारह मास रहे [1]**छद्मस्थ** तपस्वी, मौन सुव्रत भगवान।
त्रेसठ कर्म प्रकृति क्षय करके, प्रभु ने पाया **केवलज्ञान**।।
गुणस्थान तेरहवाँ पाकर, देव हुए सर्वज्ञ महान।
वैशाख कृष्ण नवमी को गूँजा, समवशरण में जयजयगान ॥4॥
ॐ ह्रीं श्री वैशाख कृष्ण नवम्यां ज्ञानमंगल प्राप्त श्री मुनिसुव्रतनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

फाल्गुन कृष्ण द्वादशी को प्रभु गिरिसम्मेद पवित्र हुआ।
मुनिसुव्रत निर्वाण महोत्सव **संवलकूट** पवित्र हुआ।।
तन परमाणु उड़े कपूरवत, सब जग ने मंगल गाये।
उर्ध्वलोक में गमन कर गये, सिद्धशिला भी मुस्काये ॥5॥
ॐ ह्रीं श्री फाल्गुन कृष्ण द्वादश्यां मोक्षमंगलप्राप्त श्री मुनिसुव्रतनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

जयमाला

जय मुनिसुव्रत तीर्थंकर बीसवें जिनेश पूर्ण परमेश।
महातात्त्विक महाधार्मिक महापूज्य मुनि महामहेश ॥1॥
राजगृही में **गर्भ जन्म तप ज्ञान** हुए चारों कल्याण।
जल थल नभ में दशों दिशा में, गूँजा प्रभु का जयजयगान ॥2॥

1. मुनि अवस्था में

अष्टादश गणधर थे प्रभु के, प्रमुख मल्लिगणधर विद्वान।
मुख्य आर्यिका पुष्पदत्ता थी, श्रोता अजितंजय गुणगान ॥3॥
समवशरण में नाथ आपकी, खिरी दिव्य ध्वनि कल्याणी।
द्रव्य दृष्टि ही ज्ञानी हैं, पर्याय दृष्टि है अज्ञानी ॥4॥
गुण पर्यायों सहित द्रव्य है, लक्षण जिसका शाश्वत सत्।
द्रव्य ध्रौव्य, उत्पाद, व्यय सहित है, स्वतंत्र सत्ता निश्चित ॥5॥
द्रव्य स्वतंत्र सदा अपने में, कोई लेश नहीं परतंत्र।
गुण स्वतंत्र प्रत्येक द्रव्य के, पर्यायें भी सदा स्वतंत्र ॥6॥
कोई नहीं परिणमाता, परिणमन शील है द्रव्य स्वयं।
पर परिणमन कराने का जो, भाव वही मिथ्यात्व स्वयं ॥7॥
अपनी अपनी मर्यादा, [1]स्वचतुष्टय में है द्रव्य सभी।
सदा परिणमित होते रहते, बिना परिणमन नहीं कभी ॥8॥
जीव द्रव्य तो है अनन्त अरु, पुद्गल द्रव्य अनन्तानन्त।
धर्म अधर्म आकाश एक इक, काल असंख्य स्वमहिमावंत ॥9॥
है परिपूर्ण छहों द्रव्यों से, पूरा लोक अनादि अनंत।
जो स्वद्रव्य का आश्रय लेता, वही जीव होता भगवंत ॥10॥
जीव समास मार्गणा चौदह, चौदह गुणस्थान जानो।
यह व्यवहार, जीव की सत्ता, निश्चय से अतीत मानो ॥11॥
सभी जीव द्रव्यार्थिकनय से, सदा शुद्ध है सिद्ध समान।
पर्यायार्थिकनय से देखो तो हैं, जग जीव अशुद्ध महान ॥12॥
आत्म द्रव्य है परम शुद्ध, त्रैकालिक ध्रुव अनंत गुणगान।
दर्शन ज्ञान वीर्य सुखगुण से, पूरित है त्रिकाल भगवान ॥13॥

1. अपने–अपने – द्रव्य, क्षेत्र–गुण पर्याय

जो पर्यायों में उलझा है, वही जीव है मूढ़ अजान।
द्रव्य दृष्टि ही निज स्वद्रव्य का, आश्रय ले होता भगवान ||14||
अब तक प्रभु पर्याय दृष्टि रह, मैंने जग में दुख पाया।
द्रव्य दृष्टि बनने का स्वामी, अब अपूर्व अवसर आया ||15||
यह अवसर यदि चूका तो प्रभु, पुनः जगत में भटकूंगा।
भवसागर की भँवरों में ही, दुख पाऊँगा अटकूँगा ||16||
मैं भी स्वामी द्रव्यदृष्टि बन, निज स्वभाव प्रगटाऊँगा।
[1]**अष्टकर्म अरि** पर जयपाकर, सादि अनंत पद पाऊँगा ||17||
मैं अनादि मिथ्यात्त्व पापहर, द्रव्य दृष्टि बन करूँ प्रकाश।
ध्रुव ध्रुव ध्रुव चैतन्यद्रव्य मैं, परभावों का करूँ विनाश ||18||
पर्यायों से दृष्टि हटाकर, निज स्वभाव में आ जाऊँ।
तुम चरणों की पूजन का फल, द्रव्यदृष्टि अब बन जाऊँ ||19||
महापुण्य संयोग मिला तो, शरण आपकी आया हूँ।
मैं अनादि से पर्यायों में, मूढ़ बना भरमाया हूँ ||20||
पाप ताप सन्ताप नष्ट हो, मेरे हे मुनिसुव्रतनाथ।
तुम चरणों की महाकृपा, आशीर्वाद से बनूँ सनाथ ||21||
संकट हरण मुनिसुव्रत स्वामी, मेरे संकट दूर करो।
द्रव्यदृष्टि दो प्रभु मेरी, पर्याय दृष्टि चकचूर करो ||22||
ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथ जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं नि.।

कछुवा चिन्ह सुशोभित मुनिसुव्रत के चरणाम्बुज उरधार।
भाव सहित जो पूजन करते वे हो जाते हैं भवपार।।

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथ जिनेन्द्राय नमः।

1. (1) ज्ञानावरण (2) दर्शनावरणी (3) वेदनीय (4) मोहनीय (5) आयु (6) नाम (7) गौत्र (8) अन्तराय

72. श्री नमिनाथ जिन पूजन

जय [1]नमिनाथ निरायुद्ध निर्गत निष्कषाय निर्भय निर्द्वंद।
निष्कलंक निश्चल निष्कामी, नित्य नमस्कृत नित्यानंद ||1||

मिथ्यातम अविरति प्रमाद, कषाय योग बंध कर नाश।
कर्म प्रकृतियाँ पूर्ण नष्टकर, लिया सूर्य शुद्धात्म प्रकाश ||2||

मैं चौरासी के चक्कर में पड़ चहुँगति भरमाया हूँ।
भव का चक्र मिटाने को मैं, पूजन करने आया हूँ ||3||

यह विचित्र संसार और इसकी, माया का करूँ अभाव।
आत्म ज्ञान की दिव्य प्रभा से, हे प्रभु पाऊँ शुद्ध स्वभाव ||4||

ॐ ह्रीं श्री नमिनाथ जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट्, ॐ ह्रीं श्री नमिनाथ जिनेन्द्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, ॐ ह्रीं श्री नमिनाथ जिनेन्द्र अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।

निज की उज्जवलता का मुझे कुछ ज्ञान नहीं।
इस जन्म मरण के रोग की पहचान नहीं।।
नमिनाथ जिनेन्द्र महान त्रिभुवन के स्वामी।
दो मुझे भेद विज्ञान हे अन्तर्यामी ||1||
ॐ ह्रीं श्री नमिनाथ जिनेन्द्राय जन्मजरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि.।

निज की शीतलता का मुझे कुछ ध्यान नहीं।
इस भव आतप के ताप की पहचान नहीं।।नमिनाथ||2||
ॐ ह्रीं श्री नमिनाथ जिनेन्द्राय संसार ताप विनाशनाय चंदनं नि.।

1. 21वें तीर्थंकर

निज की अखंडता का मुझे कुछ भान नहीं।
अक्षय पद की भी तो मुझे पहचान नहीं।।नमिनाथ||3||
ॐ ह्रीं श्री नमिनाथ जिनेन्द्राय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि.।
निज शील स्वभावी द्रव्य का भी ज्ञान नहीं।
इस कामव्याधि विकराल की पहचान नहीं।।नमिनाथ||4||
ॐ ह्रीं श्री नमिनाथ जिनेन्द्राय कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।
निज आत्मतत्व परिपूर्ण का भी ध्यान नहीं।
इस क्षुधारोग दुखपूर्ण की पहचान नहीं।।नमिनाथ||5||
ॐ ह्रीं श्री नमिनाथ जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।
निज ज्ञान प्रकाशक सूर्य का भी ज्ञान नहीं।
मिथ्यात्व मोह के व्योम की पहचान नहीं।।नमिनाथ||6||
ॐ ह्रीं श्री नमिनाथ जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।
निर्दोष निरंजन रूप का भी भान नहीं।
यह कर्म कलंक अनादि की पहचान नहीं।।नमिनाथ||7||
ॐ ह्रीं श्री नमिनाथ जिनेन्द्राय अष्टकर्म दहनाय धूपं नि.।
निज अनुभव मोक्ष स्वरूप का प्रभु ध्यान नहीं।
निज द्रव्य अनादि अनंत की पहचान नहीं।।नमिनाथ||8||
ॐ ह्रीं श्री नमिनाथ जिनेन्द्राय महामोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।
निज चिदानन्द चैतन्य पद का ज्ञान नहीं।
अकलंक अडोल अनर्घ की पहचान नहीं।।
नमिनाथ जिनेन्द्र महान त्रिभुवन के स्वामी।
दो मुझे भेद विज्ञान हे अन्तर्यामी ||9||
ॐ ह्रीं श्री नमिनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ पद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

श्री पंचकल्याणक अर्घ्य

हुआ आगमन **मात महादेवी** उर में [1]**अपराजित** त्याग।
स्वप्न फलों को जान जगा **नृप, विजयराज** को अति अनुराग।।
आश्विन कृष्णा द्वितीया के दिन, हुआ गर्भ मंगल विख्यात।
जय नमि जिनवर रत्न वृष्टि से, होता निज आनन्द प्रभात ||1||
ॐ ह्रीं श्री आश्विन कृष्ण द्वितीयां गर्भमंगल प्राप्त श्री नमिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

चार प्रकार सुरों के गृह में, आनन्द वाद्य हुए झंकृत।
सिंहासन हिल उठा इन्द्र का, तीनों लोक हुए शोभित।।
नमि जिन **जन्म पुरी मिथिला** में, जान हुए सुरगण पुलकित।
शुभ **आषाढ़ कृष्ण दशमी** को, जिन अभिषेक किया हर्षित ||2||
ॐ ह्रीं श्री आषाढ़कृष्ण दशम्यां जन्ममंगलप्राप्त श्री नमिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

शुभ **आषाढ़ कृष्ण दशमी** को, नमि जिन उर वैराग्य जगा।
[2]**उल्कापात** देखकर प्रभु के, मनमें भव अभाव का वैराग्य जगा।।
[3]**लौकान्तिक** ने अभिनन्दनकर, प्रभु का जय जयकार किया।
वन जा **मौलश्री तरु** नीचे, संयम अंगीकार किया ||3||
ॐ ह्रीं श्री आषाढ़कृष्ण दशम्यां तपोमंगलप्राप्त श्री नमिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

मगसिर सुदि एकादशी, प्रभु ने शुक्ल ध्यान ध्याया।
वीतराग सर्वज्ञ हुए प्रभु, केवलज्ञान पूर्ण पाया।।

---
1. 4था अनुत्तर विमान
2. तारे का आसमान से गिरना उल्कापात
3. 5वें ब्रह्म स्वर्ग के ब्रह्मर्षि देवगण

समवशरण में **सतरह गणधर**, प्रमुख **सुप्रभ गणधर** गुणवान।
मुख्य आर्यिका भार्गवश्री, नमिजिनवर का गाते जयगान ||4||
ॐ ह्रीं श्री मगसिरसुदी एकादशी दिने ज्ञानमंगलप्राप्त नमिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

चतुर्दशी वैशाख कृष्ण की, धारा प्रतिमायोग महान।
सर्व कर्म क्षयकर नमिजिन ने, पाया मोक्ष स्वपद निर्वाण।।
गिरि सम्मेदशिखर पर, गूंजा इन्द्रादिक सुर का जयकार।
[1]**कूट मित्रधर** से पद पाया, अविनाशी अनन्त अविकार ||5||
ॐ ह्रीं श्री वैशाख कृष्ण चतुर्दश्यां मोक्षमंगलप्राप्त श्री नमिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

इक्कीसवें तीर्थंकर नमिनाथ देव हैं आप महान।
मति श्रुत अवधिज्ञान के धारी, जन्में जय जय दया निधान ||1||
गृह परिवार राज्य सुख से, वैराग्य जगा अंतस्तल में।
शुद्ध भावना द्वादश भा, सब कुछ त्यागा प्रभु दो पल में ||2||
वस्त्राभूषण त्याग आपने, पंचमुष्टि कचलोच किया।
उन केशों को क्षीरोदधि में, सुरपति ने जा क्षेप दिया ||3||
नगर वीरपुर दत्तराज नृप ने प्रभु को आहार दिया।
प्रभु कर में [2]**पयधारा** दे, सारा पातक संहार किया ||4||
ज्ञान मनःपर्यय को पाया, प्रभु [3]**छद्मस्थ रहे नवमास**।
केवलज्ञान लब्धि को पाया, शुक्ल ध्यानधर किया विकास ||5||

1. सम्मेदशिखर के एक चरणस्थल का नाम
2. दुग्ध धारा
3. श्री भगवान नमिनाथ स्वामी 9 माह मुनि अवस्था में रहे।

दे उपदेश भव्य जीवों को, मोक्षमार्ग प्रभु दिखलाया।
शेष [1]अघाति कर्म भी नाशे, सिद्ध स्वपद को प्रगटाया ||6||
यह संसार भ्रमण का चक्कर, सदा सदा है अति दुखदाय।
अशुभ कर्म परिणामों से ही, मिलती है नारक पर्याय ||7||
किंचित शुभ मिश्रित माया, परिणामों से होता तिर्यन्च।
शुभपरिणामों से सुर होता, उसमें भी सुख कहीं न रंच ||8||
मिश्र शुभाशुभ परिणामों से, होती है मनुष्य पर्याय।
शुद्ध आत्म परिणामों से, होती है प्रकट सिद्ध पर्याय ||9||
मैं अपने परिणाम सुधारूँ, पंच महाव्रत ग्रहण करूँ।
उग्र तपस्या संवरमय कर, कर्म निर्जरा शीघ्र करूँ ||10||
धर्म ध्यान चारों प्रकार का, अन्तर में प्रत्यक्ष धरूँ।
चौंसठ ऋद्धि सहज मिल जाती, किन्तु न उनका लक्ष्य करूँ ||11||
बुद्धि ऋद्धि अष्टादश होती, **क्रिया ऋद्धि नव** मिल जाती।
ऋद्धि विक्रिया ग्यारह होती, **तीन ऋद्धि बल** की आती ||12||
सात ऋद्धियाँ तप की मिलती, **अष्ट ऋद्धि औषधि** होती।
छहरस ऋद्धि शीघ्र मिल जाती, **दो अक्षीण ऋद्धि** होती ||13||
ऋद्धि सिद्धियों में ना अटकूँ, शुक्ल ध्यानमय ध्यान धरूँ।
दोष अठारह रहित बनूँ मैं, चार घाति अवसान करूँ ||14||
पा नव केवललब्धि रमा प्रभु, वीतराग अरहन्त बनूँ।
बनूँ पूर्ण सर्वज्ञ देव मैं, मुक्तिकंत भगवंत बनूँ ||15||
यही विनय है यही भावना, यही लक्ष्य है अब मेरा।
निज सिद्धत्वरूप प्रगटाऊँगा जो, है त्रिकाल मेरा ||16||
ॐ ह्रीं श्री नमिनाथ जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

1. अघातिय कर्म – (1) आयु, (2) नाम कर्म (3) गौत्र (4) वेदनीय

उत्पलनील कमल शोभित हैं चरण चिन्ह नमिनाथ ललाम।
निज स्वभाव का जो आश्रय लेते वे पाते शिव सुखधाम।।
इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्
जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री नमिनाथ जिनेन्द्राय नमः।

73. श्री नेमिनाथ जिन पूजन

जय श्री [1]**नेमिनाथ तीर्थंकर**, बाल ब्रह्मचारी भगवान।
हे जिनराज परम उपकारी, करुणा सागर दया निधान ||1||
दिव्यध्वनि के द्वारा हे प्रभु, तुमने किया जगत कल्याण।
श्री गिरनार शिखर से पाया, तुमने सिद्ध स्वपद निर्वाण ||2||
आज तुम्हारे दर्शन करके, निज स्वरूप का आया ध्यान।
मेरा सिद्ध समानसदा पद, यह दृढ़ निश्चय हुआ महान ||3||
ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथ जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट्, ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथ जिनेन्द्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथ जिनेन्द्र अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।
समकित जल की धारा से तो, मिथ्याभ्रम धुल जाता है।
तत्त्वों का श्रद्धान स्वयं को, शाश्वत मंगल दाता है।।
नेमिनाथ स्वामी तुम पद, पंकज की करता हूँ पूजन।
वीतराग तीर्थंकर तुमको, कोटि कोटि मेरा वंदन ||1||
ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि.।
सम्यक् श्रद्धा का पावन, चन्दन भव ताप मिटाता है।
क्रोध कषाय नष्ट होती है, निज की अरुचि हटाता है।।नेमि.||2||
ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय संसारताप विनाशनाय चंदनं नि.।

1. 22वें तीर्थंकर एवं तीसरे बाल ब्रह्मचारी तीर्थंकर

भाव शुभाशुभ का अभिमानी, मान कषाय बढ़ाता है।
वस्तु स्वभाव जान जाता तो, मान कषाय मिटाता है।।नेमि.||3||
ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय अक्षयपद प्राप्तये विनाशनाय अक्षतं नि.।
चेतन छल से परभावों का, माया जाल बिछाता है।
भवभव की माया कषाय को, समकित पुष्प मिटाता है।।नेमि.||4||
ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय कामबाण विध्वन्सनाय विनाशनाय पुष्पं नि. स्वाहा।
तृष्णा की ज्वाला से लोभी, कभी नहीं सुख पाता है।
सम्यक् चरु से लोभ नाशकर, यह शुचिमय हो जाता है।।नेमि.||5||
ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय लोभकषाय विनाशनाय नैवेद्यं नि.।
अन्धकार अज्ञान जगत में, भव भव भ्रमण कराता है।
समकित दीप प्रकाशित हो तो, ज्ञाननेत्र खुल जाता है।।नेमि.||6||
ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।
पर विभाव परिणति में फंसकर, निज का धुआँ उड़ाता है।
निज स्वरूप की गंध मिले तो, पर की गंध जलाता है।।नेमि.||7||
ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय अष्ट कर्म विनाशनाय धूपं नि.।
निज स्वभाव फल पाकर, चेतन महामोक्ष फल पाता है।
चहुँगति के बंधन कटते हैं, सिद्ध स्वपद पा जाता है।।नेमि.||8||
ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय महा मोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।
जल फलादि वसु द्रव्य अर्घ, से लाभ न कुछ हो पाता।
जब तक निज स्वभाव में चेतन, मग्न नहीं हो जाता।।
नेमिनाथ स्वामी तुम पद, पंकज की करता हूँ पूजन।
वीतराग तीर्थंकर तुमको, कोटि कोटि मेरा वंदन ||9||
ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

श्री पंचकल्याणक अर्घ्य

कार्तिक शुक्ला षष्ठी के दिन, **शिव देवी** उर धन्य हुआ।
[1]**अपराजित विमान** से चयकर, आये मोद अनन्य हुआ।।
स्वप्न फलों को जान सभी के, मन में अति आनन्द हुआ।
गर्भ महोत्सव नेमिनाथ का, परम हर्ष अतिरेक हुआ ||1||

ॐ ह्रीं श्री कार्तिक शुक्ल षष्ठयां गर्भमंगलप्राप्त श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।

श्रावण शुक्ला षष्ठी के दिन, **शौर्यपुरी** में जन्म हुआ।
नपृति समुद्र विजय आंगन में, सुर सुरपति का नृत्य हुआ।।
मेरु सुदर्शन पर क्षीरोदधि, जल से शुभ अभिषेक हुआ।
जन्म महोत्सव नेमिनाथ का, परम हर्ष अतिरेक हुआ ||2||

ॐ ह्रीं श्री श्रावण शुक्ल षष्ठयां जन्ममंगलप्राप्त श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।

श्रावण शुक्ल षष्ठी को प्रभु, पशुओं पर करुणा आई।
राजमती तज सहस्त्राम्र वन में, जा जिन दीक्षा पाई।।
इन्द्रादिक ने उठा पालिकी, हर्षित मंगलाचार किया।
नेमिनाथ प्रभु के तप कल्याणक, पर जय जयकार किया ||3||

ॐ ह्रीं श्री श्रावण शुक्ल षष्ठयां तपोमंगल प्राप्त श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।

आश्विन शुक्ला एकम को प्रभु, हुआ ज्ञानकल्याण महान।
[2]**उर्जयंत** पर समवशरण में, दिया भव्य उपदेश प्रधान।।

1. 4था अनुत्तर नामका कल्पातीत स्वर्ग
2. गिरनार पर्वत

ज्ञानावरण, दर्शनावरणी, मोहनीय का नाश किया।
नेमिनाथ ने अन्तराय क्षयकर, कैवल्य प्रकाश लिया ||4||

ॐ ह्रीं श्री आश्विन शुक्ल प्रतिपदायां ज्ञानमंगलप्राप्त श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।

श्री गिरनार क्षेत्र पर्वत से, महामोक्ष पद को पाया।
जगती ने **आषाढ़ शुक्ल, सप्तमी** दिवस मंगल गाया।।
वेदनीय अरु **आयु नाम** अरु, **गोत्र** कर्म अवसान किया।
अष्टकर्म हर नेमिनाथ ने, परम पूर्ण निर्वाण लिया ||5||

ॐ ह्रीं श्री आषाढ़शुक्ल सप्तम्यां मोक्षमंगलप्राप्त श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।

जयमाला

जय नेमिनाथ नित्योदित जिन, जय नित्यानन्द नित्य चिन्मय।
जय निर्विकल्प निश्चल निर्मल, जय निर्विकार नीरज निर्भय||1||
नृपराज **समुद्रविजय** के सुत माता शिवादेवी के नन्दन।
आनन्द **शौर्यपुरी** में छाया, जय–जय से गूंजा पाण्डुक वन ||2||
बालकपन में क्रीड़ा करते, पर अणुबत सम जीवन था।
द्वारिकापुरी में रहे, अवस्था, पाई सुन्दर यौवन था ||3||
आमोद प्रमोद तुम्हारे लख पूरा कुल हर्षाता।
तब श्री कृष्ण नारायण ने, जूनागढ़ से जोड़ा नाता ||4||
राजुल से परिणय करने को, जूनागढ़ पहुँचे वर बनकर।
जीवों की करुण पुकार सुनी, जागा उर में वैराग्य प्रखर ||5||
पशुओं को बन्धन मुक्त किया, कंगन विवाह का तोड़ दिया।
राजुल के द्वारे आकर भी, स्वर्णिम रथ पीछे मोड़ लिया ||6||

रथ त्याग चढ़े गिरनारी पर, जा पहुँचे सहस्त्राम्र वन में।
वस्त्राभूषण सब त्याग दिये, जिन दीक्षाधारी तन मन में ||7||
फिर उग्र तपस्या के द्वारा, निश्चय स्वरूप मर्मज्ञ हुए।
[1]**घातिया कर्म** चारों नाशे, छप्पन दिन में सर्वज्ञ हुए ||8||
तीर्थंकर प्रकृति उदय आई, सुर हर्षित समवशरण रचकर।
प्रभु गंधकुटी में अंतरिक्ष, आसीन हुए पद्मासन धर ||9||
ग्यारह गणधर में थे **पहले, गणधर वरदत्त** महाऋषिवर।
थी **मुख्य आर्यिका राजमती**, श्रोता थे अगणित भव्यप्रवर ||10||
दिव्य ध्वनि खिरने लगी, शाश्वत ओंकार घन गर्जन सी।
शुभ बारह सभा जुड़ी अनुपम, सौंदर्य प्रभा मणि कंचन सी ||11||
जगजीवों का उपकार किया, भूलों को शिव पथ बतलाया।
निश्चय रत्नत्रय की महिमा का, परम मोक्षफल दर्शाया ||12||
कर प्राप्त चतुर्दश गुणस्थान, योगों का पूर्ण अभाव किया।
कर उर्ध्वगमन सिद्धत्व प्राप्तकर, सिद्धलोक आवास लिया ||13||
[2]गिरनार शैल से मुक्त हुए, तन के परमाणु उड़े सारे।
पावन मंगल निर्वाण हुआ, सुरगण के गूंजे जयकारे ||14||
नख केश शेष थे देवों ने, माया मय तन निर्माण किया।
फिर अग्निकुमार सुरों ने आकर, मुकुटानल से तन भस्म किया ||15||
पावन भस्मी का निज निज के, मस्तक पर सबने तिलक किया।
मंगल वाद्यों की ध्वनि गूंजी, निर्वाण महोत्सव पूर्ण किया ||16||
कर्मों के बंधन टूट गये, पूर्णत्व प्राप्त कर सुखी हुए।
हम तो अनादि से हे स्वामी, भव दुख बंधन से दुखी हुए ||17||

1. घातिया कर्म – (1) ज्ञानावरण (2) दर्शनावरण (3) मोहनीय (4) अन्तराय
2. गिरनार पर्वत

ऐसा अन्तरबल दो स्वामी, हम भी सिद्धत्व प्राप्त कर लें।
तुम पद चिन्हों पर चल प्रभुवर, शुभ अशुभ विभावों को हर लें ||18||
परिणाम शुद्ध का अर्चनकर, हम अन्तरध्यानी बन जावें।
घातिया चार कर्मों को हर, हम केवलज्ञानी बन जावें ||19||
शाश्वत शिवपद पाने स्वामी, हम पास तुम्हारे आ जायें।
अपने स्वभाव के साधन से, हम तीन लोक पर जय पायें ||20||
निज सिद्ध स्वपद पाने को, प्रभु हर्षित चरणों में आया हूँ।
वसु द्रव्य सजाकर नेमीश्वर प्रभु, पूर्ण अर्‌घ मैं लाया हूँ ||21||
ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

शंख चिन्ह चरणों में शोभित, जय जय नेमि जिनेश महान।
मनवच तनजो ध्यान लगाते, वे हो जाते सिद्ध समान।।

इत्याशीर्वादः : पुष्पांजलिं क्षिपेत्

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय नमः।

74. श्री पार्श्वनाथ जिन पूजन

तीर्थंकर **श्री [1]पार्श्वनाथ प्रभु** के चरणों में करूँ नमन।
अश्वसेन के राजदुलारे **वामादेवी** के नन्दन ||1||
बाल ब्रह्मचारी अवतारी योगीश्वर जिनवर वन्दन।
श्रद्धा भाव विनय से करता श्री चरणों का मैं अर्चन ||2||
ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट्, ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।

1. 23वें तीर्थंकर एवं 4थे बाल ब्रह्मचारी तीर्थंकर

समकित जल से तो अनादि की, मिथ्याभ्राँति हटाऊँ मैं।
निज अनुभव से जन्ममरण का, अन्त सहज पा जाऊँ मैं।।
चिन्तामणि प्रभु पार्श्वनाथ की, पूजन कर हर्षाऊँ मैं।
संकटहारी मंगलहारी, श्री जिनवर गुण गाऊँ मैं ||1||
ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय जन्म जरामृत्यु विनाशनाय जलं नि.।
तन की तपन मिटाने वाला, चन्दन भेंट चढ़ाऊँ मैं।
भव आताप मिटाने वाला, समकित चन्दन पाऊँ मैं।।चिंता.||2||
ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय संसार ताप विनाशनाय चंदनं नि.।
अक्षत चरण समर्पित करके, निज स्वभाव में आऊँ मैं।
अनुपम शान्त निराकुल अक्षय, अविनश्वर पद पाऊँ मैं।।चिंता.||3||
ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि.।
अष्ट अंगयुक्त सम्यक्दर्शन, पाऊँ पुष्प चढ़ाऊँ मैं।
कामबाण विध्वंस करूँ, निजशील स्वभाव सजाऊँ मैं।।चिंता.||4||
ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।
इच्छाओं की भूख मिटाने, सम्यक् पथ पर आऊँ मैं।
समकित का नैवेद्य मिले तो, क्षुधारोग हर पाऊँ मैं।।चिंता.||5||
ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।
मिथ्यातम के नाश हेतु यह, दीपक तुम्हें चढ़ाऊँ मैं।
समकित दीप जले अन्तर में, ज्ञान ज्योति प्रगटाऊँ मैं।।चिंता.||6||
ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।
समकित धूप मिले तो भगवन्, शुद्ध भाव पाऊँ मैं।
भाव शुभाशुभ धूम्र बन, उड़ जायें धूपँ चढ़ाऊँ मैं।।चिंता.||7||
ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अष्टकर्म दहनाय धूपं नि.।

उत्तम फल चरणों में अर्पित, आत्मध्यान ही ध्याऊँ मैं।
समकित का फल महामोक्षफल, प्रभु अवश्य पा जाऊँ मैं।।चिंता.||8||
ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय मोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।
अष्टकर्म क्षय हेतु अष्ट द्रव्यों का, अर्घ बनाऊँ मैं।
अविनाशी अविकारी [1]**अष्टम वसुधापति** बन जाऊँ मैं।।
चिन्तामणि प्रभु पार्श्वनाथ की, पूजन कर हर्षाऊँ मैं।
संकटहारी मंगलकारी, श्री जिनवर गुण गाऊँ मैं ||9||
ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ पद प्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

श्री पंचकल्याणक अर्घ्य

[2]प्राणत स्वर्ग त्याग आये, **माता वामा** के उर श्रीमान।
कृष्ण दूज वैशाख सलोनी, सोलह स्वप्न दिखे छविमान।।
पन्द्रह मास रत्न बरसे नित, मंगलमय गर्भ कल्याण।
जय जय पार्श्व जिनेश्वर प्रभु, परमेश्वर जय जय दया निधान||1||
ॐ ह्रीं वैशाख कृष्ण द्वितीयां गर्भ कल्याणक प्राप्त श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।
पौष कृष्ण एकादशमी को जन्मे, हुआ जन्म कल्याण।
ऐरावत गजेन्द्र पर आये तब, सौधर्म इन्द्र ईशान।।
गिरि सुमेरु पर क्षीरोदधि से, किया दिव्य अभिषेक महान।
जय जय पार्श्व जिनेश्वर प्रभु, परमेश्वर जय जय दया निधान||2||
ॐ ह्रीं पौष कृष्ण एकादश्यां जन्म कल्याणक प्राप्त श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

---
1. मोक्ष
2. 14वाँ स्वर्ग

बाल ब्रह्मचारी व्रतधारी, उर छाया वैराग्य प्रधान।
[1]लौकांतिक देवों ने आकर, किया आपका जय जय गान।।
पौष कृष्ण एकादशमी को, हुआ आपका तप कल्याण।
जय जय पार्श्व जिनेश्वर प्रभु, परमेश्वर जय जय दया निधान||3||

ॐ ह्रीं पौष कृष्ण एकादश्यां तपकल्याणक प्राप्त श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

कमठ जीव ने **अहिक्षेत्र** पर किया घोर उपसर्ग महान।
हुए न विचलित शुक्ल ध्यानधर, श्रेणी चढ़े हुए भगवान।।
चैत्र कृष्ण की चौथ हो गई, पावन प्रकटा केवलज्ञान।
जय जय पार्श्व जिनेश्वर प्रभु, परमेश्वर जय जय दया निधान||4||

ॐ ह्रीं चैत्र कृष्ण चतुर्थी दिनेज्ञान कल्याणक प्राप्त श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

श्रावण शुक्ल सप्तमी के दिन, बने अयोगी हे भगवान।
अंतिम शुक्ल ध्यानधर, स्वामी श्रेणी चढ़े हुए भगवान।।
[2]**कूट सुवर्ण कूट** पर इन्द्रादिक ने, किया मोक्ष कल्याण।
जय जय पार्श्व जिनेश्वर प्रभु, परमेश्वर जय जय दया निधान||5||

ॐ ह्रीं श्रावण शुक्ल सप्तम्यां मोक्षकल्याणक प्राप्त श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

तेईसवें तीर्थंकर प्रभु, परम ब्रह्ममय परम प्रधान।
प्राप्त महा कल्याणक पाँच, पार्श्वनाथ प्रणतेश्वर प्राण ||1||

1. 5वें स्वर्ग के अन्तिम में रहने वाले ब्रह्मर्षि देवगण
2. सम्मेद शिखर पर्वत का एक शिखर

वाराणसी नगर अति सुन्दर, **अश्वसेन** नृप परम उदार।
वामा देवी के घर जन्में, जग में छाया हर्ष अपार ||2||
मति श्रुति अवधि ज्ञान के धारी, बाल ब्रह्मचारी त्रिभुवान।
अल्प आयु में दीक्षाधारी, पंच महाव्रत धरे महान ||3||
चार मास छद्मस्थ मौन रह, वीतराग अरहन्त हुए।
आत्म ध्यान के द्वारा प्रभु, सर्वज्ञ देव भगवन्त हुए ||4||
[1]**बैरी कमठ जीव** ने तुमको, नौ भव तक दुख पहुँचाया।
इस भव में भी [1]**संवर सुर** हो, महा विघ्न करने आया ||5||
किया अग्निमय घोर उपद्रव, भीषण झंझावात चला।
जल प्लावित हो गई धरा पर, ध्यान आपका नहीं हिला ||6||
यक्षी पद्मावती यक्ष धरणेन्द्र, विघ्न हरने आये।
पूर्व जन्म के उपकारों से, हो कृतज्ञ तत्क्षण आये ||7||
प्रभु उपसर्ग निवारण के हित, शुभ परिणाम ह्रदय छाये।
फण मण्डप अरु सिंहासन रच, जय जय जय प्रभु गुणगाये ||8||
देव आपने साम्य भाव धर, निज स्वरूप को ध्याया।
उपसर्गों पर जय पाकर, प्रभु निज कैवल्य स्वपद पाया ||9||
कमठ जीव की माया विनशी, वह भी चरणों में आया।
समवशरण रचकर देवों ने, प्रभु का गौरव प्रगटाया ||10||
जगत जनों को ओंकार ध्वनिमय, प्रभु ने उपदेश दिया।
शुद्ध बुद्ध भगवान आत्मा, सबको ये संदेश दिया ||11||
दश गणधर थे जिनमें पहले, **मुख्य स्वयंभू गणधर** थे।
मुख्य आर्यिका सुलोचना थी, **श्रोता महासेन नृप** थे ||12||

1. पूर्व भव का बैरी कर्मठ का जीव जो वर्तमान भव में संवर नामक देव

जीव, अजीव, आश्रव, संवर बन्ध निर्जरा मोक्ष महान।
ज्यों का त्यों श्रद्धान तत्त्व का, सम्यक्दर्शन श्रेष्ठ प्रधान ||13||
जीव तत्त्व तो उपादेय है, अरु अजीव तो है सब ज्ञेय।
आश्रव बन्ध हेय हैं, साधन संवर निर्जरा मोक्ष उपेय ||14||
सात तत्त्व ही पाप पुण्य मिल, नव पदार्थ हो जाते हैं।
तत्त्व ज्ञान बिन जग के प्राणी, भव–भव में दुख पाते हैं ||15||
वस्तु तत्त्व का ज्ञान स्वयं के, निर्णय में जो लाते हैं।
आत्म चिंतवन करके वे ही, श्रेष्ठ मोक्ष पद पाते हैं ||16||
हे प्रभु! यह उपदेश आपका, मैं निज अन्तर में लाऊँ।
आत्मबोध की महाशक्ति से, मैं निर्वाण स्वपद पाऊँ ||17||
अष्ट कर्म को नष्ट करूँ मैं, तुम समान प्रभु बन जाऊँ।
सिद्ध शिला पर सदा विराजूँ, निज स्वभाव में मुस्काऊँ ||18||
इसी भावना से प्रेरित हो, हे प्रभु! की है यह पूजन।
तुव प्रसाद से एक दिवस मैं पा जाऊँगा मुक्ति सदन ||19||

ॐ ह्रीं श्री गर्भ जन्म तप ज्ञान निर्वाण कल्याणक प्राप्त श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

सर्प चिन्ह शोभित चरण पार्श्वनाथ उर धार।
मन, वच, तन, जो पूजते वे होते भव पार ||20||

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय नमः।

बहु पुण्य प्रसंग से शुभ देह मानव का मिला।
तो भी अरे भव चक्र का, फेरा न एक कभी टला।।
लक्ष्मी बड़ी अधिकार भी पर बढ़ गया क्या बोलिये।
परिवार और कुटुम्ब है क्या वृद्धि नय पर तोलिये।।

75. महिमा है अगम जिनागम की

महिमा है अगम जिनागम की।।टेक।।
जाहि सुनत जड़ भिन्न पिछानी, हम चिन्मूरति आतमकी ||1||
रागादि दुख कारण जाने, त्याग बुद्धि दीनी भ्रम की ||2||
ज्ञान ज्योति जागी उर अन्तर, रुचि बाढ़ी पुनि शमदम की ||3||
कर्मबंध की भई निर्जरा, कारण परम्परा–क्रम की ||4||
भागचन्द[1]**शिव–लालच** लागौ, पहुँच नहीं है जहँ [2]जम की ||5||

76. श्री महावीर जिन पूजन

वर्धमान सुवीर वैशालिक श्री जिनवीर को।
वीतरागी तीर्थंकर हितंकर अतिवीर को ||1||
इन्द्र सुर नर देव वंदित वीर सन्मति धीर को।
अर्चना पूजा करूँ मैं नमन कर महावीर को ||2||
[3]नीरक्षीर विवेक पूर्वक, हरूँ भव की पीर को।
नष्ट हो मिथ्यात्त्व प्रगटाऊँ, स्वगुण गम्भीर को ||3||

ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट्, ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेन्द्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेन्द्र अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

जल से प्यास बुझाने का, झूठा अभिमान किया अब तक।
पर आश पिपासा नहीं बुझी, मिथ्या भ्रममान किया अब तक।।

---

1. मोक्ष की इच्छा
2. यमराज
3. जल व दूध की भाँति

भावों का निर्मल जल लेकर, चिर तृषा मिटाने आया हूँ।
हे महावीर स्वामी! निज हित मैं, पूजन करने आया हूँ ||1||
ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेन्द्राय जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि.।
शीतलता हित चंदन चर्चित, ही करता आया था अब तक।
निज शीतल स्वभाव नहीं समझा, परभाव सुहाया था अब तक।।
निज भावों का चंदन लेकर, भवताप मिटाने आया हूँ।।हे महावीर||2||
ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेन्द्राय संसार ताप विनाशनाय चंदनं नि.।
भौतिक वैभव की छाया में, निज द्रव्य भुलाया था अब तक।
निज पद विस्मृत कर परपद का ही, राग बढ़ाया था अब तक।।
भावों के अक्षत लेकर मैं, अक्षय पद पाने आया हूँ।।हे महावीर||3||
ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेन्द्राय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि.।
पुष्पों की कोमल मादकता में, पड़कर भरमाया अब तक।
पीड़ा न काम की मिटी कभी, निष्काम न बन पाया अब तक।।
भावों के पुष्प समर्पित कर मैं, काम नशाने आया हूँ।।हे महावीर||4||
ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेन्द्राय कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।
नैवेद्य विविध खाकर भी तो, यह भूख न मिट पाई अब तक।
तृष्णा का उदर न भरपाया, पर की महिमा गाई अब तक।।
भावों के चरु लेकर अब मैं, तृष्णाग्नि बुझाने आया हूँ।।हे महावीर||5||
ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।
मिथ्याभ्रम अन्धकार छाया सन्मार्ग न मिल पाया अब तक।
अज्ञान अमावस के कारण निज ज्ञान न लख पाया अब तक।।
भावों का दीप जला अन्तर आलोक जगाने आया हूँ।।हे महावीर||6||
ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।

कर्मों की लीला में पड़कर, भवभार बढ़ाया है अब तक।
संसार द्वंद के फंदे से निज, धूम्र उड़ाया है अब तक।।
भावों की धूप चढ़ाकर मैं, वसु कर्म जलाने आया हूँ।।हे महावीर||7||
ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेन्द्राय अष्टकर्म दहनाय धूपं नि.।
संयोगी भावों से भव ज्वाला में, जलता आया अब तक।
शुभ के फल के अनुकूल संयोगों, को पा इतराया अब तक।।
भावों का फल ले निजस्वभाव का, शिवफल पाने आया हूँ।।हे महावीर||8||
ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेन्द्राय मोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।
अपने स्वभाव के साधन का, विश्वास नहीं आया अब तक।
सिद्धत्त्व स्वयं से आता है, आभास न हो पाया अब तक।।
भावों का अर्घ्य चढ़ाकर, मैं अनुपम पद पाने आया हूँ।
हे महावीर स्वामी! निज हित में, पूजन करने आया हूँ ||9||
ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेन्द्राय अनर्घ पद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

श्री पंचकल्याणक अर्घ्य

धन्य तुम महावीर भगवान, धन्य तुम वर्धमान भगवान।
शुभ आषाढ़ शुक्ला षष्ठी को, हुआ गर्भ कल्याण।।
माँ त्रिशला के उर में आये भव्य जनों के प्राण।
धन्य तुम महवीर भगवान ||1||
ॐ ह्रीं श्री आषाढ़ शुक्लाषष्ठ्यां गर्भमंगलप्राप्त श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।
चैत्र शुक्ल शुभ त्रयोदशी का दिवस पवित्र महान।
हुए अवतरित भारत भू पर, जग को दुखमय जान।।धन्य.||2||
ॐ ह्रीं श्री चैत्र शुक्ल त्रयोदश्यां जन्म कल्याणक प्राप्त श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

जग को अथिर जान छाया मन में वैराग्य महान।
मगसिर कृष्ण दशमी के दिन तप हित किया प्रयाण।।धन्य||3||
ॐ ह्रीं श्री मगसिर कृष्णदशम्यां तपकल्याणकप्राप्त श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

शुक्ल ध्यान के द्वारा करके कर्म घाति अवसान।
शुभ वैशाख शुक्ल दशमी को पाया केवलज्ञान।।धन्य||4||
ॐ ह्रीं श्री वैशाख शुक्ल दशम्यां ज्ञानकल्याणक प्राप्त श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

श्रावण कृष्णा एकम के दिन दे उपदेश महान।
दिव्य ध्वनि से समवशरण में किया विश्व कल्याण।।धन्य||5||
ॐ ह्रीं श्री श्रावण कृष्ण एकम् दिव्यध्वनि प्राप्त श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

कार्तिक कृष्ण अमावस्या को पाया पद निर्वाण।
पूर्ण परम पद सिद्ध निरन्जन सादि अनन्त महान।।
धन्य तुम महावीर भगवान||6||
ॐ ह्रीं श्री कार्तिक कृष्ण अमावस्यां मोक्षपद प्राप्त श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

जयमाला

जय महावीर त्रिशला नन्दनजय सन्मति वीर सुवीर नमन।
जय वर्धमान[1]**सिद्धार्थ तनय**जय वैशालिक अतिवीर नमन||1||
तुमने अनादि से नित निगोद के भीषण दुख को सहन किया।
त्रस हुए कई भव के पीछे पर्याय मनुज में जन्म लिया ||2||

1. सिद्धार्थ राजा के पुत्र

पुरुरवा भील के जीवन से प्रारम्भ कहानी होती है।
अनगिनती भव धारे जैसी मति हो वैसी गति होती है ||3||
पुरुषार्थ किया पुण्योदय से, तुम भरत पुत्र मारीच हुए।
मुनि बने और फिर भ्रमित हुए शुभ अशुभ भाव के बीच फंसे||4||
फिर तुम त्रिपृष्ठ नारायण बन, हो गये अर्धचक्री प्रधान।
फिर भी परिणाम नहीं सुधरे, भव भ्रमण किया तुमने अजान||5||
फिर देव नरक तिर्यन्च मनुज चारों गतियों में भरमाये।
पर्याय सिंह की पुनः मिली, **पाँचों समवाय** निकट आये ||6||
अजितंजय और अमितगुण चारण, मुनि नभ से भू पर आये।
उपदेश मिला उनका तुमको, नयनों में आंसू भर आये ||7||
सम्यक्त्व हो गया प्राप्त तुम्हें, मिथ्यात्व गया, व्रतग्रहण किया।
फिर देव हुए तुम सिंह केतु, [1]सौधर्म स्वर्ग में रमण किया ||8||
फिर कनककोज्जवल विद्याधर हो, मुनिव्रत से[2]लांतवस्वर्ग मिला।
फिर हुए अयोध्या के राजा, हरिषेण साधुपद हृदय खिला ||9||
फिर [2]महाशुक्र सुरलोक मिला चयकर चक्री प्रिय मित्र हुए।
फिर मुनिपद धारण करके प्रभु, तुम[3]सहस्त्रार में देव हुए ||10||
फिर हुए नन्दराजा मुनि बन, तीर्थंकर नाम प्रकृति बांधी।
[4]पुष्पोत्तर में हो [5]अच्युतेन्द्र, भावना आत्मा की साधी ||11||
तुम स्वर्ग यान [4]पुष्पोत्तर तज, मां त्रिशला के उर में आये।
छह मास पूर्व से जन्म दिवस तक, रत्न इन्द्र ने बरसाये ||12||
वैशाली के **कुण्डलपुर** में, हे स्वामी तुमने जन्म लिया।
सुरपति ने हर्षित गिरि सुमेरु पर, क्षीरोदधि अभिषेक किया||13||

1. प्रथम स्वर्ग 2. 7वाँ स्वर्ग 3. 10वाँ स्वर्ग
4. 12वाँ स्वर्ग 5. 16वाँ स्वर्ग

शुभ नाम तुम्हारा रख, प्रमुदित हुआ इन्द्र भारी।
बालकपन में क्रीड़ा करते तुम, मति श्रुति अवधि ज्ञानधारी ||14||
संजय अरु विजय महामुनियों को दर्शन का विचार आया।
शिशु वर्द्धमान के दर्शन से शंका का समाधान पाया ||15||
मुनिवर ने सन्मति नाम रखा वे नमस्कार कर चले गये।
तुमने आठ वर्ष की अल्प आयु में ही अणुव्रती सा जीवन पाया ||16||
संगम नामक एक देव परीक्षा हेतु नाग बनकर आया।
तुमने निशंक उसके फण पर चढ़ नृत्य किया वह हर्षाया ||17||
तत्क्षण हो प्रगट झुका मस्तक बोला स्वामी शत शत वंदन।
अति वीर, वीर हे महावीर अपराध क्षमा कर दो भगवन् ||18||
गजराज एक ने पागल हो आतंकित सबको कर डाला।
निर्भय उस पर आरुढ़ हुए पल भर में शान्त बना डाला ||19||
भव भोगों से होकर विरक्त तुमने विवाह से मुख मोड़ा।
बस बाल [1]ब्रह्मचारी रहकर [2]कंदर्प शत्रु का मद तोड़ा ||20||
जब तीस वर्ष के युवा हुए वैराग्य भावना जागा मन में।
लौकांतिक आये धन्य धन्य दीक्षा ली ज्ञातखण्ड वन में ||21||
नृपराज बकुल के गृहजाकर पारणा किया गौ दुग्ध लिया।
देवों ने पंचाश्चर्य किये जन जन ने जय जपकार किया ||22||
उज्जयनी की शमशान भूमि में जाकर तुमने ध्यान किया।
सात्यिकी तनय भव रुद्र कुपित हो गया महाव्यवधान किया ||23||
उपसर्ग रुद्र ने किया घोर तुम आत्म ध्यान में रहे अटल।
नतमस्तक रुद्र हुआ तब ही उपसर्ग जयी तुम हुए सफल ||24||

1. 5वें ब्रह्म स्वर्ग के अन्त में रहने वाले ब्रह्मचारी देव लोकान्तिक
2. कामदेव

कौशाम्बी में उस सती चन्दना दासी का उद्धार किया।
हो गया अभिग्रह पूर्ण चन्दना के कर से आहार लिया ||25||
नभ से पुष्पों की वर्षा लख **नृप शतानीक** पुलकित आये।
वैशाली **नृप चेतक** बिछुड़ी चन्दना सुता पा हर्षाये ||26||
संगम देव तुमसे हारा जिसने भीषण उपसर्ग किये।
तुम आत्मध्यान में रहे अटल अंतर में समता भाव लिये ||27||
जितनी भी बाधायें आईं उन पर सब पर तुमने जय पाई।
द्वादश वर्षों की मौन तपस्या और साधना फल पाई ||28||
मोहारिजयी श्रेणी चढ़कर तुम शुक्ल ध्यान में लीन हुए।
ऋजुकूला के तट पर पाया कैवल्य पूर्ण स्वाधीन हुए ||29||
अपने स्वरूप में मग्न हुए लेकर स्वभाव का अवलम्बन।
घातिया कर्म चारों नाशे प्रगटाया केवलज्ञान स्वधन ||30||
अन्तर्यामी सर्वज्ञ हुए तुम वीतराग अरहन्त हुए।
सुरनर मुनि इन्द्रादिक वन्दित त्रैलोक्य भूप भगवंत हुए ||31||
विपुलाचल पर दिव्यध्वनि के द्वारा जग को उपदेश दिया।
जग की असारता बतलाकर फिर मोक्षमार्ग संदेश दिया ||32||
ग्यारह गणधर में हे स्वामी! **श्री गौतम गणधर प्रमुख** हुए।
आर्यिका मुख्य चंदना सती श्रोता श्रेणिक नृप प्रमुख हुए ||33||
सोई मानवता जाग उठी सुर नर पशु सबका हृदय खिला।
उपदेशामृत के प्यासों को प्रभु निर्मल सम्यक् ज्ञान मिला ||34||
निज आत्मतत्त्व के आश्रय से निज सिद्ध स्वपद मिल जाता है।
तत्त्वों के सम्यक् निर्णय से निज आत्मबोध हो जाता है ||35||
यह अनंतानुबंधी कषाय निज पर विवेक से जाती है।
बस भेद ज्ञान के द्वारा ही रत्नत्रय पथ अभियान किया ||36||

इस भरत क्षेत्र में विचरण कर, जग जीवों का कल्याण किया।
सद्दर्शन ज्ञान चारित्रमयी, रत्नत्रय पथ अभियान किया ||37||
तीस वर्ष तक कर विहार पावापुर उपवन में तुम आये।
फिर योग निरोध किया तुमने निर्वाण गीत सबने गाये ||38||
चारों [1]अघातिया नष्ट हुए परिपूर्ण शुद्धता प्रगटाई।
जा पहुंचे सिद्धशिला पर तुम दीपावली जग विख्यात हुई ||39||
हे महावीर स्वामी! अब तो मेरा दुख से उद्धार करो।
भवसागर में डूबा हूँ मैं हे प्रभु! इस भव का भार हरो ||40||
हे देव! तुम्हारे दर्शनकर निज रूप आज पहिचाना है।
कल्याण स्वयं से ही होगा यह वस्तु तत्त्व भी जाना है ||41||
तुमने जो सम्यक् पथ सबको बतलाया उसको आचर लूँ।
आत्मानुभूति के द्वारा मैं शाश्वत सिद्धत्व प्राप्त कर लूँ ||42||
मैं इसी भावना से प्रेरित होकर चरणों में आया हूँ।
श्रद्धायुत विनय भाव से मैं यह भक्ति सुमन प्रभु लाया हूँ ||43||
तुमको है कोटि कोटि सादर वन्दन स्वामी स्वीकार करो।
हे मंगल मूर्ति तरण तारण अब मेरा बेड़ा पार करो ||44||

ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेन्द्राय अनर्घ पद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

सिंह चिन्ह शोभित चरण महावीर उर धार।
मन, वच, तन, जो पूजते वे होते भव पार।।

इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत्

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेन्द्राय नमः।

1. आयु, नाम, गोत्र, वेदनीय ये 4 अघातिया कर्म हैं।

77. श्री तीर्थंकर गणधरवलय पूजन

वृषभादिक श्री वीर जिनेश्वर, तीर्थंकर चौबीस महान।
जिनके **चौदह सौ उनसठ गणधर** को, मैं वन्दूँ धर ध्यान ||1||
ऋद्धि सिद्धि मंगल के दाता, गणधर चार ज्ञानधारी।
मति श्रुत अवधि मनःपर्ययज्ञानी, भव ताप पाप हारी ||2||
पंच महाव्रत पंच समिति त्रय गुप्ति, सहित जग में नामी।
आठों मद अरु सप्त भयों से, रहित महामुनि शिवगामी ||3||
बुद्धि बीज पदानुसारिणी, आदि ऋद्धियों के स्वामी।
द्वादशांग की रचना करते, सर्व सिद्धियों के धामी ||4||
वृषभसेन आदिक गौतम गणधर को, नित प्रति करूँ प्रणाम।
भक्तिभाव से चरण पूजकर, मैं पाऊँ सिद्धों का धाम ||5||

ॐ ह्रीं श्री सर्व गणधर देव समूह अत्र अवतर अवतर संवौषट्, ॐ ह्रीं श्री सर्व गणधर देव समूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, ॐ ह्रीं श्री सर्व गणधर देव समूह अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।

एकत्व विभक्त आत्मा प्रभु, निज वैभव से परिपूर्ण स्वयम्।
यह जन्म मरण से रहित ध्रौव्य, शाश्वत शिवशुद्ध स्वरूप परम।।
मैं चौबीसों तीर्थंकर के, गणधर देवों को करूँ नमन।
श्री द्वादशांग जिनवाणी के, हे रचनाकार तुम्हें वन्दन ||1||

ॐ ह्रीं श्री सर्व गणधर देवेभ्यो जन्मजरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि.।

है श्रुत परिचित अनुभूत भोग, बंधन की कथा सुलभ जग में।
भवाताप हर एकत्वरूप, निज अनुभव अतिदुर्लभ जग में।।मैं||2||

ॐ ह्रीं श्री सर्व गणधर देवेभ्यो संसार ताप विनाशनाय चंदनं नि.।

निज ज्ञायक भाव नहीं प्रमत्त या, अप्रमत्त है क्षण भर भी।
अक्षय अखंड निजनिधिस्वामी, इसमें न राग है कणभर भी।।मैं||3||
ॐ ह्रीं श्री सर्व गणधर देवेभ्यो अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि.।
जड़ पुद्‌गल रागादिक विकार, इनसे मेरा सम्बन्ध नहीं।
निष्काम अतीन्द्रिय सुखसागर, मुझमें पर का कुछ द्वंद नहीं।।मैं||4||
ॐ ह्रीं श्री सर्व गणधर देवेभ्यो कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।
भूतार्थ आश्रित भव्य जीव ही, सम्यक् दृष्टि ज्ञानधारी।
सम्यक् चारित्र धार हरता है, क्षुधा व्याधि की बीमारी।।मैं||5||
ॐ ह्रीं श्री सर्व गणधर देवेभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।
जिन वच में जो रमते, पल में वे मोह वमन कर देते हैं।
वे स्वपर प्रकाशक स्वयं ज्योति, सुखधाम परम पद लेते हैं।।मैं||6||
ॐ ह्रीं श्री सर्व गणधर देवेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।
जीवादिक नव तत्वों में भी निज, की श्रद्धा प्रतीति समकित।
मैं भेद ज्ञान पा हो जाऊँ प्रभु, अष्टकर्म रज से विरहित।।मैं||7||
ॐ ह्रीं श्री सर्व गणधर देवेभ्यो अष्टकर्म दहनाय धूपं नि.।
चित्चमत्कार उद्योतवान चैतन्य मूर्ति निज परम श्रेय।
मैं स्वयं मोक्ष मंगलमय हूँ परभाव सकल है सदा हेय।।मैं||8||
ॐ ह्रीं श्री सर्व गणधर देवेभ्यो मोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।
मैं हूँ अबद्ध अस्पृष्ट, नियत, अविशेष अनन्त गुणकार हूँ।
मैं हूँ अनर्घ पद का स्वामी प्रभु केवलज्ञान दिवाकर हूँ।।
मैं चौबीसों तीर्थंकर के, गणधर देवों को करूँ नमन।
श्री द्वादशांग जिनवाणी के, हे रचनाकार तुम्हें वंदन ||9||
ॐ ह्रीं श्री सर्व गणधर देवेभ्यो अनर्घ पद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

जयमाला

चौबीसों जिनराज के श्री गणधर भगवान।
विनय भाव से मैं नमूँ पाऊँ सम्यकज्ञान ||1||
तीर्थंकर गणधर की संख्या, और मुख्य गणधर के नाम।
भक्ति भाव से अर्घ चढ़ाऊँ, विनय सहित मैं करूँ प्रणाम ||2||
ऋषभदेव के चौरासी गणधर, में **वृषभसेन** नामी।
अजितनाथ के नब्बे में थे, **केसरीसेन** ज्ञानधामी ||3||
सम्भव जिन के एक सौ पाँच में **चारुदत्त** गणधर स्वामी।
अभिनन्दन के एक सौ तीन में **वज्रचामर** ऋषि गुणधामी ||4||
सुमतिनाथ के एक शतक सोलह में, हुए **वज्रस्वामी**।
पद्मप्रभ के एक शतक ग्यारह में **प्रमुख चमर** नामी ||5||
श्री सुपार्श्व के पंचानवे प्रमुख **बलदत्त** महा विद्वान।
चन्द्रप्रभ के तिरानवे में मुख्य **श्री वैदर्भ** महान ||6||
पुष्पदन्त के अट्ठासी में मुख्य **नागऋषि** हुए प्रधान।
शीतल जिनके सत्तासी में, हुए **कुन्थुमुनि** श्रेष्ठ महान ||7||
प्रभु श्रेयांसनाथ के गणधर, हुए सतत्तर **धर्मप्रधान**।
वासुपूज्य के छयासठ गणधर में, **गणधर मन्दर** महा महान ||8||
विमलनाथ के पचपन गणधर में थे जय **ऋषिराज** स्वरूप।
श्री अनन्तजिन के पचास गणधर में, मुख्य **अरिष्ट** अनूप ||9||
धर्मनाथ के तिरतालीस गणधरों में थे **सेनमहन्त**।
शांतिनाथ के थे छत्तीस मुख्य, **चक्रायुध** श्री भगवन्त ||10||
कुन्थुनाथ प्रभु के थे पैंतिस, मुख्य **स्वयंभू** गणधर थे।
अरनाथ के तीस गणधरों में भी **कुम्भ ऋषीश्वर** थे ||11||

मल्लिनाथ के अट्ठाइस गणधर, में **मुख्य विशाख** प्रधान।
मुनिसुव्रत के अट्ठारह में मुख्य हुए, **मुनि मल्लि** महान ||12||
श्री नमिनाथ जिनेश्वर के सतरह, गणधरों में **सप्रभ** देव।
नेमिनाथ के ग्यारह गणधर में, **वरदत्त** हुए स्वयमेव ||13||
पार्श्वनाथ प्रभु के दस गणधर में थे मुख्य **स्वयंभू नाम**।
महावीर के ग्यारह गणधर, **इन्द्रभूति गौतम** गुणधाम ||14||
ये **चौदह सौ उन्सठ गणधर** इनकी महिमा अपरम्पार।
केवलज्ञान लब्धि को पाकर, सभी हुए भवसागर पार ||15||
तीर्थंकर प्रभु शुक्ल ध्यान धर, जब पाते हैं केवलज्ञान।
देवों द्वारा समवशरण की रचना होती दिव्य महान ||16||
द्वादश सभा सहज जुड़ती है अन्तरीक्ष प्रभु पद्मासन।
गणधर के आते ही होती प्रभु की, दिव्य ध्वनि पावन ||17||
मेघ गर्जना सम जिन ध्वनि का, बहता है अति सलिल प्रवाह।
ओंकार ध्वनि सर्वांग से, झरती रहती ज्ञान अथाह ||18||
दिव्य ध्वनि खिरते ही गणधर, तत्क्षण उसे झेलते हैं।
छठे सातवें गुणस्थान में, बारम्बार झूलते हैं ||19||
छह छह घड़ी दिव्यध्वनि खिरती, तीन समय नित मंगलमय।
वस्तु तत्त्व उपदेश श्रवणकर, भव्य जीव होते निजमय ||20||
जिन जीवों की जो भाषा उसमें हो जाती वह परिवर्तित।
सात शतक लघु और **महाभाषा अष्टादशमयी** अमित ||21||
रच देते अंतमुहुर्त में, गणधर **द्वादशांगमय जिनवाणी**।
दिव्य ध्वनि बन्द होने पर, गंणधर व्याख्या करते जग कल्याणी ||22||
गणधर का अभाव हो तो, दिव्य ध्वनि रूप प्रवृत्ति नहीं।
जिनध्वनि अगर नहीं हो, तो संशय की कभी निवृत्ति नहीं ||23||

तीर्थंकर की दिव्य ध्वनि, गणधर होने पर ही खिरती।
गणधर समुपस्थित न अगर हों वाणी कभी नहीं खिरती ||24||
इसीलिये तो **महावीर प्रभु** की, दिव्य ध्वनि थी खिरी नहीं।
छयासठ दिन तक रहे मौन, सारी जगती अति चकित रही ||25||
इन्द्रभूति गौतम जब आए, मुनि बन गणधर हुए स्वयम्।
तभी दिव्य ध्वनि गूंज उठी, जिन प्रभु की मेघगर्जना सम ||26||
जीवों का कल्याण हो गया, जन जन में आनन्द छाया।
दिव्य ध्वनि का लाभ श्री, गौतम गणधर द्वारा पाया ||27||
यह निमित्त नैमित्तिक है संबंध, स्वयं मिल जाता है।
अपने अपने कारण से जो, होना है हो जाता है ||28||
यदि गणधर होते नहीं तो जिनवाणी कैसे मिलती।
नय प्रमाण निक्षेप आदि की, बंद कली कैसे खिलती ||29||
गणधर देवों का जग के, जीवों पर है अनंत उपकार।
विनय भाव से गणधर देवों की, हम करते जयजयकार ||30||
गणधर प्रभु की परम कृपा से खुला मोक्ष का पावन द्वार।
सर्व सिद्धियों के दाता हैं, गणधर स्वामी मंगलकार ||31||
निजस्वभाव साधन हम पायें, ऐसी कृपा और कर दो।
रत्नत्रय पथ पर आ जायें, ऐसी दिव्य भोर कर दो ||32||
परभावों से दूर रहें हम, निज स्वरूप का ध्यान करें।
द्रव्य दृष्टि बनकर हे स्वामी, महामोक्ष अभियान करें ||33||
जय जय परम ऋषीश्वर स्वामी मंगलमय प्रभु गणधर देव।
आत्मज्ञान की ज्योति किरण पा, हम भी सिद्ध बने स्वयमेव ||34||
ॐ ह्रीं श्री सर्व गणधर देवेभ्यो अनर्घ पद प्राप्तये पूर्णार्घ्यं नि.।

गणधर प्रभुओं के चरण जो लेते उर धार।
मन वच तन से पूजते हो जाते भवपार।।

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री सर्व ऋद्धि धारक गणधरदेवेभ्यो नमः।

78. श्री तीर्थंकर निर्वाण क्षेत्र पूजन

अष्टापद कैलाश श्री सम्मेदाचल चम्पापुर धाम।
उर्जयन्त गिरनार शिखर, पावापुर सबको करूँ प्रणाम ||1||
ऋषभादिक चौबीस जिनेश्वर, मुक्ति वधु के कंत हुए।
पंच तीर्थों से तीर्थंकर, परम सिद्ध भगवन्त हुए ||2||

ॐ ह्रीं श्री तीर्थंकर निर्वाण क्षेत्राणि अत्र अवतर अवतर संवौषट्, ॐ ह्रीं श्री तीर्थंकर निर्वाण क्षेत्राणि अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, ॐ ह्रीं श्री तीर्थंकर निर्वाण क्षेत्राणि अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।

जन्म मरण से व्यथित हुआ हूँ, भव अनादि से दुखपाया।
परम पारिणामिक स्वभाव का, निर्मल जल पाने आया।।
अष्टापद सम्मेदशिखर, चम्पापुर, पावापुर, गिरनार।
चौबीसों तीर्थंकर की निर्वाण, भूमि वन्दू सुखकार ||1||

ॐ ह्रीं श्री तीर्थंकर निर्वाण क्षेत्रेभ्यो जन्म जरामृत्यु विनाशनाय जलं नि.।

भव आतप से दग्ध हुआ मैं, प्रतिफल दुख अनन्त पाया।
परम पारिणामिक स्वभाव का, निज चंदन पाने आया।।अष्टा.||2||

ॐ ह्रीं श्री तीर्थंकर निर्वाण क्षेत्रेभ्यो संसार ताप विनाशनाय चंदनं नि.।

भव समुद्र में चहुँगति की, भंवरों में डूबा इतराया।
परम पारिणामिक स्वभाव से, अक्षय पद पाने आया।।अष्टा.||3||

ॐ ह्रीं श्री तीर्थंकर निर्वाण क्षेत्रेभ्यो अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि.।

कामभोग बन्धन में पड़कर, शील स्वभाव नहीं पाया।
परम पारिणामिक स्वभाव के, सहज पुष्प पाने आया।।अष्टा.||4||

ॐ ह्रीं श्री तीर्थंकर निर्वाण क्षेत्रेभ्यो कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।

तृष्णा की ज्वाला में जल जल, तृप्त नहीं मैं हो पाया।
परमपारिणामिक स्वभाव के, शुचिमय चरु पाने आया।।अष्टा.||5||

ॐ ह्रीं श्री तीर्थंकर निर्वाण क्षेत्रेभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।

सम्यकज्ञान प्रभु बिन अब तक निजस्वरूप न लख पाया।
परम पारिणामिक स्वभाव की, दीपज्योति पाने आया।।अष्टा.||6||

ॐ ह्रीं श्री तीर्थंकर निर्वाण क्षेत्रेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।

अष्टकर्म की क्रूर प्रकृतियों में, ही निज को उलझाया।
परम पारिणामिक स्वभाव की, सजल धूप पाने आया।।अष्टा.||7||

ॐ ह्रीं श्री तीर्थंकर निर्वाण क्षेत्रेभ्यो अष्टकर्म दहनाय धूपं नि.।

मोक्ष प्राप्ति के बिना आज तक, सुख का एक न कण पाया।
परम पारिणामिक स्वभाव के, शिवमय फल पाने आया।।अष्टा.||8||

ॐ ह्रीं श्री तीर्थंकर निर्वाण क्षेत्रेभ्यो मोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।

शुद्ध त्रिकाली अपना ज्ञायक, आत्म स्वभाव न दर्शाया।
परम पारिणामिक स्वभाव का, पद अनर्घ पाने आया।।
अष्टापद सम्मेदशिखर, चम्पापुर, पावापुर, गिरनार।
चौबीसों तीर्थंकर की निर्वाण, भूमि बन्दू सुखकार ||9||

ॐ ह्रीं श्री तीर्थंकर निर्वाण क्षेत्रेभ्यो अनर्घ पद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

जयमाला

श्री चौबीस जिनेश को वन्दन करूँ त्रिकाल।
तीर्थंकर निर्वाण भू हरे कर्म जंजाल ||1||

अष्टापद कैलाश आदि प्रभु, **ऋषभदेव पद** करूँ प्रणाम।
चम्पापुर में **वासुपूज्य** जिनवर के पद वन्दूँ अभिराम ||2||
उर्जयंत गिरनार शिखर पर, **नेमिनाथ** पद को वन्दन।
पावापुर में **वर्धमान प्रभु** के, चरणों को करूँ नमन ||3||
बीस तीर्थंकर सम्मेदाचल के, पर्वत पर वन्दू।
बीस टोंक पर बीस जिनेश्वर, सिद्ध भूमि को अभिनन्दूँ ||4||
कूट सिद्धवर अजितनाथ के चरण कमल को नमन करूँ।
धवलकूट पर सम्भव जिनपद, पूजूँ निज का मनन करूँ ||5||
मैं आनन्दकूट पर अभिनन्दन, स्वामी को करूँ नमन।
अविचलकूट सुमति जिनवर के पद कमलों में है वंदन ||6||
मोहनकूट पद्मप्रभ के चरणों में सादर करूँ नमन।
कूट प्रभास सुपार्श्वनाथ प्रभु के, मैं पूजूँ भव्य चरण ||7||
ललितकूट पर चन्द्र प्रभ को, भाव सहित सादर वन्दूँ।
सुप्रभकूट सुविधि जिनवर, श्री पुष्पदन्त पद अभिनन्दूँ ||8||
विद्युतकूट श्री शीतल जिनवर, के चरण कमल पावन।
संकुल कूट चरण श्रेयांसनाथ के पूजूँ मनभावन ||9||
श्री सुवीरकूट भाव से विमलनाथ के पद वन्दूँ।
चरण अनन्तनाथ स्वामी के कूट स्वयंभू को वन्दूँ ||10||
कूट सुदत्त पूजता हूँ मैं धर्मनाथ के चरण कमल।
नमूँ कुन्दप्रभ कूट मनोहर शान्तिनाथ के चरण विमल ||11||
कुन्थुनाथ स्वामी को वन्दू कूट ज्ञानधर भव्य महान।
नाटक कूट श्री अरनाथ जिनेश्वर पद का ध्याऊँ ध्यान ||12||
संबल कूट मल्लि जिनवर के चरणों की महिमा गाऊँ।
निर्जरा कूट श्री मुनिसुव्रत चरण पूज कर हर्षाऊँ ||13||

कूट मित्रधर श्री नमिनाथ तीर्थंकर पद को करूँ प्रणाम।
स्वर्णभद्र श्री पार्श्वनाथ प्रभु को नित वन्दूँ आठों याम ||14||
तीर्थंकर निर्वाण भूमियाँ तीर्थ क्षेत्र कहलाती हैं।
मुनियों की निर्वाण भूमियाँ सिद्ध क्षेत्र कहलाती हैं ||15||
गर्भ जन्म तप ज्ञान भूमियाँ अतिशय क्षेत्र कहाती हैं।
इन सब तीर्थों की यात्रा से उर पवित्रता आती है ||16||
अपना शुद्ध स्वभाव लक्ष्य में लेकर जो निज ध्यान धरूँ।
सादि अनन्त समाधि प्राप्त कर परम मोक्ष निर्वाण वरूँ ||17||
ॐ ह्रीं श्री तीर्थंकर निर्वाण क्षेत्रेभ्यो पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

सिद्ध भूमि जिनराज की महिमा अगम अपार।
निज स्वभाव जो साधते वे होते भव पार।।

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री तीर्थंकर निर्वाण क्षेत्रेभ्यो नमः।

79. श्री त्रिकाल चौबीसी जिन पूजन

श्री निर्वाण आदि तीर्थंकर, भूतकाल के तुम्हें नमन।
श्री वृषभादिक वीर जिनेश्वर, वर्तमान के तुम्हें नमन।।
महापद्म अनंतवीर्य तीर्थंकर, भावी तुम्हें नमन।
भूत भविष्यत वर्तमान की, चौबीसी को करूँ नमन।।

ॐ ह्रीं श्री भरत क्षेत्र संबंधी भूत भविष्य वर्तमान जिन तीर्थंकर समूह अत्र अवतर अवतर संवौषट्, ॐ ह्रीं श्री भरत क्षेत्र संबंधी भूत भविष्य वर्तमान जिन तीर्थंकर समूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, ॐ ह्रीं श्री भरत क्षेत्र संबंधी भूत भविष्य वर्तमान जिन तीर्थंकर समूह अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।

सात तत्त्व श्रद्धा के जल से, मिथ्यामल को दूर करूँ।
जन्म जरा भय मरण नाश हित, पर विभाव चकचूर करूँ।।
भूत भविष्यत् वर्तमान की, चौबीसी को नमन करूँ।
क्रोध मान माया हरकर, मोह क्षोभ को शमन करूँ ||1||

ॐ ह्रीं भूत भविष्य वर्तमान जिन तीर्थंकरेभ्यो जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

नव पदार्थ को ज्यों का त्यों लख, वस्तु तत्त्व पहचान करूँ।
भव आताप नशाऊँ मैं निज, गुण चंदन बहुमान करूँ।।भूत||2||

ॐ ह्रीं भूत भविष्य वर्तमान जिन तीर्थंकरेभ्यो संसार ताप विनाशनाय चंदनं नि. स्वाहा।

षट् द्रव्यों से पूर्ण विश्व में, आत्म द्रव्य का ज्ञान करूँ।
अक्षय पद पाने को अक्षत गुण, से निज कल्याण करूँ।।भूत||3||

ॐ ह्रीं भूत भविष्य वर्तमान जिन तीर्थंकरेभ्यो अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि. स्वाहा।

जानूँ मैं पंचास्तिकाय को, पंच महाव्रत शील धरूँ।
कामव्याधिका नाश करूँ, निज आत्म पुष्प की सुरभि वरूँ।।भूत||4||

ॐ ह्रीं भूत भविष्य वर्तमान जिन तीर्थंकरेभ्यो कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

शुद्ध भाव नैवेद्य ग्रहण कर, क्षुधारोग को विजय करूँ।
तीन लोक चौदह राजू ऊँचे में, मोहित होकर अब न फिरूँ।।भूत||5||

ॐ ह्रीं भूत भविष्य वर्तमान जिन तीर्थंकरेभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।

ज्ञान दीप की विमल ज्योति से, मोह तिमिर क्षय कर मानूँ।
त्रिकालवर्ती सर्व द्रव्य, गुण पर्यायें युगपत जानूँ।।भूत||6||

ॐ ह्रीं भूत भविष्य वर्तमान जिन तीर्थंकरेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

निज समान सब जीव जानकर, षटकायक रक्षा पालूँ।
शुक्ल ध्यान की शुद्ध धूप से, अष्टकर्म क्षय कर डालूँ।।भूत||7||

ॐ ह्रीं भूत भविष्य वर्तमान जिन तीर्थंकरेभ्यो अष्टकर्म दहनाय धूपं नि. ।

पंच समिति त्रय गुप्ति पंच इन्द्रिय निरोध व्रत पंचाचार।
अट्ठाईस मूल गुण पालूँ, पंच लब्धि फल मोक्ष अपार।।भूत||8||

ॐ ह्रीं भूत भविष्य वर्तमान जिन तीर्थंकरेभ्यो मोक्षफल प्राप्तये फलं नि. स्वाहा।

छयालीस गुण सहित दोष, अष्टादश रहित बनूँ अरहंत।
गुण अनंत सिद्धों के पाकर लूँ, अनर्घ पद हे भगवंत।।
भूत भविष्यत् वर्तमान की, चौबीसी को नमन करूँ।
क्रोध लोभ मद माया हरकर, मोह क्षोभ को शमन करूँ ||9||

ॐ ह्रीं भूत भविष्य वर्तमान जिन तीर्थंकरेभ्यो अनर्घ पद प्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

1. श्री भूतकाल चौबीस तीर्थंकर अर्घ्य

जय **निर्वाण**, जयति **सागर**, जय **महासाधु**, जय **विमल**, प्रभो।
जय **शुद्धाभ**, देव जय **श्रीधर**, **श्री दत्त**, **सिद्धाभ**, विभो ||1||
जयति **अमल प्रभु**, जय **उद्धार**, देव जय **अग्नि देव संयम**।
जय **शिवगण**, **पुष्पांजलि**, जय **उत्साह**, जयति **परमेश्वर** नम ||2||
जय **ज्ञानेश्वर** जय **विमलेश्वर**, जयति **यशोधर** प्रभु जय जय।
जयति **कृष्णमति**, जयति **ज्ञानमति**, जयति **शुद्धमति** जयजयजय ||3||

जय **श्रीभद्र**, **अनंतवीर्य** जय भूतकाल चौबीसी जय।
जंबूद्वीप सुभरत क्षेत्र के जिन तीर्थंकर की जय जय ॥4॥
ॐ ह्रीं भरत क्षेत्र संबंधी भूत काल संबंधी चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं नि.।

2. श्री वर्तमान काल चौबीस तीर्थंकर अर्घ्य

ऋषभदेव, जय **अजितनाथ**, प्रभु **संभव स्वामी**, **अभिनंदन**।
सुमतिनाथ, जय जयति**पद्मप्रभ**, जय**सुपार्श्व**, **चंद्र प्रभ** जिन॥1॥
पुष्पदंत, **शीतल**, जिन स्वामी, जय **श्रेयांसनाथ** भगवान।
वासुपूज्य, प्रभु**विमल**, **अनंत**, **सुधर्मनाथ**, जिन**शांति** महान॥2॥
कुन्थुनाथ, **अरनाथ**, **मल्लि**, प्रभु **मुनिसुव्रत**, **नमिनाथ**, जिनेश।
नेमिनाथ, प्रभु **पार्श्वनाथ**, प्रभु **महावीर**, प्रभु महा महेश ॥3॥
पूज्य पंच कल्याण विभूषित वर्तमान चौबीसी जय।
जंबूद्वीप सुभरत क्षेत्र के तीर्थंकर प्रभु की जय जय ॥4॥
ॐ ह्रीं भरत क्षेत्र संबंधी वर्तमानकाल संबंधी चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं नि.।

3. श्री भविष्यकाल चौबीस तीर्थंकर अर्घ्य

जय प्रभु **महापद्म सुरप्रभ**, जय **सुप्रभ**, जयति **स्वयंप्रभु**, नाथ।
सर्वायुद्ध, जयदेव, **उदयप्रभ**, **प्रभादेव**, जय **उदंक नाथ** ॥1॥
प्रश्नकीर्ति, **जयकीर्ति** जयति जय **पूर्णबुद्धि**, **निःकषाय**, जिनेश।
जयति**विमल**प्रभु जयति**बहुल प्रभु**, **निर्मल**, **चित्रगुप्ति**, परमेश॥2॥
जयति**विमल**, **समाधि गुप्ति**, जय**स्वयंभू**, जय**कंदर्प**, देव**जयनाथ**।
जयति **विमल**, जय **दिव्यवाद**, जय जयति **अनंतवीर्य**, जगन्नाथ ॥3॥

पूज्य पंच कल्याण विभूषित भविष्य चौबीसी की जय।
जम्बूद्वीप सुभरत क्षेत्र के तीर्थंकर प्रभु की जय जय ॥4॥
ॐ ह्रीं भरत क्षेत्र संबंधी भविष्य काल संबंधी चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं नि.।

जयमाला

तीन काल त्रय चौबीसी के नमूँ बहत्तर तीर्थंकर।
विनय भक्ति से श्रद्धापूर्वक, पाऊँ निज पद प्रभु सत्वर ॥1॥
मैंने काल अनादि गंवाया, पर पदार्थ में रच पचकर।
पर भावों में मग्न रहा मैं, निज भावों से बच बचकर ॥2॥
इसीलिए चारों गतियों के, कष्ट अनंत सहे मैंने।
धर्म मार्ग पर दृष्टि न डाली, कर्म कुपंथ गहे मैंने ॥3॥
आज पुण्य संयोग मिला, प्रभु शरण आपकी मैं आया।
भव भव के अघ नष्ट हो गए, मानों चिंतामणि पाया ॥4॥
हे प्रभु मुझको विमल ज्ञान दो, सम्यक् पथ पर आ जाऊँ।
रत्नत्रय की धर्मनाव चढ़, भवसागर से तर जाऊँ ॥5॥
सम्यक्दर्शन अष्टअंग सह, अष्ट भेद सह सम्यक्ज्ञान।
तेरह विधचारित्र धार लूँ द्वादश तप भावना प्रधान ॥6॥
हे जिनवर आशीर्वाद दो, निज स्वरूप में रम जाऊँ।
निज स्वभाव अवलंबन द्वारा, शाश्वत निज पद प्रगटाऊँ ॥7॥
ॐ ह्रीं भूत, भविष्यत, वर्तमान जिन तीर्थंकरेभ्यो पूर्णार्घ्यं नि.।

तीन काल की त्रय चौबीसी की, महिमा है अपरम्पार।
मन वच तन जो ध्यान लगाते, वह हो जाते भव से पार।।

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपाति्

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं भूत, भविष्यत, वर्तमान जिन तीर्थंकरेभ्यो नमः।

79 (1). श्री मानस्तंभ पूजन

श्री जिनवर तीर्थंकर प्रभु के, समवशरण में मानस्तंभ।
एक एक हैं चारों दिशि में, उत्तम ऊंचे मानस्तंभ॥
सुरकिन्नर, गंधर्व, यक्ष, व्यंतर, नर सब पूजन करते।
इन्द्रादिक अति भक्ति भाव से, विनय सहित वंदन करते॥
जिनवर मानस्तंभ देखकर, मान स्वयं गल जाता है।
आत्मज्ञान की ज्योति जगाती, विनय भाव उर आता है॥
मानस्तंभ महान पूजन का, शुभ भाव हृदय में आया।
मान भाव पर जय पाने का, आज स्वर्ण अवसर पाया॥

ॐ ह्रीं श्री मानस्तंभ विराजित जिन प्रतिमासमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट्। ॐ ह्रीं श्री मानस्तंभ विराजित जिन प्रतिमासमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। ॐ ह्रीं श्री मानस्तंभ विराजित जिन प्रतिमासमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

भेदज्ञान के निर्मल जल से, मिथ्यातम क्षय हो भगवन।
आत्मतत्व श्रद्धानपूर्वक हो, निश्चय सम्यक्दर्शन॥
मानस्तंभ विराजित जिन प्रतिमाओं, को मैं करूँ नमन।
वसुमद मान कषाय नाशकर, परमविनय का करूँ वरण॥1॥

ॐ ह्रीं श्री मानस्तंभ विराजित जिन प्रतिमासमूह जन्म जरामृत्यु विनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

आत्मज्ञान के शीतल चंदन से भव भय हर लूँ भगवन।
सम्यक्ज्ञान प्राप्तकर स्वामी सफल करूँ यह नरजीवन।।मान.॥2॥

ॐ ह्रीं श्री मानस्तंभ विराजित जिन प्रतिमासमूह संसारताप विनाशनाय चंदनं नि. स्वाहा।

साम्यभाव के पावन अक्षत से, अक्षय पद लूँ भगवन।
मैं सम्यक्चारित्र धार कर पाऊँ, सिद्ध स्वपद दर्शन॥मान.॥3॥

ॐ ह्रीं श्री मानस्तंभ विराजित जिन प्रतिमासमूह अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं नि. स्वाहा।

कामव्याधि हर महाशील के, परम पुष्प पाऊँ भगवन।
अष्टादश सहस्त्रभेद युत लाख, चौरासी उत्तर गुण।।मान.॥4॥

ॐ ह्रीं श्री मानस्तंभ विराजित जिन प्रतिमासमूह कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

संतोषामृत के चरू पाकर, क्षुधारोग हर लूँ भगवन
चिरतृष्णा पर विजय प्राप्तकर, पाऊँ पूर्णतृप्त जीवन॥मान.॥5॥

ॐ ह्रीं श्री मानस्तंभ विराजित जिन प्रतिमासमूह क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।

ज्ञानकिरण की दिव्य ज्योति से, भ्रमतम मोह हरूँ भगवन।
केवलज्ञान सूर्य प्रगटाऊँ, परम विनय का करूँ वरण।।मान.॥6॥

ॐ ह्रीं श्री मानस्तंभ विराजित जिन प्रतिमासमूह मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

शुक्ल ध्यान की विमल अग्नि में, आठों कर्म जले भगवन।
पूर्ण निर्जरा भाव शक्ति से, काटूँ सभी कर्म बंधन।।मान.॥7॥

ॐ ह्रीं श्री मानस्तंभ विराजित जिन प्रतिमासमूह अष्ट कर्मदहनाय धूपं नि. स्वाहा।

परम समरसी भावों का फल शीघ्र प्राप्तकर लूँ भगवन।
सादि अनंत मोक्षपद पाऊँ निजानंद में रहूँ मगन।।मान.॥8॥

ॐ ह्रीं श्री मानस्तंभ विराजित जिन प्रतिमासमूह मोक्षफल प्राप्तये फलं नि. स्वाहा।

रत्नत्रय का अर्घ्य मनोहर, शुद्ध भाव मय लूँ भगवन।
शाश्वत निज अनर्घ्य पद पाऊँ, मुक्ति वधू का करूँ वरण।।
मानस्तंभ विराजित जिन प्रतिमाओं, को मैं करूँ नमन।
वसुमद मान कषाय नाशकर, परमविनय का करूँ वरण ||9||

ॐ ह्रीं श्री मानस्तंभ विराजित जिन प्रतिमासमूह अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

मानस्तंभ महान को, मैं बंदू कर जोड़।
पर पदार्थ से दृष्टि निज पर, अब लूँ हे प्रभु मोड़॥
जिनवर समवशरण की चारों दिशि में, मानस्तंभ विशाल।
धूल शालि के निकट सुशोभित, नीलगगन में उन्नत भाल ||1||
उच्च शिखर पर चारों दिशि में, जिनप्रतिमाएँ बनी महान।
क्षुद्र घंटिकाओं की मृदुध्वनि, गाती हैं प्रभु का यशगान ||2||
मूल भाग में चारों दिशि में, प्रतिमाएँ शोभित सुन्दर।
इन्द्र क्षीर सागर जल से करते, अभिषेक विनय उर धार ||3||
तीन कोट के बाद, तीन पीठों से शोभित होता है।
बीच बीच में ध्वजा पंक्तियाँ, लख मन मोहित होता है ||4||
चार चार वापिका चार दिशि में, अतिसुन्दर होती है।
चार वीथिकाएं अतिसुन्दर, महानिराली होती है ||5||
भव्य वीथिका नीर कुन्ड में, शोभित कमल पंक्ति मनहार।
देवों द्वारा जय ध्वनि होती, होता नभ में जय जयकार ||6||
वज्रद्वारमय मध्य भाग में, होते हैं ये वृत्ताकार।
ऊपर चमर घंटिकाध्वज से, शोभित सुन्दर दिव्य अपार ||7||

तीर्थकर की ऊंचाई से, बारह गुणी दिव्य ऊंचान।
मूल भाग में रत्न पिटारों में, जिन वर का आभरण महान ||8||
समवशरण सम जिन मंदिर के, प्रांगण में भी मानस्तंभ।
तीन लोक के कृत्रिम अकीर्तम, जिन भवनों में मानस्तंभ ||9||
परम विनय से पूजन करके, नष्ट करूँ भव का विषकुंभ।
रागद्वेष का सर्वनाशकर पाऊँ, शिवसुख अमृतकुंभ ||10||
आत्म प्रतीति जगे प्रभु मन में, विनयशील जीवन पाऊँ।
चार घातिया कर्म विनाशूँ, मैं अर्हन्त स्वपद पाऊँ ||11||
यही भावना लेकर स्वामी, विनय भाव से आया हूँ।
भवसागर से पार करो प्रभु, मैं भव से घबराया हूँ ||12||
क्रोध मान माया लोभादिक, चार कषाय विनाश करूँ।
वीतराग सर्वज्ञ बन, केवलज्ञान प्रकाश वरूँ ||13||

ॐ ह्रीं श्री मानस्तंभ विराजित जिनबिम्बेभ्यो पूर्णार्घ्यं नि.।

मानस्तंभ जिनेन्द्र का, देता यह संदेश।
विनय भाव जो धारते, बनते सिद्ध महेश॥

इत्याशीर्वाद :

जाप्यमन्त्र : ॐ ह्रीं श्री मानस्तंभ विराजित जिनबिम्बेभ्यो नमः।

या जग–मन्दिर मैं अनिवार, अज्ञान–अँधेर छयौ अति भारी।
श्रीजिन की धुनि दीपशिखा सम, जो नहिं होत प्रकाशनहारी।।
तो किहँ भाँति पदारथ–पाँति, कहाँ लहते, रहते अविचारी।
या विधि संत कहैं धनि हैं, धनि हैं जिनवैन बड़े उपगारी।।

श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर पंच - निर्वाण - क्षेत्र पूजन

विधान जिनागम में वर्तमान चतुर्विंशति तीर्थंकरों में से प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव कैलाश पर्वत से, अंतिम तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी पावापुर से, भगवान नेमिनाथ गिरनार पर्वत से, भगवान वासुपूज्य चम्पापुर से तथा शेष 20 तीर्थंकर महान तीर्थराज सम्मेद शिखर जी से मोक्ष पधारे। इन तीर्थंकरों की पावन निर्वाण भूमियाँ वन्दनीय हैं। जिनकी पूजन के लिये यह एक लघु विधान के रूप में हैं। धर्मार्थी बंधु इसे एक दिन में सम्पन्न कर सकते हैं। सामान्य रूप से स्थापना एवं विसर्जन की जो विधि इस संग्रह में अन्यत्र दी गई है। उसका अनुसरण करके नित्य नियम की पूजन करके विधान किया जा सकता है।

यदि हम प्रत्यक्ष में वहाँ जाकर इन क्षेत्रों की पूजन अर्चन न कर सकें तो यहीं से ही इन क्षेत्रों की पूजन – विधान करके अपने आत्मकल्याण का मार्ग प्रशस्त करें। यही मंगल भावना है।

80. श्री अष्टापद कैलाश निर्वाण क्षेत्र पूजन

अष्टापद कैलाश शिखर पर्वत, को बन्दू बारम्बार।
ऋषभदेव निर्वाण धरा की, गूंज रही है जय जयकार ||1||

बाली महाबालि मुनि आदिक, मोक्ष गये श्री नागकुमार।
इस पर्वत की भाव वंदना कर, सुख पाऊँ अपरम्पार ||2||
वर्तमान के प्रथम तीर्थंकर को, सविनय नमन करूँ।
श्री कैलाश शिखर पूजन कर, सम्यक् दर्शन ग्रहण करूँ ||3||

ॐ ह्रीं श्री अष्टापद कैलाश निर्वाण क्षेत्र अत्र अवतर अवतर संवौषट्, ॐ ह्रीं श्री अष्टापद कैलाश निर्वाण क्षेत्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, ॐ ह्रीं श्री अष्टापद कैलाश निर्वाण क्षेत्र अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।

ज्ञानानंद स्वरूप आत्मा, सम्यक् जल से है परिपूर्ण।
ध्रुव चैतन्य त्रिकाली आश्रय से, हो जन्म–मरण सब चूर्ण।।
ऋषभदेव चरणाम्बुज पूजूँ, वन्दूँ अष्टापद कैलाश।
नागकुमार बालि आदिक ने, पाया चिन्मय मोक्ष प्रकाश ||1||

ॐ ह्रीं श्री अष्टापद कैलाश निर्वाण क्षेत्राय जन्मजरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

ज्ञानानंद स्वरूप आत्मा में है, चित् चमत्कार की गंध।
ध्रुव चैतन्य त्रिकाली के आश्रय से, होता कभी न बंध। ऋषभ.||2||

ॐ ह्रीं श्री अष्टापद कैलाश निर्वाण क्षेत्राय संसार ताप विनाशनाय चंदनं नि. स्वाहा।

सहजानंद स्वरूप आत्मा में, अक्षय गुण का भंडार।
ध्रुव चैतन्य त्रिकाली के आश्रय से, मिट जाता संसार। ऋषभ.||3||

ॐ ह्रीं श्री अष्टापद कैलाश निर्वाण क्षेत्राय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि. स्वाहा।

सहजानन्द स्वरूप आत्मा में है, शिव सुख सुरभि अपार।
ध्रुव चैतन्य त्रिकाली के आश्रय से, जीता काम विकार। ऋषभ.||4||

ॐ ह्रीं श्री अष्टापद कैलाश निर्वाण क्षेत्राय कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

पूर्णानन्द स्वरूप आत्मा में है परम भाव नैवेद्य।
ध्रुवचैतन्य त्रिकाली के आश्रय से, जीती क्षुधाव्याधि स्वमेव। ऋषभ.॥5॥
ॐ ह्रीं श्री अष्टापद कैलाश निर्वाण क्षेत्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।

पूर्णानन्द स्वरूप आत्मा, पूर्ण ज्ञान का दिव्य प्रकाश।
ध्रुव चैतन्य त्रिकाली के आश्रय से होता मोह विनाश। ऋषभ.॥6॥
ॐ ह्रीं श्री अष्टापद कैलाश निर्वाण क्षेत्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

नित्यानंद स्वरूप आत्मा में है, ध्यान धूप की वास।
ध्रुव चैतन्य त्रिकाली के, आश्रय से होते कर्म विनाश। ऋषभ.॥7॥
ॐ ह्रीं श्री अष्टापद कैलाश निर्वाण क्षेत्राय अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि. स्वाहा।

सिद्धानंद स्वरूप आत्मा में तो, शिवफल भरे अनंत।
ध्रुव चैतन्य त्रिकाली के, आश्रय से होता मोक्ष तुरंत। ऋषभ.॥8॥
ॐ ह्रीं श्री अष्टापद कैलाश निर्वाण क्षेत्राय मोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।

शुद्धानन्द स्वरूप आत्मा है अनर्घ्य पद का स्वामी।
ध्रुव चैतन्य त्रिकाली के आश्रय से हो त्रिभुवन नामी।।
ऋषभदेव चरणाम्बुज पूजूँ, वन्दू अष्टापद कैलाश।
नागकुमार बालि आदिक ने, पाया चिन्मय मोक्ष प्रकाश ॥9॥
ॐ ह्रीं श्री अष्टापद कैलाश निर्वाण क्षेत्राय अनर्घ्य पद प्राप्तये पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

मैं निर्विकल्प हूँ शुद्ध बुद्ध, इतना ही अंगीकार करो।
शुद्धोपयोगमय परम पारिणमिक स्वभाव स्वीकार करो।।

जयमाला

अष्टापद कैलाश से आदिनाथ भगवान।
मुक्त हुए निज ध्यानधर हुआ मोक्ष कल्याण ॥1॥
श्री कैलाश शिखर अष्टापद, तीन लोक में है विख्यात।
प्रथम तीर्थंकर स्वामी ने, पाया अनुपम मुक्ति प्रभात ॥2॥
इसी धरा पर ऋषभदेव को, प्रगट हुआ था केवल ज्ञान।
समवशरण में आदिनाथ की, खिरी दिव्यध्वनि महा महान ॥3॥
राग मात्र को हेय जान जो, द्रव्य दृष्टि बन जायेगा।
सिद्ध स्वपद की प्राप्ति करेगा, शुद्ध मोक्ष पद पायेगा ॥4॥
सम्यक्दर्शन की महिमा को, जो अन्तर में लायेगा।
रत्नत्रय की नाव बैठकर, भव सागर तर जायेगा ॥5॥
गुणस्थान चौदहवां पाकर, तीजा शुक्ल ध्यान ध्याया।
प्रकृति बहात्तर प्रथम समय में, हर कर अनुपम पद पाया ॥6॥
अंतिम समय ध्यान चौथा ध्या, देह नाश कर मुक्त हुए।
जा पहुंचे लोकाग्र शीश पर, मुक्ति वधू से युक्त हुए ॥7॥
तन परमाणु खिरे कपूरवत, शेष रहे नख केश प्रधान।
मायामय तन रच देवों ने, किया अग्नि संस्कार महान ॥8॥
बालि महाबालि मुनियों ने, तप कर यहाँ स्वपद पाया।
नागकुमार आदि मुनियों ने, सिद्ध स्वपद को प्रगटाया ॥9॥
यह निर्वाण भूमि अति पावन, अति पवित्र अति सुखदायी।
जिसने द्रव्य दृष्टि पाई उसको, ही निज महिमा आयी ॥10॥
भरत चक्रवर्ती के द्वारा बने बहात्तर जिन मंदिर।
भूत भविष्यत् वर्तमान तीर्थंकर चौबीसी सुन्दर ॥11॥

प्रतिनारायण रावण की, दुष्टेच्छा हुई न किंचित पूर्ण।
बालि मुनि के एक अंगूठे से, हो गया गर्व सब चूर्ण ||12||
मंदोदरी सहित रावण ने, क्षमा प्रार्थना की तत्क्षण।
जिन मुनियों के क्षमा भाव से, हुआ प्रभावित अंतर मन ||13||
मैं अब प्रभु चरणों की पूजन, करके निज स्वभाव ध्याऊँ।
आत्म ज्ञान की प्रचुर शक्ति पा, निज स्वभाव में मुस्काऊँ ||14||
राग मात्र को हेय जानकर, शुद्ध भावना ही भाऊँ।
एक दिवस ऐसा आए प्रभु, तुम समान मैं बन जाऊँ ||15||
अष्टापद कैलाश शिखर को, बार–बार मेरा वंदन।
भाव शुभाशुभ का अभाव कर, नाश करूँ भव दुख क्रन्दन ||16||
आत्म तत्व का निर्णय करके, प्राप्त करूँ सम्यक् दर्शन।
रत्नत्रय की महिमा पाऊँ धन्य – धन्य हो यह जीवन ||17||
ॐ ह्रीं श्री अष्टापद कैलाश निर्वाण क्षेत्राय पूर्णार्घ्यं नि. / स्वाहा।

अष्टापद कैलाश की महिमा अगम अपार।
निज स्वरूप जो साधते हो जाते भवपार।।

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री अष्टापद कैलाश निर्वाण क्षेत्राय नमः।

81. श्री तीर्थराज सम्मेदशिखर निर्वाण क्षेत्र पूजन

तीर्थराज सम्मेदाचल जय, शाश्वत तीर्थ क्षेत्र जय जय।
मुनि अनंत निर्वाण गये हैं, पाया सिद्ध स्वपद शिवमय ||1||
अजितनाथ, संभव, अभिनन्दन, सुमति, पद्मप्रभ मंगलमय।
श्री सुपार्श्व चन्द्र प्रभ स्वामी, पुष्पदन्त शीतल गुणमय ||2||

जय श्रेयांस विमल, अनंत प्रभु धर्म, शान्ति जिन कुन्थु सदय।
अरह, मल्लि, मुनिसुव्रत स्वामी, नमिजिन, पार्श्वनाथ जय जय||3||
बीस तीर्थंकर मोक्ष पधारे, इस पर्वत से जय जय जय।
महिमा अपरम्पार विश्व में, निज स्वभाव की जय जय जय ||4||
ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्र अत्र अवतर अवतर संवौषट्, ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्र अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।

अगणित सागर पी डाले पर, प्यास न कभी बुझा पाया।
अनुपम सुखमय निर्मल शीतल, समता जल पीने आया।।
तीर्थराज सम्मेदशिखर की, पूजन कर उर हर्षाया।
बीस तीर्थंकर की यह, निर्वाण भूमि लख सुख पाया ||1||
ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्राय जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

परभावों के संतापों में उलझ उलझ अति दुःख पाया।
ज्ञानानन्दी शुद्ध स्वभावी, निज चंदन लेने आया।।तीर्थराज||2||
ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्राय संसारताप विनाशनाय चंदनं नि. स्वाहा।

निज चैतन्य रूप को भूला पर ममत्व में भरमाया।
अक्षय चेतन पद पाने को चरण शरण में मैं आया।।तीर्थराज||3||
ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्ध क्षेत्राय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि. स्वाहा।

परद्रव्यों से राग हटाने का पुरुषार्थ न कर पाया।
शीलस्वभाव शान्तपाने को कामनाश करने आया।।तीर्थराज||4||
ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्राय कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

तीन लोक का अन्न खाकर भी भूख न कभी मिटा पाया।
क्षुधाव्याधि का रोग नशाने निज स्वभाव पाने आया।।तीर्थराज||5||
ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्ध क्षेत्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।
मोह तिमिर के कारण अब तक सम्यक्ज्ञान नहीं पाया।
आत्मदीप की ज्योति जगाने भेद ज्ञान करने आया।।तीर्थराज||6||
ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्ध क्षेत्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।
आत्म ध्यान बिन भव की भीषण ज्वाला में जल दुःख पाया।
अष्टकर्म सम्पूर्ण जलाने ध्यान अग्नि पाने आया।।तीर्थराज||7||
ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्ध क्षेत्राय अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।
पुण्य फलों में तीव्र राग कर, सदा पाप ही उपजाया।
पाप पुण्य से रहित शुद्ध, परमातम पद पाने आया।।तीर्थराज||8||
ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्ध क्षेत्राय महामोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।
है अनादि भव रोग न इसकी, औषधि अब तक कर पाया।
निज अनर्घ पद पाने का अब तो, अपूर्व अवसर आया।।
तीर्थराज सम्मेद शिखर की, पूजन कर उस हर्षाया।
बीस तीर्थंकर की यह, निर्वाण भूमि लख सुख पाया ||9||
ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्ध क्षेत्राय जयमाला पूर्णार्घ्यं नि.।

जयमाला

सम्मेदाचल शीर्ष से, तीर्थंकर मुनिराज।
सिद्ध हुए सम श्रेणी में, ऊपर रहे बिराज ||1||
प्रभु चरणाम्बुज पूज कर, धन्य हुआ मैं आज।
भाव सहित वन्दन करूँ, निज शिवसुख के काज ||2||

जय जय शाश्वत सम्मेदाचल, तीर्थ विश्व में श्रेष्ठ प्रधान।
भूत भविष्यत् वर्तमान के, तीर्थंकर पाते निर्वाण ||3||
परम तपस्या भूमि सुपावन, है अनन्त मुनिराजों की।
शुभ पवित्र निर्वाण धरा है, यह महान जिन राजों की ||4||
लक्ष लक्ष वृक्षों की, हरियाली से पर्वत शोभित है।
वातावरण शान्तमय सुन्दर, लख कर यह जग मोहित है ||5||
शीतल अरु गन्धर्व सललि निर्झर जल धारायें न्यारी।
भाँति–भाँति के पक्षीगण करते हैं कलरव मनहारी ||6||
पर्वत पारसनाथ मनोरम यह सम्मेदशिखर अनुपम।
भाव सहित जो वन्दन करते उनका क्षय होता भ्रमतम ||7||
बीस टोंक पर बीस तीर्थंकर के चरण चिन्ह ललाम।
शेष टोंक पर चार जिनेश्वर श्री मुनियों के चरण ललाम ||8||
प्रथम टोंक है कुन्थु प्रभु की, प्रातः रवि वन्दन करता।
अंतिम पार्श्वनाथ प्रभु की है, संध्या सूर्य नमन करता ||9||
कूट सिद्धवर अजितनाथ का, धवलकूट सुमति जिन का।
अभिनन्दन आनन्दकूटजय, अविचलकूट सुमतिजिन का ||10||
मोहनकूट पद्मप्रभ का है, प्रभु सुपार्श्व का प्रभासकूट।
ललितकूट चंद्रप्रभ स्वामी, पुष्पदंत जिन सुप्रभुकूट ||11||
विद्युतकूट श्री शीतल जिन का, श्री श्रेयांस का संकुल कूट।
श्री सुवीरकुल कूट विमलप्रभ का, नाथ अनन्त स्वयंप्रभु कूट ||12||
जय प्रभु धर्म सुदत्तकूट जय शांति जिनेश कुन्दप्रभुकूट।
कूट ज्ञानधर कुन्थुनाथ का, अरनाथ का नाटक कूट ||13||

संवर कूट मल्लि जिनवर का, निर्जर कूटमुनि सुव्रतनाथ।
कूट मित्रधर श्री नमि जिन का, स्वर्ण भद्र प्रभु पारसनाथ ||14||
सर्व सिद्धवर कूट आदिप्रभु वासुपूज्य मन्दारगिरि।
उर्जयन्त है कूट नेमि प्रभु, सन्मति का महावीर कूट ||15||
चौबीसों तीर्थंकर प्रभु के, गणधर स्वामी सिद्ध भगवान।
गणधर कूट भाव से पूजूँ, मैं भी पाऊँ पद निर्वाण ||16||
बीस कूट से बीस तीर्थंकर ने, पाया है मोक्ष महान।
इसी क्षेत्र से तो असंख्य मुनियों ने, पाया है निर्वाण ||17||
भव्य गीत सम्यक्‌दर्शन का, सहज सुनाई देता है।
रत्नत्रय की महिमा का, फल यहाँ दिखाई देता है ||18||
सिद्ध क्षेत्र है तीर्थ क्षेत्र है, पुण्य क्षेत्र है अति पावन।
भव्य दिव्य पर्वत मालायें, ऊँची नीची मनभावन ||19||
मधुवन में मंदिर अनेक हैं, भव्य विशाल मनोहारी।
वृषभादिक चौबीस जिनेश्वर की, प्रतिमाएं सुखकारी ||20||
नन्दीश्वर की सुन्दर रचना, श्री बाहुबलि के दर्शन।
ऊँचा मानस्तम्भ सुशोभित, पार्श्वनाथ का समवशरण ||21||
पुण्योदय से इस पर्वत की, सफल यात्रा हो जावे।
नरक और पशुगति का निश्चित, बंध नहीं होने पावे ||22||
मैं सम्यक्त्व ग्रहण कर प्रभु, कब तेरह विधि चारित्र धरूँ।
पंच महाव्रत धार साधु बन, इस भू पर निर्भय विचरूँ ||23||
सम्यक्‌दर्शन ज्ञान चारित्र, तप आराधना चार चितधार।
शुद्ध आत्मा अनुभव से, नित प्रति हो स्वरूप साधना अपार ||24||

नित द्वादश भावना भाऊँ चिन्तवन, दृढ़ वैराग्य धरूँ।
भेद ज्ञान कर पर परणति तज, निज परणति में रमण करूँ ||25||
इसी क्षेत्र से महामोक्ष फल, सिद्ध स्वपद को मैं पाऊँ।
अष्टकर्म को नष्ट करूँ तो, परम शुद्ध मैं बन जाऊँ ||26||
मन वच काया शुद्धि पूर्वक, भाव सहित की है पूजन।
यह संसार भ्रमण मिट जाए, हे प्रभु पाऊँ मुक्ति गगन ||27||

ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्ध क्षेत्रेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

श्री सम्मेदशिखर का दर्शन पूजन जो जन करते हैं।
मुक्तिकन्त भगवंत सिद्ध बन भवसागर से तिरते हैं।।

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्ध क्षेत्रेभ्यो नमः

82. श्री चंपापुर निर्वाण क्षेत्र पूजन

वासुपूज्य तीर्थंकर की निर्वाण भूमि चम्पापुर धाम।
शुद्ध हृदय से वंदन कर प्रभु, चरणाम्बुज में करूँ प्रणाम ||1||
जल थल नभ में वासुपूज्य, प्रभु का ही गूंज रहा जयगान।
जल फलादि वसु द्रव्य सजाकर, पूजन करता हूँ भगवान ||2||

ॐ ह्रीं श्री चंपापुर निर्वाण तीर्थक्षेत्र अत्र अवतर अवतर संवौषट्, अत्र तिष्ट तिष्ठ ठः ठः, अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।

पावन समता रस नीर, चरणों में लाया।
मिथ्यात्व पाप का नाश, करने मैं आया।।
चम्पापुर क्षेत्र महान, दर्शन सुखकारी।
जय वासुपूज्य भगवान, प्रभु मंगलकारी ||1||

ॐ ह्रीं श्री चम्पापुर निर्वाण तीर्थ क्षेत्रेभ्यो जन्म जरामृत्यु विनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

समता रस चंदनसार, अति शीतल लाया।
क्रोधादि कषायें नाश, करने मैं आया।।चम्पापुर।।2।।
ॐ ह्रीं श्री चम्पापुर निर्वाण तीर्थ क्षेत्रेभ्यो संसारताप विनाशनाय चंदनं नि. /

त्रैकालिक ज्ञायक भाव, निज अक्षत लाया।
अक्षय निधि पाने नाथ, चरणों में आया।।चम्पापुर।।3।।
ॐ ह्रीं श्री चम्पापुर निर्वाण तीर्थक्षेत्रेभ्यो अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि. /

निज अंतर रूप मनोज्ञ, शील सुमन लाया।
प्रभु विषय वासना, नाश करने मैं आया।।चम्पापुर।।4।।
ॐ ह्रीं श्री चम्पापुर निर्वाण तीर्थक्षेत्रेभ्यो कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि. /

धुन जागी निज ध्रुवधाम, की तो चरु लाया।
अष्टादश दोष विनाश, करने मैं आया।।चम्पापुर।।5।।
ॐ ह्रीं श्री चम्पापुर निर्वाण तीर्थ क्षेत्रेभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि. /

निज आत्मज्ञान का दीप, ज्योतिर्मय लाया।
अज्ञान अंधेरा नष्ट करने, मैं आया।।चम्पापुर।।6।।
ॐ ह्रीं श्री चम्पापुर निर्वाण तीर्थक्षेत्रेभ्यो अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि. /

शिवमय अनुभव रस पूर्ण, उत्तम फल लाया।
निज शुद्ध त्रिकाली सिद्ध, पद पाने आया।।चम्पापुर।।8।।
ॐ ह्रीं श्री चम्पापुर निर्वाण तीर्थ क्षेत्रेभ्यो महामोक्ष फल प्राप्तये फलं नि. /

परिणाम शुद्ध का अर्घ्य, चरणों में लाया।
अष्टम वसुधा का राज्य, पाने को आया।।
चम्पापुर क्षेत्र महान, दर्शन सुखकारी।
जय वासुपूज्य भगवान, प्रभु मंगलकारी ।।9।।
ॐ ह्रीं श्री चम्पापुर निर्वाण तीर्थक्षेत्रेभ्यो अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि. /

जयमाला

सिद्ध क्षेत्र चम्पापुर भरत क्षेत्र में ख्यात।
वासुपूज्य **जिनराज ने किए कर्मवसु**[1] घात ।।1।।
और अनेकों मुनि हुए इसी क्षेत्र से सिद्ध।
विनय सहित वन्दन करूँ, चरणाम्बुज सुप्रसिद्ध ।।2।।
जय जय वासुपूज्य तीर्थंकर, जय चम्पापुर तीर्थ महान।
गर्भ जन्म तप ज्ञान भूमि, निर्वाण क्षेत्र अतिश्रेष्ठ प्रधान ।।3।।
नृप वसुपूज्य सुमाता विजया के नंदन संसार प्रसिद्ध।
वासुपूज्य अभयंकर नामी, बाल ब्रह्मचारी सुप्रसिद्ध ।।4।।
स्वर्ग त्याग माता उर आए, हुई रत्न वर्षा पावन।
जन्म समय सुरपति ने, नव्हन किया सुमेरु पर मनभावन ।।5।।
यह संसार असार जानकर, लघुवय में दीक्षाधारी।
[2]लौकांतिक ब्रह्मर्षि सुरों ने, धन्य ध्वनि थी उच्चारी ।।6।।
सोलह वर्ष रहे छद्मस्थ, किया चम्पापुर वन में ध्यान।
निज स्वभाव से घातिकर्म, विनशाये हुआ ज्ञान कल्याण ।।7।।
केवलज्ञान प्राप्त कर स्वामी, वीतराग सर्वज्ञ हुए।
दे उपदेश भव्य जीवों को, पूर्ण देव विश्वज्ञ हुए ।।8।।
समवशरण रचकर देवों ने, प्रभु का जय जयकार किया।
मुख्य गणधर मंदर ऋषि ने, द्वादशांग उद्धार किया ।।9।।
चम्पापुर के महोद्यान में, अंतिम शुक्ल ध्यान ध्याया।
चउ अघातिया के विनाश से, परम मोक्ष पद प्रगटाया ।।10।।

---

1. आठ कर्म
2. पांचवें स्वर्ग के अन्त भाग में निवास करने वाले ब्रह्मर्षि देवगण

जिन जिनपति जिनदेव जगेष्ट, परम पूज्य त्रिभुवननामी।
मैं अनादि से भव समुद्र में, डूबा पार करो स्वामी ||11||
चम्पापुर में हुए आप के, पांचों कल्याणक सुखकार।
चरण कमल वंदन करता हूँ, जागा उर में हर्ष अपार ||12||
यहाँ अनेकों भव्य जिनालय, प्रभु की महिमा गाते हैं।
जो प्रभु का दर्शन करते, उनके संकट टल जाते हैं ||13||
चम्पापुर के तीर्थक्षेत्र को, बार–बार मेरा वंदन।
सम्यक् दर्शन पाऊँगा मैं, नाश करूँगा भव बंधन ||14||
ॐ ह्रीं श्री चम्पापुर तीर्थ निर्वाण क्षेत्रेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति नि. /

चम्पापुर के तीर्थ की महिमा अपरम्पार।
निज स्वभाव जो साधते हो जाते भवपार।।

इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत्

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री चम्पापुर निर्वाण तीर्थक्षेत्रेभ्यो नमः /

83. श्री गिरनार निर्वाण क्षेत्र पूजन

उर्जयंत गिरनार शिखर, निर्वाण क्षेत्र को करूँ नमन।
नेमिनाथ स्वामी ने पाया, सिद्ध शिला का सिंहासन ||1||
शंबू प्रद्युम्नकुमार आदि, अनिरुद्ध मुनीश्वर को वंदन।
कोटि बहत्तर सात शतक मुनियों ने, पाया मुक्ति सदन ||2||
महाभाग्य से शुभ अवसर, पा करता हूँ प्रभुपद पूजन।
नेमिनाथ की महाकृपा से, पाऊँ मैं सम्यक्‌दर्शन ||3||
ॐ ह्रीं श्री गिरनार निर्वाण तीर्थक्षेत्र अत्र अवतर अवतर संवौषट्, ॐ ह्रीं श्री गिरनार तीर्थक्षेत्र निर्वाण अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, ॐ ह्रीं श्री गिरनार निर्वाण तीर्थक्षेत्र अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।

मैं शुद्ध पावन नीर लाऊँ, भव्य समकित उर धरूँ।
मैं शुभ अशुभ परभाव हर कर, स्वयं को उज्जवल करूँ।।
मैं उर्जयन्त महान गिरि, गिरनार की पूजा करूँ।
मैं नेमि प्रभु के चरण पंकज, युगल निज मस्तक धरूँ ||1||
ॐ ह्रीं श्री गिरनार तीर्थ क्षेत्रेभ्यो जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि. /

मैं सरस चंदन शुद्ध भावों का, सहज अन्तर धरूँ।
मैं शुभ अशुभ भवताप हर कर, स्वयं को शीतल करूँ।मैं.||2||
ॐ ह्रीं श्री गिरनार निर्वाण तीर्थ क्षेत्रेभ्यो संसारताप विनाशनाय चंदनं नि. /

मैं धवल अक्षत भावमय ले, आत्म का अनुभव करूँ।
मैं शुभ अशुभ भव रोग हर कर, स्वयं अक्षय पद वरूँ।मैं.||3||
ॐ ह्रीं श्री गिरनार निर्वाण तीर्थ क्षेत्रेभ्यो अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि. /

मैं चिदानंद अनूप पावन, सुमन मनभावन धरूँ।
मैं लाख चौरासी गुणोत्तर, शील की महिमा वरूँ।मैं.||4||
ॐ ह्रीं श्री गिरनार तीर्थ क्षेत्रेभ्यो कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि. /

मैं सरल सहजानंद मय, नैवेद्य शुचिमय उर धरूँ।
मैं अमल अतुल अखंड चिन्य, सहज अनुभव रस वरूँ।मैं.||5||
ॐ ह्रीं श्री गिरनार निर्वाण तीर्थ क्षेत्रेभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि. /

मैं भेद ज्ञान प्रदीप से, मिथ्यात्व के तम को हरूँ।
मैं पूर्ण ज्ञान प्रकाश, केवलज्ञान ज्योति प्रभा वरूँ।मैं.||6||
ॐ ह्रीं श्री गिरनार निर्वाण तीर्थ क्षेत्रेभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि. /

मैं भावना भवनाशिनी की, धूप निज अन्तर धरूँ।
वसु कर्मरज से मुक्त होकर, निरंजन पद आदरूँ।मैं.||7||
ॐ ह्रीं श्री गिरनार तीर्थ क्षेत्रेभ्यो अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि. ।
मैं शुद्ध भावों के अमृतफल, प्राप्त कर शिवसुख भरूँ।
मैं अतीन्द्रिय आनन्द कंद, अनंत गुणमय पद वरूँ।मैं.||8||
ॐ ह्रीं श्री गिरनार तीर्थ क्षेत्रेभ्यो महामोक्षफल प्राप्तये फलं नि. ।
मैं पारिणामिक भाव ले, अर्घ निज आश्रय करूँ।
मैं शुद्ध सादि अनंत शाश्वत, परमसिद्ध स्वपद वरूँ।
मैं उर्जयन्त महान गिरि, गिरनार की पूजा करूँ।
मैं नेमि प्रभु के चरण पंकज, युगल निज मस्तक धरूँ ||9||
ॐ ह्रीं श्री गिरनार निर्वाया तीर्थ क्षेत्रेभ्यो अनर्घ्य पद प्राप्तये पूर्णार्घ्य नि. ।

जयमाला

उर्जयंत गिरनार, को निशि दिन करूँ प्रणाम।
निज स्वभाव की शक्ति से लूँ सिद्धों का धाम ||1||
प्रथम टोंक पर नेमिनाथ प्रभु के, जिन मंदिर बने विशाल।
स्वर्ण शिखर ध्वज दंड आदि से हैं शोभायान तिहूँकाल ||2||
राजुल गुफा बनी अति सुन्दर, संयम का पथ बतलाती।
वीतराग निर्ग्रंथ भावनामयी, मोक्ष पथ दर्शाती ||3||
चरण चिन्ह ऋषियों के पावन, देते वीतराग संदेश।
नेमिनाथ ने भव्य जनों को, दिया विरागमयी उपदेश ||4||
द्वितीय टोंकपर श्री मुनियों के, चरण कमल हैं दिव्य ललाम।
भाव पूर्वक अर्घ्य चढ़ाकर मैं, लूँ प्रभु निज में विश्राम ||5||

तृतीय टोंक पर ऋषिमुनियों के, चरणाम्बुज अतिशोभित हैं।
दर्शनार्थी दर्शन करके, इन पर होते मोहित हैं ||6||
चौथी टोंक महान कठिन है, इस पर चरण चिन्ह सुखकार।
निज स्वभाव की पावन महिमा, सुरनर मुनि गाते जयकार ||7||
श्री कृष्ण रुक्मणी पुत्र श्री कामदेव प्रद्युम्नकुमार।
ले विराग संयम धर मुक्त हुए, पहुंचे भवसागर पार ||8||
शम्बूकुमार तथा अनिरुद्ध कुमार आदि मुनि मुक्त हुए।
निज स्वभाव की अमर साधना कर, शिवपद संयुक्त हुए ||9||
पंचम टोक नेमि प्रभु की, परम तपस्या भूमि महान।
निज स्वभाव साधन के द्वारा पाया सिद्ध स्वपद निर्वाण ||10||
इन्द्रादिक देवों ने हर्षित होकर, किया जहाँ मोक्ष कल्याण।
कोटि कोटि मुनियों ने तपकर पाया सिद्ध स्वपद अमलान||11||
एक शिला पर प्रभु की अनुपम मूर्ति जहाँ उत्कीर्ण प्रधान।
चरण चिन्ह श्री नेमिनाथ प्रभु के हैं जग में श्रेष्ठ महान ||12||
इसी टोंक से चउ अघातिया कर्मों का करके अवसान।
एक समय में सिद्ध शिला पर नाथ विराजे महा महान ||13||
नेमिनाथ के दर्शन होते चढ़कर दस [1]**सहस्त्र सोपान**।
हो जाती है पूर्ण यात्रा होता उर में हर्ष महान ||14||
फिर जाते हैं सहस्त्राम्र वन जहाँ हुआ था तप कल्याण।
नेमिनाथ के चरणाम्बुज में अर्घ्य चढ़ाते यात्री आन ||15||
जिन दीक्षा लेकर प्रभु जी ने जहाँ घोर तप किया महान।
चार घातिया कर्म नष्ट कर पाया प्रभु ने केवलज्ञान ||16||

1. दस हजार सीढ़ियाँ

राजुल ने भी यही दीक्षा लेकर किया आत्म कल्याण।
और अनेकों यादववंशी आदि हुए मुनि महा महान ||17||
मैं भी प्रभु के पद चिन्हों पर चलकर महामोक्ष पाऊँ।
भेद ज्ञान की ज्योति जलाकर सम्यकदर्शन प्रगटाऊँ ||18||
सम्यक्ज्ञान चरित्र शक्ति का पूर्ण विकास करूँ स्वामी।
निश्चय रत्नत्रय से मैं सर्वज्ञ बनूँ अन्तर्यामी ||19||
चार घातिया कर्म नष्ट कर पद अरहंत सहज पाऊँ।
फिर अघातिया कर्म नाशकर स्वयं सिद्ध प्रभु बन जाऊँ ||20||
पद अनर्घ्य पाने को स्वामी व्याकुल है यह अन्तर्मन।
जल फलादि वसु द्रव्य अर्घ्य चरणों में करता हूँ अर्पण ||21||
नेमिनाथ स्वामी तुम पद पंकज की करता हूँ पूजन।
वीतराग तीर्थंकर तुमको कोटि-कोटि मेरा वन्दन ||22||

ॐ ह्रीं श्री गिरनार निर्वाण तीर्थ क्षेत्रेभ्यो पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

नेमिनाथ निर्वाण भू वन्दूँ बारम्बार।
उर्जयंत गिरनार से हो जाऊँ भवपार।।

इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत्

जाप्यमंत्रः ॐ ह्रीं श्री गिरनार निर्वाण तीर्थ क्षेत्रेभ्यो नमः।

(12) **पवित्र साध्य की प्राप्ति के लिये साधन भी पवित्र होने चाहिये।**

(13) **धन्य हैं वे जीव! जो भोगों को छोड़कर आराधना में लगते हैं।**

84. श्री पावापुर निर्वाण क्षेत्र पूजन

श्री पावापुर तीर्थक्षेत्र को, भक्ति भाव से करूँ प्रणाम।
जल मंदिर में महावीर स्वामी, के चरणकमल अभिराम ||1||
इसी भूमि से मोक्ष प्राप्त कर, पाया सिद्धपुरी का धाम।।
विनय सहित पूजन करता हूँ, पाऊँ निजस्वरूप विश्राम ||2||

ॐ ह्रीं श्री पावापुर तीर्थ क्षेत्र अत्र अवतर अवतर संवौषट्, ॐ ह्रीं श्री पावापुर तीर्थक्षेत्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, ॐ ह्रीं श्री पावापुर तीर्थक्षेत्र अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट्।

प्रभु पद्म सरोवर नीर, प्रासुक लाया हूँ।
मिथ्यात्त्व दोष को क्षीण, करने आया हूँ।।
पावापुर तीर्थ महान, भारत में नामी।
जय महावीर भगवान, त्रिभुवन के स्वामी ||1||

ॐ ह्रीं श्री पावापुर तीर्थ क्षेत्रेभ्यो जन्मजरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि.।

बावन चंदन तरु सार, उत्तम लाया हूँ।
निज शान्त स्वरूप अपार, पाने आया हूँ।।पावापुर||2||

ॐ ह्रीं श्री पावापुर तीर्थ क्षेत्रेभ्यो संसार ताप विनाशनाय चंदनं नि.।

धवलोज्जवल तंदुल पुन्ज, भगवन लाया हूँ।
प्रभु निज शुद्धातम कुन्ज, पाने आया हूँ।।पावापुर||3||

ॐ ह्रीं श्री पावापुर तीर्थक्षेत्रेभ्यो अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि.।

कल्पद्रुम सुमन मनोज्ञ, सुरभित लाया हूँ।
निज शान्त स्वरूप अपार, पाने आया हूँ।।पावापुर||4||

ॐ ह्रीं श्री पावापुर तीर्थ क्षेत्रेभ्यो कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।

चरु विविध भाँति के दिव्य, अनुपम लाया हूँ।
चैतन्य स्वभाव सुभव्य, पाने आया हूँ।।पावापुर।।5।।
ॐ ह्रीं श्री पावापुर तीर्थ क्षेत्रेभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।
ज्योतिर्मय दीप प्रकाश, नूतन लाया हूँ।
अज्ञान मोह का नाश करने, आया हूँ।।पावापुर।।6।।
ॐ ह्रीं श्री पावापुर तीर्थक्षेत्रेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।
भावों की अनुपम धूप, शुचिमय लाया हूँ।
निज आतमरूप अनूप, पाने आया हूँ।।पावापुर।।7।।
ॐ ह्रीं श्री पावापुर तीर्थक्षेत्रेभ्यो अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।
सुर कल्पवृक्ष फल, आज पावन लाया हूँ।
शिवसुखमय मोक्ष स्वराज पाने, आया हूँ।।पावापुर।।8।।
ॐ ह्रीं श्री पावापुर तीर्थ क्षेत्रेभ्यो महामोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।
निज अनर्घ अनूठा देव, पावन लाया हूँ।
निज सिद्ध स्वपद स्वयमेव, पाने आया हूँ।।
पावापुर तीर्थ महान, भारत में नामी।
जय महावीर भगवान, त्रिभुवन के स्वामी ।।9।।
ॐ ह्रीं श्री पावापुर तीर्थ क्षेत्रेभ्यो अनर्घ पद प्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

पावापुर जिन तीर्थ को, नित प्रति करूँ प्रणाम।
महावीर निर्वाण भू, सुन्दर सुखद ललाम ।।1।।
त्रिशलानंदन नृप सिद्धार्थराज के पुत्र सुवीर जिनेश।
कुंडलपुर के राजकुंवर, वैशालिक सन्मति नाथ महेश ।।2।।

गर्भ जन्म कल्याण प्राप्तकर, भी न बनें भोगों के दास।
[1]बाल ब्रह्मचारी रहकर, भवतन भोगों से हुए उदास ।।3।।
तीस वर्ष में दीक्षा ले ली, बारह वर्ष किया तप ध्यान।
पाप पुण्य परभाव नाशकर, प्रभु ने पाया केवलज्ञान ।।4।।
समवशरण रचकर इन्द्रों ने, किया ज्ञानकल्याण महान।
खिरी दिव्यध्वनि विपुलाचलपर, सबने किया आत्मकल्याण।।5।।
तीस वर्ष तक कर विहार, सन्मति पावापुर में आये।
शुक्ल ध्यानधर योग निरोध, किया जगती मंगल गाये ।।6।।
अ इ उ ऋ लृ उच्चारण में लगता है जितना काल।
कर्म प्रकृति पच्चासी क्षय, कर जा पहुंचे त्रिभुवन के भाल।।7।।
कार्तिक कृष्ण अमावस्या का, उषा काल महान हुआ।
वर्धमान अतिवीर वीर श्री महावीर निर्वाण हुआ ।।8।।
धन्य हो गई **पावानगरी**, धन्य हुआ यह भारत देश।
अष्टादश गणराज्यों के, राजाओं ने उत्सव किया विशेष।।9।।
तन कपूरवत उड़ा शेष, नख केश रहे शोभाशाली।
इन्द्रादिक ने मायामय तन, रचकर की थी दीवाली।।10।।
अग्निकुमार सुरों ने, मुकुटानल से तन को भस्म किया।
सभी उपस्थित लोगों ने, भस्मी का सिर पर तिलक लिया।।11।।
पद्म सरोवर बना स्वयं ही, जल मंदिर निर्माण हुआ।
खिले कमल दल बीच सरोवर, प्रभु का जय जयगान हुआ।।12।।
[2]**चतुर्निकाय सुरों** ने आकर, किया मोक्ष कल्याण महान।
वीतरागता की जय गूंजी, वीतरागता का बहुमान।।13।।

1. 5वें बालयति तीर्थंकर
2. (1) वैमानिक, (2) भवनवासि, (3) व्यन्तर, (4) ज्योतिषी–देव

श्वेतभव्य जल मंदिर अनुपम, [1]**रक्तवर्ण का सेतु** प्रसिद्ध।
चरण चिन्ह श्री महावीर के, अति प्राचीन परम सुप्रसिद्ध ||14||
शुक्ल पक्ष में धवल चंद्रिका, की किरणें नर्तन करती।
भव्य जिनालय पद्म सरोवर की, शोभा मन को हरती ||15||
तट पर जिन मंदिर अनेक हैं, दिव्य भव्य शोभाशाली।
महावीर की प्रतिमाएं, खड़गासन पद्मासन वाली ||16||
वृषभादिक चौबीस जिनेश्वर, प्रभु की प्रतिमाएं पावन।
विनय सहित वंदन करता हूँ, भाव सहित दर्शन पूजन ||17||
जीवादिक नव तत्त्वों पर, प्रभु सम्यक् श्रद्धा हो जावे।
आत्म तत्त्व का निश्चय अनुभव इस नर भव में हो जावे ||18||
यही भावना यही कामना, ले एक उद्देश्य प्रधान।
पावापुर की पूजन का फल, करूँ आत्मा का ही ध्यान ||19||
यह पवित्र भू परम पूज्य, निर्वाण भावना की जननी।
जो भी निज का ध्यान लगाए, उसको भवसागर तरणी ||20||

ॐ ह्रीं श्री पावापुर तीर्थ क्षेत्रेभ्यो पूर्णार्घ्यं नि.।

पावापुर के तीर्थ की महिमा अपरम्पार।
निज स्वरूप जो जानते हो जाते भवपार।।

इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्री पावापुर तीर्थ क्षेत्रेभ्यो नमः।

(14) **दु:ख से छूटने का उपाय**
आत्मघात नहीं आत्मसाधना है।

1. लाल रंग के पत्थरों से बना सेतु (पुल)

85. महाअर्घ्य

श्री अरहंत देव को पूजूँ, श्री सिद्ध प्रभु को पूजूँ।
आचार्यों के चरणाम्बुज, श्री उपाध्याय के पद पूजूँ ||1||
सर्व साधु पद पूजूँ, श्री जिन द्वादशांग वाणी पूजूँ।
तीस चौबीसी बीस विदेही, जिनवर सीमंधर पूजूँ ||2||
कृत्रिम अकृत्रिम तीन लोक के, जिनगृह जिन प्रतिमा पूजूँ।
पंचमेरु नन्दीश्वर पूजूँ, तेरह दीप चैत्य पूजूँ ||3||
सोलहकारण दशलक्षण, रत्नत्रय धर्म सदा पूजूँ।
भूत भविष्यत् वर्तमान की, त्रय जिन चौबीसी पूजूँ ||4||
श्री वृषभादिक वीर जिनेश्वर, ऋषि गणधर स्वामी पूजूँ।
श्री जिनराज सहस्त्रनाम, श्री मोक्ष शास्त्र आदि पूजूँ ||5||
श्री पंचकल्याणक पूजूँ, विविध विधान महा पूजूँ।
गौतम स्वामी, कुन्द कुन्द आचार्य, समयसार पूजूँ ||6||
चम्पापुर पावापुर गिरनारी, कैलाश शिखर पूजूँ।
श्री सम्मेद शिखर पर्वत, जिनवर निर्वाण क्षेत्र पूजूँ ||7||
तीर्थंकर की जन्म भूमि, अतिशय अरु सिद्ध क्षेत्र पूजूँ।
श्री जिन धर्म श्रेष्ठ मंगलमय, महाअर्घ्य दे मैं पूजूँ ||8||

ॐ ह्रीं भाव पूजा, भाव वन्दना त्रिकाल, पूजा, त्रिकाल वन्दना, करवी करावी, भावना भाववी, श्री अरहंत जी, सिद्ध जी, आचार्य जी, उपाध्याय जी, सर्व साधु जी पंचपरमेष्ठिभ्यो नमः। प्रथमानुयोग करणानुयोग चरणानुयोग, द्रव्यानुयोगेभ्यो नमः। दर्शनविशुद्धयादि षोडसकारणेभ्यो नमः। उत्तमक्षमादि दशलक्षण धर्मेभ्यो नमः। सम्यक्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यकचारित्र रत्नत्रयेभ्यो नमः। जल विषे, थल विषे आकाश विषे गुफा विषे, पहाड़विषे नगर नगरी विषे

स्थित कृत्रिम अकृत्रिम जिन बिम्बेभ्यो नमः। विदेह क्षेत्र स्थित विद्यमान बीस तीर्थंकरेभ्यो नमः। पांच भरत पांच ऐरावत दश क्षेत्र सम्बन्धी तीस चौबीसी के सात सौ बीस तीर्थंकरेभ्यो नमः। नन्दीश्वरद्वीप स्थित बावन जिन चैत्यालयेभ्यो नमः। श्री कैलाशगिरि, सम्मेदशिखर, चंपापुर, गिरनार, पावापुर तीर्थंकर निर्वाण क्षेत्रेभ्यो नमः। पावागढ़, तुंगीगिरी, गजपंथ, मुक्तागिर सिद्धवर कूट, ऊन बड़वानी पावागिरि कुण्डलपुर सोनागिर राजगृही मन्दारगिरी, द्रोणगिरि अहार जी आदि समस्त सिद्धक्षेत्रेभ्यो नमः। जैनबिद्री मूलबद्री मक्सी, अयोध्या कम्पिलापुरी आदि अतिशय क्षेत्रेभ्यो नमः। समस्त तीर्थंकर पंचकल्याण तीर्थक्षेत्रेभ्यो नमः। श्री गौतमस्वामी, कुन्दकुन्दाचार्य एवं चारण ऋद्धिधारी सात परम ऋषिभ्यो नमः। इति उपर्युक्तेभ्यो सर्वेभ्यो अर्घ्यं नि. स्वाहा।

86. शान्तिपाठ

इन्द्र नरेन्द्र सुरों से पूजित, वृषभादिक श्री वीर महान।
साधु मुनीश्वर ऋषियों द्वारा, वन्दित तीर्थंकर विभुवान ||1||
गणधर भी स्तुति कर हारे, जिनवर महिमा महामहान।
अष्ट प्रातिहार्यों से शोभित, समवशरण में विराजमान ||2||
चौंतीसों अतिशय से शोभित, छयालीस, गुण के धारी।
दोष अठारह रहित जिनेश्वर, श्री अरहंत देव भारी ||3||
तरु [1]अशोक [2]सिंहासन, [3]भामण्डल सुर [4]पुष्पवृष्टि [5]त्रयछत्र।
[6]चौंसठ चमर [7]दिव्य ध्वनि पावन, [8]दुन्दुभि देवोपम सर्वत्र ||4||
मति श्रुति अवधि ज्ञान के धारी, जन्म समय से हे तीर्थेश।
निज स्वभाव साधन के द्वारा, आप हुए सर्वज्ञ जिनेश ||5||

1 से 8 तक – अष्ट प्रातिहार्य

केवलज्ञान लब्धि के धारी, परम पूज्य सुख के सागर।
महा पंचकल्याणक विभूषित, गुण अनन्त के ही आगर ||6||
सकल जगत में पूर्ण शांति हो, शासन हो धार्मिक बलवान।
देश राष्ट्रपुर ग्राम लोक में, सतत शांति हो हे भगवान ||7||
उचित समय पर वर्षा हो, दुर्भिक्ष न चोरी मारी हो।
सर्व जगत के जीव सुखी हो, सभी धर्म के धारी हो ||8||
रोग शोक भय व्याधि न होवे, ईति भीति का नाम नहीं।
परम अहिंसा सत्य धर्म हो, लेश पाप का काम नहीं ||9||
आत्म ज्ञान की महाशक्ति से, परम शांति सुखकारी हो।
ज्ञानी ध्यानी महा तपस्वी, स्वामी मंगलकारी हो ||10||
धर्म ध्यान में लीन रहूँ मैं, प्रभु के पावन चरण गहूँ।
जब तक सिद्ध स्वपद ना पाऊँ, सदा आपकी शरण लहूँ ||11||
श्री जिनेन्द्रा के धर्मचक्र से, प्राणि मात्र का हो कल्याण।
परमशान्ति हो, परम शांति हो, परम शांति हो हे भगवान ||12||

शांतिधारा

कायोत्सर्ग पूर्वक : नौ बार णमोकार मंत्र का जाप्य

87. क्षमापना पाठ

जो भी भूल हुई प्रभु मुझ से, उसकी क्षमायाचना है।
द्रव्य भाव की भूल न हो, अब ऐसी सदा कामना है ||1||
तुम प्रसाद से परम सौख्य हो, ऐसी विनय भावना है।
जिनगुण सम्पत्ति का स्वामी, हो जाऊँ यहीं साधना है ||2||

शुद्धातम का आश्रय लेकर, तुम समान प्रभु बन जाऊँ।
सिद्ध स्वपद पाकर हे स्वामी, फिर न लौट भव में आऊँ ||3||
ज्ञान हीन हूँ क्रिया हीन हूँ, द्रव्य हीन हूँ हे जिनदेव।
भाव सुमन अर्पित हैं, हे प्रभु पाऊँ परम शांति स्वयमेव ||4||
पूजन शांति विसर्जन करके, निज आतम का ध्यान धरूँ।
जिन पूजन का यह फल पाऊँ, मैं शाश्वत कल्याण करूँ ||5||
मंगलमय भगवान वीर प्रभु मंगलमय गौतम गणधर।
मंगलमय श्री कुन्द कुन्द मुनि, मंगल जिनवाणी सुखकर ||6||
सर्व मंगलों में उत्तम है, णमोकार का मंत्र महान।
श्री जिनधर्म श्रेष्ठ मंगलमय, अनुपम वीतराग विज्ञान ||7||

पुष्पांजलिं क्षिपेत्

88. जिनालय दर्शन पाठ

श्री जिन मंदिर झलक, देखते ही होता है हर्ष महान।
सर्व पाप मल क्षय हो जाते, होता अतिशय पुण्य प्रधान ||1||
जिन मंदिर के निकट पहुंचते ही, जगता उर में उल्लास।
धवल शिखर का नील गगन से, बातें करता उच्च निवास ||2||
स्वर्ण कलश की छटा मनोरम, सूर्य किरण आभा सी पीत।
उच्च गगन में जिन ध्वज लहराता, तीनों लोकों को जीत ||3||
तोरण द्वारों की शोभा लख, पुलकित होते भव्य हृदय।
[1]सोपानों से चढ़ मंदिर में, करते हैं प्रवेश निर्भय ||4||
निःसहि निःसहि निःसहि उच्चारण कर, शीश झुका गाते जयगान।
जिनगुण संपत्ति प्राप्ति हेतु, मंदिर में आए हैं भगवान ||5||

1. सीढ़ियाँ

89. जिन दर्शन पाठ

धर्म चक्रपति जिन तीर्थंकर, वीतराग जिनवर स्वामी।
अष्टादश दोषों से विरहित, परम पूज्य अंतर्यामी ||1||
मोह मल्ल को जीता तुमने, केवलज्ञान लब्धि पायी।
विमल कीर्ति की विजय पताका, तीन लोक में लहरायी ||2||
निज स्वभाव का अवलंबन ले, मोह नाश सर्वज्ञ हुए।
इन्द्रिय विषय कषाय जीत कर, निज स्वभाव मर्मज्ञ हुए ||3||
भेद ज्ञान विज्ञान प्राप्त कर, आत्म ध्यान तल्लीन हुए।
निर्विकल्प परमात्म परम पद, पाया परम प्रवीण हुए ||4||
दर्शन ज्ञान वीर्य सुख मंडित, गुण अनंत के पावन धाम।
सर्व ज्ञेय ज्ञाता होकर भी, करते निजानंद विश्राम ||5||
महाभाग्य से जिनकुल, जिनश्रुत जिन दर्शन मैंने पाया।
मिथ्यातम के नाश हेतु, प्रभु चरण शरण में आया ||6||
तृष्णा रूपी अग्नि ज्वाला भव, भव संतापित करती है।
विषय भोग वासना हृदय में, पाप भाव ही भरती है ||7||
इस संसार महादुख सागर से, प्रभु मुझको पार करो।
केवल यही विनय है मेरी, अब मेरा उद्धार करो ||8||

प्रभो आपने ज्ञापक बताया, तिहूँ लोक में नाथ अनुपम जताया।
यही रूप मेरा, मुझे आज भाया, महानन्द मैं, स्वयं में ही पाया।
भव भव भटकते बहुत काल बीता, रहा आज तक मोह मदिरा ही पीता।
फिरा ढूंढता सुख विषयों के माही मिली किन्तु असहन वेदना।
महा भाग्य से आपको देव पाया, तिहूँ लोक में नाथ अनुपम जताया।

श्री आध्यात्म पाठ संग्रह

संकलनकर्ता

उमेशचन्द्र जैन

९१. मोक्षशास्त्र-तत्त्वार्थ सूत्र

आचार्य उमास्वामी

मोक्षमार्गस्थ नेतारं भेत्तारं कर्मभूभृताम्।
ज्ञातारं विश्वतत्त्वानां वंदे तद्गुणलब्धये।।

त्रैकाल्यं द्रव्यषट्कं नव पद सहितं जीव षट्कायलेश्याः।
पंचान्ये चास्तिकाया व्रत समिति गति ज्ञान चारित्र भेदाः||1||
इत्येतन्मोक्षमूलं त्रिभुवनमहितैः प्रोक्तमर्हद्भिरीशैः।
प्रत्येति श्रद्दधाति स्पृशति च मतिमान् यः स वै शुद्ध दृष्टिः||2||
सिद्धे जयप्प सिद्धे, चउविहाराहणाफलं पत्ते।
वंदिता अरंहते, वोच्छं आराहणा कमसो||3||
उज्झोवण मुज्जवणंणिव्वाणं साहणं च णिच्छरणं।
दंसणणाणचरित्तं तवाणमाराहणा भणिया||4||

प्रथम अध्याय

सम्यग्दर्शन ज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः ||1|| तत्त्वार्थ श्रद्धानं सम्यग्दर्शनम् ||2|| तन्निसर्गादधिगमाद्वा ||3|| जीवाजीवास्त्रव बंध संवर निर्जरा मोक्षास्तत्त्वम् ||4|| नाम स्थापना–द्रव्यभावतस्तन्न्यासः ||5|| प्रमाण नयैरधिगमः ||6|| निर्देश स्वामित्वसाधनाधिकरण स्थिति विधानतः||7|| सत्संख्याक्षेत्र–स्पर्शनकालांतरभावाल्पबहुत्वैश्च ||8|| मतिश्रुतावधि मनःपर्यय केवलानि ज्ञानम् ||9|| तत्प्रमाणे ||10|| आद्ये परोक्षम् ||11|| प्रत्यक्षमन्यत् ||12|| मतिः स्मृतिः संज्ञाचिंताभिनिबोध–

इत्यनर्थान्तरम् ||13|| तदिन्द्रियानिन्द्रिय निमित्तम् ||14|| अवग्रहेहावाय धारणा: ||15|| बहु बहुविध क्षिप्रानि: सृतानुक्तध्रुवाणां सेतराणाम् ||16|| अर्थस्य ||17|| व्यंजनस्यावग्रह: ||18|| न चक्षुरनिंद्रियाभ्याम् ||19|| श्रुतं मतिपूर्वं द्वयनेकद्वादशभेदम् ||20|| भवप्रत्ययोऽवधिर्देव–नारकाणाम् ||21|| क्षयोपशमनिमित्त: षड्विकल्प: शेषाणाम् ||22|| ऋजुविपुलमती मन:पर्यय: ||23|| विशुद्ध्य प्रतिपाताभ्यां तद्विशेष: ||24|| विशुद्धि–क्षेत्र–स्वामि– विषयेभ्योऽवधि मन:पर्यययो: ||25|| मतिश्रुतयोर्निबंधो द्रव्येष्वसर्व पर्यायेषु ||26|| रुपिष्ववधे: ||27|| तदनंतभागे मन:पर्ययस्य ||28|| सर्वद्रव्यपर्यायेषु केवलस्य ||29|| एकादीनि भाज्यानि युगपदेकस्मिन्नाचतुर्भ्य: ||30|| मतिश्रुतावधयो विपर्ययश्च ||31|| सदसतोरविशेषाद्य दच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ||32|| नैगम संग्रह–व्यवहारर्जु सूत्र शब्द समभिरुढ़ैवंभूता नया: ||33||

इति तत्त्वार्थधिगमे मोक्षशास्त्रे प्रथमो अध्यायाय नम: ||1||

द्वितीय अध्याय

औपशमिक क्षायिकौ भावौ मिश्रश्च जीवस्य स्वतत्त्वमौदयिक पारिणामिकौ च ||1|| द्वि नवाष्टादशैकविंशतित्रिभेदा यथाक्रमम् ||2|| सम्यक्त्वचारित्रे ||3|| ज्ञान दर्शन दान लाभ भोगोपभोग वीर्याणि च ||4|| ज्ञानाज्ञान दर्शन लब्ध्यश्चतुस्त्रित्रि पंचभेदा: सम्यक्त्व चारित्र संयमासंयमाश्च ||5|| गति कषाय लिंग मिथ्यादर्शनाज्ञानासंयता सिद्ध–लेश्याश्चतुश्चतुस्त्रये–

कैकैकैक– षड्भेदा: ||6|| जीवभव्याभव्यत्वानि च ||7|| उपयोगो लक्षणम् ||8|| सद्विविधोऽष्ट चतुर्भेद: ||9|| संसारिणो मुक्ताश्च ||10|| समनस्कामनस्का: ||11|| संसारिणस्त्र–सस्थावरा: ||12|| पृथिव्यप्तेजोवायुवनस्पतय: स्थावरा: ||13|| द्वींद्रियादयस्त्रसा: ||14|| पंचेद्रियाणि ||15|| द्विविधानि ||16|| निर्वृत्युपकरणे द्रव्येंद्रियम् ||17|| लब्ध्युपयोगौ भावेंद्रियम् ||18|| स्पर्शन रसन घ्राण चक्षु: श्रोत्राणि ||19|| स्पर्शन रस गंध वर्ण शब्दास्तदर्था: ||20|| श्रुतमनिंद्रियस्य ||21|| वनस्पत्यन्तानामेकम् ||22|| कृमि पिपीलिका भ्रमर मनुष्यादिनामेकैक वृद्धानि ||23|| संज्ञिन: समनस्का: ||24|| विग्रहगतौ कर्मयोग: ||25|| अनुश्रेणि गति: ||26|| अविग्रहा जीवस्य ||27|| विग्रहवती च संसारिण: प्राक्चतुर्भ्य: ||28|| एक समयाऽविग्रहा: ||29|| एकंद्वौत्रीन्वाऽनाहरका: ||30|| संमूर्छन गर्भोपपादा जन्म ||31|| सचित्त शीत संवृता: सेतरा मिश्राश्चैकशस्तद्योनय: ||32|| जरायुजांडज पोतानां गर्भ: ||33|| देव नारकाणामुपपाद: ||34|| शेषाणां सम्मूर्च्छनम् ||35|| औदारिकवैक्रियिकाहारक तैजस कार्मणानि शरीराणि ||36|| परं परं सूक्ष्मम् ||37|| प्रदेशतोऽसंख्येयगुणं प्राक् तैजसात् ||38|| अनंतगुणे परे ||39|| अप्रतीघाते ||40|| अनादिसंबंधे च ||41|| सर्वस्य ||42|| तदादीनि भाज्यानि युगपदेकस्मिन्नाचतुर्भ्य: ||43|| निरुपभोगमंत्यम् ||44|| गर्भ सम्मूर्छन जनाद्यम् ||45|| औपपादिकं वैक्रियिकम् ||46|| लब्धि प्रत्ययं च ||47|| तैजसमपि ||48|| शुभंविशुद्धमव्याघाति चाहारकं प्रमत्तसंयतस्यैव ||49|| नारकसम्मूर्च्छिनो नपुंसकानि

||50|| न देवाः ||51|| शेषास्त्रिवेदाः ||52|| औपपादिकचर–मोत्तमदेहाअसंख्येय वर्षा युषोऽनपवर्त्यायुषः ||53||

इति तत्त्वार्थधिगमे मोक्षशास्त्रे द्वितीयो अध्यायाय नमः ।।2।।

तृतीय अध्याय

रत्न शर्करा बालुका पंक धूमतमोमहातमः प्रभाभूमयो घनांबुवाताकाश प्रतिष्ठाः सप्ताधोऽधः ||1|| तासु त्रिंशत–पंचविंशति–पंचदश– दश–त्रि–पंचोनैक नरक शत सहस्त्राणी पंच चैव यथाक्रम ||2|| नारका नित्याशुभतर लेश्यापरिणाम देह वेदना–विक्रियाः ||3|| परस्परोदीरित–दुःखाः ||4|| संक्लिष्टासुरोदीरितदुःखाश्च प्राक् चतुर्थ्याः ||5|| तेष्वेक त्रि सप्त दश सप्तदश द्वाविंशति त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमा सत्त्वानां परा स्थितिः ||6|| जंबूद्वीप लवणोदादयः शुभनामानो द्वीपसमुद्राः ||7|| द्विर्द्विर्विष्कंभाः पूर्व–पूर्वपरिक्षेपिणो वलयाकृतयः ||8|| तन्मध्ये मेरुनाभिर्वृत्तो योजनशत–सहस्त्रविष्कंभो जंबूद्वीपः ||9|| भरत हैमवत हरि विदेह रम्यक हैरण्यवतैरावतवर्षाः क्षेत्राणि ||10|| तद्विभाजिनः पूर्वापरायता हिमवन्महाहिमवन्निषध नील रुक्मिशिखरिणो वर्षधर–पर्वताः ||11|| हेमार्जुन तपनीय वैडूर्य रजत हेममयाः ||12|| मणिविचित्र पार्श्वा उपरिमूले च तुल्यविस्ताराः ||13|| पद्म महापद्म तिगिंछ केशरि महापुंडरीक पुंडरीका ह्रदास्ते–षामुपरि ||14|| प्रथमो योजनसहस्त्रायामस्तदर्ध विष्कम्भो ह्रदः ||15|| दशयोजनावगाहः ||16|| तन्मध्ये योजनं पुष्करम् ||17|| तद्द्विगुण द्विगुणा ह्रदाः पुष्कराणि च ||18|| तन्निवासिन्यो देव्यः श्री ह्री धृति कीर्ति बुद्धि

लक्ष्म्यः पल्योपमस्थितयःससामानिक परिषत्काः ||19|| गंगा सिंधु रोहिद्रोहितास्या हरिद्धरिकान्ता – सीतासीतोदा नारी नरकांता सुवर्ण रूप्यकूला–रक्तारक्तोदाः सरितस्तन्मध्यगाः ||20|| द्वयोर्द्वयोः पूर्वाः पूर्वगाः ||21|| शेषास्त्वपरगाः ||22|| चतुर्दशनदी सहस्त्रपरिवृता गंगा सिंध्वादयो नद्यः ||23|| भरतः षड्विंशति– पंचयोजनशतविस्तारः षट् चैकोनविंशतिभागा योजनस्य ||24|| तद्द्विगुणद्विगुण – विस्तारा वर्षधरवर्षा विदेहांताः ||25|| उत्तरा दक्षिण तुल्याः ||26|| भरतै–रावतयोर्वृद्धि ह्रासौ – षट्समयाभ्यामुत्सर्पिण्यव – सर्पिणीभ्यां ||27|| ताभ्यामपरा भूमयोऽवस्थिताः ||28|| एक द्वि त्रिपल्योपम स्थितयो हैमवतक हारिवर्षक दैवकुरवकाः ||29|| तथोत्तराः ||30|| विदेहेषु संख्ययकालाः ||31|| भरतस्य विष्कंभो जंबूद्वीपस्य नवतिशतभागः ||32|| द्विर्धातकीखंडे ||33|| पुष्करार्द्धे च ||34|| प्राङ्मानुषोत्तरान्मनुष्याः ||35|| आर्याम्लेच्छाश्च ||36|| भरतैरावतविदेहाः कर्मभूमयोऽन्यत्र देवकुरूत्तरकुरुभ्यः ||37|| नृस्थिती परावरे त्रिपल्योपमांतर्मुहर्ते ||38|| तिर्यग्योनिजानां च ||39||

इति तत्त्वार्थाधिगममोक्षशास्त्रे तृतीयोऽध्याय नमः ।।3।।

चतुर्थ अध्याय

देवाश्चतुर्णिकायाः ||1|| आदितस्त्रिषु पीतांत लेश्याः ||2|| दशाष्ट पंच द्वादशविकल्पाः कल्पोपपन्नपर्यंताः ||3|| इन्द्र सामानिक त्रायस्त्रिंश पारिषदात्मरक्ष लोकपालानीक – प्रकीर्णकाभियोग्य – किल्विषिकाश्चैकशः ||4|| त्रायस्त्रिंश

लोकपाल वर्ज्या व्यंतरज्योतिष्का: ||5|| पूर्वयोर्द्वीन्द्रा: ||6|| काय–प्रवीचाराआ–ऐशानात् ||7|| शेषा :स्पर्शरूपशब्दमन: प्रवीचारा: ||8|| परेऽप्रवीचारा: ||9|| भवनवासिनोऽसुरनाग विद्युत्सुपणाग्निवात स्तनितो दधिद्वीपदिक्कुमारा: ||10|| व्यंतरा: किन्नरकिंपुरुषमहोरगगंधर्व यक्ष राक्षसभूतपिशाचा: ||11|| ज्योतिष्का: सूर्याचंद्रमसौ ग्रह नक्षत्र प्रकीर्णक तारकाश्च ||12|| मेरुप्रदक्षिणा नित्यगतयो नृलोके ||13|| तकृत :काल विभाग: ||14|| बहिरवस्थिता: ||15|| वैमानिका: ||16|| कल्पोपपन्ना: कल्पातीताश्च ||17|| उपर्युपरि ||18|| सौधर्मैशान सानत्कुमार माहेन्द्र ब्रह्मब्रह्मोत्तर लांतवकापिष्ठ शुक्र महाशुक्र शतार–सहस्रारेष्वानतप्राणतयो रारणाच्युतयोर्नवसु ग्रैवेयकेषु विजय–वैजयंतजयंतापराजितेषु सर्वार्थसिद्धौ च ||19|| स्थिति–प्रभाव सुख द्युतिलेश्या विशुद्धीन्द्रियावधि विषयतोऽधिका: ||20|| गतिशरीरपरिग्रहाभिमानतो हीना: ||21|| पीतपद्म – शुक्ललेश्या द्वित्रिशेषेषु ||22|| प्राग्ग्रैवेयकेभ्य: कल्पा: ||23|| ब्रह्मलोकालया लौकांतिका: ||24|| सारस्वतादित्य बह्नयरुण गर्दतोय तुषिताव्याबाधारिष्टाश्च ||25|| विजयादिषु द्विचरमा: ||26|| औपपादिक मनुष्येभ्य: शेषास्तिर्यग्यो – नय: ||27|| स्थिति–रसुरनाग–सुपर्ण–द्वीपशेषाणां सागरोपम त्रिपल्योपमार्द्ध हीनमिता: ||28|| सौधर्मैशानयो: सागरोपमेऽधिके ||29|| सानत्कुमारमाहेन्द्रयो :सप्त ||30|| त्रि सप्त नवैकादश–त्रयोदश पंचदशभिरधिकानि तु ||31|| आरणाच्युतादूर्ध्वमेकैकेन नवसु ग्रैवेयकेषु विजयादिषु सर्वार्थसिद्धौ च ||32|| अपरा

पल्योपममधिकम् ||33|| परत :परत: पूर्वापूर्वाऽनन्तरा: ||34|| नारकाणां च द्वितीयादिषु ||35|| दशवर्षसहस्राणि–प्रथमायाम् ||36|| भवनेषु च ||37|| व्यंतराणां च ||38|| परापल्योपममधिकम् ||39|| ज्योतिष्काणां च ||40||तदष्ट भागोऽपरा ||41|| लौकांतिकानामष्टौ सागरोपमाणि सर्वेषाम् ||42||

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशात्रे चतुर्थोऽध्याय नमः ||4||

पंचम अध्याय

अजीवकाया धर्माधर्माकाशपुद्गला :||1|| द्रव्याणि ||2|| जीवाश्च ||3|| नित्यावस्थितान्यरूपाणि ||4|| रूपिण: पुद्गला: ||5|| आ आकाशादेक द्रव्याणि ||6|| निष्क्रियाणि च ||7|| असंख्येया: प्रदेशा धर्माधर्मैक जीवानाम् ||8|| आकाशस्यानंता: ||9|| संख्येयासंख्येयाश्च पुद्गलानाम् ||10|| नाणो: ||11|| लोकाकाशेऽवगाह: ||12|| धर्माधर्मयो: कृत्स्ने ||13|| एकप्रदेशादिषुभाज्या पुद्गलानाम् ||14|| असंख्येयभागादिषु जीवानां ||15|| प्रदेश संहार विसर्पाभ्यां प्रदीपवत् ||16|| गतिस्थित्युपग्रहौ धर्माधर्मयोरूपकार: ||17|| आकाशस्यावगाह: ||18|| शरीरवाड्मन: प्राणापाना: पुद्गलानाम् ||19|| सुखदु :खजीवितमरणोपग्रहाश्च ||20|| पस्परोग्रहो जीवानाम् ||21|| वर्तनापरिणाम क्रिया परत्वापरत्वे च कालस्य ||22|| स्पर्शरसगंधवर्णवन्त: पुद्गला: ||23|| शब्दबंधसौक्ष्म्यस्थौल्य–संस्थानभेदतमश्छाया तपोद्योतवंतश्च ||24|| अणव :स्कंधाश्च ||25|| भेदसंघातेभ्य: उत्पद्यंते ||26|| भेदादणु: ||27|| भेदसंघाताभ्यां चाक्षुष: ||28|| सद्द्रव्य लक्षणम् ||29||

उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं सत् ||30|| तद्भावाव्ययं नित्यं ||31|| अर्पितानर्पितसिद्धेः ||32|| स्निग्धरूक्षत्वादबन्धः ||33|| न जघन्यगुणानाम् ||34|| गुणसाम्ये सदृशानाम् ||35|| द्व्यधिकादि गुणानाम् तु ||36|| बंधेऽधिकौपारिणामिकौ च ||37|| गुणपर्ययवद्द्रव्यम् ||38|| कालश्च ||39|| सोऽनंतसमयः ||40|| द्रव्याश्रया निर्गुणा गुणाः ||41|| तद्भावः परिणामः ||42||

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे पंचामोऽध्याय नमः ||5||

षष्ठम अध्याय

कायवाड्मनः कर्मयोगः ||1|| स आस्रवः ||2|| शुभः पुण्यस्याशुभः पापस्य ||3|| सकषायाकषाययोः– सांपरायिकेर्यापथयोः ||4|| इंद्रियकषाया व्रत क्रियाः पंच चतुः पंच पंचविंशतिसंख्याः पूर्वस्य भेदाः ||5|| तीव्र मंद ज्ञाताज्ञात भावाधिकरण वीर्यविशेषेभ्यस्तद्विशेषः ||6|| अधिकरणं जीवाऽजीवाः ||7|| आद्यंसंरम्भ समारम्भारम्भ योग कृत कारितानुमत कषाय विशेषै स्त्रिस्त्रिस्त्रिश्चतुश्चैकशः ||8|| निर्वर्तना निक्षेप संयोग निसर्गा द्वि चतुर्द्वि त्रि भेदाः परम् ||9|| तत्प्रदोष– निह्नव मात्सर्यान्तरायासादनोपघाता ज्ञानदर्शना– वरणयोः ||10|| दुःख शोकतापाक्रंदन वध परिदेवनान्यात्म– परोभय–स्थानान्य सद्वेद्यस्य ||11|| भूत व्रत्यनुकंपा दान सराग संयमादि योगः क्षांतिः शौचमिति सद्वेद्यस्य ||12|| केवलि श्रुत संघ धर्म देवावर्णवादो दर्शनमोहस्य ||13|| कषायोदया त्तीव्रपरिणामश्चारित्रमोहस्य ||14|| बह्वारंभ परिग्रहत्वं नारकस्यायुषः ||15|| माया तैर्यग्योनस्य ||16|| अल्पारंभ–

परिग्रहत्वं मानुषस्य ||17|| स्वभावमार्दवं च ||18|| निःशीलव्रतत्वं च सर्वेषाम् ||19|| सराग संयम संयमासंयमा– कामनिर्जराबालतपांसि दैवस्य ||20|| सम्यक्त्वं च ||21|| योगवक्रता विसंवादनं चाशुभस्य नाम्नः ||22|| तद्विपरीतं शुभस्य ||23|| दर्शनविशुद्धि र्विनयसंपन्नताशील–व्रतेष्वनतीचारोऽभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगसंवेगौ शक्तितस्त्यागतपसी साधु समाधि – वैयावृत्यकरणमर्हदाचार्य बहुश्रुतप्रवचन भक्तिरावश्यका – परिहाणिर्मार्गप्रभावना प्रवचन वत्सलत्वमिति तीर्थकरत्वस्य ||24|| परात्म–निन्दा–प्रशंसे सदसद्गुणोच्छाद नोद् भावने च नीचैर्गोत्रस्य ||25|| तद्विपर्ययो नीचैर्वृत्त्यनुत्सेकौ चोत्तरस्य ||26|| विघ्न करणमंतरायस्य ||27||

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे षष्ठम अध्यायाय नमः ||6||

सप्तम अध्याय

हिंसाऽनृत–स्तेयाब्रह्म–परिग्रहेभ्यो विरतिर्व्रतम् ||1|| देश– सर्वतोणुऽमहती ||2|| तत्स्थैर्यार्थं भावना पंच पंच ||3|| वाङ्मनोगुप्तीर्यादाननिक्षेपण–समित्यालोकित–पान भोजनानि– पंच ||4|| क्रोध–लोभ–भीरुत्व–हास्य–प्रत्याख्यानान्य–नुवीचि– भाषणं च पंच ||5|| शून्यागार–विमोचितावास–परोपरोधाकरण– भैक्ष्य–शुद्धिसद्धर्माऽविसंवादाः पंच ||6|| स्त्रीरागकथा – श्रवण– तन्मनोहरांगनिरीक्षण–पूर्वरतानुस्मरण–वृष्येष्टरस–स्वशरीर संस्कार–त्यागाः पंच ||7|| मनोज्ञामनोज्ञेन्द्रिय विषय–राग– द्वेष वर्जनानि पंच ||8|| हिंसादिष्विहामुत्रापाया वद्यदर्शनम् ||9|| दुखमेव वा ||10|| मैत्रीप्रमोदकारुण्य माध्यस्थ्यानि च

सत्त्वगुणाधिकक्लिश्य मानाऽविनयेषु ||11|| जगत्काय–स्वभावौ वा संवेग–वैराग्यार्थम् ||12|| प्रमत्त – योगात्प्राणव्यपरोपणं हिंसा ||13|| असद–भिधानमनृतम् ||14|| अदत्तादानं स्तेयम् ||15|| मैथुनमब्रह्म ||16|| मूर्छा परिग्रहः ||17|| निःशल्योव्रती ||18|| अगार्यनगारश्च ||19|| अणुव्रतोऽगारी ||20|| दिग्देशा–नर्थदंडविरतिसामायिक – प्रोषधोपवासोपभोग परिभोग परिमाणातिथि संविभागव्रतसंपन्नश्च ||21|| मारणांतिकीं सल्लेखनां जोषिता ||22|| शंकाकांक्षा–विचिकित्साऽ–दृष्टिप्रशंसासंस्तवाः सम्यग्दृष्टे रतीचाराः ||23|| व्रतशीलेषु पंचपंच यथाक्रमम् ||24|| बंधवधच्छेदातिभारा रोपणान्नपान निरोधाः ||25|| मिथ्योपदेश रहोभ्याख्यान कूटलेखक्रिया न्यासापहार साकारमंत्रभेदाः ||26|| स्तेनप्रयोग–तदाहृतादान विरुद्ध राज्याति क्रमहीनाधिकमानोन्मान–प्रतिरुपकव्यवहाराः ||27|| परविवाहकरणे त्वरिकापरिगृहीता परिगृहीता–गमनानंगक्रीड़ा कामतीव्राभिनिवेशाः ||28|| क्षेत्रवास्तुहिरण्य–सुवर्णधन – धान्यदासी–दासकुप्यप्रमाणा– तिक्रमाः ||29|| ऊर्ध्वाध – स्तिर्यग्व्यतिक्रम–क्षेत्रवृद्धिस्मृ–त्यंतरा–धानानि ||30|| आनयन प्रेष्यप्रयोगशब्दरूपानुपात पुद्गलक्षेपाः ||31|| कंदर्प कौत्कुच्य मौखर्याऽसमीक्ष्याधि करणोपभोग–परिभोगानर्थक्यानि ||32|| योगदुष्प्रणिधानानादरस्मृत्य नुपस्थानानि ||33|| अप्रत्यवेक्षिता प्रमार्जितोत्सर्गादान संस्तरोपक्रमणा नादरस्मृत्यनुपस्थानानि ||34|| सचित्तसंबंध–सम्मिश्राभिषवदुःपक्वाहाराः ||35|| सचित्तनिक्षेपापिधान परव्यपदेश मात्सर्यकालातिक्रमाः ||36||

जीवित मरणाशंसा मित्रानुरागसुखानु–बंधनिदानानि ||37|| अनुग्रहार्थं स्वस्याति–सर्गोदानं ||38|| विधिद्रव्यदातृपात्र–विशेषात्तद्विशेषः ||39||

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे सप्तमोऽध्याय नमः ||7||

अष्टम अध्याय

मिथ्यादर्शनाऽविरति प्रमाद कषाय योगा बंधहेतवः ||1|| सकषाय–त्वाज्जीवः कर्मणोयोग्यान्पुदगलानादत्ते स बंधः ||2|| प्रकृतिस्थित्यनुभागप्रदेशा–स्तद्विधयः ||3|| आद्यो ज्ञानदर्शना वरणवेदनीयमोहनीयायुर्नामगोत्रांतरायाः ||4|| पंचनवद्व्यष्टा–विंशतिचतुर्द्विचत्वारिंशद् द्विपंचभेदा यथाक्रमम् ||5|| मतिश्रुतावधि मनःपर्यय केवलानाम् ||6|| चक्षुरचक्षुरवधि केवलानां निद्रा निद्रानिद्रा प्रचला–प्रचलाप्रचला स्त्यान–गृद्धयश्च ||7|| सद्सद्वेद्ये ||8|| दर्शनचारित्रमोहनीयाकषाय कषाय–वेदनीयाख्यास्त्रिद्विनवषोडश भेदाः सम्यक्त्वमिथ्यात्व–तदुभयान्यकषायकषायौहास्यरत्यरतिशोक भय जुगुप्सा – स्त्री – पुन्नपुंसकवेदाः अनंतानुबंध्यप्रत्याख्यानप्रत्याख्यान–संज्वलन विकल्पाश्चैकशः क्रोधमानमायालोभाः ||9|| नारक तैर्यग्योनमानुष दैवानि ||10|| गति जाति शरीरांगोपांग निर्माणबंधन संघात संस्थान संहनन स्पर्श रस गंध–वर्णानुपूर्व्या–गुरु लघूपघात परघाता तपोद्योतोच्छ्वास विहायोगतयः प्रत्येक शरीर त्रस सुभग सुस्वर शुभ सूक्ष्म पर्याप्ति स्थिरादेय यशःकीर्ति सेतराणि तीर्थंकरत्वं च ||11|| उच्चैर्नीचैश्च ||12|| दानलाभ– भोगोपभोगवीर्याणाम् ||13||

आदितस्तिसृणामंतरायस्य च त्रिंशत्सागरोपम कोटीकोट्य: परा स्थिति: ||14|| सप्ततिर्मोह–नीयस्य ||15|| विंशतिर्नामगोत्रयो: ||16|| त्रय–स्त्रिंशत्सागरोपमाण्यायुष: ||17|| अपरा द्वादशमुहूर्ता वेदनीयस्य ||18|| नामगोत्रयोरष्टौ ||19|| शेषाणामंतर्मुहूर्ता: ||20|| विपाकोनुभव: ||21|| स यथानाम् ||22|| ततश्च निर्जरा ||23|| नामप्रत्यया: सर्वतो योगविशेषात्सूक्ष्मैक क्षेत्रावगाह – स्थिता: सर्वात्म प्रदेशेष्वनंतानंतप्रदेशा: ||24|| सद्वेद्यशुभायर्नाम–गोत्राणि पुण्यम् ||25|| अतोऽन्यत्पापम् ||26||

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रेऽष्टमोध्याय नमः ||8||

नवम् अध्याय

आस्त्रवनिरोध: सवंर: ||1|| स गुप्तिसमिति धर्मानुप्रेक्षापरीषहजय– चारित्रै: ||2|| तपसा निर्जरा च ||3|| सम्यग्योगनिग्रहो गुप्ति: ||4|| ईर्याभाषैणादाननिक्षेपोत्सर्गा: समितय: ||5|| उत्तमक्षमा–मार्दवार्जव–सत्य–शौच–संयम–तपस्त्यागा–किंञ्चन्य–ब्रह्मचर्याणि धर्म: ||6|| अनित्याशरण–संसारै–कत्वान्यत्वशुच्यास्त्रवसंवरनिर्जरा–लोकबोधिदुर्लभ–धर्म स्वाख्यातत्त्वानु चिंतनमनुप्रेक्षा: ||7|| मार्गाच्यवननिर्जरार्थं परिषोढ़व्या: परीषहा: ||8|| क्षुत्पिपासा शीतोष्णदंशम–शकनाग्न्यारति स्त्री चर्यानिषद्याशय्या क्रोश वध याचनाऽलाभ रोग तृणस्पर्श मल सत्कारपुरस्कार–प्रज्ञाऽज्ञानाऽ–दर्शनानि ||9|| सूक्ष्म– साम्पराय छद्मस्थ–वीतराग–योश्चतुर्दश ||10|| एकादश जिने ||11|| बादरसांपराये सर्वे ||12|| ज्ञानावरणे प्रज्ञाज्ञाने ||13|| दर्शनमोहांतराय योरदर्शनालाभौ ||14||

चारित्रमोहे नाम्न्या रति–स्त्रीनिषद्या– क्रोशयाचनासत्कार पुरस्कारा: ||15|| वेदनीये शेषा: ||16|| एकादयोभाज्या युगपदेकस्मिन्नैकोनविंशति: ||17|| सामायिक च्छदोपस्थाना परिहारविशुद्धि सूक्ष्मसांपराय यथाख्यातमिति चारित्रम् ||18|| अनशनावमौदर्य वृत्तिपरिसंख्यान– रसपरित्याग विविक्तशय्यासन कायक्लेशा: बाह्यं तप: ||19|| प्रायश्चित्त–विनयवैयावृत्यस्वाध्याय व्युत्सर्ग–ध्यानान्युत्तरम् ||20|| नव चतुर्दश पंच द्वि भेदा यथाक्रमं प्राग्ध्यानात् ||21|| आलोचना–प्रतिक्रमण–तदुभय–विवेक–व्युत्सर्ग–तपश्छेद–परिहारोपस्थापना: ||22|| ज्ञान–दर्शन–चारित्रोपचारा: ||23|| आचार्योपाध्याय– तपस्वि–शैक्ष्यग्लान–गण–कुल संघ–साधु मनोज्ञानाम् ||24|| वाचना पृच्छनानु–प्रेक्षाम्नाय धर्मोपदेशा: ||25|| बाह्याभ्यंतरोपध्यो: ||26|| उत्तम संहननस्यैकाग्रचिन्ता–निरोधो ध्यानमान्तर्मुहूर्तात् ||27|| आर्त्तरौद्र–धर्म्य–शुक्लानि ||28|| परे मोक्ष–हेतु ||29|| आर्तममनोज्ञस्य संप्रयोगे तद्विप्रयोगाय स्मृति–समन्वाहार: ||30|| विपरीतं मनोज्ञस्य ||31|| वेदनायाश्च ||32|| निदानं च ||33|| तदविरत–देशविरत–प्रमत्तसंयतानाम् ||34|| हिंसाऽनृत–स्तेय–विषयसंरक्षणेभ्यो रौद्रमविरत–देश विरतयो: ||35|| आज्ञापाय–विपाक–संस्थान–विचयाय धर्म्यम् ||36|| शुक्ले चाद्ये पूर्वविद: ||37|| परे केवलिन: ||38|| प्रथक्त्यैकत्व वितर्क– सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाति व्युपरत–क्रियानिवर्तीनि ||39|| त्र्येकयोग–काययोगा–योगानाम् ||40|| एकाश्रये सवितर्क–वीचारे पूर्वे ||41|| अवीचारं द्वितीयं ||42||

वितर्कः श्रुतम् ||43|| वीचारोऽर्थ–व्यंजनयोग–संक्रांतिः ||44|| सम्यकदृष्टि–श्रावक–विरतानन्तवियोजकदर्शनमोह क्षपकोपशमकोपशांत–मोहक्षपक–क्षीणमोह–जिनाः क्रमशोऽसंख्येय–गुण–निर्जराः ||45|| पुलाक–बकुश–कुशीलनिर्ग्रंथस्नातकाः निर्ग्रंथाः ||46|| संयम–श्रुत–प्रतिसेवना–तीर्थ–लिंग–लेश्योपपाद–स्थान–विकल्पतः साध्याः ||47||

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे नवमोऽध्याय नमः ||9||

दशम् अध्याय

मोहक्षयाज्ज्ञानदर्शनावरणांतराय–क्षयाच्च केवलम् ||1|| बंधहेत्वभाव–निर्जराभ्यां कृत्स्न–कर्म–विप्रमोक्षो मोक्षः ||2|| औपशमिकादि–भव्यत्वानां च ||3|| अन्यत्रकेवल–सम्यक्त्वज्ञानदर्शन–सिद्धत्वेभ्यः ||4|| तदनंतरमूर्ध्वं–गच्छत्या लोकान्तात् ||5|| पूर्वप्रयोगादसंगत्वाद्बन्धच्छेदात्तथा–गतिपरिणामाच्च ||6|| आविद्धकुलालचक्रवद् व्यपगत–लेपालाबुवदे रण्डबीजवद–ग्निशिखावच्च ||7|| धर्मास्ति–कायाभावात् ||8|| क्षेत्र–काल–गति–लिंग–तीर्थ–चारित्र–प्रत्येकबुद्ध–बोधित–ज्ञानावगाहनान्तर–संख्याल्पबहुत्वतः साध्याः ||9||

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे दशमोऽध्याय नमः ||9||

कोटिशतं द्वादशचैव कोट्योलक्ष्याण्यशीतिस्त्रयधिकानिचैव।
पंचाशदष्टौ च सहस्रसंख्यामेतद्श्रुतं पंचपदं नमामि ||1||
अरहंत भासियत्थं गणहरदेवेहिं गंथियं सव्वं।
पणमामि भत्तिजुत्तो सुदणाणमहोवयं सिरसा ||2||

अक्षरमात्र पदस्वरहीनं व्यंजन सन्धि–विवर्जित रेफम्।
साधुभिरत्र मम क्षमितव्यं को न विमुह्यति शास्त्र समुद्रे ||3||
दशाध्याये परिच्छिन्ने तत्त्वार्थे पठिते सति।
फलं स्यादुपवासस्य भाषितं मुनि–पुंगवैः ||4||
तत्त्वार्थ सूत्रकर्त्तारं गृद्धपिच्छोपलक्षितम्।
वंदे गणीन्द्रसंजातमुमास्वामि मुनीश्वरम् ||5||
जं सक्कइ तं कीरइ, जं पुण सक्कइ तहेव सद्दहणं।
सद्दहमाणोजीवो पावइ अजरामरं ठाणम् ||6||
तवयरणं वयधरणं, संजमसरणं च जीवदया–करणं।
अंते समाहिमरणं, चउविहदुक्खं णिवारेई ||7||

इति तत्वार्थसूत्र अपरनाम तत्वार्थाधिकगमे मोक्षशास्त्रं समाप्तम्।

(15) जिस घर में गुरुजनों का सम्मान नहीं होता, उस घर के सारे पुण्य क्षीण हो जाते हैं।

(16) उत्तेजित व्यक्ति अपने को कमजोर बनाता है।

(17) प्रभु से दूर रहकर, प्रभुता कैसे मिलेगी ?

(18) एकाग्रता के बिना किसी कार्य में सफलता नहीं मिलती।

91. श्री भक्तामर स्तोत्र

आचार्य मानतुंगाचार्य

भक्तामर – प्रणत – मौलिमणि – प्रभाणा,
मुद्योतकंदलित – पाप – तमो–वितानम्।
सम्यक्प्रणम्य जिन – पाद – युगंयुगादा
बालम्बनं भव–जले पततां जनानाम्॥1॥

यः संस्तुतः सकल–वाङ्मय–तत्त्बोधा–
दुद्भूत – बुद्धि – पटुभिः सुर – लोक–नाथैः।
स्तोत्रैर्जगत्त्रितय – चित्त – हरैरूदारैः
स्तोष्ये किलाहमपि तं प्रथमं जिनेन्द्रम्॥2॥

बुद्धया विनापि विबुधार्चित – पाद–पीठ
स्तोतुं समुद्यत – मतिर्विगतत्रपोऽहम्।
बालं विहाय जलं – संस्थितमिन्दु–बिम्ब–
मन्यः क इच्छति जनः सहसा ग्रहीतुम्॥3॥

वक्तुं गुणान्गुण – समुद्र शशाङ्क–कान्तान्
कस्ते क्षमः सुर – गुरू – प्रतिमोऽपि बुद्धया।
कल्पान्त – काल – पवनोद्धत – नक्र – चक्रं
को वा तरीतुमलम्बुनिधिं भुजाभ्याम्॥4॥

सोऽहं तथापि तव भक्ति – वशान्मुनीश
कर्तुं स्तवं विगत – शक्ति रपि प्रवृतः।
प्रीत्यात्म – वीर्यमविचार्य मृगी मृगेन्द्रं
नाभ्येति किं निज–शिशोः परिपालनार्थम्॥5॥

अल्पश्रुतं श्रुतवतां परिहासधाम
त्वद्भक्तिरेव मुखरीकुरूते बलान्माम्।
यत्कोकिलः किल मधौ मधुरं विरौति
तच्चाम्र चारु–कलिका–निकरैकहेतु॥6॥

त्वत्संस्तवेन भव – सन्तति–सन्निबद्धं
पापं क्षणात्क्षयमुपैति शरीरभाजाम्।
आक्रान्त – लोकमलि – नीलमशेषमांशु
सूर्यांशु – भिन्नमिव शार्वरमन्धकारम्॥7॥

मत्त्वेतिनाथ! तव सस्तवनं मयेद–
मारभ्यते तनु – धियापि तव प्रभावात्।
चेतो हरिष्यति सतां नलिनी – दलेषु
मुक्ता–फलद्युतिमुपैति–ननूद–बिन्दुः॥8॥

आस्तां तवस्तवनमस्त – समस्त – दोषं
त्वत्संकथाऽपि जगतां दुरितानि हन्ति।
दूरे सहस्त्रकिरणः कुरूते प्रभैव
पद्माकरेषु जलजानि विकासभांजि॥9॥

नात्यद्भुतं भुवनभूषण भूतनाथ!
भूतैर्गुणैर्भुवि भवन्त मभिष्टुवन्तः।
तुल्या भवन्ति भवतो ननु तेन किं वा
भूत्याश्रितं य इह नात्मसमं करोति॥10॥

दृष्ट्वा भवन्तमनिमेष विलोकनीयं
नान्यत्र तोषमुपयाति जनस्य चक्षुः।
पीत्वापयः शशिकरद्युति दुग्धसिंधोः
क्षारं जलं जलनिधेरसितुं क इच्छेत् ||11||

यैः शान्त–राग–रूचिभिः परमाणुभिस्त्वं
निर्मापितस्त्रिभुवनैक ललामभूत।
तावन्त एव खलु तेऽप्यणवः पृथिव्यां
यत्ते समानमपरं न हि रूपमस्ति ||12||

वक्त्रं क्व ते सुरनरोरगनेत्रहारि
निःशेष – निर्जित – जगत्त्रितयोपमानम्।
बिम्बं कलङ्कमलिनं क्व निशाकरस्य
यद्वासरे भवति पाण्डु–पलाश–कल्पम् ||13||

संपूर्ण–मण्डल–शशांक–कला–कलाप–
शुभ्रा गुणस्त्रिभुवनं तव लङ्घयन्ति।
ये संश्रितास्त्रिजगदीश्वरनाथमेकं
कस्तान्निवारयति संचरतो यथेष्टम् ||14||

चित्रं किमत्र यदि ते त्रिदशाङ्ग नाभि–
र्नीतं मनागपि मनो न विकारमार्गम्।
कल्पान्त काल मरूता चलिताचलेन
किं मन्दराद्रि शिखरं चलितं कदाचित् ||15||

निर्धूम वर्तिरपवर्जिततैलपूरः
कृत्स्नं जगत्त्रमिदं प्रकटीकरोषि।
गम्यो न जातु मरूतां चलिता चलानां
दीपोऽपरस्त्वमसि नाथ! जगत्प्रकाशः ||16||

नास्तं कदाचिदुपयासि न राहुगम्यः
स्पष्टीकरोषि सहसा युगपज्जगन्ति।
नाम्भोधरोदरनिरूद्धमहाप्रभावः।
सूर्यातिशायि–महिमासि मुनीन्द्र लोके ||17||

नित्योदयं दलितमोहमहान्धकारं
गम्यं न राहु – वदनस्य न वारिदानाम्।
विभ्राजते तव मुखाब्जमनल्पकान्ति
विद्योतयज्जगदपूर्व–शशाङ्क–बिम्बम् ||18||

किं शर्वरीषु शशिनान्हि विवस्वता वा
युष्मन्मुखेन्दु – दलितेषु तमस्सु नाथ।
निष्पन्न – शालि–वन–शालिनि जीव–लोके।
कार्यं कियज्जलधरैर्जल–भार–नम्रैः ||19||

ज्ञानं यथा त्वयि विभाति कृतावकाशं
नैवं तथा हरि–हरादिषु नायकेषु।
तेजः स्फुरन्मणिषु याति यथा महत्वं
नैवं तु काच–शकले किरणाकुलेऽपि ||20||

मन्ये वरं हरि – हरादय एव दृष्टा
दृष्टेषु येषु हृदयं त्वयि तोषमेति।
किं वीक्षितेन भवता भुवि येन नान्यः।
कश्चिन्मनो हरति नाथ भवान्तरेऽपि ||21||

स्त्रीणां शतानि शतशो जनयन्ति पुत्रान्
नान्या सुतं त्वदुपमं जननी प्रसूता।
सर्वा दिशो दधति भानि सहस्त्र–रश्मिं
प्राच्येव दिग्जनयति स्फुरदंशुजालम् ||22||

त्वामामनन्ति मुनयः परमं पुमांस–
मादित्य – वर्णममलं तमसः पुरस्तात्।
त्वामेव सम्यगुपलभ्य जयन्ति मृत्युं
नान्यः शिवः शिव–पदस्य मुनीन्द्र पन्थाः||23||

त्वामव्ययं विभुमचिन्त्यमसंख्यमाद्यं
ब्रह्माणमीश्वरमनन्तमनङ्गकेतुम्।
योगीश्वरं विदित – योगमनेकमेकं
ज्ञान–स्वरूपममलं प्रवदन्ति सन्तः||24||

बुद्धस्त्वमेवविबुधार्चित – बुद्धि – बोधात्
त्व शंकरोसि भुवन – त्रय – शंकरत्वात्।
धातासि धीर शिव – मार्ग – विधेर्विधानाद्
व्यक्तं त्वमेव भगवन्पुरुषोत्तमोऽसि ||25||

तुभ्यं नमस्त्रिभुवनार्तिहराय नाथ।
तुभ्यं नमः क्षिति – तलामल – भूषणाय।
तुभ्यं नमस्त्रिजगतः परमेश्वराय
तुभ्यं नमो जिन भवोदधिशोषणाय ||26||

को विस्मयोऽत्र यदि नाम गुणैरशेषै–
स्तवं संश्रितो निरवकाशतया मुनीश!
दोषैरूपात्तविविधाश्रय – जात – गर्वैः
स्वप्नान्तरेअपि न कदाचिदपीक्षितोऽसि ||27||

उच्चैरशोक–तरू–संश्रितमुन्मयूख–
माभाति रूपममलं भवतो नितान्तम्।
स्पष्टोल्लसत्किरणमस्त–तमो–वितानं
बिम्बं रवेरिव पयोधर–पार्श्ववर्ति ||28||

सिंहासने मणि – मयूख – शिखा – विचित्रे
विभ्राजते तव वपुः कनकावदातम्।
बिम्बं वियद्विलसदंशुलता – वितानं
तुङ्गोदयाद्रिशिरसीव सहस्त्र–रश्मेः ||29||

कुन्दावदात – चल – चामर–चारू–शोभं
विभ्राजते तव वपुः कलधौत – कान्तम्।
उद्यच्छशाङ्क–शुचि–निर्झर–वारि–धार–
मुच्चैस्तटं सुरगिरेरिव शातकौम्भम् ||30||

छत्र–त्रयं तव विभाति शशाङ्क–कान्त–
मुच्चैःस्थितं स्थगित–भानु–कर–प्रतापम्।
मुक्ता–फल–प्रकर–जाल–विवृद्ध – शोभं
प्रख्यापयत्त्रिजगतः परमेश्वरत्वम् ||31||

गम्भीर – तार – रव – पूरित – दिग्विभाग–
स्त्रैलोक्य–लोक–शुभ–सङ्गम–भूति–दक्षः।
सद्धर्मराज – जय – घोषण – घोषकः सन्
खे दुन्दुभिर्ध्वनति ते यशसः प्रवादी ||32||

मन्दार–सुन्दर नमेरू–सुपारिजात–
सन्तानकादि–कुसुमोत्कर–वृष्टि–रुद्धा।
गन्धोद–बिन्दु–शुभ–मन्द–मरूत्प्रपाता।
दिव्या दिवः पतति ते वचसां ततिर्वा||33||

शुम्भत्प्रभा – वलय – भूरि – विभा विभोस्ते
लोक – त्रये – द्युतिमतां द्युतिमाक्षिपन्ती।
प्रोद्यद्दिवाकर – निरन्तर – भूरि – संख्या–
दीप्त्या जयत्यपि निशामपि सोम–सौम्याम्||34||

स्वर्गापवर्ग – गम – मार्ग – विमार्गणेष्टः
सद्धर्म – तत्त्व – कथनैक – पटुस्त्रिलोक्याः।
दिव्यः – ध्वनिर्भवति ते विशदार्थ–सर्व–
भाषा–स्वभाव–परिणाम–गुणैः प्रयोज्य||35||

उन्निद्र – हेम – नव–पङ्कज–पुंज–कान्ती
पर्युल्लसन्नख – मयूख – शिखाभिरामौ।
पादौ पदानि तव यत्र जिनेन्द्र धत्तः
पद्मानि तत्र विबुधाः परिकल्पयन्ति||36||

इत्थं यथा तव विभूतिरभूज्जिनेन्द्र
धर्मोपदेशन – विधौ न तथा परस्य।
यादृक्प्रभा दिनकृतः प्रहतान्धकारा
तादृक्कुतो ग्रह–गणस्य विकासिनोऽपि||37||

श्च्योतन्मदाविल–विलोल–कपोल–मूल–
मत्तभ्रमद्भ्रमर – नाद – विवृद्ध – कोपम्।
ऐरावताभमिभमुद्धतमापतन्तं
दृष्ट्वा भयं भवति नो भवदाश्रितानाम्||38||

भिन्नेभ–कुम्भ–गलदुज्जवल–शोणिताक्त–
मुक्ता – फल – प्रकर–भूषित–भूमि–भागः।
बद्ध – क्रमः क्रम – गतं हरिणाधिपोऽपि
नाक्रामति क्रम–युगाचल–संश्रितं ते||39||

कल्पान्त–काल – पवनोद्धत–वह्नि–कल्पं
दावानलंज्वलितमुज्जवलमुत्स्फुलिङ्गम्
विश्वं जिघत्सुमिव सम्मुखमापतन्तं
त्वन्नाम–कीर्तन–जलं शमयत्यशेषम्||40||

रक्तेक्षणं समद – कोकिल–कण्ठ–नीलं
क्रोधोद्धतं फणिनमुत्फणमापतन्तम्।
आक्रामति क्रम – युगेण निरस्त शङ्कः
त्वन्नाम–नाग दमनी हृदि यस्य पुंसः ||41||

वल्गत्तुरङ्ग – गज – गर्जित – भीमनाद–
माजौ बलं बलवतामपि भूपतीनाम्।
उद्यद्दिवाकर – मयूख – शिखापविद्धं
त्वत्कीर्तनात्तम इवाशु भिदामुपैति ||42||

कुन्ताग्र – भिन्न – गज – शोणित–वारिवाह–
वेगावतार – तरणातुर – योध – भीमे।
युद्धे जयं विजित – दुर्जय – जेय – पक्षा–
स्त्वत्पाद–पंकज–वनाश्रयिणो लभन्ते ||43||

अम्भोनिधौ क्षुभित – भीषण – नक्र – चक्र
पाठीन – पीठ – भय – दोल्वण – वाडवाग्नौ।
रङ्गत्तरङ्ग – शिखर – स्थिर – यान – पात्रा–
स्त्रासं विहाय भवतः स्मरणाद् व्रजन्ति ||44||

उद्भूत–भीषण–जलोदर – भार–भुग्नाः
शोच्यां दशामुपगताश्च्युतजीविताशाः।
त्वत्पाद – पङ्कज–रजोमृत – दिग्ध–देहा
मर्त्या भवन्ति मकरध्वज–तुल्यरूपाः ||45||

आपाद – कण्ठमुरू – श्रृङ्खल – वेष्टिताङ्गा।
गाढं बृहन्निगड – कोटि – निघृष्ट – जङ्घाः
त्वन्नाम – मंत्रमनिशं मनुजाः स्मरन्तः
सद्यः स्वयं विगत–बन्ध–भया भवन्ति ||46||

मत्तद्विपेन्द्र – मृगराज – दवानलाहि
संग्राम–वारिधि–महोदर – बन्धनोत्थम्।
तस्याशु नाशमुपयाति भयं भियेव
यस्तावकं स्तवमिमं मतिमानधीते ||47||

स्तोत्रस्त्रजं तव जिनेन्द्र गुणैर्निबद्धां
भक्त्या मया रुचिर–वर्ण–विचित्र–पुष्पाम्।
धत्ते जनो य इह कण्ठ–गतामजस्त्रं
तं मानतुङ्ग मवशा समुपैति लक्ष्मीः ||48||

93. श्री भक्तामर स्तोत्र (भाषा)

हिन्दी रूपान्तरण कविवर पं. कमल कुमार जी

भक्त अमर नत मुकुट सुमणियों, की सुप्रभा का जो भासक।
पापरुप अतिसघन तिमिर का, ज्ञान–दिवाकर–सा–नाशक।।
भव जल पतित जनों को जिसने, दिया आदि ने अवलम्बन।
उनके चरण–कमल को करते, सम्यक् बारम्बार नमन ||1||
सकल वाङ्मय तत्त्वबोध से, उद्भव पटुतर धीधारी।
उसी इन्द्र की स्तुति से है, वन्दित जग मन हारी।।

अति आश्चर्य की स्तुति करता, उसी [1]**प्रथम जिनस्वामी** की।
जगनामी–सुखधामी तद्भव, शिवगामी अभिरामी की ॥2॥
स्तुति को तैयार हुआ हूँ, मैं निर्बुद्धि छोड़ के लाज।
विज्ञजनों से अर्चित हे प्रभु, मन्द बुद्धि की रखना लाज॥
जल में पड़े चन्द्र–मण्डल को, बालक बिना कौन मतिमान।
सहसा उसे पकड़ने वाली प्रबलेच्छा करता गतिमान ॥3॥
हे जिन! चन्द्रकांत से बढ़कर, तव गुण विपुल अमल अतिश्वेत।
कह न सकें नर हे गुण–सागर, सुर–गुरु के सम बुद्धि समेत॥
मक्र–नक्र–चक्रादि–जन्तु युत, प्रलय पवन से बढ़ा अपार।
कौन भुजाओं से समुद्र के, हो सकता है परले पार ॥4॥
वह मैं हूँ कुछ शक्ति न रखकर, भक्ति प्रेरणा से लाचार।
करता हूँ स्तुति प्रभु तेरी, जिसे न पौर्वापर्य विचार॥
निज शिशु की रक्षार्थ आत्मबल, बिना विचारे क्या न मृगी।
जाती है [2]**मृगपति** के आगे, प्रेम–रंग में हुई रंगी ॥5॥
अल्पश्रुत हूँ श्रुतवानों से, हास्य कराने का ही धाम।
करती है वाचाल मुझे प्रभु, भक्ति आपकी आठों याम॥
करती मधुर गान पिक मधु में, जन जन मनहर अति अभिराम।
उसमें हेतु सरस फल फूलों से, युत हरे–भरे तरु–आम ॥6॥
जिनवर की स्तुति करने से, चिरसंचित भविजन के पाप।
पलभर में भग जाते निश्चित, इधर–उधर अपने ही आप॥
सकल लोक में व्याप्त रात्रि में, भ्रमर सरीखा काला ध्वान्त।
प्रातः रवि की उग्रकिरण लख, हो जाता क्षण में प्राणांत ॥7॥

1. प्रथम तीर्थंकर श्री आदिनाथ स्वामी
2. सिंह

मैं मतिहीन दीन प्रभु तेरी, शुरु करूँ स्तुति अघहान।
प्रभु–प्रभाव ही चित्त हरेगा, सन्तों का निश्चय से मान॥
जैसे कमल–पत्र पर जलकण, मोती जैसे आभावान।
दिखते हैं फिर छिपते हैं, असली मोती में है भगवान ॥8॥
दूर रहे स्त्रोत आपका, जो कि सर्वथा है निर्दोष।
पुण्य–कथा ही किन्तु आपकी, हर लेती है [1]**कल्मष** कोष॥
प्रभा प्रफुल्लित करती रहती, [2]**सर** के कमलों को भरपूर।
फेंका करता सूर्य किरण को, आप रहा करता है दूर ॥9॥
त्रिभुवन तिलक जगत्पति हे प्रभु! सद्गुरुओं के हे गुरुवर्य।
सद्भक्तों को निजसम करते, इसमें नहीं अधिक आश्चर्य॥
स्वाश्रित जन को निजसम करते, धनी लोग धन धरनी से।
नहीं करें तो उन्हें लाभ क्या, उन धनिकों की करनी से ॥10॥
हे अनिमेष विलोकनीय प्रभु, तुम्हें देखकर परम पवित्र।
तोषित होते कभी नहीं है, नयन मानवों के अन्यत्र॥
चन्द्र–किरणसम उज्जवल निर्मल, क्षीरोदधि का करजलपान।
कालोदधि का खारा पानी, पीना चाहे कौन पुमान ॥11॥
जिन जितने जैसे अणुओं से, निर्मापित प्रभु आपकी देह।
थे उतने वैसे अणु जग में, शान्त राग–मय निस्सन्देह॥
हे त्रिभुवन के शिरोभाग के, अद्वितीय आभूषण–रूप।
इसीलिये तो आप सरीखा नहीं दूसरों का है रूप ॥12॥
कहाँ आपका मुख अति सुन्दर, सुर–नर–उरग नेत्र–हारी।
जिसने जीत लिये सब जग के, जितने थे उपमाधारी॥

1. पाप
2. तालाब

कहाँ कलंकी बंक चन्द्रमा, के समान कीट–सा दीन।
जो पलाश सा फीका पड़ता, दिन में होकर के छवि हीन ||13||
तव गुण पूर्ण शशांक कांतिमय, कलाकलापों से बढ़के।
तीन लोक में व्याप रहे हैं जो कि स्वच्छता में चढ़के।।
विचरें चाहे जहाँ कि उनको, जगन्नाथ का एकाधार।
कौन माई का जाया रखता, उन्हें रोकने का अधिकार ||14||
मद की छकीं अमर ललनायें, प्रभु के मन में तनिक विकार।
कर न सकीं आश्चर्य कौन सा, रह जाती हैं मन को मार।।
गिरि–गिर जाते प्रलय पवन से, तो फिर क्या वह मेरु–शिखर।
हिल सकता है रंचमात्र भी, पाकर झंझावत प्रखर ||15||
धूम न बत्ती तेल बिना ही, प्रकट दिखाते तीनों लोक।
गिरि के शिखर उड़ाने वाली, बुझा न सकती मारुत झोंक।।
तिस पर सदा प्रकाशित रहते, गिनते नहीं कभी दिन–रात।
ऐसे अनुपम आप दीप हैं, स्व पर प्रकाशक जग विख्यात ||16||
अस्त न होता कभी न जिसको, ग्रस पाता है राहु प्रबल।
एक साथ बतलाने वाला, तीन लोक का ज्ञान विमल।।
रुकता कभी प्रभाव न जिसका, बादल की आकर के ओट।
ऐसी गौरव–गरिमा वाले, आप अपूर्व [1]**दिवाकर** कोट ||17||
व महातम दलने वाला, सदा उदित रहने वाला।
राहु न बादल से दबता पर, सदा स्वच्छ रहने वाला।।
विश्व प्रकाशक मुखसरोज तव, अधिककांतिमय शांतिस्वरूप।
है अपूर्व जग का शशि मंडल, जगतशिरोमणि शिव का भूप ||18||

1. सूर्य

नाथ आपका मुख जब करता, अंधकार का सत्यानाश।
तब दिन में रवि और रात्रि में, चन्द्र बिंब का विफल प्रयास।।
धान्य–खेत जब धरती तल के, पके हुए हों अति अभिराम।
शोर मचाते जल से लदे हुए, घनों से तब क्या काम ||19||
जैसा शोभित होता प्रभु का, स्व–पर–प्रकाशक उत्तम ज्ञान।
हरिहरादि देवों में वैसा, कभी नहीं हो सकता भान।।
अति ज्योतिर्मय महारतन का, जो महत्व देखा जाता।
क्या वह किरणाकुलित कांच में, अरे कभी देखा जाता ||20||
हरि हरादि देवों का ही मैं, मानूँ उत्तम अवलोकन।
क्योंकि उन्हें देखने भर से, मुझसे तोषित होता मन।।
है परन्तु क्या तुम्हें देखने, से हे स्वामिन मुझको लाभ।
जन्म–जन्म में लुभा न पाते, कोई यह मेरा अमिताभ ||21||
सौ सौ नारी सौ सौ सुत कों, जनती रहती सौ सौ ठौर।
तुम से सुत को जनने वाली जननी महती क्या है और।।
तारागण को सर्व दिशायें धरे नहीं कोई खाली।
पूर्व दिशा ही पूर्ण प्रतापी, दिनपति को जनने वाली ||22||
तुमको परम पुरुष मुनि मानें, विमलवर्ण रवि तमहारी।
तुम्हें प्राप्त कर मृत्युज्जय के, बन जाते जन अधिकारी।।
तुम्हें छोड़कर अन्य न कोई, शिवपुर पथ बतलाता है।
किन्तु विपरीत मार्ग बताकर, भव वन में भटकाता है ||23||
तुम्हें आद्य अक्षय अनन्त प्रभु एकानेक तथा योगीश।
ब्रह्मा ईश्वर या जगदीश्वर विदितयोग मुनिनाथ मुनीश।
विमल ज्ञानमय या मकरध्वज, जगन्नाथ जगपति जगदीश।
इत्यादिक नामों कर माने, सन्त निरन्तर–विभो निधीश ||24||

ज्ञान पूज्य है, अमर आपका, इसीलिये कहलाते **बुद्ध**।
भुवनत्रय के **सुख–सम्वर्धक**, अतः तुम्हीं **शंकर हो शुद्ध**।।
मोक्षमार्ग के **आद्य प्रवर्तक**, अतः **विधाता कहें गणेश**।
तुम सम अवनी पर **पुरुषोत्तम**, और कौन होगा अखिलेश ||25||
तीन लोक के दुख–हरण, करने वाले हे तुम्हें नमन।
भूमण्डल के निर्मल भूषण, आदि जिनेश्वर तुम्हें नमन।।
हे त्रिभुवन के अखिलेश्वर है, तुमको बारम्बार नमन।
भवसागर के शोषक, पोषक भव्य जनों के तुम्हें नमन ||26||
गुण समूह एकत्रित होकर, तुझमें यदि पा चुके प्रवेश।
क्या आश्चर्य न मिल पाये हों, अन्य आश्रय उन्हें जिनेश।।
देव कहे जाने वालों से आश्रित होकर गर्वित दोष।
तेरी ओर न झांक सके वे, स्वप्न मात्र में हे गुणकोष ||27||
उन्नत तरु **अशोक के आश्रित**, निर्मल किरणोन्नतवाला।
रूप आपका दिखता सुन्दर, तमहर मनहर छविवाला।।
वितरण किरण निकर तमहारक, दिनकर घनके अधिक समीप।
नीलांचल पर्वत पर होकर, नीरांजन करता ले दीप ||28||
मणिमुक्ति किरणों से चित्रित, अद्‌भुत शोभित **सिंहासन**।
कांतिमान कंचन सा दिखता, जिस पर तव कमनीय बदन।।
उदयाचल के तुंग शिखर से, मानों सहस्त्र–रश्मिवाला।
किरण–जाल फैलाकर निकला, हो करने को उजियारा ||29||
ढुरते **सुन्दर चंवर** विमल अति, नवलकुन्द के पुष्प–समान।
शोभा पाती देह आपकी रोप्य–धवल–सी आभावान।।
कनकाचल से तुंग श्रृंग से, झर झर झरता है निर्झर।
चन्द्रप्रभा–सम उछल रही हो, मानों उसके ही तट पर ||30||

चन्द्रप्रभा–सम वल्लरियों से, मणि–मुक्तामय अतिकमनीय।
दीप्तिमान शोभित होते हैं, सिर पर **छत्र त्रय** भवदीय।।
ऊपर रहकर सूर्य रश्मि का, रोक रहे हैं प्रखर प्रताप।
मानों वे घोषित करते हैं, त्रिभुवन के परमेश्वर आप ||31||
ऊँचे स्वर से करने वाली, सर्व दिशाओं में गुंजन।
करने वाली तीन लोक के, जन–जन का शुभ सम्मेलन।।
पीट रही हो डंका, सत् धर्म–राज की नित जय–जय।
इस प्रकार बज रही **गगन में, भेरी** तव यश की अक्षय ||32||
कल्पवृक्ष के कुसुम मनोहर, पारिजात एवं मन्दार।
गन्धोदक की मन्द वृष्टि, करते हैं प्रमुदित देव उदार।।
तथा साथ ही नभ से बहती, धीमी धीमी **मन्द पवन**।
पंक्ति बांधकर बिखर रहे हों, मानों तेरे दिव्य–बचन ||33||
तीन लोक की सुन्दरता यदि, मूर्तिमान बनकर आवे।
तव–**भामण्डल की छवि** लखकर, तव सम्मुख शरमा जावे।।
कोटि सूर्य के ही प्रताप सम, किन्तु नहीं कुछ भी आताप।
जिसके द्वारा चन्द्र सुशीतल, होता निष्प्रभ अपने आप ||34||
मोक्ष–स्वर्ग के मार्ग–प्रदर्शक, प्रभुवर तेरे **दिव्य वचन**।
करा रहे हैं, सत्यधर्म के, अमर–तत्व का दिग्दर्शन।।
सुनकर जग के जीव वस्तुतः कर लेते अपना उद्धार।
इस प्रकार परिवर्तित होते, निज निज भाषा के अनुसार ||35||
जगमगाता नख जिसमें शोभें जैसे नभ में चन्द्रकिरण।
विकसित नूतन सरसीरुहसम, हे प्रभु तेरे विमल चरण।।
रखते जहाँ वहाँ सुर रचते हैं स्वर्ण कमल दिव्य ललाम।
अभिनन्दन के योग्य चरणतव, भक्ति रहे उनमें अभिराम ||36||

धर्म–देशना के विधान में, था जिनवर का जो ऐश्वर्य।
वैसा क्या कुछ अन्य कुदेवों, में भी दिखता है सौन्दर्य।।
जो छवि घोर–तिमिर के नाशक, रवि में है देखी जाती।
वैसी ही क्या अतुल कांति, नक्षत्रों में देखी जाती ||37||
लोल कपोलों से झरती है, जहाँ निरन्तर मद की धार।
होकर अति मदमत्त कि जिस पर, करते हैं भौरें गुंजार।।
क्रोधासक्त हुआ यों हाथी, उद्धत ऐरावत सा काल।
देख भक्त छुटकारा पाते, पाकर तब आश्रय तत्काल ||38||
क्षत–विक्षत कर दिये गजों के, जिसने उन्नत गण्डस्थल।
कांतिमान गज–मुक्ताओं से, पाट दिया हो अवनी–तल।।
जिन भक्तों को तेरे चरणों के, गिरि की हो उन्नत ओट।
ऐसा सिंह छलांगे भरकर, क्या उस पर कर सकता चोट ||39||
प्रलय काल की पवन उड़ाकर, जिसे बढ़ा देती सब ओर।
फिकें फुलिंगे ऊपर तिरछे, अंगारों का भी हो जोर।।
भुवनत्रय को निगला चाहे, आती हुई अग्नि भभकार।
प्रभु के नाम मन्त्र जल से वह, बुझ जाती है उस ही बार ||40||
कंठ कोकिला सा अति काला, क्रोधित हो फण किया विशाल।
लाल लाल लोचन करके यदि झपटे नाग महा विकराल।।
नाम रूप तब अहि दमिनी का, लिया जिन्होंने ही आश्रय।
पग रखकर निशंक नाग पर, गमन करें वे नित निर्भय ||41||
जहां अश्व की और गजों की, चीत्कार सुन पड़ती घोर।
शूरवीर नृप की सेनाएं, रव करती हों चारों ओर।।
वहां अकेला शक्तिहीन नर, जप करसुन्दर तेरा नाम।
सूर्य–तिमिर सम शूर–सैन्य का कर देता है काम तमाम ||42||

रण में भालों से बेधित गज, तन से बहता रक्त अपार।
वीर लड़ाकू जहाँ आतुर हैं, रुधिर नदी करने को पार।।
भक्त तुम्हारा हो निराश तब, लख अरिसेना दुर्जय रूप।
तव पादारविन्द पा आश्रय, जयपाता उपहार–स्वरूप ||43||
वह समुद्र कि जिसमें होवें, मच्छ मगर एवं घड़ियाल।
तूफां लेकर उठती होवे, भयकारी लहरें उत्ताल।।
भ्रमर–चक्र में फंसा हुआ हो, बीचों बीच अगर जल–यान।
छुटकारा पा जाते दुख से, करने वाले तेरा ध्यान ||44||
असहनीय उत्पन्न हुआ हो, विकट जलोदर पीड़ा भार।
जीने की आशा छोड़ी हो, देख दशा दयनीय अपार।।
ऐसा व्याकुल मानव पाकर, तेरी पद–रज संजीवन।
स्वास्थ्य लाभ कर बनता उसका, कामदेव सा सुन्दर तन ||45||
लोह–श्रृंखला में जकड़ी हो, नख से शिख तक देह समस्त।
घुटने–जंघे छिले बेड़ियों से अधीर जो है अतित्रस्त।।
भगवान ऐसे बन्दीजन भी, तेरे नाम मन्त्र की जाप।
जपकर गत–बन्धन हो जाते, क्षणभर में अपने ही आप ||46||
वृषभेश्वर के गुणस्तवन का, करते निशिदिन जो चिन्तन।
भय भी भयाकुलित हो उनसे भग जाता है हे स्वामिन्।।
कुंजर–समर–सिंह–शोक–रुज, अहि दावानल कारागार।
इनके अतिभीषण दुःखों का भी, हो जाता क्षण में संहार ||47||
हे प्रभु तेरे गुणोद्यान की, क्यारी से चुन दिव्य–ललाम।
गूंधी विविध वर्ण सुमनों की, गुणमाला सुन्दर अभिराम।।
श्रद्धा सहित भविकजन जो भी, कण्ठाभरण बनाते हैं।
मानतुंग सम निश्चित सुन्दर, मोक्षलक्ष्मी को पाते ||48||

94. श्री महावीराष्टक स्तोत्र

यदीये चैतन्ये मुकुर इव भावाश्चिदचिता:,
समं भांति ध्रौव्य व्यय जनि लसन्तोऽन्तरहिता:।
जगत्साक्षी मार्गप्रगटनपरो भानुरिव यो,
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (न:)॥1॥

जिस प्रकार सम्मुख समागत पदार्थ दर्पण में झलकते हैं उसी प्रकार जिनके केवलज्ञान में समस्त जीव-अजीव अनन्त पदार्थ उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य सहित युगपत् प्रतिभासित होते रहते हैं तथा जिस प्रकार सूर्य लौकिक मार्गों को प्रकाशित करता है, उसी प्रकार मोक्षमार्ग को प्रकाशित करने वाले जो जगत के ज्ञाता-दृष्टा वे भगवान मेरे (हमारे) नयनपथगामी हों अर्थात मुझे (हमें) दर्शन दें।।1।।

अताम्रं यच्चक्षु: कमलयुगलं स्पंदरहितं,
जनान्कोपापायं प्रकटयति वाभ्यंतरमपि,
स्फुटं मूर्तिर्यस्य प्रशतिमयी वातिविमला,
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (न:)॥2॥

स्पन्द (टिमकार) और लालिमा रहित जिनके दोनों नेत्रकमल मनुष्यों को बाह्य और आभ्यंतर क्रोधादि विकारों का अभाव प्रगट कर रहें हैं और जिनकी मुद्रा स्पष्ट रूप से पूर्ण शान्त और अत्यन्त विमल है, वे भगवान महावीर स्वामी मेरे (हमारे) नयनपथगामी हों अर्थात मुझे (हमें) दर्शन दें।।2।।

नमन्ना केंद्राली मुकुटमणि भा जाल जटिलं,
लसत्पादांभोज द्वयमिह यदीयं तनुभृताम।
भवज्वालाशान्त्यै प्रभवति जलं वा स्मृतमपि,
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (न:)॥3॥

नम्रीभूत इन्द्रों के समूह के मुकुटों की मणियों के प्रभाजाल से जटिल (मिश्रित) जिनके कान्तिमान दोनों चरण कमल, स्मरण करने मात्र से ही, शरीरधारियों की सांसारिक दु:ख-ज्वालाओं का जल के समान शमन कर देते हैं : वे भगवान महावीर स्वामी मेरे (हमारे) नयनपथगामी हों अर्थात मुझे (हमें) दर्शन दें।।3।।

यदर्चाभावेन प्रमुदित मना दर्दुर इह,
क्षणादासीत्स्वर्गी गुण गण समृद्ध: सुख निधि:।
लभंते सद्भक्ता: शिव सुख समाजं किमु तदा,
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (न:)॥4॥

जब पूजा करने के भाव मात्र से प्रसन्नचित्त मेंढक ने क्षण भर में गुण-गणों से समृद्ध सुख की निधि स्वर्ग सम्पदा को प्राप्त कर लिया, तब यदि उनके सदभक्त मुक्ति सुख को प्राप्त कर लें तो कौन सा आश्चर्य है। अर्थात उनके सदभक्त अवश्य ही मुक्ति को प्राप्त करेगें। वे भगवान महावीर स्वामी मेरे (हमारे) नयनपथगामी हों अर्थात मुझे (हमें) दर्शन दें॥4॥

कनत्स्वर्णाभासोऽप्यपगत तनुर्ज्ञान निवहो,
विचित्रात्माप्येको नृपति वर सिद्धार्थ तनय:।
अजन्मापि श्रीमान् विगत भव रागोद्भुतगति:,
महावीर स्वामी नयनपथगामी भवतु मे (न:)॥5॥

जो अंतरंग दृष्टि से ज्ञान शरीरी (केवल ज्ञान के पुञ्ज)एवं बहिरंग दृष्टि से तप्त स्वर्ण के समान आभामय शरीरवान होने पर भी शरीर से रहित हैं : अनेक ज्ञेय उनके ज्ञान में झलकते हैं- अत: विचित्र (अनेक) होते हुए भी एक (अखण्ड) हैं महाराज सिद्धार्थ के पुत्र होते हुए भी अजन्में हैं और केवलज्ञान तथा समवशरणादि लक्ष्मी से युक्त होने पर भी संसार के राग से रहित हैं । इस प्रकार के आश्चर्यों के निधान वे भगवान महावीर स्वामी मेरे (हमारे) नयनपथगामी हों अर्थात मुझे (हमें) दर्शन दें।।5।।

यदीया वाग्गंगा विविध नय कल्लोल विमला,
बृहज्ज्ञानांभोभिर्जगति जनतां या स्नपयति।
इदानीमप्येषा बुध जन मरालैः परिचिता,
महावीर स्वामी नयन पथगामी भवतु मे (नः)||6||

जिनकी वाणी रूपी गंगा नाना प्रकार के नय रूपी कल्लोलों के कारण निर्मल है और अगाध ज्ञानरूपी जल से जगत की जनता को स्नान कराती रहती है, तथा इस समय भी विद्वज्जनरूपी हंसों के द्वारा परिचित है, वे भगवान महावीर स्वामी मेरे (हमारे) नयनपथगामी हों अर्थात मुझे (हमें) दर्शन दें ॥6 ॥

अनिर्वारोद्रेकस्त्रिभुवनजयी काम सुभटः,
कुमारावस्थायामपि निजबलाद्येन विजितः।
स्फुरन्नित्यानंद प्रशम पद राज्याय स जिनः,
महावीरस्वामी नयन पथगामी भवतु मे (नः)||7||

अनिर्वार है वेग जिसका और जिसने तीनों लोकों को जीत लिया है, ऐसे कामरूपी सुभट को जिन्होंने स्वयं आत्म-बल से कुमारवस्था में ही जीत लिया है, परिणाम स्वरूप जिनके अनन्त शक्ति का साम्राज्य एवं शास्वत स्फुरायमान हो रहा है : वे भगवान महावीर स्वामी मेरे (हमारे) नयनपथगामी हों अर्थात् मुझे (हमें) दर्शन दें ॥7 ॥

महा मोहातंक प्रशमन परा कस्मिन्भिषग्,
निरापेक्षो बंधुर्विदित महिमा मंगलकरः।
शरण्यः साधूनां भव भय भृता मुत्तम गुणो,
महावीर स्वामी नयन पथगामी भवतु मे (नः)||8||

जो मोहरूपी रोग को शान्त करने के लिए निरपेक्ष वैद्य हैं, जो जीव मात्र के निःस्वार्थ बन्धु हैं, जिनकी महिमा से सारा लोक परिचित है, जो

महामंगल के करने वाले हैं, तथा भव-भय से भयभीत साधुओं को जो शरण हैं : वे उत्तम गणों के धारी वे भगवान महावीर स्वामी मेरे (हमारे) नयनपथगामी होंअर्थात मुझे (हमें) दर्शन दें ॥8 ॥

महावीराष्टकं स्तोत्रं भक्त्या भागेन्दु नाकृतम्।
यः पठेच्छणुयाचापि स याति परमां गतिम् ||9||

जो कविवर भागचंद द्वारा भक्ति पूर्वक रचित इस महावीराष्टक स्तोत्र का पाठ करता है व सुनता है, वह परमगति (मोक्ष) को पाता है ॥9 ॥

टिप्पणी :– मे=मुझे, नः=हमें। महावीराष्टक स्त्रोतव्यक्तिगतपाठ करने पर (मे) का तथा सामूहिक पाठ करने पर (नः) का उच्चारण करना चाहिये।

96. छहढाला

कविवर पं. दौलतरामजी

मंगलाचरण

(सोरठा)

तीन भुवन में सार, वीतराग विज्ञानता।
शिवस्वरूप शिवकार, नमहुँ त्रियोग सम्हारिकैं।।

पहली ढाल

संसार के दुःखों का वर्णन

(चौपाई)

जे त्रिभुवन में जीव अनन्त, सुख चाहैं दुख तैं भयवन्त।
तातैं दुखहारी सुखकार, कहैं सीख गुरु करुणा धार।।

ताहि सुनो भवि मन थिर आन, जो चाहो अपनो कल्याण।
मोह महामद पियो अनादि, भूल आपको भरमत बादि ||1||
तास भ्रमण की है बहु कथा, पै कछु कहूँ कही मुनि जथा।
काल अनंत निगोद मंझार, बीत्यो एकेंद्री तन धार।।
एक श्वास में अठ–दस बार जन्म्यौ मर्‌यो भर्‌यो दुखभार।
निकसि भूमि जल पावक भयो, पवन प्रत्येक वनस्पतिथयो ||2||
दुर्लभ लहि ज्यौं चिंतामणि, त्यौं परजाय लही त्रसतणी।
लट पिपीलि–अलि आदि शरीर, धर–धर मर्‌यो सही बहु पीर।।
कबहूँ पंचेन्द्रिय पशु भयो, मन बिन निपट अज्ञानी थयो।
सिंहादिक सैनी ह्वै क्रूर, निबल पशू हति खाये भूर ||3||
कबहूँ आप भयो बलहीन, सबलनि करि खायो अति दीन।
छेदन भेदन भूख पियास, भार वहन हिम–आतप त्रास।।
बध बन्धन आदिक दुख घने, कोटि जीभ ते जात न भने।
अति संक्लेश भाव तै मर्‌यो, घोर श्वभ्रसागर में पर्‌यो ||4||
तहाँ भूमि परसत दुख इसो, बीछू सहस डसै नहिं तिसो।
तहाँ राध–श्रोणित वाहिनी, कृमि–कुल कलित देह दाहिनी।
सेमर तरु जुत दल असिपत्र, असि ज्यों देह विदारैं तत्र।
मेरु समान लोह गलि जाय, ऐसी शीत उष्णता थाय ||5||
तिल तिल करैं देह के खंड, असुर भिड़ावे दुष्ट प्रचण्ड।
सिंधु–नीर तैं प्यास न जाय, तो पण एक न बूंद लहाय।।
तीन लोक को नाज जु खाय, मिटै न भूख कणा न लहाय।
ये दुख बहु सागर लों सहै, करम–जोग तैं नरगति लहैं ||6||

जननी उदर बस्यौ नव मास, अंग सकुचतैं पाई त्रास।
निकसत जे दु:ख पाये घोर, तिनको कहत न आवे ओर।।
बालपने में ज्ञान न लह्यो, तरुण समय तरुणीरत रह्यो।
अर्द्धमृतक सम बूढ़ापनो, कैसे रूप लखै आपनो ||7||
कभी अकाम निर्जरा करै, भवनत्रिक में सुरतन धरै।
विषयचाह–दावानल, दह्यो, मरत विलाप करत दुख सह्यो।।
जो विमानवासी हूँ थाम, सम्यग्दर्शन बिन दु:ख पाय।
तहँ तैं चय थावर–तन धरै, यों परिवर्तन पूरे करैं ||8||

दूसरी ढाल

सांसारिक दु:खों के मूल कारण

(पद्धरि छन्द)

ऐसे मिथ्यादृग–ज्ञान–चरण वश, भ्रमत भरत दुख जन्म–मरण।
तातैं इनको तजिये, सुजान, सुन तिन संक्षेप कहूँ बखान।।
जीवादि प्रयोजनभूत तत्त्व, सरधैं तिन मांहि विपर्ययत्व।
चेतन को है उपयोग रूप, बिन मूरत चिन्मूरत अनूप ||1||
पुद्‌गल नभ धर्म अधर्म काल, इन तैं न्यारी है जीव चाल।
ताको न जान विपरीतमान, करि करै देह में निज पिछान।।
मैं सुखी दुखी मैं रंक राव, मेरे धन गृह गोधन प्रभाव।
मेरे सुत तिय मैं सबल दीन, बेरूप सुभग मूरख प्रवीन ||2||
तन उपजत अपनी उपज जान, तन नशत आपको नाशमान।
रागादि प्रगट ये दु:ख दैन, तिन ही को सेवत गिनत चैन।।
शुभ–अशुभ बंध के फल मंझार, रति अरतिकरै निज पद बिसार।
आतमहित हेतु विराग ज्ञान, ते लखै आपको कष्टदान ||3||

रोकी न चाह निज शक्ति खोय, शिवरूप निराकुलता न जोय।
याही प्रतीतिजुत कछुक ज्ञान, सो दुखदायक अज्ञान जान।।
इन जुत विषयनि में जो प्रवृत्त, ताको जानों मिथ्याचरित्त्।
यों मिथ्यात्वादि निसर्ग जेह, अब जे गृहीत सुनिये सुतेह ||4||
जो कुगुरु कुदेव कुधर्म सेव, पोषैं चिरदर्शनमोह एव।
अन्तर रागादिक धरैं जेह, बाहर धन अम्बर तैं सनेह।।
धारै कुलिंग लहि महंत भाव ते कुगुरु जन्म–जल उपल नाव।
जे राग–द्वेष मल करि मलीन, वनिता गदादिजुत चिन्हचीन ||5||
ते हैं कुदेव तिनको जु सेव, शठ करत न तिन भव–भ्रमण छेव।
रागादि भाव हिंसा समेत, दर्वित त्रस थावर मरण खेत।।
जे क्रिया तिन्हें जानहू कुधर्म, तिन सरधैं जीव लहैं अशर्म।
याकूँ गृहीत मिथ्यात्व जान, अब सुन गृहीत जो है कुज्ञान ||6||
एकान्तवाद–दूषित समस्त, विषयादिक पोषक अप्रशस्त।
कपिलादि रचित श्रुत को अभ्यास, सो है कुबोध बहु देनत्रास।।
जो ख्याति लाभ पूजादि चाह, धरि करतविविध विध देहदाह।
आतम अनात्म के ज्ञानहीन, जे–जे करनी तन करन छीन ||7||
ते सब मिथ्याचारित्र त्याग, अब आतम के हितपंथलाग।
जगजान भ्रमण को देहुत्याग, अब दौलत निज आतम सुपाग ||8||

तीसरी ढाल

(निश्चय - व्यवहार मोक्षमार्ग तथा सम्यग्दर्शन का स्वरूप एवं महिमा)

आतम को हित है सुख, सो सुख आकुलता बिन कहिये।
आकुलता शिव मांहि न तातैं, शिव–मग लाग्यौ चाहिये ||1||

सम्यग्दर्शन–ज्ञान–चरन, शिव–मग सो दुविध विचारो।
जो सत्यारथ–रूप सो निश्चय, कारण सो व्यवहारो ||2||
परद्रव्यनितैं भिन्न आप में, रुचि सम्यक्त्व भला है।
आप रूप को जान पनो सो, सम्यक् ज्ञान कला है ||3||
आप रूप में लीन रहे थिर, सम्यक् चारित सोई।
अब व्यवहार मोख मग सुनिये, हेतु नियत को होई ||4||
जीव अजीव तत्व अरु आस्रव, बन्ध रु संवर जानो।
निर्जर मोक्ष कहे जिन तिनको, ज्यों का त्यों सरधानों ||5||
है सोई समकित व्यवहारी, अब इन रूप बखानी।
तिनको सुन सामान्य विशेषै, दृढ़ प्रतीति उर आनो ||6||
बहिरातम, अन्तरआतम परमातम जीव त्रिधा है।
देह जीव को एक गिनै, बहिरातम तत्त्व मुधा है ||7||
उत्तम मध्यम जघन त्रिविध के, अंतरआतम ज्ञानी।
द्विविध संघ बिन शुद्ध–उपयोगी, मुनि उत्तम निजध्यानी ||8||
मध्यम अन्तरआतम हैं जो देशव्रती अनगारी।
जघन कहे अविरत समयक्दृष्टि तीनों शिवमगचारी ||9||
सकल निकल परमातम द्वै विध, तिन में घाति निवारी।
श्री **अरहंत सकल** परमातम, लोकालोक निहारी ||10||
ज्ञान शरीरी त्रिविध कर्म–मल, वर्जित **सिद्ध महंता**।
ते हैं निकल अमल परमातम, भोगें शर्म अनन्ता ||11||
बहिरातमता हेय जानि तजि, अंतरआतम हूजै।
परमातम को ध्याय निरंतर जो नित आनंद पूजै ||12||

चेतनता बिन सो **अजीव** है पंच भेद ताके हैं।
जिय पुद्गल को चलन सहाई, **धर्मद्रव्य** अनुरूपी ||14||
सकल द्रव्य को वास जास में, सो **आकाश** पिछानों।
नियत वर्तना निशदिन सो, व्यवहारकाल परिमानो ||15||
यों **अजीव** अब **आस्त्रव** सुनिये, मन वच–काय त्रियोगा।
मिथ्या अविरति अरु कषाय, परमाद सहित उपयोगा ||16||
ये ही आतम को दु:ख कारन, तातैं इनको तजिये।
जीव प्रदेश बन्धे विधि सौं, सो बन्धन कबहूँ न सजिये ||17||
शम–दम ते जो कर्म न आवैं, सो **संवर** आदरिये।
तप बल तै विधि झरन **निर्जरा**, ताहि सदा आचरिये ||18||
सकल कर्म तैं रहित अवस्था, सो शिव थिर सुखकारी।
इह विधि जो सरधा तत्त्वन की, सो **समकित व्यवहारी** ||19||
देव जिनेन्द्र, गुरु परिग्रह बिन, धर्म दयाजुत सारो।
येहु मान समकित को कारण, **अष्ट–अंगजुत** धारो ||20||
वसु मद टारि निवारि **त्रिशठता**, **षट् अनायतन** त्यागो।
शंकादिक वसु दोष बिना, संवेगादिक चित्त पागो ||21||
अष्ट अंग अरु **दोष पच्चीसौं**, तिन संक्षेप हु कहिये।
बिन जानै तैं दोष गुनन को, कैसे तजिये गहिये ||22||
जिन–बच में **शंका न** धार वृष, **भव सुख–वांछा** भानै।
मुनि तन मलिन न देख घिनावै, तत्त्व कुतत्त्व–पिछानै ||23||
निज गुण अरु पर–औगुण ढाकैं, वा निज धर्म बढ़ावे।
कामादिक कर वृषतें चिगते, निज पर को सु दिढ़ावैं ||24||

धर्मी सो गौ–बच्छ प्रीति सम, कर जिन धर्म दिपावै।
इन गुन तैं विपरीत **दोष वसु**[1] तिनको सतत खिपावे ||25||
पिता भूप व **मातुल नृप** जो होय न तो मद ठानै।
मद न **रूप** कौ, मद न **ज्ञान** कौ, **धन बल** को मद भानै ||26||
तप कौ मद न, मद जु **प्रभुता** कौ करै न, सो निज जानै।
मद धारै तो येहि दोष वसु, समकित को मल ठानै ||27||
कुगुरु कुदेव कुवृष[2] सेवक की नहिं प्रशंस उचरे हैं।
जिनमुनि जिनश्रुत बिन कुगुरादिक तिन्हें न नमन करैं हैं ||28||
दोष रहित गुण सहित सुधी जै, सम्यग्दर्श सजै हैं।
चरित मोहवश लेख न संजम पै सुरनाथ जजैं है ||29||
गेही पै गृह में न रचे ज्यों, जल तैं भिन्न कमल है।
नगरनारि को प्यार यथा, कादे में हेम अमल है ||30||
प्रथम नरक बिन षट् भू ज्योतिष, वान भवन षँड नारी।
थावर विकलत्रय पशु में नहीं, उपजत सम्यक् धारी ||31||
तीन लोक तिहुँकाल मांहि, नहिं दर्शन सो सुखकारी।
सकल धरम को मूल यही, इस बिन करनी दु:खकारी ||32||
मोक्षमहल की **परथम सीढ़ी**, या बिन ज्ञान चरित्रा।
सम्यक्ता न लहै, सो **दर्शन, धारो** भव्य पवित्रा ||33||
दौल[3] समझ सुन चेत सयाने, काल वृथा मत खोवै।
यह नरभव फिर मिलन कठिन, है जो सम्यक् नहिं होवै ||34||

1. वसु–8
2. कुधर्म
3. छ: ढाला के रचयिता कविवर दौलतराम जी

चौथी ढाल

(सम्यकदर्शन व एकदेशाचारित्रा का स्वरूपभेद एवं महिमा)

सम्यक् श्रद्धा धारि पुनि, सेवहु सम्यग्ज्ञान।
स्व–पर अर्थ बहु धर्मजुत, जो प्रगटावन भान ||1||

रोला

सम्यक् साथै ज्ञान होय, पै भिन्न अराधो,
लक्षण श्रद्धा जानि दुहु में भेद अबाधो।
सम्यक्कारण जान ज्ञान कारज है सोई।
युगवत् होतैं हू, प्रकाश दीपक तैं होई ||2||
तास भेद दो हैं, परोक्ष परतछि तिन माहीं,
मति श्रुति दोय परोक्ष, **अक्ष**[1] **मनतै**[2] उपजाहीं।
अवधिज्ञान मनपर्जय, दो हैं देश प्रतच्छा,
द्रव्य क्षेत्र परिमान लयि जाने जिय स्वच्छा ||3||
सकल द्रव्य के गुन अनंत, परजाय अनन्ता,
जानै एकै काल प्रगट, **केवलि भगवन्ता**।
ज्ञान समान न आन जगत में, सुख को कारण,
इह परमामृत जन्म जरा, मृतु रोग निवारण ||4||
कोटि जन्म तप तपै, ज्ञान बिन कर्म झरैं जे,
ज्ञानी के छिन मांहि, **त्रिगुप्ति** तैं सहज टरैं ते।
मुनिव्रत धार अनन्त बार, **ग्रीवक**[3] उपजायो,
पै निज आतम ज्ञान बिना, सुख लेश न पायो ||5||

1. 5 इन्द्रियाँ 2. मन 3. स्वर्ग का नाम

तातैं जिनवर कथित, तत्त्व अभ्यास करीजै,
संशय विभ्रम मोह त्याग, आपौ लख लीजै।
यह मानुष पर्याय सुकुल, सुनिवौ जिनवानी,
इहविधि गये न मिलै, सुमणि ज्यौंउदधिसमानी ||6||
धन समाज गज बाज, राज तो काज न आवै,
ज्ञान आपको रूप भये फिर अचल रहावै।
तास ज्ञान को कारण, स्व–पर विवेक बखानों,
कोटि उपाय बनाय, भव्य ताको उर आनो ||7||
जे पूरब **शिव** गये, जाहिं अरु आगे जैहें,
सो सब महिमा ज्ञानतनी, मुनिनाथ कहैं हैं।
विषय चाह **दवदाह**, जगत जन **अरनि** दधावै,
तास उपाय न आन, ज्ञान घनघान बुझावै ||8||
पुण्य–पाप फल माँहिं, हरख विलखो मत भाई,
यह पुद्गल परजाय, उपज विनसै थिर नाई।
लाख बात की बात, यहै निश्चय उर लाओ,
तोरि सकलजगदन्दफन्द, निज आतमध्याओ ||9||
सम्यग्ज्ञानी होय बहुरि, दृढ़ **चारित** लीजै,
एकदेश अरु **सकलदेश**, तसु भेद कहीजै।
त्रस हिंसा को **त्याग**, **वृथा थावर** न संहारै,
पर वधकार कठोर निंद्य, नहिं वयन उचारै ||10||

जल मृतिका बिन और नाहिं कछू गहै अदत्ता,
निजवनिताबिनसकल, नारिसौं रहैं, विरत्ता।
अपनी शक्ति विचार, परिग्रह थोरो राखै,
दश दिशि गमनप्रमानठान, तसुसीमननाखै ||11||
ताहू में फिर ग्राम, गली गृह बाग बजारा,
गमनागमन प्रमान, ठान अन सकल निवारा।
काहू की धनहानि, किसी जय हार न चिन्तै।
देय न सो उपदेश, होय [1]**अघ**वनिज कृषि तै ||12||
कर प्रमाद जल भूमि, वृक्ष पावक न विराधै,
असि धनु हल हिंसोपकरन, नहिं दे जस लाधै।
राग–द्वेष करतार कथा, कबहूँ न सुनीजै,
और हू अनरथदंड हेतु अघ तिन्हैं न कीजै ||13||
धर उर समता भाव, सदा सामायिक करिये,
[2]**परब चतुष्टय** माँहि, पाप तज प्रोषध धरिये।
भोग और उपभोग, नियम करि ममत निवारै,
मुनि को भोजन देय, फेर निज करहिं अहारै ||14||
बारह व्रत के अतीचार, [3]**पन–पन** न लगावै,
मरण समै सन्यास धारि, तसु दोष नशावै।
यौं श्रावक व्रत पाल स्वर्ग सोलम उपजावै,
तँह तै चय नर जन्म पाय, मुनि ह्वै शिव जावै ||15||

1. पाप
2. धार्मिक पर्व – अष्टमी चतुर्दशी
3. पाँच–पाँच

पाँचवी ढाल

(बारह भावना)

चाल छन्द

मुनि सकलव्रती बड़भागी, भव भोगन तैं वैरागी।
वैराग्य उपावन माई, चिन्तै अनुप्रेक्षा भाई ||1||
इन चिन्तत समसुख जागै, जिमि ज्वलन पवन के लागै।
जबही जिय आतम जानै, तब ही जिय शिवसुख ठानै ||2||
जोवन गृह गो धन नारी, हय गय जन आज्ञाकारी।
इन्द्रिय–भोग छिन थाई, [1]**सुरधनु चपला** चपलाई ||3||
सुर असुर खगाधिप जेते, मृग ज्यों हरि काल दले ते।
मणि मंत्र तंत्र बहु होई, मरते न बचावे कोई ||4||
चहुँगति दुःख जीव भरे हैं, **परिवर्तन पंच** करे हैं।
सब विधि संसार असारा तामें सुख नाहिं लगारा ||5||
शुभ–अशुभ करम फल जेते, भोगे जिय एक हि तेते।
सुत दारा होय न सीरी, सब स्वारथ के हैं भीरी ||6||
जल–पय ज्यों जियतन मेला, पै भिन्न–भिन्न नहिं भेला।
तो प्रगट जुदे धनधामा, क्यों ह्वै इकमिलि सुतरामा ||7||
पल रुधिर राध मल थैली, कीकस वसादि तैं मैली।
नव द्वार बहै घिनकारी, अस देह करे किमि यारी ||8||
जे **योगन** की चपलाई, तातें ह्वै आस्रव भाई।
आश्रव दुखकार घनेरे, **बुधिवंत** तिन्हैं निरवेरे ||9||

1. इन्द्रधनुष

जिन पुण्य–पाप नहिं कीना, आतम अनुभव चित दीना।
तिनही विधि आवत रोके, संवर लहि सुख अवलोके ॥10॥
निज काल पाय विधि झरना, तासों निजकाज न सरना।
तप करि जो कर्म खिपावे, सोई शिवसुख दरसावे ॥11॥
किनहूँ न करौ न धरै को, षट्द्रव्यमयी न हरै को।
सो लोक माँहि बिन समता, दुःख सहै जीव नित भ्रमता ॥12॥
अंतिम ग्रीवक लौं की हद, पायी अनन्त बिरियाँ पद।
पर सम्यक्ज्ञान न लाध्यो, दुर्लभ निज में मुनि साधौ ॥13॥
जो भाव मोह तैं न्यारे, दृग ज्ञान व्रतादिक सारे।
सो धर्म जबे जिय धारे, तब ही सुख अचल निहारे ॥14॥
सो धर्म मुनिन करि धरिये, तिनकी करतूति उचरिये।
ताको सुनिये भवि प्रानी, अपनी अनुभूति पिछानी ॥15॥

छठवीं ढाल

(सकलचारित्र एवं स्वरूपाचरणचारित्र का स्वरूप एवं फल)

षट्काय जीव न हनन तैं, सब विधि दरबहिंसा टरी,
रागादि भाव निवार तैं, हिंसा न भावित अवतरी।
जिनके न लेश मृषा न जल, तृन हू बिना दियौ गहैं,
अठ दश सहसविधि[1] शीलधर, चिद्ब्रह्म में नितरमि रहैं ॥1॥
अन्तर चतुर्दस भैद बाहिर, संग दशधातैं टलैं,
परमाद तजि **चौ कर**[2] मही लखि, समिति ईर्या ते चलें।

1. अठारह हजार शील के दोष
2. चार हाथ

जग सुहितकर सब अहितकर, श्रुति सुखद सब संशय हरैं,
भ्रमरोग हर जिनके वचन मुखचन्द्र ते अमृत झरैं ॥2॥
छयालीस दोष बिना सुकुल, श्रावक तनैं घर अशन को,
लैं तप बढ़ावन हेत नहिं तन, पोषते तजि रसन को।
शुचि ज्ञान संजम उपकरन, लखिकै गहैं लखि कै धरैं,
निर्जन्तु थान विलोकि तन मल–मूत्र **श्लेषम** परिहरैं ॥3॥
सम्यक प्रकार निरोध मन–वच काय, आतम ध्यावते,
तिन **सुथिर मुद्रा** देख **मृगगण**, **उपल खाज** खुजावते।
रस रूप गंध तथा फरस अरु शब्द शुभ असुहावने,
तिन में न राग विरोध, पंचेन्द्रिय जयन पद पावने ॥4॥
समता सम्हारै थुति उचारैं, वन्दना जिनदेव को,
नित करैं श्रुति–रति करैं प्रतिक्रम, तजै तन अहमेव को।
जिनके न **न्हौंन** न **दंतधोवन**, लेश अम्बर आवरन,
भू माँहि पिछली रयनि में, कछु शयन एकाशन करन ॥5॥
इक बार दिन में लैं आहार, खड़े अलप निज–पान में,
कचलोंच करत न डरत परिषह, सों लगे निज ध्यान में।
अरि–मित्र महल–मसान कंचन, कांच निन्दन–थुतिकरन,
अर्घावतारन असि प्रहारन में, सदा समता धरन ॥6॥
तप तपैं **द्वादश** धरैं **वृष दश**, **रत्नत्रय** सेवैं सदा,
मुनि साथ में वा एक विचरैं, चहैं नहिं भव–सुख कदा।
यों है सकल संयम चरित, सुनिये स्वरूपाचरन अब,
जिस होत प्रकटै आपनी निधि, मिटै पर की प्रवृत्ति सब ॥7॥

जिन परम **पैनी** सुविधि **छैनी**, डारी अन्तर भेदिया,
वरणादि अरु रागादि तैं, निज भाव को न्यारा किया।
निज मांहि निज के हेतु, निज कर आपको आपै गह्यौ,
गुण–गुणी ज्ञाता–ज्ञान–ज्ञेय, मँझार कछु भेद न रह्यौ ||8||
जहँ ध्यान–ध्याता ध्येय को न विकल्प वच–भेद न जहाँ,
चिद्भाव कर्म चिदेश कर्ता, चेतना किरिया तहाँ।
तीनों अभिन्न अखिन्न सुध, उपयोग की निश्चल दशा,
प्रगटी जहाँ दृग–ज्ञान–व्रत, ये तीनधा एकै लसा ||9||
परमाण–नय–निक्षेप को, न उद्योत अनुभव में दिखै,
दृगज्ञान सुख बलमय सदा, नहिं आन भाव जु मो विषै।
मैं साध्य साधक मैं अबाधक, कर्म अरु तसु फलनि तैं,
चित्पिंड चंड अखंड सुगुण–करंड, च्युत पुनिकलनि तैं ||10||
योंचिन्त्य निज में थिरभये, तिन अकथ जो आनंद लह्यौ,
सो इन्द्र नाग नरेन्द्र वा, अहमिन्द्र के नाहीं कह्यौ।
तब ही शुक्ल ध्यानाग्नि करि, चउघाति विधि कानन दह्यौ,
सब लख्यौ केवलज्ञान करि, भविलोककों शिवमग कह्यौ ||11||
पुनघाति शेष अघाति विधि, छिनमांहि **अष्टम भू**[1] बसै,
वसुकर्म विनसैं, सुगुण वसु, सम्यक्त्व आदिक सब लसै।
संसार खार अपार, पारावार तरि तीरहिं गये,
अविकार अचल अरूप शुधि, चिद्रूप अविनाशी भये ||12||
निज मांहि लोक अलोक, गुण परजाय प्रतिबिंबित भये,
रहि हैं अनन्तानन्त काल, यथा तथा शिव परिणये।

1. मोक्ष

धनि धन्य हैं जे जीव नरभव, पाय यह कारज किया,
तिन ही अनादि भ्रमण पंचप्रकार तजि वरसुख लिया ||13||
मुख्योपचार दुख भेद यों, बड़भागि रतनत्रय धरैं,
अरु धरेंगे ते शिव लहैं, जिन सुयश–जल जग–मल हरें।
इम जानि आलसहानि, साहस–ठानि यह सिख आदरो,
जबलों न रोग जरा गहै, तबलो झटिति निजहित करो ||14||
यह राग–आग दहै सदा, तातैं समामृत सेइये,
चिर भजे विषय–कषाय अब तो त्याग निज–पद बेइये।
कहा रच्यौ पर–पद में न तेरो, पद यहै क्यों दुख सहे,
अब **दौल**[1]! होउ सुखी स्व–पद रचि, दावमत चूको यहै ||15||

दोहा

इक नव वसु इक वर्षकी, तीज शुक्ल बैसाख,
कर्‌यो तत्त्व उपदेश यह, लखि बुधजन की भाख।
लघु–धी तथा प्रमाद तै, शब्द अर्थ की भूल,
सुधीसुधार पढ़ो सदा, जो पावो भव–कूल ||16||

97. समाधिमरण भाषा

कविवर पं. सूरचन्द जी

(नरेन्द्र छन्द)

बन्दो श्री अरहंत, परमगुरु, जो सबको सुखदाई।
इस जग में दुःख जो मैं भुगते, सो तुम जानो राई।।

1. छः ढाला के रचयिता कविवर पं. दौलत राम जी

अब मैं अरज करूँ प्रभु तुमसे, कर समाधि उर मांहि।
अन्त समय में यह वर मांगू, सो दीजै जग राई ||1||
भव–भव में तन धार नये मैं, भव भव शुभ संग पायो।
भव–भव में नृप रिद्ध लई मैं, मात पिता सुत पायो।।
भव–भव में तन पुरुष–तनों धर, नारी हूँ तन लीनो।
भव–भव में मैं भयो नपुंसक, आतमगुण नहिं चीनों ||2||
भव–भव में सुरपदवी पाई, ताके सुख अति भोगे।
भव–भव में गति नरकतनी धर, दुख पाये विधि योगे।।
भव–भव में तिर्यंच योनिधर, पायो दुःख अति भारी।
भव–भव में साधर्मीजन को, संग मिल्यो हितकारी ||3||
भव–भव में जिन पूजन कीनो, दान सुपात्रहिं दीनो।
भव–भव में मैं समवशरण में, देख्यो जिनगुण भीनो।।
एती वस्तु मिलि भव भव में, सम्यकगुण नहिं पायो।
ना समाधियुत मरण कियो मैं, तातैं जग भरमायो ||4||
काल अनादि भयो जग भ्रमते, सदा कुमरणहिं कीनों।
एक बार हूँ सम्यकयुत मैं, निज आतम नहिं चीनो।।
जो निजपर को ज्ञान होय तो, मरण समय दुःख काँई।
देह विनाशी मैं निजभासी, ज्योति स्वरूप सदा ही ||5||
विषयकषायन के वश होकर, देह आपनो जान्यो।
कर मिथ्या सरधान हिये विच, आतम नाहिं पिछान्यो।।
यों क्लेश हियधार मरणकर, चारों गति भरमायो।
सम्यकदर्शन–ज्ञान–चरन ये हिरदे में नहिं लायो ||6||
अब या अरज करूँ प्रभु सुनिये, मरण समय यह मांगो।
रोग जनित पीड़ा मत होवो, अरु कषाय मत जागो।।

ये मुझ मरण समय दुःखदाता, इन हर साता कीजै।
जो समाधियुत मरण होय मुझ, अरु मिथ्यामद छीजै ||7||
यह तन सात कुधातमई है, देखत ही घिन आवै।
चर्म लपेटी ऊपर सो है, भीतर विष्टा पावै।।
अति दुर्गन्ध अपावनसों यह मूरख प्रीति बढ़ावै।
देह विनासी, जिय अविनाशी नित्यस्वरूप कहावै ||8||
यह तन जीर्ण कुटीसम आतम, यातैं प्रीति न कीजै।
नूतन महल मिले जब भाई, तब यामैं क्या छीजै।।
मृत्यु होने से हानि कौन है, याको भय मत लावो।
समता से जो देह तजोगे, तो शुभतन तुम पावो ||9||
मृत्यु मित्र उपकारी तेरो, इस अवसर के मांही।
जीरन तन से देत नयो यह, या सम साहू नाहीं।।
या सेती इस मृत्यु समय पर, उत्सव अति ही कीजै।
क्लेश भाव को त्याग सयाने, समता भाव धरीजे ||10||
जो तुम पूरब पुण्य किये हैं, तिनको फल सुखदाई।
मृत्युमित्र बिन कौन दिखावे, स्वर्ग सम्पदा भाई।।
राग रोष को छोड़ सयाने, सात व्यसन दुखदाई।
अन्त समय में समता धारो, परभव पन्थ सहाई ||11||
कर्म महादुठ बैरी मेरो, तासेती दुःख पावै।
तन पिंजर में बंद किये मोहि, यासों कौन छुड़ावै।।
भूख तृषा दुःख आदि अनेकन, इस ही तन में गाढ़े।
मृत्युराज अब आय दयाकर, तन पिंजर सों काढ़े ||12||
नाना वस्त्राभूषण मैंने इस तन को पहराये।
गन्ध सुगन्धित अतर लगाये, षटरस असन कराये।।

रात दिना मैं दास होयकर, सेव करी तनकेरी।
सो तन मेरे काम न आयो, भूल रह्यो निधि मेरी ||13||
मृत्युराज को शरन पाय तन, नूतन ऐसो पाऊँ।
जामें सम्यक् रतन तीन लहि आठों कर्म खपाऊँ।।
देखो तन सम और कृतघ्नी, नाहिं सु या जगमाहीं।
मृत्यु समय में ये ही परिजन, सबही हैं दुखदाई ||14||
यह सब मोह बढ़ावन हारे, जियको दुर्गतिदाता।
इनसे ममत निवारो जियरा, जो चाहो सुख साता।।
मृत्यु कल्पद्रुम पाय सयाने, मांगो इच्छा जेती।
समता धरकर मृत्यु करो, तो पावो संपत्ति तेती ||15||
चौ आराधन[1] सहित प्राण तज, तौ ये पदवी पावो।
हरि प्रतिहरि चक्री तीर्थेश्वर, स्वर्गमुकति में जावो।।
मृत्यु कल्पद्रुम सम नहिं दाता, तीनों लोक मझारै।
ताको पाय कलेश करो मत, जन्म जवाहर हारे ||16||
इस तन में क्या राचै जियरा, दिन–दिन जीरन हो है।
तेजकांति बल नित्य घटत है, वा सम अथिर सु को है।।
पांचो इन्द्री शिथिल भई अब, श्वास शुद्ध नहिं आवै।
तापर भी ममता नहिं छोड़ो समता उर नहिं लावै ||17||
मृत्युराज उपकारी जियको, तनसों तोहि छुड़ावै।
नातर या तन बन्दीगृह में परो–परयो बिललावै।।
पुद्गल के परमाणु मिल कै पिण्डरूप तन भासी।
याही मूरत मैं अमूरती ज्ञान ज्योति गुणखासी ||18||

1. चार आराधन के नाम

रोग–शोक आदिक जो वेदन ते सब पुद्गल लारैं।
मैं तो चेतन व्याधि बिना नित, हैं सो भाव हमारे।।
या तनसों इस क्षेत्र सम्बन्धी कारण आन बन्यो है।
खान पान दे याको पोष्यो अब सम भाव ठन्यो है ||19||
मिथ्यादर्शन आत्मज्ञान बिन यह तन अपना जान्यो।
इन्द्रीभोग गिने सुख मैंने, आपो नाहिं पिछान्यो।।
तन विनशनतैं नाश जानि निज, यह **अयान** दुखदायी।
कुटुम्ब आदि को अपनो जान्यो, भूल अनादि छाई ||20||
अब निज भेद जथारथ समझ्यो, मैं हूँ ज्योतिस्वरूपी।
उपजै विनसै सो यह पुद्गल, जान्यो याको रूपी।।
इष्ट अनिष्ट जेते सुख–दुःख हैं, सो सब पुद्गल सागै।
मैं जब अपनो रूप विचारों, तब वे सब दुःख भागैं ||21||
बिन समता तनऽनन्त बार मर नाना योनि भ्रमायो।।
बार अनन्तहि अग्नि मांहि, जर मुवो सुमति न लायो।
सिंह व्याघ्र अहिऽनन्त बार मुझ नाना दुख दिखायो ||22||
बिन समाधि ये दुःख लहे मैं अब उर समता आई।
मृत्युराज को भय नहिं मानो देवै तन सुखदाई।।
यातैं जब लग मृत्यु न आवै, तब लग जप तप कीजै।
जप तप बिन इस जग के माहीं, कोई भी ना सीजै ||23||
स्वर्ग सम्पदा तपसों पावै, तपसौं, कर्म नसावै।
तप ही सों शिवकामिनिपति ह्वै यासों तप चित्त लावै।।
अब मैं जानी समता बिन मुझ कोऊ नाहिं सहाई।
मात पिता सुत बांधव तिरिया, ये सब हैं दुखदाई ||24||

मृत्यु समय में मोह करें, ये, तातैं आरत हो है।
आरततैं गति नीची पावै, यों लख मोह तज्यो है।।
और परिग्रह जेते जग में, तिनसों प्रीत न कीजै।
परभव में ये संग न चालैं, नाहक आरत कीजे ||25||
जे जे वस्तु लखत हैं ते पर, तिनसों नेह निवारो।
परगति में ये साथ न चालै, ऐसो भाव विचारो।।
जो परभव में संग चलै तुझ, तिनसों प्रीत सु कीजै।
पंच पाप तज समता धारो, दान चार विध दीजै ||26||
दशलक्षणमय धर्म धरो उर, अनुकम्पा उर लावो।
षोडशकारण नित्य विचारो, द्वादश भावन भावो।।
चारौ परवी प्रोषध कीजै, **अशन** रात को त्यागो।
समता धर दुरभाव निवारो, संयम सो अनुरागो ||27||
अन्त समय में यह शुभ भावहि, होवै आनि सहाई।
स्वर्ग मोक्ष फल तोहि दिखावें, ऋद्धि देहिं अधिकाई।।
खोटे भाव सकल जिय त्यागो, उर में समता लाकैं।
जासेती गति चार दूर कर, बसहु मोक्षपुर जाकै ||28||
मन थिरता करकै तुम चिंतो, चौ आराधन भाई।
ये ही ताकों सुखकी दाता, और हितू कोऊ नाहीं।।
आगैं बहु मुनिराज भये हैं, तिन गही थिरता भारी।
बहु उपसर्ग सहे शुभ पावन, आराधन उरधारी ||29||
तिन मैं कछु इक नाम कहूँ मैं, सो सुन जिय चित लाकै।
भाव सहित अनुमोदे तासों, दुर्गति होय न ताकै।।

अरु समता निज उर में आवै, भाव अधीरज जावै।
यों निशदिन जो उन मुनिवर को, ध्यान हिये विच लावै ||30||
धन्य–धन्य **सुकुमाल** महामुनि, कैसे धीरज धारी।
एक श्यालनी जुग बच्चायुत, पांव भख्यो दुखकारी।।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी।
तो तुमरे जिय कौन दुःख हैं? मृत्यु महोत्सव भारी ||31||
धन्य–धन्य जु **सुकौशल स्वामी, व्याघ्री** ने तन खायो।
तो भी श्री मुनि नेक डिगे नहिं आतम सो हित लायो।।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी।
तो तुमरे जिय कौन दुःख हैं? मृत्यु महोत्सव भारी ||32||
देखो **गजमुनि के शिर ऊपर, विप्र अग्नि बहुबारी।**
शीश जलै जिमि लकड़ी तिनको, तौ भी नाहिं चिंगारी।।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता आराधन चित धारी।
तो तुमरे जिय कौन दुःख है? मृत्यु महोत्सव भारी ||33||
सनतकुमार मुनि के **तन** मे **कष्ट वेदना व्यापी।**
छिन्न–भिन्न तन तासों हूवो तब चिन्त्यो गुण आपी।।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता आराधन चित धारी।
तो तुमरे जिय कौन दुःख है? मृत्यु महोत्सव भारी ||34||
श्रेणिक सुत गंगा में डूब्यो, तब **जिननाम** चितार्यो।
धर सल्लेखना परिग्रह छोड़यो, शुद्ध भाव उर धार्यो।।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी।
तो तुमरे जिय कौन दुख है? मृत्यु महोत्सव भारी ||35||

समंतभद्र मुनिवर के तन में, **क्षुधावेदना** आई।
तो दुःख में मुनि नेक न डिगियो, चिन्त्यौ निज गुणभाई।।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधना चित धारी।
तो तुमरे जिय कौन दुःख है? मृत्यु महोत्सव भारी ||36||
ललित घटादिक तीस दोय मुनि **कौशांबीतट** जानो।
नदी में मुनि बहकर **मूवे** सो, दुःख उर नहिं मानो।।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता आराधना चित धारी।
तो तुमरे जिय कौन दुःख है? मृत्यु महोत्सव भारी ||37||
धर्मघोष मुनि चम्पानगरी बाह्य ध्यान धर ठाड़ो।
एक मास की कर मर्यादा तृषा दुःख सहे गाढ़ो।।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी।
तो तुमरे जिय कौन दुःख है? मृत्यु महोत्सव भारी ||38||
श्री दत्तमुनि कोपूर्व जन्म को बैरी देव सु आके।
विक्रिय कर दुख शील तनो सो सहनो साध मन लाके।।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी।
तो तुमरे जिय कौन दुःख है? मृत्यु महोत्सव भारी ||39||
वृषभसेन मुनि उष्ण शिला पर, ध्यान धरत मनलाई।
सूर्यघाम अरु उष्ण पवन की, वेदन सहि अधिकाई।।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी।
तो तुमरे जिय कौन दुख है? मृत्यु महोत्सव भारी ||40||
अभयघोष मुनि **काकन्दीपुर**, महावेदना पाई।
वैरी चण्ड ने सब तन छेद्यो, दुख दीनो अधिकाई।।

यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता आराधन चित धारी।
तो तुमरे जिय कौन दुःख है? मृत्यु, महोत्सव भारी ||41||
विद्युतचर ने बहु दुःख पायो, तो भी धीर न त्यागी।
शुभ भावन सों प्राण तजे निज, धन्य और बड़भागी।।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी।
तो तुमरे जिय कौन दुःख है? मृत्यु महोत्सव भारी ||42||
पुत्र चिलाती नामा मुनि को, वैरी ने तन घाता।
मोटे–मोटे कीट पड़े तन, तापर निज गुण राता।।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता आराधन चित धारी।
तो तुमरे जिय कौन दुःख है? मृत्यु महोत्सव भारी ||43||
दण्डकनामा मुनि की देही, बाणों कर अरि भेदी।
तापर नेक डिगे नहिं वे मुनि, कर्म महारिपु छेदी।।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी।
तो तुमरे जिय कौन दुःख है? मृत्यु महोत्सव भारी ||44||
अभिनन्दन मुनि आदि पाँच सौ, घानी पेलि जु मारे।
तो भी **श्री मुनि समता धारी पूरब कर्म विचारी**।।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता आराधन चित धारी।
तो तुमरे जिय कौन दुःख है? मृत्यु महोत्सव भारी ||45||
चाणक मुनि गोधर के माहीं, मूंद अगिनि पर जाल्यो।
श्रीगुरू उर समभाव धारकै, अपनो रूप सम्हाल्यों।।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता आराधन चित धारी।
तो तुमरे जिय कौन दुःख है? मृत्यु महोत्सव भारी ||46||

सात शतक मुनिवर दुःख पायो, **हथनापुर में जानो**।
बलिब्राह्मण कृत घोर उपद्रव, सो मुनिवर नहिं मानो।।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी।
तो तुमरे जिय कौन दुःख है? मृत्यु महोत्सव भारी ||47||
लोहमयी आभूषण गढ़के, ताते कर पहराये।
पाँचों पांडव मुनि के तन में, तो भी नांहि चिगाये।।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता आराधन चित धारी।
तो तुमरे जिय कौन दुःख है? मृत्यु महोत्सव भारी ||48||
और अनेक भये इस जग में, समता रस के स्वादी।
ये ही हमकों हो सुखदाता, हरि ह्वै टेव प्रमादी।।
सम्यक दर्शन ज्ञान चरन तप, ये आराधन चारों।
ये ही मोको सुख के दाता, इन्हें सदा उर धारो ||49||
यों समाधि उर माहीं लावो, अपनो हित जो चाहो।
तज ममता अरु आठों, मदका ज्योति स्वरूपी ध्यावो।।
जो कोई नित करत पयानो, ग्रामांतर के काजै।
सो भी शकुन विचारैं नीके, शुभ के कारण साजै ||50||
मात पितादिक सर्व कुटुम्ब सब, नीके शकुन बनावैं।
हल्दी धनिया पुड़्गी अक्षत, दूब दही फल लावैं।।
एक ग्राम जानै के कारण, करैं शुभाशुभ सारे।
जब परगति को करत पयानो, तब नहिं सोचो प्यारे ||51||
सर्व कुटुम्ब जब रोवन लागै, तोहि रुलावै सारे।
ये अपशकुन करैं सुन तोकों, तू यों क्यों न विचारै।।

अब परगति को चालत बिरियाँ, धर्मध्यान उर आनो।
चारों आराधन आराधो, मोहतनो दुःखहानो ||52||
होय निःशल्य तजो सब दुविधा, आतम राम सुध्यावो।
जब परगति को करहू पयानो, परम तत्व उर लावो।।
मोहजाल को काट पियारे, अपनो रूप विचारो।
मृत्यु मित्र उपकारी तेरो, यों निश्चय उर धारो ||53||

दोहा

मृत्य महोत्सव पाठको, पढ़ो सुनो बुधिवान।।
सरधा धर नित सुख लहो, **सूरचन्द** शिवधान।।
पंच उभय नव एक नभ, सम्वत् सो सुखदाय।
आश्विन श्यामा सप्तमी, कह्यो पाठ मन लाय ||54||

टिप्पणी :– यह रचना आश्विन बदी 7 विक्रम संवत् 1955 में पं. सूरचन्द्र जी ने की थी।

98. बारह भावना

कविवर पं. राजमल पवैया, भोपाल

1. अनित्य भावना

सम्राट राज राजेश्वर नृप, देवेन्द्र नरेन्द्र बली अविजित।
कोई न अमर होकर आया है, मृत्यु समय सबका निश्चित।।
तन **योवन** धन वैभव परिजन, संयोगों का है क्षणिक नृत्य।
चिंतन अनित्य भावना श्रेष्ठ है, आत्म द्रव्य ही एक नित्य ||1||

2. अशरण भावना

सुत मात पिता भ्राता भगिनी, बांधव बेबस हो जाते हैं।
चक्री देवादिक मंत्र तंत्र, मरने से रोक न पाते हैं।।
अशरण है कोई शरण नहीं, है आत्म ज्ञान ही एक शरण।
निज शरण प्राप्त करले चेतन, निश्चित होगा भवकष्टहरण ||2||

3. संसार भावना

यह जीव जगत में जन्म मरण, अरु जरा रोग से हुआ दुखी।
पर द्रव्यों की लिप्सा में लय, जग में देखा कोई न सुखी।
सुर नर तिर्यंच नारकी, सब जड़ कर्मों के अधीन हुए।
जिसने स्वभाव को पहचाना, **संसार त्याग** स्वाधीन हुए ||3||

4. एकत्व भावना

यह जीव अकेला आता है, यह जीव अकेला ही जाता।
शुभ अशुभ कर्म का फल भी तो, यह जीव अकेला ही पाता।
पर में कर्तृत्व बुद्धि मानी, इसीलिए दुखी होता आया।
पर से विभक्त निज शुद्ध रूप, **एकत्व भाव** अब उर भाया ||4||

5. अन्यत्व भावना

अपना तन अपना नहीं, अरे तो कोई क्या होगा अपना।
सुत पत्नी वैभव राज्य आदि, अपनेपन का झूठा सपना।।
पर द्रव्य नहीं कोई अपना, अपनत्व मोह मैंने त्यागा।
मैं चिदानंद चैतन्य रूप, **अन्यत्व भाव** चिन्तन जागा ||5||

6. अशुचि भावना

मल मूत्र मांस मज्जा लोहू से, देह अपावन भरी हुई।
ढांचा है घृणित हड्डियों का, ऊपर से चमड़ी चढ़ी हुई।

दिन रात गलित मल बहता है, नव द्वारों से आती है घिन।
शुचिमय पवित्र मैं चेतन हूँ, है **अशुचि भावना** का चिन्तन ||6||

7. आश्रव भावना

शुभ अशुभ भाव के द्वारा ही, कर्मों का आश्रव है होता।
वसु कर्म बन्ध होते रहते, संसारी जीव दुखी होता।।
आश्रव दुख का निर्माता है, परिवर्तन पंच कराता है।
निज का जो अवलंबन लेता, आश्रव को सहज हराता है ||7||

8. संवर भावना

आश्रव का रूकना **संवर** है, शुभ अशुभ भाव का नाशक है।
शुद्धोपयोग है **धर्मध्यान संवर**, नित ज्योति प्रकाशक है।।
जग के विकल्प से रहित सदा, अविकल्प आत्मा शुद्ध विमल।
निश्चय से शुद्धस्वभावी है गुण ज्ञान अनंत सहित अविकल ||8||

9. निर्जरा भावना

सविपाक अकाम **निर्जरा** तो, चारों गतियों में होती है।
अविपाक सकाम **निर्जरा** ही, कर्मों के मल को धोती है।।
मैं ज्ञान ज्योति प्रज्जवलित करूँ, निर्जरा करूँ तप के द्वारा।
निश्चय रत्नत्रय धारण से, निज सूर्य प्रकट हो उजियारा ||9||

10. लोक भावना

जीवादिक छह द्रव्यों से है, परिपूर्ण अनादि अनन्त लोक।
पुद्गल और **जीव अधर्म धर्म**, **आकाश काल** मय **सर्व लोक**।।
इस लोक बीच चारों गति में, मैं तो अनादि से भटक रहा।
शुभ अशुभ भाव के कारण ही, बिन ज्ञान लोक में अटक रहा ||10||

11. बोधि दुर्लभ भावना

अहमिन्द्र देवपद प्राप्ति, सरल पांचों इन्द्रिय के भोग सुलभ।
मिथ्यात्व मोह के कारण ही है, सम्यक् ज्ञान महादुर्लभ।।
निज पर विवेक जागृत हो तो निज को निज पर को पर मानूँ।
हो सम्यकज्ञान सहजमुझको निज आत्मतत्त्व ही को जानूँ।।11।।

12. धर्म भावना

सद्दर्शन ज्ञान चरित्ररूप, रत्नत्रय धर्म महा सुखकर।
उत्तम क्षमादिदश धर्मश्रेष्ठ, निज आत्म धर्म ही भव दुखहर।।
मैं **धर्म भावना** चिंतन कर, भव रज को दूर हटाऊँगा।
शाश्वत अविनाशी सिद्धस्वपद, निज में निज से प्रगटाऊँगा।।12।।
द्वादश भावना चिंतवन से, वैराग्य भाव उर में आता।
जो निज पर रूप जान लेता, वह स्वयं सिद्धवत हो जाता।।
निर्वाण प्राप्त हो जाता है, जग के बंधन कट जाते हैं।
अनादि अनंत समाधि प्राप्त, होते भव दुख मिट जाते हैं।।13।।

99. बारह भावना

कविवर पं. भूधरदास जी

1. अनित्य भावना

राजा राणा छत्रपति, हाथिन के असवार।
मरना सबको एक दिन, अपनी अपनी बार ।।1।।

2. अशरण भावना

दल बल देवी देवता, मात पिता परिवार।
मरती विरियाँ जीव को, कोऊ न राखन हार ।।2।।

3. संसार भावना

दाम बिना निर्धन दुखी, तृष्णा वश धनवान।
कहूँ न सुख संसार में, सब जग देख्यो छान ।।3।।

4. एकत्व भावना

आप अकेला अवतरे, मरै अकेला होय।
यूँ कब हूँ इस जीव को, साथी सगा न कोय ।।4।।

5. अन्यत्व भावना

जहाँ देह अपनी नहीं, तहाँ न अपना कोय।
घर सम्पत्ति पर प्रगट ये, पर हैं परिजन लोय ।।5।।

6. अशुचि भावना

दिपै चाम चादर मढ़ी, हाड़ पिंजरा देह।
भीतर या सम जगत में और नहीं घिन गेह ।।6।।

7. आश्रव भावना

मोह नींद के जोर, जगवासी घूमै सदा।
कर्म चोर चहूँ ओर, सरवस लूटै सुध नहीं ।।7।।

8. संवर भावना

सतगुरु देय जगाय, मोह नींद जब उपशमैं।
तब कछु बने उपाय, कर्म चोर आवत रुकैं ।।8।।

9. निर्जरा भावना

ज्ञान दीप तप तेल भर, घर शोधैं भ्रम छोर।
या विधि बिन निकसैं नहीं, बैठे पूरब चोर ।।9।।

10. लोक भावना

पंच महाव्रत संचरन, समिति पंच परकार।
प्रबल पंच इन्द्रिय विजय, धार निर्जरा सार ।।10।।

11. बोधि दुर्लभ भावना

चौदह राजु उतंग नभ, लोक पुरुष संठान।
तामें जीव अनादि तें, भरमत है बिन ज्ञान ||11||

12. धर्म भावना

धन कन कंचन राज सुख, सबहि सुलभकर जान।
दुर्लभ है संसार में, एक जथारथ ज्ञान ||12||
जाँचे सुर तरु देय सुख, चिन्तन चिन्ता रैन।
बिन जाँचे बिन चिन्तये, धर्म सकल सुख दैन ||13||

100. सामायिक करने की विधि

शरीर से शुद्ध होकर शुद्ध वस्त्र पहनकर किसी मन्दिर आदि एकांत स्थान में सामायिक करना चाहिए। प्रत्येक दिशा में तीन आवर्त व एक शिरोनति करके नमस्कार पूर्वक अपने आसन पर बैठना चाहिए। मन को पवित्र रखना चाहिए, जब तक सामायिक पूर्ण न हो अपने आसन को नहीं छोड़ना चाहिए। छोटे बालकों को अपने पास नहीं बैठाना चाहिए।

सामायिक के बाद एक वृहत् कायोत्सर्ग करना चाहिए जिसमें कम से कम 27 बार या 18 बार णमोकार मन्त्र (27 श्वासोच्छास वाला) का जाप करना चाहिए। सामयिक के समय दृष्टि व मन पर कड़ा नियंत्रण रखना चाहिए। अन्त में पूर्ववत् ही दिशा वन्दना करना चाहिए।

101. श्री सामायिक पाठ

कविवर पं. महाचन्द जी

।। प्रथम प्रतिक्रमण कर्म।।

काल अनन्त भ्रम्यो जग में सहिये दुख भारी।
जन्म मरण नित किये पाप को ह्वै अधिकारी।।
कोटि भवांतर माहिं मिलन दुर्लभ सामायिक।
धन्य आज मैं भयो जोग मिलियो सुखदायक ||1||
हे सर्वज्ञ जिनेश! किये जे पाप जु मैं अब।
ते सब मन–वच–काय योग की गुप्ति बिना लभ।।
आप समीप हजूर माहिं मैं खड़ो–खड़ो सब।
दोष कहूँ सो सुनो करो नठ दुःख देहिं जब ||2||
क्रोध मान मद लोभ मोह माया वशि प्रानी।
दुःख सहित जे किये दया तिनकी नहिं आनी।।
बिना प्रयोजन एकेन्द्रिय वि–ति–चउ पंचेन्द्रिय।
आप प्रसाद हिं मिटै दोष जो लग्यो मोहि जिय ||3||
आपस में इकठौर थापकरि जे दुख दीने।
पेलि दिये पग तलैं दाबि करि प्राण हरि ने।।
आप जगत के जीव जिते तिन सबके नायक।
अरज करूँ मैं सुनो दोष मेटो दुखदायक ||4||
अंजन आदिक चोर महा घनघोर पापमय।
तिनके जे अपराध भये ते क्षमा क्षमा किया।।
मेरे जे अब दोष भये ते क्षमहुँ दयानिधि।
यह पडिकोणो कियो आदि षट्कर्म माहिं विधि ||5||

।। द्वितीय प्रत्याख़्यान कर्म ।।

जो प्रमादवश होय विराधे जीव घनेरे।
तिनको जो अपराध भयो मेरे अघ ढेरे।।
सो सब झूठो होऊ जगतपति कै परसादै।
जा प्रसाद तैं मिलै सर्व सुख दुःख न लाधै ||6||
मैं पापी निर्लज्ज दयाकरि हीन महाशठ।
किये पाप अघ ढेर पापमति होय चित्त दुठ।।
निंदूँ हूँ मैं बार–बार निज जिय को गरहूँ।
सब विधि धर्म उपाय पाय फिर पापन कर हूँ ||7||
दुर्लभ है नरजन्म तथा श्रावक कुल भारी।
सत संगति संयोग धर्म निज श्रद्धा धारी।।
जिन वचनामृत धार समावर्ते जिनवाणी।
तोहू जीव संहारे धिक् धिक् धिक् हम जानी ||8||
इन्द्रिय लंपट होय खोय निज ज्ञान जमा सब।
अज्ञानी जिमि करैंतिसि विधि हिंसक ह्वै अब।।
गमनागमन करंतो जीव विराधे भोले।
ते सब दोष किये निन्दूँ अब मन वच तोले ||9||
आलोचन विधि थकी दोष लागे जु घनेरे।
ते सब दोष विनाश होउ तुमतैं जिन मेरे।।
बार–बार इस भांति मोह मद दोष कुटिलता।
ईर्षादिक तें भये निंदिये जे भयभीता ||10||
(यहाँ आलोचना पाठ भी पढ़ना चाहिए)

।। तृतीय सामयिक भाव कर्म ।।

सब जीवन में मेरे समता भाव जग्यो है।
सब जिय मो सम समता राखो भाव लग्यो है।।
आर्त्तरौद्र द्वय ध्यान छाँड़ि करिहूँ सामायिक।
संयम मो कब शुद्ध होय यह भाव बधायक ||11||
पृथ्वी जल अरु अग्नि वायु चउकाय वनस्पति।
पंचहि थावरमाँहिं तथा त्रस जीव बसैं जित।।
बे इन्द्रिय तिय चउ पंचेन्द्रिय माहिं जीव सब।
तिन तै क्षमा कराऊँ मुझ पर क्षमा करो अब ||12||
इस अवसर में मेरे सब सम कंचन अरु तृण।
महल मसान समान शत्रु अरु मित्रहिं सम गण।।
जनम मरण समान जानि हम समता कीनी।
सामायिक का काल जितै यह भाव नवीनी ||13||
मेरो है इक आतम तामें ममत जु कीनो।
और सबै मम भिन्न जानि समता रस भीनो।।
मात पिता सुत बन्धु मित्र तिय आदि सबै यह।
मोसे न्यारे जानि जथारथ रूप करयो गह ||14||
मैं अनादि जगजाल माहिं फंसि रूप न जाण्यो।
एकेन्द्रिय आदि जंतु को प्राण हराण्यो।।
ते सब जीव समूह सुनो मेरी यह अरजी।
भव भव को अपराध छिमा कीज्यो करि मरजी ||15||

।। चतुर्थ स्तवन कर्म ।।

नमों वृषभ जिनदेव अजित जिन जीत कर्म को।
सम्भव भवदुखहरण करण अभिनन्दन शर्म को।।
सुमति सुमति दातार तार भव सिन्धु पार कर।
पदमप्रभ पद्माभ भानि भव भीति प्रीति धर ||16||
श्री सुपार्श्व कृतपाश नाश भव जास शुद्ध कर।
श्री चन्द्रप्रभ चंद्रकांति सम देह कांति धर।।
पुष्पदंत दमि दोषकोश भविपोष रोष हर।
शीतल–शीतल करण हरण भवताप दोषहर ||17||
श्रेयरूप जिनश्रेय ध्येय नित सेय भव्यजन।
वासुपूज्य नित पूज्य वासवादिक भव–भय हन।।
विमल विमलमति देत अन्तगत हैं अनन्त जिन।
धर्मनाथ शिवकरण शांति जिन शांति विधायिन ||18||
कुन्थ कुन्थमुख जीवपाल अरनाथ जाल हर।
मल्लि मल्लसम मोहमल्लमारन प्रचार धर।।
मुनिसुव्रत व्रतकरण नमतसुरसंघ हि नमि जिन।
नेमिनाथ जिननमि धर्म रथमांहिं ज्ञानधन ||19||
पार्श्वनाथ जिन पार्श्व उपलसम मोक्ष रमापति।
वर्द्धमान जिन नमूँ वमूँ भव दुख कर्मकृत।।
या विधि मैं जिन संघरूप चौबीस संख्यधर।
स्तवूँ नमूँ हूँ बार बार वन्दूँ शिव सुखकर ||20||

।। पंचम वंदना कर्म ।।

वन्दूँ मैं जिनवीर धीर महावीर सुसन्मति।
वर्द्धमान अतिवीर वंदिहूँ मन वच तन कृत।।
त्रिशला तनुज महेशधीश विद्यापति बदूँ।
बदूँ नित प्रति कनक रूप तनु पाप निकंदूँ ||21||
सिद्धारथ नृप नंद द्वन्द दुःख दोष मिटावन।
दुरित दवानल ज्वलित ज्वाल जग जीव उधारन।।
कुन्डग्राम करि जन्म जगत जिय आनंद कारन।
वर्ष बहत्तर आयु पाय सब ही दुख टारन ||22||
सप्तहस्त तनु तुंग भंगकृत जन्म मरण भय।
बाल ब्रह्ममय ज्ञेय हेय आदेय ज्ञानमय।।
दे उपदेश उधारे तारि भव सिंधु जीव घन।
आप बसे शिव मांहि ताहिं बंदो मन वच तन ||23||
जाके बंदन थकी दोष दुख दूरहि जावै।
जाके वंदन थकी मुक्तितिय सन्मुख आवै।।
जाके बंदन थकी वंद्य होवें सुरगन के।
ऐसे वीर जिनेश बंदि हूँ पद युग तिनके ||24||
सामायिक षट्कर्ममाहिं बंदन यह पंचम।
बंदो वीर जिनेन्द्र इंद्रशत वंद्य वंद्य मम।।
जन्म मरण भय हरो, करो अघ शांति शांतिमय।
मैं अघकोष सुपोष दोष को दोष विनाशय ||25||

।। षष्टम् कायोत्सर्ग कर्म ।।

कायोत्सर्ग विधान करूँ अंतिम सुखदाई।
काय त्यजनमय होय काय सबको दुखदाई।।
पूरब दक्षिण नमूँ दिशा पश्चिम उत्तर मैं।
जिनगृह वंदन करूँ हरूँ भव पाप तिमिर मैं ||26||
शिरोनति मैं करूँ नमूँ मस्तक कर धरिकै।
आवर्तादिक क्रिया करूँ मन वच मद हरिके।।
तीन लोक जिन भवन माहिं जिन हैं जु अकृत्रिम।
कृत्रिम हैं द्वय अर्द्ध द्वीप माहीं बंदो जिन ||27||
आठ कोडि परि छप्पन लाख जू सहस सत्याणूं।
चार शतक पर अस्सी एक जिन मंदिर जाणूं।
व्यंतर ज्योतिषि माहिं संख्यरहित जिन मंदिर।
ते सब वंदन करूँ हरहू मम पाप–संघकर ||28||
सामायिक समनाहिं और कोऊ बैर मिटायक।
सामायिक समनाहिं और कोऊ मैत्री दायक।।
श्रावक अणुव्रत आदि अंत सप्तम गुण थानक।
यह आवश्यक किये होय निश्चय दुखहानक ||29||
जे भवि आतम काज मरण उद्यम के धारी।
ते सब काज विहाय करो सामायिक सारी।।
राग द्वेष मद मोह क्रोध लोभादिक जे सब।
बुध महाचन्द्र विलाय जाय तातै कीज्यो अब ||30||

102. आलोचना पाठ

कविवर पं. जौहरीलाल जी

(दोहा)

बन्दों पांचों परम–गुरू, चौबीसों जिनराज।
करूँ शुद्ध आलोचना, शुद्धि करनके काज ||1||

(सखी छन्द)

सुनिये जिन अरज हमारी, हम दोष किये अति भारी।
तिनकी अब निवृति काज, तुम सरन लही जिनराज ||2||
इक बे ते चउ इंद्री वा, मनरहित सहित जे जीवा।
तिनकी नहिं करुणा धारी, निरदई ह्वै घात विचारी ||3||
समरंभ समारंभ आरंभ, मन वच तन कीने प्रारंभ।
कृत कारित मोदन करिकें, क्रोधादि चतुष्टय धरिकैं ||4||
शत आठ जु इमि भेदनतैं, अघ कीने परिछेदन तैं।
तिनकी कहुँ कोलों कहानी, तुम जानत केवलज्ञानी ||5||
विपरीत एकांत विनय के, संशय अज्ञान कुनयके।
वश होय घोर अघ कीने, वचतैं नहिं जाय कहीने ||6||
कुगुरन की सेवा कीनी, केवल अदयाकरि भीनी।
या विधि मिथ्यात भ्रमायो, चहुँगति मधि दोष उपायो ||7||
हिंसा पुनि झूठ जु चोरी, पर–वनितासों दृग जोरी।
आरंभ परिग्रह भीनो, पन पाप जु या विधि कीनो ||8||
सपरस रसना घ्रानको, चखु कान विषय–सेवन को।
बहु करम किये मनमाने, कछु न्याय अन्याय न जाने ||9||

फल पंच उदंबर खाये, मधु मांस मद्य चित्त चाहे।
नहिं अष्ट मूलगुण धारी, विसनन सेये दुखकारी ||10||
दुइवीस, अभख निज खाये, सो भी निस दिन भुंजाये।
कछु भेदाभेद न पायो, ज्यों त्यों करि उदर भरायो ||11||
अनंतानुजुबंधी जानो, प्रत्याख्यान अप्रत्याख्यानो।
संज्वलन चौकरी गुनिये, सब भेद जु षोडश सुनिये ||12||
परिहास अरति रति शोक, भय ग्लानि त्रिवेद संयोग।
पनवीस सु भेद भये इम, इनके वश पाप किये हम ||13||
निद्रावश शयन कराई, सुपने मधि दोष लगाई।
फिर जागि विषय वनधायो, नानाविध विष फल खायो ||14||
आहार विहार निहारा, इनमें नहिं जतन विचारा।
बिन देखी धरी उठाई, विन शोधी वस्तु जु खाई ||15||
तब ही परमाद सतायो, बहु विधि विकल्प उपजायो।
कछु सुधि बुधि नाहिं रही है, मिथ्या मति छाय गई है ||16||
मरजादा तुम ढिंग लीनी, ताहूँ में दोष जु कीनी।
भिन भिन अब कैसे कहिये, तुम ज्ञान विषैं सब पइये ||17||
हा हा! मैं दुठ अपराधी, त्रस–जीवन–राशि विराधी।
थावरकी जतन न कीनी, उर में करुणा नहिं लीनी ||18||
पृथिवी बहु खोद कराई, महलादिक जांगा चिनाई।
पुनि बिन गाल्यो जल ढोल्यो, पंखातैं पवन विलोल्यो ||19||
हा हा! मैं अदयाचारी, बहु हरितकाय जु विदारी।
तामधि जीवन के खंदा, हम खाये धरि आनंदा ||20||
हा हा! परमाद बसाई, बिन देखे अग्नि जलाई।
तामधि जे जीव जु आये, ते हूँ परलोक सिधाये ||21||

बीध्यो अन्न राति पिसायो, ईधन बिन सोधि जलायो।
झाडू ले जाँगा बुहारी, चिंवटी आदिक जीव बिदारी ||22||
जल छानि जिवानी कीनी, सो हू पुनि डारि जु दीनी।
नहिं जल–थानक पहुंचाई, किरिया बिन पाप उपाई ||23||
जल मल मोरिन गिरवायो, कृमि–कुल बहु घात करायो।
नदियन बिच चीर धुवाये, कोसन के जीव मराये ||24||
अन्नादिक शोध कराई, तामैं जु जीव निसराई।
तिनका नहिं जतन कराया, गलियारैं धूप डराया ||25||
पुनि द्रव्य कमावन काज, बहु आरंभ हिंसा साज।
किये तिसनावश अघ भारी, करुना नहिं रंच विचारी ||26||
इत्यादिक पाप अनंता, हम कीने श्री भगवंता।
संतति चिरकाल उपाई, वानी तैं कहिय न जाई ||27||
ताको जु उदय अब आयो, नानाविध मोंहि सतायो।
फल भुजंत जिय दुख पावै वचतै कैसे करि गावै ||28||
तुम जानत केवलज्ञानी, दुख दूर करो शिवथानी।
हम तो तुम शरण लही है, जिन तारन विरद सही है ||29||
जो गाँव पति इक होवे, सो भी दुखिया दुख खोवै।
तुम तीन भुवन के स्वामी, दुख मेटहूँ अंतरजामी ||30||
द्रोपदिको चीर बढ़ायो, सीता प्रति कमल रचायो।
अंजन से किये अकामी, दुख मेटयो अंतरजामी ||31||
मेरे अवगुन न चितारो, प्रभु अपनो विरद सम्हारो।
सब दोष रहित करि स्वामी, दुख मेटहूँ अंतरजामी ||32||
इंद्रादिक पद नाहीं चाहूँ, विषयनि में नाहिं लुभाऊँ।
रागादिक दोष हरीजै, परमातम निज–पद दीजै ||33||

दोष रहित जिन देवजी, निज पद दीज्यो मोय।
सब जीवन के सुख बढ़ै, आनंद मंगल होय ||34||
अनुभव माणिक पारखी, जोहरि आप जिनन्द।
ये ही वर मोहि दीजिये, चरन शरन आनन्द ||35||

103. आचार्य अमितगति कृत भावना द्वात्रिंशतिका

हिन्दी पद्यानुवादक : बाबू श्री जुगलकिशोर जी 'युगल' कोटा

प्रेम भाव हो सब जीवों से, गुणी जनों में हर्ष प्रभो।
करुणा–स्रोत बहे दुखियों पर, दुर्जन में माध्यस्थ विभो ||1||
यह अनन्त बल–शील आतमा, हो शरीर से भिन्न प्रभो।
ज्यों होती तलवार म्यान से, वह अनन्त बल दो मुझको ||2||
सुख–दुख वैरी बन्धु वर्ग में, कांच–कनक में समता हो।
वन–उपवन प्रासाद कुटी में, नहीं खेद नहिं ममता हो ||3||
जिस सुन्दरतम पथपर चलकर, जीते मोह मान मन्मथ।
वह सुन्दर पथ ही प्रभु! मेरा, बना रहे अनुशीलन पथ ||4||
एकेन्द्रिय आदिक प्राणी की, यदि मैंने हिंसा की हो।
शुद्ध हृदय से कहता हूँ वह निष्फल हो दुष्कृत्य प्रभो ||5||
मोक्षमार्ग प्रतिकूल प्रवर्तन, जो कुछ किया कषायों से।
विपथ–गमन सब कालुष मेरे, मिट जावें सदभावों से ||6||
चतुर वैद्य विष विक्षत करता, त्यों प्रभु! मैं भी आदि उपांत।
अपनी निंदा आलोचन से, करता हूँ पापों को शान्त ||7||
सत्य अहिंसादिक व्रत में भी, मैंने हृदय मलीन किया।
व्रत विपरीत–प्रवर्तन करके, शीलाचरण विलीन किया ||8||

कभी वासना की सरिता का, गहन सलिल मुझ पर छाया।
पी पीकर विषयों की मदिरा, मुझमें पागलपन आया ||9||
मैंने छली और मायावी, हो असत्य–आचरण किया।
पर–निन्दागाली चुगली जो, मुंह पर आया वमन किया ||10||
निरभिमान उज्जवल मानस हो, सदा सत्य का ध्यान रहे।
निर्मलजल की सरिता सदृश, हिय में निर्मल ज्ञान बहे ||11||
मुनि चक्री शक्री के हिय में, जिस अनन्त का ध्यान रहे।
गाते वेद पुराण जिसे वह, परम देव मम हृदय रहे ||12||
दर्शन–ज्ञान स्वभावी जिसने, सब विकार ही वमन किये।
परम ध्यान गोचर परमातम, परम देव मम हृदय रहे ||13||
जो भव दु:ख का विध्वंसक है, विश्व विलोकी जिसका ज्ञान।
योगी–जन के ध्यानगम्य वह, बसे हृदय में देव महान ||14||
मुक्ति मार्ग का दिग्दर्शक है, जन्म मरण से परम अतीत।
निष्कलंक त्रैलोक्य–दर्शी वह, देव रहे मम हृदय समीप ||15||
निखिल विश्व के वशीकरण में, राग रहे ना द्वेष रहे।
शुद्ध अतीन्द्रिय ज्ञान स्वरूपी, परम देव मम हृदय रहे ||16||
देख रहा जो निखिल विश्व को, कर्म–कलंक विहीन विचित्र।
स्वच्छ विनिर्मल निर्विकार वह, देव करे मम हृदय पवित्र ||17||
कर्म–कलंक अछूत न जिसका, कभी छू सके दिव्य प्रकाश।
मोहतिमिर को भेद चला जो, परमशरण मुझको वह आप्त ||18||
जिसकी दिव्य ज्योति के आगे, फीका पड़ता सूर्य प्रकाश।
स्वयं ज्ञानमयस्वपर प्रकाशी, परमशरण मुझको वह आप्त ||19||
जिनके ज्ञानरूप दर्पण में, स्पष्ट झलकते सभी पदार्थ।
आदि अंत से रहित शांत शिव, परमशरण मुझको वह आप्त ||20||

जैसे अग्नि जलाती तरु को, जैसे नष्ट हुए स्वयमेव।
भय विषाद चिंता सब जिसके, परमशरण मुझको वह देव ||21||
तृण, चौकी शिल, शैल शिखर नहिं, आत्म समाधि के आसन।
संस्तर, पूजा संग सम्मिलन, नहीं, समाधि के साधन ||22||
इष्ट–वियोग अनिष्ट योग में, विश्व मनाता है मातम।
हेय सभी हैं विश्व वासना, उपादेय निर्मल आतम ||23||
बाह्य जगत कुछ भी नहीं मेरा, और न बाह्य जगत का मैं।
यह निश्चयकर छोड़ बाह्य को मुक्ति हेतु नित स्वस्थ रमें ||24||
अपनी निधि तो अपने में है, बाह्य वस्तु में व्यर्थ प्रयास।
जग का सुख तो मृगतृष्णा है, झूठे हैं उसके पुरुषार्थ ||25||
अक्षय है शाश्वत है आत्मा, निर्मल ज्ञान स्वभावी है।
जो कुछ बाहर है सब पर है, कर्माधीन विनाशी है ||26||
तन से जिसका ऐक्य नहीं, हो–सुत तिय मित्रों से कैसे।
चर्म दूर होने पर तन से, रोम समूह रहें कैसे ||27||
महा कष्ट पाता जो करता, पर पदार्थ जड़ देह संयोग।
मोक्षमार्ग का पथ है सीधा, जड़ चेतन का पूर्ण वियोग ||28||
जो संसार पतन के कारण, उन विकल्प जालों को छोड़।
निर्विकल्प, निर्द्वंद आत्मा फिर, फिर लीन उसी में हो ||29||
स्वयं किये जो कर्म शुभाशुभ, फल निश्चय ही वे देते।
करें आप फल देय अन्य तो, स्वयं किये निष्फल होते ||30||
अपने कर्म सिवाय जीव को, कोई न फल देता कुछ भी।
पर देता है यह विचार तज, स्थिर हो छोड़ प्रमादी बुद्धि ||31||
निर्मल, सत्य, शिवं सुन्दर है, अमितगति वह देव महान।
शाश्वत निज में अनुभव करते, पाते निर्मल पद निर्वाण ||32||

104. आराधना पाठ

कविवर पं. द्यानतरायजी

मैं देव नित अरहन्त चाहूँ, सिद्ध का सुमरिन करौं।
मैं सुर गुरु मुनि तीन पद, ये साधु पद हिरदय धरौं।।
मैं धर्म करुणामयी चाहूँ, जहाँ हिंसा रंच न।
मैं शास्त्र ज्ञान विराग चाहूँ, जासु में परपंच ना ||1||
चौबीस श्री जिनदेव चाहूँ और देव न मन बसै।
जिन बीस क्षेत्र विदेह चाहूँ वंदिते पातक नसे।।
गिरनार शिखर सम्मेद चाहूँ, चम्पापुरी पावापुरी।
कैलाश श्री जिनधाम चाहूँ, भजत भाजे भ्रम जुरी ||2||
नव[1] **तत्त्व** का सरधान चाहूँ, और तत्त्व न मन धरौं।
षट्द्रव्य[2] गुण परजाय चाहूँ, ठीक तासौं भय हरों।।
पूजा परम जिनराज चाहूँ, और देव नहीं कदा।
तिहुँ काल की मैं जाप चाहूँ, पाप नहीं लागे कदा ||3||
सम्यक्त्व दर्शन ज्ञान चारित्र, सदा चाहूँ भाव सों।
दशलक्षणी[3] मैं धर्म चाहूँ, महा हर्ष उछाव सों।।
सोलह[4] जु कारण दुख निवारण, सदा चाहूँ प्रीति सों।
मैं नित **अठाई**[5] पर्व चाहूँ, महामंगल रीति सों ||4||

---

(1) 1.जीव, 2.अजीव, 3.आसव, 4.बन्ध, 5.संवर, 6.निर्जरा, 7.मोक्ष, 8.पुण्य, 9.पाप
(2) 1. जीव, 2. पुद्गल, 3. धर्म, 4. अधर्म, 5. आकाश, 6. काल
(3) 1. उत्तम क्षमा, 2. उत्तम मार्दव, 3. उत्तम आर्जव, 4. उत्तम सत्य, 5. उत्तम शौच, 6. उत्तम संय, 7. उत्तम तप, 8. उत्तम त्याग, 9. उत्तम आकिंचन्य, 10. उत्तम ब्रह्मचर्य।
(4) दर्शन विशुद्धि आदि सोलह कारण भावना।
(5) अष्टान्हिका पर्व।

मैं **वेद**[6] चारों सदा चाहूँ, आदि अन्त निवाह सों।
पाये धर्म के चार चाहूँ अधिक चित्त उछाह सों।।
मै **दान**[7] चारों सदा चाहूँ, भुवनवशि लाहो लहूँ।
आराधना मैं चार चाहूँ अंत में ये ही गहूँ ||5||
भावना **बारह**[8] जु भाऊँ, भाव निरमल होत हैं।
मैं व्रत जु बारह सदा चाहूँ, त्याग भाव उद्योत हैं।।
प्रतिमा दिगम्बर सदा चाहूँ, ध्यान आसन सोहना।
वसुकर्म[9] ते मैं छुटा चाहूँ, शिव लहूँ जहँ मोह ना ||6||
मैं साधुजन को संग चाहूँ, प्रीति तिनहीं सो करौं।
मैं पर्व के उपवास चाहूँ, आरंभ मैं सब परिहरों।।
इस दुखद पंच काल मांही, सुकुल श्रावक मैं लह्यो।
अरु महाव्रत धरि सको, नाहीं निबलतन मैंने गह्यो ||7||
आराधना[10] उत्तम सदा चाहूँ, सुनो जिनराय जी।
तुम कृपा नाथ अनाथ द्यानत, दया करना न्याय जी।।
वसुकर्म नाश, विकाश ज्ञान प्रकाश मुझको दीजिये।
करि सुगति गमन, समाधि मरण सुभक्ति चरनन दीजिये ||8||

(19) पर को अपनी इच्छानुसार परिणमाने का भाव दुःख का ही कारण है।

---

(6) वेद : 1. प्रथमानुयोग, 2. चरणानुयोग, 3. करुणानुयोग, 4. द्रव्यानुयोग
(7) 1. आहारदान, 2. औषधिदान, 3. अभयदान, 4. ज्ञानदान
(8) पाँच अणुव्रत, तीन गुणव्रत, चार शिक्षा व्रत।
(9) आठ कर्म – 1. ज्ञानावरणी, 2. दर्शनावरणी, 3. मोहनीय, 4. अंतराय, 5. वेदनीय, 6. आयु, 7. नाम, 8. गोत्र।
(10) 1. ज्ञान आराधना, 2. दान आराधना, 3. तप आराधना (वारित्र आराधना)

105. निर्वाण काण्ड - भाषा

(प्राकृत से हिन्दी भाषा परिवर्तनकाल - कविवर भैया श्री भगवती दास)

वीतराग वन्दौं सदा, भाव सहित सिरनाय।
कहूँ काण्ड निर्वाण की, भाषा सुगम बनाय।।

चौपाई

अष्टापद आदीश्वर स्वामी, **वासुपूज्य चम्पापुर** नामि।
नेमिनाथ स्वामी **गिरनार**, बन्दौं भाव–भगति उर धार ||1||
चरम तीर्थंकर चरम शरीर, पावापुरी स्वामी **महावीर**।
शिखरसम्मेद जिनेसुर बीस, भाव सहित बन्दौं निश दीस ||2||
वरदत्तराय अरू इन्द्र मुनिन्द्र, सायरदत्त आदि गुणवृन्द।
नगर तारवर मुनि उठकोड़ि, बन्दौ भाव सहित कर जोड़ि ||3||
श्री गिरनार शिखर विख्यात, कोड़ि बहत्तर अरु सौ सात।
संबु प्रदुम्न कुमार द्वै भाई, अनिरुध आदि नमूँ तसुपाय ||4||
रामचन्द्र के सुत द्वै वीर, लाड़नरिन्द आदि गुणधीर।
पाँच कोड़ि मुनि मुक्ति मंझार पावागिरि बन्दौं निरधार ||5||
पाण्डव तीन द्रविड़–राजान, आठ कोड़ि मुनि मुक्ति पयान।
श्री शत्रुंजय गिरि के शीश, भाव सहित बन्दौं निश–दीस ||6||
जे बलभद्र मुकति में गये, आठ कोड़ि मुनि औरहूँ भये।
श्री गजपन्थ शिखर सुविशाल, तिनके चरण नमूँ तिहूँ काल ||7||
राम हणू सुग्रीव सुडील, गव गवाख्य नील महानील।
कोड़ि निन्याणव मुक्तिपयान, तुंगी गिरिबन्दौं धरि ध्यान ||8||

नंग अनंग कुमार सुजान, पाँच कोड़ि अरु अर्द्ध प्रमाण।
मुक्ति गये सोनागिरि शीश, ते बन्दौं त्रिभुवनपति ईस ||9||
रावण के सुत आदि कुमार, मुक्ति गये रेवा–तट सार।
कोटि पंच अरु लाख पचास, ते बन्दो धरि परम हुलास ||10||
रेवानदी सिद्धवर कूट, पश्चिम दिशा देह जहाँ छूट।
द्वै चक्री दश कामकुमार, [1]ऊठकोड़ि बन्दौं भव पार ||11||
बड़वानी बड़नगर सुचंग, दक्षिण दिशि गिरि चूल उतंग।
इन्द्रजीत अरु कुम्भ जु कर्ण, ते बन्दौं भव–सागर–तर्ण ||12||
सुवरणभद्र आदि मुनि चार, पावागिरि–वर शिखर मँझार।
चेलना नदी–तीर के पास, मुक्ति गये बन्दौं नित तास ||13||
फलहोड़ी बड़ग्राम अनूप, पश्चिम दिशा द्रोणगिर रूप।
गुरुदत्तादि मुनीश्वर जहाँ, मुक्ति गए बन्दौं नित तहाँ ||14||
बालि महाबालि मुनि दोय, नागकुमार मिले त्रय होय।
श्री अष्टापद मुक्ति मंझार, ते बन्दौं नित सुरत संभार ||15||
अचलापुर की दिश ईशान तहाँ मेढगिरी नाम प्रधान।
साढ़े तीन कोड़ि मुनिराय तिनके चरन नमूँ चित लाय ||16||
वंशस्थल वन के ढिग होय, पश्चिम दिशा कुन्थुगिरि सोय।
कुलभूषण दिशिभूषण नाम, तिनके चरणनि करूँ प्रणाम ||17||
जसरथ राजा के सुत कहे, देश कलिंग पाँच सौ लहे।
कोटिशिला मुनिकोटि प्रमान, बन्दन करूँ जोरि जुगपान ||18||
समवरशण श्री पार्श्व–जिनेन्द्र, रेसिन्दीगिरी नयनानन्द।
वरदत्तादि पंच ऋषिराज, ते बन्दौं नित धरम–जिहाज ||19||

मथुरा नगर पवित्र उद्यान, जम्बूस्वामीजी निर्वाण।
चरम केवली पंचमकाल, ते बन्दौं नित दीन दयाल ||20||
तीन लोक के तीरथ जहाँ, नित प्रति वन्दन कीजै तहाँ।
मनवचकाय सहित सिरनाय, वन्दन करहिं भविक गुणगाय ||21||
संवत् सतरह सौ इकताल, आश्विन सुदिदशमी सुविशाल।
भैया वन्दन करहिं त्रिकाल, जय निर्वाणकाण्ड गुणमाल ||22||

(**टिप्पणी :–** प्राकृत भाषा से हिन्दी भाषा परिवर्तन अश्विन सुदी दशमी संवत् 1741)

106. देव दर्शन पाठ (संस्कृत)

अनुष्टुप छंद

दर्शनं देव देवस्य, दर्शनं पापनाशनम्।
दर्शनंस्वर्गसोपानं, दर्शनंमोक्षसाधनम् ||1||
दर्शनेन जिनेन्द्राणां, साधूनां वंदनेन च।
न चिरं तिष्ठतेपापं, छिद्रहस्तेयथोदकम् ||2||
वीतराग–मुखं दृष्टवा, पद्मराग–समप्रभ्म।
जन्म–जन्मकृतं पापं, दर्शनेन विनश्यति ||3||
दर्शनं जिनसूर्यस्य, संसार–ध्वान्त–नाशनम्।
बोधनं चित्त–पद्मस्य, समस्तार्थ–प्रकाशनम् ||4||
दर्शनं जिन–चंद्रस्य, सर्द्धमामृत–वर्षणम्।
जन्म दाह विनाशनाय, वर्धनं सुख–वारिधेः ||5||
जीवादि–तत्त्व–प्रतिपादकाय, सम्यक्त्व मुख्याष्ट गुणाश्रयाय।
प्रशांतरुपाय दिगम्बराय, देवाधिदेवाय नमो जिनाय ||6||

चिदानन्दैक–रूपाय, जिनाय परमात्मने।
परमात्म–प्रकाशाय, नित्यं सिद्धात्मने नमः ||7||
अन्यथा शरणं नास्ति, त्वमेव शरणं मम्।
तस्मात्कारुण्य–भावेन, रक्ष रक्ष जिनेश्वर ||8||
नहि त्राता नहि त्राता, नहि त्राता जगत्त्रये।
वीतरागात्परो देवो, न भूतो न भविष्यति ||9||
जिने भक्ति र्जिने भक्ति र्जिने भक्ति र्दिने–दिने।
सदामेऽस्तु सदामेऽस्तु सदामेऽस्तु भवे भवे ||10||
जिनधर्म विनिर्मुक्तो, मा भवच्चक्र वर्त्यपि।
स्याच्चेटोऽपि दरिद्रोऽपि जिनधर्मानुवासितः ||11||
जन्म–जन्मकृतं पापं, जन्म कोटयामुपार्जितम्।
जन्म–मृत्यु–जरा, रोगं, हन्यते जिन–दर्शनात् ||12||

(बसंत तिलक)

अद्याभवत्सफलता नयन–द्वयस्य, देव त्वदीय–चरणांबुज–वीक्षणेन।
अद्य त्रिलोक तिलक प्रतिभासते मे, संसार वारिधिरयं चुलुक–प्रमाणम् ||13||

107. श्री समयसार स्तुति

हरिगीत

संसारी जीवनां भावमरणों टालवा करुणा करी।
सरिता बहावी सुधा तणी, प्रभु वीर! तें संजीवनी ||1||
शोषाती देखी सरितने करुणा भीना हृदये करी।
मुनि कुन्द संजीवनी समयप्राभृत तणे भाजन भरी ||2||

अनुष्टप

कुन्द कुन्द रच्युं शास्त्र, साथिया अमृते पूर्या।
ग्रंथाधिराज! तारामां भावो ब्रह्मांडना भर्या ||3||

शिखरणी

अहो! वाणी तारी प्रशमरस–भावे नितरती;
मुमुक्षने पाती अमृतरस अंजलि भरी भरी ||4||
अनादिनी मूर्छा विष तणी त्वराथी उतरती;
विभावेथी थंभी स्वरूप भणी दौड़े परिणति ||5||

शार्दुलविक्रीड़ित

तूं छे निश्चय ग्रंथ, भंग सघला व्यवहारना भेदवा।
तू प्रज्ञाछीणी ज्ञान ने उदयनी संधि सहु छेदवा ||6||
साथी साधकनो, तूं भानु जगनो संदेश महावीरनो।
विसामो भवक्लांतना हृदयनो, तुं पंथ मुक्ति तणो ||7||

वसंततिलका

सूण्ये तने रस निबंध शिथिल थाय।
जाण्ये तने हृदय ज्ञानी तणां जणांय ||8||
तूं रूचतां जगतनी रुचि आलसे सौ।
तूं रीझतां सकल ज्ञायक देव रीझे ||9||

अनुष्टुप

बनावूँ पत्र कुन्दननां, रत्नों ना अक्षरो लखी।
तथापि कुन्द सूत्रोनां अंकाये मूल्य ना कदी ||10||

108. आत्म भक्ति

श्री सहजानंद वर्णी जी

मेरे शाश्वत शरण, सत्य तारण तरण ब्रह्म प्यारे।
तेरी भक्ति में क्षण जाँये सारे।।टेक।।
ज्ञान से ज्ञान में ज्ञान ही हो, कल्पनाओं का इकदम विलय हो।
भ्रांति का नाश हो, शांति का वास हो, ब्रह्म प्यारे।।मेरे॥1॥
सर्व गतियों में रह गति से न्यारे, सर्वभावों में रह उनसे न्यारे।
सर्वगत आत्मगत, रत न नाहीं विरत ब्रह्म प्यारे।।मेरे॥2॥
सिद्धि जिनने भी अब तक है पाई, तेरा आश्रय ही उसमें सहाई।
मेरे संकट हरण, ज्ञान दर्शन चरण, ब्रह्म प्यारे।।मेरे॥3॥
देह कर्मादि सब जग में न्यारे, गुण व पर्यय के भेदों से पारे।
नित्य अन्तः अचल, गुप्त ज्ञायक अमल, ब्रह्म प्यारे।।मेरे॥4॥
आपका आप ही प्रेय तू है, सर्व श्रेयों में नित श्रेय तू है।
सहजानंदी प्रभो, अंतर्यामी विभो, ब्रह्म प्यारे।।मेरे॥5॥

109. मैं ज्ञानानंद स्वभावी हूँ

मैं हूँ अपने में स्वयं पूर्ण, पर की मुझ में कुछ गंध नहीं।
मैं अरस, अरुपी अस्पर्शी, पर से कुछ भी संबंध नहीं ॥1॥
मैं रंग–राग से भिन्न, भेद से भी मैं भिन्न निराला हूँ।
मैं हूँ अखण्ड, चैतन्य पिण्ड, निज रस में रमने वाला हूँ ॥2॥
मैं ही मेरा कर्ता धर्ता, मुझ में पर का कुछ काम नहीं।
मैं मुझ में रहने वाला हूँ, पर में मेरा विश्राम नहीं ॥3॥

मैं शुद्ध, बुद्ध, अविरुद्ध एक, पर परिणति से अप्रभावी हूँ।
आत्मानुभूति से प्राप्त तत्व, मैं ज्ञानानंद स्वभावी हूँ ॥4॥

110. आत्म कीर्तन

श्री सहजानंद वर्णी जी

हूँ स्वतंत्र निश्चल निष्काम, ज्ञाता–द्रष्टा आतमराम।
मैं वह हूँ जो है भगवान, जो मैं हूँ वह है भगवान ॥1॥
अन्तर यही ऊपरी जान, वे विराग यहाँ राग वितान।
मम स्वरूप है सिद्ध समान, अमित शक्ति सुखज्ञान निधान ॥2॥
किन्तु आश वश खोया ज्ञान, बना भिखारी निपट अजान।
सुख दुःख दाता कोई न आन, मोह राग रुष दुःख की खान ॥3॥
निज को निज, पर को पर जान, फिर दुःख का नहीं लेश निदान।
जिन शिव ईश्वर ब्रह्मा राम, विष्णु बुद्ध हरि जिसके नाम ॥4॥
राग त्याग पहुँचूँ निज निजधाम, आकुलता का फिर क्या काम।
होता स्वयं जगत परिणाम, मैं जग का करता क्या काम ॥5॥
दूर हटो पर कृत परिणाम, सहजानन्द लघूँ अभिराम।।

111. अमूल्य तत्व विचार

हिन्दी भाषा परिवर्तनकार श्री बाबू जुगलकिशोर जी 'युगल'

बहु पुण्य पुंज प्रसंग से, शुभ देह मानव का मिला।
तो भी अरे भव चक्र का, फेरा न एक कभी टला ॥1॥

सुख प्राप्ति हेतु प्रयत्न करते, सुख जाता दूर है।
तू क्यों भयंकर भाव मरण, प्रवाह में चकचूर है ||2||
लक्ष्मी बढ़ी अधिकार भी, पर बढ़ गया क्यों बोलिये।
परिवार और कुटुम्ब है क्या, वृद्धि नय पर तोलिये ||3||
संसार का बढ़ना अरे नर देह की यह हार है।
नहिं एक क्षण तुझको अरे! इसका विवेक विचार है ||4||
निर्दोष सुख निर्दोष आनंद, लो जहाँ भी प्राप्त हो।
यह दिव्य अन्तःतत्त्व जिससे बंधनों से मुक्त हो ||5||
पर वस्तु में मूर्छित न हो, इसकी रहे मुझको दया।
वह सुख सदा ही त्याज्य रे! पश्चात् जिसके दुख भरा ||6||
मैं कौन हूँ आया कहाँ से? और मेरा रूप क्या?
संबंध दुखमय कौन है? स्वीकृत करूँ परिहार क्या ||7||
इसका विचार विवेक पूर्व का शांत होकर कीजिये।
तो सर्व आत्मिक ज्ञान के, सिद्धान्त का रस पीजिये ||8||
किसका वचन उस तत्त्व की, उपलब्धि में शिवभूत है।
निर्दोष नर का वचन रे! वह स्वानुभूति प्रसूत है ||9||
तारो अहो तारो निजात्मा, शीघ्र अनुभव कीजिये।
सर्वात्म में समदृष्टि दो, यह वच हृदय लख लीजिये ||10||

112. जिनवर की महिमा

निरखो अंग–अंग जिनवर के जिनसे झलके शांति अपार।।टेक।।
चरण कमल जिनवर कहें, घूमा सब संसार।
पर क्षण भंगुर जगत में निज आत्म तत्त्व ही सार।।
यातें पद्मासन विराजे जिनवर, झलके शांति अपार।।निरखो||1||

हस्त युगल जिनवर कहें, पर का करता होय।
ऐसी मिथ्या बुद्धि से ही, भ्रमण चतुरगति होय।।
याते पद्मासन विराजे जिनवर, झलके शांति अपार।।निरखो||2||
लोचन द्वय जिनवर कहें, देखा सब संसार।
पर दुःखमय गति चार में, ध्रुव आत्म तत्त्व ही सार।।
याते नासा दृष्टि विराजे, जिनवर झलके शांति अपार।।निरखो||3||
अन्तर्मुख मुद्रा अहो, आत्म तत्त्व दरशाय।
जिनदर्शन कर निज दर्शन पा, सतगुरु वचन सुहाय।।
याते अन्तर्दृष्टि विराजे, जिनवर झलके शांति अपार।।निरखो||4||

113. अशरीरी सिद्ध भगवान

(तर्ज–करुणा सागर भगवान, भव पार लगा देना)

अशरीरी–सिद्ध भगवान, आदर्श तुम्हीं मेरे।
अविरुद्ध शुद्ध चिद्घन, उत्कर्ष तुम्हीं मेरे।।टेक।।
सम्यक्त सुदर्शन ज्ञान अगुरुलघु अवगाहन।
सूक्ष्मत्व वीर्य गुणखान, **निर्बाधित** सुखवेदन।।
हे गुण अनंत के धाम, वंदन अगणित मेरे ||1||
रागादि रहित निर्मल, जन्मादि रहित अविकल।
कुल गोत्र रहित निश्कुल, मायादि रहित निश्छल।।
रहते निज तें निश्चल, निष्कर्म साध्य मेरे ||2||
रागादि रहित उपयोग, ज्ञायक प्रतिभासी हो।
स्वाश्रित शाश्वत–सुख भोग, शद्धात्म विलासी हो।।
हे स्वयं सिद्ध भगवान, तुम साध्य बनो मेरे ||3||

भविजन तुम–सम निज–रूप, ध्याकर तुम–सम होते।
चैतन्य पिण्ड शिव–भूप, होकर सब दुख खोते।।
चैतन्यराज सुखखान, दुख दूर करो मेरे ||4||

114. समयसार जयवन्त रहो...

पं. श्री अभय कुमार जी शास्त्री देवलाली

(वीरछन्द)

वीर जिनेश्वर गौतम गुरु, मुनि कुंदकुंद को नमन करूँ।
आत्मख्याति दाता मुनि, अमृतचंद्र और जयसेन को नमन करूँ।।
नवतत्त्वों में छिपी हुई, चैतन्य ज्योति है प्रकट अहो।
अद्वितीय यह जगत् चक्षु, नित समयसार जयवन्त रहो ||1||
जो प्रमत्त अप्रमत्त नहिं है, शाश्वत चेतन ज्ञायक भाव।
जिसको कभी न छू सकते, वर्णादि और रागादि विभाव।।
अतः नहीं रागादि विभावों का, कर्ता चैतन्य अहो।
अद्वितीय यह जगत् चक्षु नित, समयसार जयवन्त रहो ||2||
लौह श्रृंखला अशुभभाव तो, स्वर्ण श्रृंखला है शुभभाव।
दोनों ही है बंध हेतु, नहिं चेतन में उनका सद्भाव।।
जो चहुँगति में भ्रमण कराये, कैसे उसे सुशील कहो।
अद्वितीय यह जगत चक्षु नित, समयसार जयवन्त रहो ||3||
द्रव्यत्व से स्वतः भिन्न अरु, भावाश्रत का हुआ अभाव।
ज्ञानी सदा निरास्त्रव रहते, रहें ज्ञानमय ज्ञायक भाव।।

यहाँ यही तात्पर्य कहा है, सदा शुद्धनय गृहण करो।
अद्वितीय यह जगत् चक्षु नित, समयसार जयवन्त रहो ||4||
आत्मतत्त्व की उपलब्धि से, होता है संवर साक्षात्।
आत्मतत्त्व प्राप्त हो भेद ज्ञान से, अतः उसे ही करना प्राप्त।।
भेदज्ञान के उद्यम से ही, शुद्धतत्त्व उपलब्ध अहो।
अद्वितीय यह जगत् चक्षु नित, समयसार जयवन्त रहो ||5||
ज्ञान–विराग शक्ति से ज्ञानी, यद्यपि करें विषय सेवन।
सेवक, किंतु असेवक जानों, क्योंकि न भोगें उनका फल।।
विपदाओं के लिए अपद जो, वही एक पद साध्य अहो।
अद्वितीय यह जगत् चक्षु नित, समयसार जयवन्त रहो ||6||
जब उपयोग और रागादिक, एक रूप भाषित होते।
निश्चय से बस इसी हेतु से, पुरुष कर्म से हैं बँधते।।
किंतु अरे स्वच्छन्द प्रवर्तन, कर्म बंध का कारण हो।
अद्वितीय यह जगत् चक्षु नित, समयसार जयवन्त रहो ||7||
प्रज्ञाछैनी द्वारा जो जन, जीव–बंध को भिन्न लखें।
सावधान होकर पैनी, प्रज्ञाछेनी ज्ञानी पटके।।
सहज परम आनंदरूप, रसयुक्त परम उत्कृष्ट अहो।
अद्वितीय यह जगत चक्षु नित, समयसार जयवन्त रहो ||8||
कर्ता–भोक्ता भावों का जो, भले प्रकार विनाश करे।
बंध–मोक्ष की रचना से भी, कदम–कदम पर दूर रहे।।
शुद्ध–बुद्ध जो निर्मल निश्चल, निज रस से भरपूर अहो।
अद्वितीय यह जगत् चक्षु नित, समयसार जयवन्त रहो ||9||

115. मंगलाष्टक

(शार्दूलविक्रीडित)

अर्हन्तो भगवन्त इन्द्रमहिताः सिद्धाश्च सिद्धीश्वराः,
आचार्या जिनशासनोन्नतिकराः पूज्या उपाध्यायकाः।
श्रीसिद्धान्तसुपाठकाः मुनिवराः रत्नत्रयाराधकाः,
पञ्चैते परमेष्ठिनः प्रतिदिनं कुर्वन्तु नो मङ्गलम् ॥1॥

श्रीमन्नम्रसुरासुरेन्द्रमुकुटप्रद्योत–रत्नप्रभा,
भास्वत्पादनखेन्दवः प्रवचनाम्भोधीन्दवः स्थायिनः।
ये सर्वे जिनसिद्ध–सूर्यनुगतास्ते पाठकाः साधवः,
स्तुत्या योगिजनैश्च पञ्चगुरवः कुर्वन्तु नो मङ्गलम् ॥2॥

सम्यग्दर्शन–बोध–वृत्तममलं रत्नत्रयं पावनं,
मुक्तिश्री नगराधिनाथ–जिनपत्युक्तोऽपवर्गप्रदः।
धर्मः सूक्तिसुधा च चैत्यमखिलं चैत्यालयं श्रयालयं,
प्रोक्तं च त्रिविधं चतुर्विधममी कुर्वन्तु नो मङ्गलम् ॥3॥

नाभेयादि–जिनाधिपास्त्रिभुवनख्याताः चतुर्विंशतिः,
श्रीमन्तो भरतेश्वरप्रभृतयो ये चक्रिणो द्वादश।
ये विष्णुप्रतिविष्णु–लाङ्गलधराः सप्तोत्तरा विंशतिः,
त्रैकाल्येप्रथितास्त्रिषष्टिपुरुषाः कुर्वन्तु नो मङ्गलम् ॥4॥

ये सर्वौषधऋद्धयः सुतपसो वृद्धिंगता पंच ये,
ये चाष्टाँग महानिमित्तकुशला येऽष्टाविधाश्चारणः।

पञ्चज्ञानधरास्त्रयोऽपिबलिनो ये बुद्धि–ऋद्धीश्वराः,
सप्तैते सकलार्चिता गणभृतः कुर्वन्तु नो मङ्गलम् ॥5॥

कैलाशे वृषभस्य निर्वृतिमही वीरस्य पावापुरे,
चम्पायां वसुपूज्य सज्जिनपतेः सम्मेदशैलेऽर्हताम्।
शेषाणामपि चोर्जयन्तशिखरे नेमीश्वरस्यार्हतो,
निर्वाणावनयः प्रसिद्धविभवाः कुर्वन्तु नो मङ्गलम् ॥6॥

ज्योतिर्व्यन्तर–भावनामरगृहे मेरौ कुलाद्रौ तथा,
जम्बू–शाल्मलि–चैत्यशाखिषु तथा वक्षार–रौप्याद्रिषु।
इष्वाकारगिरौ च कुण्डलनगे द्वीपे च नन्दीश्वरे,
शैले ये मनुजोत्तरे जिनगृहाः कुर्वन्तु नो मङ्गलम् ॥7॥

यो गर्भावतरोत्सवो भगवतां जन्माभिषेकोत्सवो,
यो जातः परिनिष्क्रमेण विभवो यः केवलज्ञानभाक्।
यः कैवल्यपरप्रवेशमहिमा संभावितः स्वर्गिभिः,
कल्याणानि न तानि पञ्च सततं कुर्वन्तु नो मङ्गलम् ॥8॥

इत्थं श्री जिनमङ्गलाष्टकमिदं सौभाग्यसंपत्पदं,
कल्याणेषु महोत्सवेषु सुधियस्तीर्थङ्कराणां मुखात्।
ये श्रृण्वन्ति पठन्ति तैश्च सुजनैधर्मार्थकामान्विता,
जय लक्ष्मीराश्रियते व्यपायरहिता निर्वाणलक्ष्मीरपि ॥9॥

देव पूजा गुरुपास्तिः स्वाध्यायः संयमस्तपः ।
दानं चेति गृहस्थानां षट् कर्माणि दिने दिने ॥

(1) धनि मुनिराज हमारे हैं....

सकल प्रपंच रहित निज में रत, परमानन्द विस्तारे हैं।
निर्मोही रागादि रहित हैं, केवल जाननहारे हैं।।1।।
घोर परिषह उपसर्गों को, सहज ही जीतन हारे हैं।
आत्मध्यान की अग्निमाँहि जो, सकल कर्म-मल जारे हैं।।2।।
साधैं सारभूत शुद्धातम, रत्नत्रय निधि धारे हैं।
तृप्त स्वयं में तुष्ट स्वयं में, काम सुभट संहारे हैं।।3।।
सहज होंय गुण मूल अट्ठाईस, नग्न रूप अविकारे हैं।
वनवासी व्यवहार कहत हैं, निज में निवसन हारे हैं।।4।।

(2) धन्य मुनिराज की समता...

धन्य मुनिराज की समता, धन्य मुनिराज का जीवन।
धन्य मुनिराज की थिरता, प्रचुर वर्ते स्वसंवेदन।।टेक।।
शुद्ध चिद्रूप अशरीरी, लखें निज को सदा निज में।
सहज समभाव की धारा, बहे मुनिवर के अंतर में।।
है पावन अन्तरंग जिनका, है बहिरंग भी सहज पावन।।1।।
कर्मफल के अवेदक वे, परम आनंद रस वेदें।
कर्म की निर्जरा करते, बढ़े जायें सु शिवमग में।।
मुक्ति पथ भव्य प्रकटावें, अहो करके सहज दर्शन।।2।।
परम ज्ञायक के आश्रय से, तृप्त निर्भय सहज वर्ते।
अवांछक निस्पृही गुरूवर, नवाऊँ शीश चरणन में।।
अन्तरंग हो सहज निर्मल, गणों का होय जब चिन्तन।।3।।
जगत के स्वांग सब देखे, नहीं कुछ चाह है मन में।
सुहावे एक शुद्धातम, आराधू होंस है मन में।
होय निर्ग्रन्थ आनन्दमय, आप-सा मुक्तिमय जीवन।।4।।
भावना सहज ही होवे, दर्श प्रत्यक्ष कब पाऊँ।
नशे रागादि की वृत्ति, अहो निज में ही रम जाऊँ।।
मिटे आवागमन होवे अचल ध्रुव सिद्ध गति पावन।।5।।

(3) चरणों में आ पड़ा हूँ...

चरणों में आ पड़ा हूँ, हे द्वादशांग वाणी।
मस्तक झुका रहा हूँ, हे द्वादशांग वाणी।।टेक।।
मिथ्यात्त्व को नशाया, निज तत्त्व को बताया।
आया-पराया भासा, हो भानु के समानी।।1।।
षड़-द्रव्य को बताया, स्याद्वाद को जताया।
भव-फंद से छुड़ाया, सच्ची जिनेन्द्र वाणी।।2।।
रिपु चार मेरे भग में, जंजीर डाले पग में।
ठाड़े हैं मोक्षमग में, तकरार मोसों ठानी।।3।।
दे ज्ञान मुझको माता, इस जग से तोड़ूँ नाता।
होवें सुर्दशन साता, नहिं जग में तेरी सानी।।4।।

(20) शरीरादि को ही आत्मा मानने वाला जीव बहिरात्मा है।

(21) जिसे धन अच्छा लगता है उसे आत्मा अच्छी नहीं लगती।

(22) भयभीत कभी न रहें, सावधान सदा रहें।

(23) भोगों से तो तृष्णा ही बढ़ती है, तृप्ति तो आत्मज्ञान और संयम से ही संभव है।

टिप्पणी - क्र. 1 से 23 तक के अमृत वचन 'आत्म-वैभव श्री कुन्द-कुन्द स्वाध्याय मंदिर, भिण्ड' से साभार

जैन पूजांजलि एवं सत्साहित्य प्रकाशन में सहयोग राशि

दानदाताओं के नाम

1.	3000	ब्र. उषा बेन किशनलाल पारेख जैन, हारमनी हाउस 9 पंचनाथ प्लाट राजकोट गुजरात, मो-8000825166
2.	11000	गुप्तदान सोगानी परिवार ह. अरविन्द जैन सोगानी
3.	3000	श्रीमति स्नेहलता अरूण वर्द्धमान जैन, भोपाल मो. 9425374625
4.	2400	ऐश्वर्य पुत्र श्री सुनील दिवाकर एवं श्रीमति सुनीता दिवाकर जैन, भोपाल मो. 9893115946
5.	2000	तीर्थधाम ज्ञानोदय दीवानगंज, रायसेन ह. अशोक कुमार जैन (सुभाष ट्रांसपोर्ट) मो. 9009782299
6.	500	श्रीमति सुधा-अशोक कुमार जैन (सुभाष ट्रान्सपोर्ट) भोपाल मो. 9425613096 अध्यक्ष- दि. जैन मुमुक्षु मंडल भोपाल एवं फाउण्डर ट्रस्टी एवं अध्यक्ष ज्ञानोदय तीर्थधाम दीवानगंज
7.	500	श्रीमति रश्मि-आशीष जैन भोपाल (सुभाष ट्रान्सपोर्ट) मो. 9425013096
8.	500	चि. सम्यक आशीष जैन (सुभाष ट्रान्सपोर्ट, भोपाल)
9.	500	श्रीमति ऋचा श्रीष जैन इन्दौर मो. 9425013196
10.	500	चि. आराध्य, कु. अनन्या पुत्री श्री आशीष जैन इन्दौर
11.	500	श्रीमति स्नेहलता देवेन्द्र बड़कुल (मंत्री, दि. जैन मुमुक्षु मंडल एवं फाउंडर ट्रस्टी तीर्थधाम ज्ञानोदय दीवानगंज) मो. 9993354533
12.	500	श्रीमति शिल्पा मोहित बड़कुल जैन, भोपाल
13.	250	श्राविका मीमांशा मोहित बड़कुल जैन, भोपाल
14.	250	श्रीमति डॉ. मयूरी डॉ. स्वपनिल जैन, भोपाल
15.	250	श्रीमति मानसी एडवोकेट मुकेश एडवोकेट दिल्ली
16.	250	श्रीमति मीनू वैभव जैन, उदयपुर
17.	500	श्रीमति सुधा प्रवीण कुमार जी जैन लुहाड़िया, दिल्ली
18.	500	श्रीमति सरोज विजय सोगानी जैन, भोपाल मो. 9425022871
19.	1000	श्रीमति पायल गौरव सोगानी जैन, मुंबई चि. आगम कु. अवधि
20.	500	श्रीमति गरिमा साहिल गंगवाल जैन, पूना
21.	500	श्रीमति मंजु शैलेन्द्र सोगानी जैन, भोपाल मो. 9827055054

22.	500	श्रीमति गरिमा वैभव सोगानी जैन, औरंगाबाद
23.	500	श्रीमति अनीता अरूण सोगानी जैन, भोपाल मो. 9827054354
24.	500	श्रीमति रिया-आयुष सोगानी जैन
25.	500	श्रीमति आभा सुरेन्द्र सोगानी जैन, भोपाल मो. 9300977817
26.	500	श्रीमति श्रुति सौरभ सोगानी जैन, भोपाल
27.	250	कु. महक सुरेन्द्र सोगानी जैन, भोपाल
28.	250	चि. अचिन्त्य सौरभ सोगानी जैन, भोपाल
29.	250	चि. अन्वय सौरभ सोगानी जैन, भोपाल
30.	250	श्रीमति मेघना विवेक छावड़ा जैन, आगरा
31.	1000	श्री प्रदीप सुपुत्र स्व.श्री बाबूलाल जी सोगानी जैन (मूलचन्द्र फूलचन्द्र) मो. 9425019770
32.	501	श्री राजेन्द्र कुमार सोगानी जैन, भोपाल
33.	501	श्रीमति पल्लवी मनीश सोगानी जैन, भोपाल मो. 9926319669
34.	501	श्रीमति प्रीति गुंजन सोगानी जैन, भोपाल
35.	501	कु. पलक, मुस्कान सोगानी जैन, भोपाल
36.	501	चि. निमित्त, दिव्यांश कविश सोगानी जैन, भोपाल
37.	500	श्रीमति स्वर्णलता प्रदीप सोगानी जैन, भोपाल मो. 9425019770
38.	500	श्रीमति टीना अनुभव सोगानी जैन, भोपाल
39.	500	श्रीमति पीनल संभव सोगानी जैन, एडवोकेट, भोपाल
40.	500	चि. अकलंक अनुभव सोगानी जैन, भोपाल
41.	500	कु. स्वरा संभव सोगानी जैन, भोपाल
42.	500	श्रीमति हेमा प्रभु सोगानी जैन पुत्र संदीप सोगानी, भोपाल मो. 9827091979
43.	201	श्री दिलीप सोगानी जैन, भोपाल मो. 9993640358
44.	201	श्रीमति ममता सोगानी जैन
45.	201	चि. प्रभव सोगानी जैन, भोपाल
46.	201	कु. प्रियाली सोगानी जैन, भोपाल
47.	1000	श्रीमति सुनीता अरविन्द सोगानी जैन, भोपाल मो. 9575877000
48.	1000	श्रीमति सुरभि आभास सोगानी जैन, भोपाल
49.	500	कु. दिशा सोगानी जैन, भोपाल
50.	1000	स्व. श्रीमति शकुन्तला जी पत्नी स्व. श्री रतनलाल जी सोगानी की स्मृति में गुप्तदान ह : विनोद सोगानी जैन, मो. 8989889895

जैन पूजांजलि प्रकाशन में सहयोग राशि

51.	500	श्री सुकान्त पुत्र स्व. डा. शान्तिलाल जी सोगानी जैन, भोपाल मो. 9425672320
52.	500	श्री सुधीर पुत्र स्व. डा. शान्तिलाल जी सोगानी जैन, भोपाल
53.	500	श्री दीपक पुत्र डा. शान्तिलाल जी सोगानी जैन, भोपाल
54.	1000	श्रीमति चेतना एम.के. जैन (अहिंसा ब्रुम) भोपाल मो. 9425004522
55.	500	श्रीमति रीना तन्मय एवं कु. दीवाज जैन (अहिंसा ब्रुम) भोपाल
56.	500	हुकमचन्द्र शैलेन्द्र कुमार जैन (खली-चुनी) भोपाल मो. 9893089907
57.	500	श्रीमति चन्दन बाला भंडारी जैन, भोपाल
58.	500	श्री सुधीर भंडारी पुत्र श्रीमति चंदन बाला भंडारी जैन, भोपाल
59.	500	श्रीमति पुष्पा सतीश कुमार मनोरिया जैन, भोपाल
60.	500	श्रीमति शिल्पी अभिनव मनोरिया जैन, पूना
61.	200	चि. रियान अभिनव मनोरिया जैन, पूना
62.	500	श्रीमति पुष्पा पत्नी स्व. श्री महेन्द्र कुमार जी एवं चि. अरहंत सिद्धार्थ जैन, मो. 6260835533
63.	500	श्रीमति सन्ध्या नरेन्द्र कुमार जैन, भोपाल मो. 9425365442
64.	500	श्रीमति सोनल सिद्धान्त जैन, बैंगलोर
65.	500	कु. प्रांजल, चि. शाश्वत जैन, भोपाल
66.	500	श्रीमति अशर्फी ज्ञानचन्द्र जैन, भोपाल मो. 9981145682
67.	500	श्रीमति सुजाता मनोज जैन, भोपाल
68.	500	चि. कर्निक, कु. कर्निका सुपुत्र-सुपुत्री मनोज कुमार जैन, भोपाल
69.	500	कु. अक्षिता पुत्री स्व. मनोज जैन एड. पुत्र महेन्द्र कुमार इन्जी. 31 मनोज भवन, भोपाल
70.	500	कु. अरूषी पुत्री स्व. मनोज जैन एड., पीरगेट, भोपाल
71.	500	श्रीमति शिल्पी डा. संजय जैन वैसाखिया वैज्ञानिक, बैंगलोर द्वारा एम.के. जैन, पीरगेट, भोपाल
72.	500	श्रीमति कविता विवेक जैन, पीरगेट भोपाल मो. 9827679431
73.	1000	अक्षय बड़कुल जैन, भोपाल
74.	500	श्रीमति कमला देवी पत्नी स्व. श्री सूरजमल जी नरपत्या जैन, भोपाल (ह. राकेश नरपत्या) मो. 2589782458
75.	500	श्री नरेन्द्र जी, कमल राजेन्द्र सेठी जैन, खाचरोद मो. 9425720000
76.	500	चि. अभिषेक चि. अक्षत जैन सुपुत्र राकेश नरपत्या जैन, भोपाल

77.	500	श्रीमति माणकदेवी पत्नी स्व. श्री शान्तिलाल जी बज जैन, बाबई, होशंगाबाद मो. 9425636158
78.	500	श्री महेन्द्र कुमार विधित कुमार सेठी जैन, खातेगाँव मो. 9425081014
79.	500	श्री राजेन्द्र कुमार, अतिशय एवं आशीष सेठी जैन, इन्दौर मो. 9826900742
80.	500	श्री दीपेश पुत्री श्रीमति सरोज पत्नी स्व. श्री देवेन्द्र कुमार जैन, भोपाल
81.	250	श्रीमति सुखवती ध.प. स्व श्री बाबूलाल जी जैन (पीपलावाले) भोपाल
82.	250	श्रीमति निधी पत्नी श्री अनुराग जैन पुत्र श्री अरविन्द जैन (पीपलावाले) मो. 9826043549
83.	500	श्रीमति चमेली बाई पं. कस्तूरचन्द्र जैन (सिलवानी वाले) भोपाल
84.	500	श्रीमति सरोज कमलेश जैन बजाज, सिलवानी भोपाल मो. 9993215840
85.	500	श्रीमति नेहा सौरभ जैन बजाज, भोपाल
86.	500	दिव्यांश एवं देशना बजाज पुत्र श्री सौरभ जैन (सिलवानी वाले) भोपाल मो. 9993215840
87.	500	श्रीमति अंजु अजित कुमार जैन बजाज (सिलवानी वाले) भोपाल मो. 989335436
88.	500	श्रीमति सोनाली अंकुर जैन बजाज, भोपाल
89.	500	चि. अर्हं अंकुर जैन बजाज, भोपाल
90.	250	श्रीमति मनीषा दिनेश जैन मो. 9926642260
91.	250	चि. समकित दिनेश जैन, भोपाल
92.	500	श्रीमति सन्ध्या मातेश्वरी शोभित जैन (एचीबर कोचिंग) मारवाड़ी रोड, भोपाल
93.	100	श्रीमति मालती राजकुमार जैन दलाल, भोपाल
94.	100	श्रीमति रश्मि संजय जैन (प्रिन्टर्स) चि. ऋषि एवं ऋषिका जैन मो. 9300471314
95.	500	स्व. श्रीमति सुहागबाई पत्नी स्व. श्री बदामीलाल जी जैन, भोपाल ह. राजकुमार जी
96.	500	श्रीमति अनिता राजकुमार जैन, भोपाल मो. 9425673511
97.	500	चि. इस्मित राजकुमार जैन, भोपाल

98. 500 चि. अनन्त राजकुमार जैन, भोपाल
99. 200 श्रीमति शारदा विजेन्द्र जैन, भोपाल
100. 500 श्री आनन्द कुमार नवीन कुमार जैन, छावनी इन्दोर
101. 500 श्रीमति किरण अनिल कुमार जैन, भोपाल (स्व. श्री मिश्रीलाल) मो. 6262673743
102. 200 श्रीमति सुशीला श्री चन्द्र जैन, भोपाल मो. 9301065711
103. 200 श्रीमति सुनीता सुभाष चन्द्र जैन, भोपाल
104. 200 चि. शुद्धात्मा चि. समकित जैन, भोपाल
105. 200 श्रीमति रेशम बाई पत्नी स्व. सौभाग्यमल जी स्वतंत्रता संग्राम सेनानी
106. 200 श्रीमति शोभा वीरेन्द्र जैन (हुंडी) मो. 989328433
107. 200 श्रीमति रचना गौरव जैन, भोपाल
108. 200 चि. संभव पुत्र श्री वीरेन्द्र कुमार जैन, भोपाल
109. 200 कु. यश्वी सुपुत्री गौरव जैन, भोपाल
110. 200 श्रीमती विजय लक्ष्मी पत्नी स्व. श्री चन्द्रमणी जैन, भोपाल
111. 200 श्रीमति मधु कीर्ति कुमार जैन, भोपाल
112. 200 श्रीमति रजनी अभिषेक जैन, भोपाल मो. 9826234813
113. 200 कु. ऋतु, कु. प्रेक्षा, कु. शचि सुपुत्री कीर्ति कुमार जैन, भोपाल
114. 200 चि. अपूर्व, कु. शौम्या जैन सुपुत्र/सुपुत्री अभिषेक जैन, भोपाल
115. 500 श्रीमति मणी जैन (इलाहाबाद बैंक वाले) भोपाल
116. 250 श्रीमति रेखा कैलाशचन्द्र भारिल्ल जैन, मीनाल रेसीडेंसी, भोपाल मो. 9826930924
117. 250 श्रीमति अंकिता सौरभ जैन, मिनाल रेसीडेंसी, भोपाल
118. 500 श्रीमति चन्द्रा उमेशचन्द्र जैन, भोपाल फो. 0755-2673664
119. 500 श्रीमति कविता संजीव जैन, भोपाल मो. 9827641008
120. 250 कु. कृति जैन पुत्री संजीव जैन, भोपाल
121. 500 श्रीमति सारिका राजीव जैन, भोपाल
122. 250 चि. श्रमण जैन पुत्र श्री राजीव जैन, भोपाल
123. 250 चि. शाश्वत जैन पुत्र श्री राजीव जैन, जयपुर
124. 500 श्रीमति माधुरी महेन्द्र कुमार जी, केनरा बैंक भोपाल मो. 9425374381
125. 500 चि. गौरव महेन्द्र कुमार जैन, बैंगलोर
126. 250 श्रीमति मेघा अंकित जैन (लेपटाय वर्ड) एम.पी. नगर भोपाल मो. 9425814225

127. 250 कु. अद्विका अंकित जैन, भोपाल
128. 500 श्रीमति विनीता शरद जैन ह. उमेशचन्द्र गुड़गाँव मो. 9818570901
129. 250 चि. उत्कर्ष शरद जैन, गुड़गाँव
130. 250 कु. अविका शरद जैन, गुड़गाँव
131. 500 श्रीमति सरोज ताराचन्द्र जैन (ज्ञानद्वीप स्टेशनरी) छतरपुर मो. 9425893172 (ह. उमेशचन्द्र)
132. 500 श्रीमति ऋतु प्रवीण कुमार जैन (ज्ञानद्वीप स्टेशनरी) छतरपुर
133. 500 चि. चिन्मय प्रवीण कुमार जैन, छतरपुर मो. 9424971386
134. 500 चि. तन्मय प्रवीण कुमार जैन, छतरपुर
135. 500 श्रीमति वन्दना नवीन जैन, छतरपुर मो. 9425881568
136. 1100 श्रीमति क्रान्ति हुकुमचन्द्र जैन, पंचशील नगर, भोपाल मो. 9406511148
137. 1100 श्रीमति सविता अशोक कुमार जैन, पंचशील नगर भोपाल मो. 9174290843
138. 1100 श्रीमति मंजु नीलेश जैन, पंचशील नगर, भोपाल मो. 9039262658
139. 500 श्रीमति शशी विजय कुमार जैन, पंचशील नगर, भोपाल मो. 8989437913
140. 500 श्रीमति किरण मुन्ना लाल जैन, पंचशील नगर, भोपाल मो. 909993446207
141. 500 श्रीमति कल्पना अरविन्द जैन, पंचशील नगर, भोपाल मो. 9993092345
142. 500 श्रीमति स्वर्णलता जैन, भिण्ड (सोनगढ़)
143. 250 श्रीमति मीणा रमेशचन्द्र जैन, पंचशील नगर, भोपाल मो. 9039262656
144. 250 श्रीमति रूपेश अशोक जैन, पंचशील नगर, भोपाल मो. 9425624999
145. 250 कु. रूबी सुपुत्री अशोक कुमार जैन, पंचशील नगर, भोपाल
146. 200 श्रीमति अनीता प्रमोद जैन, पंचशील नगर, भोपाल
147. 200 श्रीमति शिमला कु. श्रेया जैन, पंचशील नगर, भोपाल मो. 9174290843
148. 200 श्रीमति सोनिया प्रियंका जैन, इन्दौर मो. 9039262658
149. 500 श्रीमति ऋतु रोहित जैन, भोपाल

150. 500 श्रीमति प्रेमश्री पत्नी स्व. श्री नीलकान्त ह : रवि प्रकाश जैन मो. 9425725743
151. 500 श्रीमति मालती उमरेश सिंघई जैन, एडवोकेट भोपाल
152. 500 श्रीमति सुशीला नेमीचन्द्र जैन, 40 एमईएस कालोनी, जैन नगर, भोपाल मो. 9407511301
153. 500 श्रीमति सीमा अवधेश जैन, जैन नगर, भोपाल
154. 100 चि. आदित्य पुत्र अवधेश जैन, जैन नगर, भोपाल
155. 200 श्रीमति रानी भारतभूषण जैन, लालघाटी, भोपाल
156. 201 श्रीमति रूपसी राजेन्द्र कुमार जैन, भोपाल
157. 500 श्रीमति निर्मला टडैया श्री अजित कुमार जैन, भोपाल मो. 9111741596
158. 250 श्रीमति वन्दना सतीश जैन एडवोकेट, गुलमोहर भोपाल मो. 9827017401
159. 250 कु. धुरी (यूएसए) एवं कु. धरा (यूके) पुत्री श्री सतीश जैन, भोपाल
160. 500 श्रीमति इन्द्रा महेन्द्र कुमार जैन, (मच्छरदानी वाले) भोपाल
161. 500 श्रीमति श्वेता अभिषेक जैन चि. सिद्धान्त कु. आराध्य जैन
162. 500 श्री गौरव रविपन्त जैन, भोपाल
163. 100 श्रीमति शशी राजेन्द्र कुमार जैन, दुग्ध संघ भोपाल मो. 9893249392
164. 500 श्रीमति मणि भंडारी महेश भंडारी जैन, भोपाल
165. 500 श्रीमति श्रीबाई मातेश्वरी श्री प्रमोद जैन, लोहा बाजार भोपाल
166. 500 श्रीमति मीना रमेशचन्द्र जैन, भोपाल (पंकज टेलर्स) मो. 9425006675
167. 500 श्री महेन्द्र कुमार स्व. श्री सौभाग्यमल जैन (स्वतंत्रता संग्राम सेनानी) भोपाल
168. 1100 श्रीमति निर्मला ललित जैन, सीहोर मो. 7354816444
169. 1100 श्रीमति अरूणा बंसल अजय बसंल जैन, (चन्देरी वाले) भोपाल
170. 500 श्रीमति शकुन्तला (अध्यक्ष जैन महिला मुमुक्षु मंडल भोपाल) पत्नी स्व. श्री प्रकाशचन्द्र जी जैन (मच्छरदानी वाले) भोपाल
171. 200 श्रीमति हेमलता सन्तोष कुमार जैन, अशोका गार्डन, भोपाल मो. 9424483907
172. 500 श्रीमति सुनीता शान्ती कुमार एवं चि. अंकित जैन(पुत्र), पद्मनाभ नगर, भोपाल मो. 9425379350

173. 500 श्रीमति प्रेक्षा अनुद्वीप जैन, पद्मनाभ नगर, भोपाल (पूना)
174. 500 श्रीमति ऋतिका अर्पित जैन, पद्मनाभ नगर, भोपाल (पूना)
175. 500 श्रीमति मंसूरी अजय राज जैन, भोपाल मो. 9406540305
176. 300 श्रीमति आचल गौरव जैन चि. वीर एवं राजवी जैन, भोपाल
177. 300 श्रीमति ज्योति मिलन जैन, भोपाल
178. 700 श्रीमति शकुन्तला राजेन्द्र कुमार जैन (स्व. श्री दरबारीलाल), 36 सी, बीडीए कालोनी, कोहेफिजा, भोपाल मो. 9425030411
179. 700 श्रीमति सारिका संजय जैन, कोहेफिजा, भोपाल
180. 700 श्रीमति तृप्ति सचिन जैन, भोपाल
181. 500 श्रीमति विमला जैन पत्नी स्व. श्री मोतीलाल जी सर्राफ, भोपाल
182. 500 श्रीमति प्रीति सुनील जैन सर्राफ, बरखेड़ी, भोपाल मो. 8717819947
183. 250 श्री हस्तीमल जैन, 836 न्यू अशोका गार्डन, भोपाल मो. 8435954632
184. 1100 श्रीमति सावित्री बाई पत्नी स्व. श्री माणकचन्द्र जी जैन, गुड़ वाले भोपाल
185. 1100 श्रीमति सुधा श्री पं. सुरेन्द्र कुमार जी सुपुत्र श्री विमलचन्द्र जी जैन, इन्दौर मो. 9425917724
186. 401 श्रीमति बबीता विजय कुमार जैन (स्व. श्री मदनलाल) भोपाल मो. 9827611155
187. 500 श्री केशरीमल जैन,107 जैन नगर द्वारा देवेन्द्र जैन मो. 9826385260
188. 500 श्रीमति कल्पना इन्जी. के.एल. जैन, कल्पना नगर, मो. 9827260946
189. 500 श्रीमति कृतिका इन्जी. श्री शुभम जैन, इन्जी. हैदराबाद
190. 500 श्रीमति इतिका इन्जी. श्री राहुल जैन, इन्जी. मुम्बई
191. 500 इन्जी. सारांश जैन सुपुत्र इन्जी. के.एल. जैन, बैंगलोर
192. 1100 श्री अरहन्त प्रकाश स्व. श्री बदामीलाल जैन, भोपाल मो. 9893800106
193. 500 इन्जी. श्री बाबूलाल जी अजमेरा जैन भोपाल मो. 9479540929
194. 500 श्रीमति चन्दना दिवाकर राकेश दिवाकर जैन, गौरव, सौरव, नेहा, नताशा, भोपाल मो. 9893374031
195. 500 श्रीमति सविता अरूण जैन, भोपाल मो. 7000426412

196.	250	श्रीमति विमला राजकुमार जैन (टड़ा वाले) भोपाल
197.	250	श्रीमति सीमा विनय कुमार जैन (टड़ा वाले) भोपाल मो. 9993188935
198.	250	चि. विनय जैन (टड़ा वाले) भोपाल
199.	250	कु. शिखा-विनय जैन (टड़ा वाले) भोपाल
201.	500	श्रीमति सुखवती पत्नी स्व. श्री बाबूलाल जी जैन, पद्मनाभ नगर भोपाल
202.	1100	श्रीमति साधना मुकेश जैन सुपुत्र स्व. श्री पन्नालाल जी जैन, भोपाल
203.	500	श्रीमति आशा अशोक कुमार जी जैन बड़कुल, भोपाल मो. 9993790968
204.	500	श्रीमति सुरभि अंकुर जैन बड़कुल, भोपाल
205.	100	चि. मनोज एवं आराध्य जैन बड़कुल, भोपाल
206.	500	श्रीमति शिरोमणी प्रकाशचन्द्र जैन, भोपाल मो. 9425484954 (प्रियांश एवं प्रयत्न जैन)
207.	1000	कल्पना जी जैन एवं डॉ. देवेन्द्र कुमार जी जैन, भोपाल
208.	500	श्रीमती ज्योति वीरेन्द्र बड़कुल जैन, भोपाल मो. 9425392972
209.	600	श्री अविरल वीरेन्द्र बड़कुल जैन, भोपाल मो. 9425392972
210.	500	श्रीमती रेशम छगनलाल जैन (मदन मेडीकल्स) भोपाल मो. 9479594542
211.	500	श्रीमती आशा पदम कुमार जैन, भोपाल मो. 9907912100
212.	600	श्रीमती रूबी आशुतोष जैन (मल्टी मीडिया) कु. आरूशि, कु. अर्हम, भोपाल मो. 9303131737
213.	1100	श्री पं. सुरेन्द्र मार विमलचन्द्र जी जैन, इन्दौर मो. 9425917724
214.	500	श्रीमती लक्ष्मी विमल जैन भारिल्ल, भोपाल
215.	501	गुप्तदान ह. सुभाष चौधरी, भोपाल
216.	500	श्रीमती नेहा शोभित जैन एवं चि. सुमित जैन (एचीवर्स एजुकेशन सर्विसेज) मारवाड़ी रोड, भोपाल मो. 9713446066
217.	1100	श्री महेशचन्द्र जी गुलाब चन्द्र टोग्या जैन, इन्दौर मो. 9826326111
218.	1100	श्री अंशुल पुत्र आनन्द कुमार जैन, इन्दौर मो. 9131270788
219.	1100	चि. अन्वय पुत्र डॉ. सम्यक जैन पंचौली, इन्दौर मो. 9550320106
220.	1000	श्रीमती श्वेता संजय जैन, बंडी इन्दौर मो. 9098521320

221.	500	श्रीमती किरण स्व. श्री निर्मल कुमार जैन, इन्दौर मो. 9098963640
222.	1100	श्री वीरेन्द्र कुमार घासीलाल जैन रावत, इन्दौर मो. 9827045345
223.	1100	श्री सूर्यकान्त दोषी जैन, इन्दौर मो. 9827072660
224.	150	श्रीमती मीना सुरेश जैन भज्जु, भोपाल मो. 9827244192
225.	150	श्रीमती निकिता अंकुर जैन, भोपाल कु. अनिया, कु. नयति
226.	150	श्रीमती प्रिया अनुभव जैन, भोपाल चि. पुण्यम
227.	500	श्रीमती ज्योति स्व. देवेन्द्र कुमार जी जैन, भोपाल मो. 7694006729
228.	500	श्रीमती शालिनी गौरव जैन, भोपाल
229.	500	ईशा जैन सौरभ जैन, भोपाल
230.	600	प्रकृति जैन, भोपाल
231.	600	श्री ताराचन्द्र राजीव संजीव मोदी जैन, भोपाल मो. 8109168306
232.	600	श्रीमती निर्मला रेखा अंकिता मोदी जैन, भोपाल
233.	400	चि. रचित, कु. रचिता जैन
234.	400	कु. दृष्टि, दृशि, आर्जव मोदी जैन, भोपाल
235.	1000	श्रीमती संगीता प्रणव चौधरी जैन (चौधरी मेडिकल) भोपाल मो. 9425027245
236.	500	श्री प्रखर सुपुत्र प्रणव चौधरी जैन (चौधरी मेडिकल) भोपाल
237.	500	कु. प्रकृति सुपुत्री प्रणव चौधरी जैन (चौधरी मेडिकल) भोपाल
238.	500	श्रीमती मीना राजकुमार जैन (पीपला वाले) भोपाल (पुट्ठामील) मो. 9425171467
239.	500	श्रीमति अनमोल गौरव जैन, भोपाल
240.	500	श्रीमती पूर्ति सौरभ जैन, पुट्ठामील भोपाल
241.	500	श्रीमति अशर्फी बड़कुल जैन, भोपाल
242.	500	श्रीमति अभिषेक जैन, भोपाल
243.	200	श्रीमति शीला सुमतप्रकाश जैन, भोपाल
244.	250	श्रीमति नेहा गौरव व चि. अर्हं दिवाकर जैन, भोपाल
245.	250	श्रीमति नताशा सौरभ दिवाकर जैन, भोपाल
246.	500	श्री श्लोक जैन सुपुत्र श्री अमित जैन, इन्दौर

1,35,512 कुल योग